बेबी हैल्थ गाइड

BABY HEALTH GUIDE

आपके नन्हे-मुन्नों के पालन-पोषण, स्वास्थ्य रक्षण व व्यक्तित्व विकास के प्रत्येक पहलू पर विस्तृत रूप से लिखी गई एकमात्र मौलिक व प्रामाणिक कृति.

लेखिका

आशारानी व्होरा



पुस्तक महल

खारी बावली, दिल्ली - 110006

प्रकाशक
श्री रामावतार गुप्त द्वारा पुस्तक महल, 6686, खारी बावली,
दिल्ली-110006 के लिए प्रकाशित

मूल्य
साधारण पेपर बैक संस्करण : चौबीस रुपये 24/-
सजिल्द डीलक्स संस्करण : तीस रुपये 36/-

चौथा संस्करण फरवरी 1986
पांचवां संस्करण अक्टूबर 1987

Printed at Shivani Enterprises, Delhi

'बेबी हेल्थ गाइड' की लेखन-योजना में सहयोग देने वाले प्रमुख चिकित्सकों और बाल-रोग विशेषज्ञों के नाम व पते —

- डा. विमला गुजराल, प्राचार्या एवं वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ कलावती सरन-बाल-चिकित्सालय नई दिल्ली.
- डा. इन्द्रा नारायनन, नवजात शिशु विशेषज्ञ एवं नवजात विभागाध्यक्ष, कलावती सरन बाल-चिकित्सालय नई दिल्ली.
- डा. दया शर्मा, वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ, कलावती सरन बाल चिकित्सालय नई दिल्ली.
- डा. सुभाष लांडपुर, वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ, कलावती सरन बाल चिकित्सालय, नई दिल्ली.
- डा. कमला धमीजा, वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ एवं पोलियो विभागाध्यक्ष, कलावती सरन बाल-चिकित्सालय नई दिल्ली.
- डा. सरला वैष्णव, वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ (नेफ्रोलोजिस्ट) एवं अध्यक्ष बाल रोग विभाग, सफदरजंग अस्पताल, नई दिल्ली.
- डा. तृप्ता बत्रा, वरिष्ठ बाल-सर्जन एवं बाल सर्जरी विभागाध्यक्ष, सफदरजंग अस्पताल, नई दिल्ली.
- डा. ज्ञान प्रकाश वर्मा, वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ,विभागाध्यक्ष बाल-रोग विभाग राम मनोहर लोहिया अस्पताल नई दिल्ली.
- डा. शान्ति घोष, वरिष्ठ बाल-पोषाहार विशेषज्ञ एवं भूतपूर्व विभागाध्यक्ष,बाल-रोग विभाग सफदरजंग अस्पताल, नई दिल्ली.
- डा. एस. वोहरा, वरिष्ठ स्त्री रोग एवं प्रसूति विशेषज्ञ, सुचेता कृपलानी अस्पताल नई दिल्ली.
- डा. दया संधल, वरिष्ठ दंत-चिकित्सक एवं दंत-चिकित्सा विभागाध्यक्ष, सुचेता कृपलानी अस्पताल नई दिल्ली-27
- डा.श्यामला मेहता, बाल-रोग विशेषज्ञ, डा. राणा नर्सिंग होम, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली-27.
- डा. राजकुमार भूटानी, वरिष्ठ नेत्र-विशेषज्ञ एवं नाक-कान-गला विशेषज्ञ बी 8, राजौरी गार्डन, (राजा गार्डन बस स्टाप के पास) नई दिल्ली-27.
- डा. के. एल. पहलवाल, 17-90, कनाट प्लेस, नई दिल्ली.
- डा. जयदेव गुप्ता 48 नं. सी. जी. एच. एस. डिस्पेंसरी
- डा. अनिल बत्रा, क्लीनिक शापिंग सेंटर, एम. आई. जी. फ्लैट्स, मायापुरी, नई दिल्ली 64.
- डा. रिषि राम अग्रवाल, क्लीनिक एच. 2 ए. कीर्तिनगर, नई दिल्ली.
- श्रीमती वीना रानी निगम, वरिष्ठ मनोवैज्ञानिक, विभागाध्यक्ष, बाल-मानस चिकित्सा विभाग, कलावती सरन बाल-चिकित्सालय, नई दिल्ली.

छायाचित्रों में सहयोग देने वाली बाल-शिक्षण संस्थाएं—

1. सेक्रेड चाइल्ड जूनियर स्कूल, सी. 7 डी, मायापुरी, नई दिल्ली-64.
2. मौडर्न क्रेच एंड नर्सरी स्कूल, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली-27.

छायाकार—

1. श्री कुलवंत सिंह, 2. श्री हाशमी, 3. श्री विनय सहगल.

आशा रानी व्होरा

केवल भारत पर खर्च होता है. इस दो करोड़ सहायता की राशि को आगे ढाई गुना बढ़ा कर पांच करोड़ डालर किया जा रहा है यानी लगभग 45 करोड़ रुपए. इससे स्पष्ट है कि भारत में बच्चों की स्थिति बहुत असंतोष-जनक है और बहुत कुछ काम करने को है.

माताओं का प्रशिक्षण

गरीबी और वैषम्य को मिटाने या कम करने का काम सरकार और संस्थाओं का है. पर जो साधन उपलब्ध है, जो स्वास्थ्य-सेवाएं उपलब्ध हैं, जो संस्थागत सहायता मिल सकती है, उन सबका सदुपयोग कर, समय पर उनका लाभ लें और बच्चों के सही पालन-पोषण की निजी जानकारी बताकर माताएं जितना बाल-विकास कार्यक्रम को आगे बढ़ा सकती हैं, उतना और कोई नहीं. इसलिए पहला और मुख्य काम यही हाथ में लिया जाना चाहिए कि माताओं को व्यापक स्तर पर प्रशिक्षित किया जाए और प्रचार-तन्त्र के सभी साधनों—दूरदर्शन, आकाशवाणी, पत्र-पत्रिकाओं, ग्रामीण-केन्द्रों पर भीत्ति-चित्रों की सहायता से और मौखिक जानकारी देने का प्रबन्ध, बाल-मेले, कठपुतली प्रदर्शन आदि तथा संबधित उपयोगी साहित्य का प्रकाशन व प्रसार—को इस ओर मोड़ा जाए. प्रौढ़ शिक्षा के केंद्र भी इस कार्यक्रम को सफल बनाने में अपनी मुख्य भूमिका निभा सकते हैं, क्योंकि उनका उद्देश्य मात्र साक्षरता नहीं, व्यापक समाजशिक्षा और उन्नत परिवार की शिक्षा भी होना चाहिए.

बाल वर्ष का एक वर्ष तो इस कार्य के महत्व व इस समस्या की गंभीरता की ओर ध्यान आकर्षित करने का प्रतीक मात्र है. इतने बड़े काम की व्यापक योजनाएं बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने के लिए 'बाल-दशक' के रूप में दीर्घावधि परियोजना चलाई जानी चाहिए. पर आधारभूत बात यह जानना और प्रसारित करना है कि बच्चे के लिए कुछ करना उस पर अहसान करना नहीं है. मानव बच्चा सभी प्राणियों से अधिक बुद्धि-प्रतिभा से सम्पन्न होने, आने वाले समाज का निर्णायक होने पर भी सर्वाधिक समय तक बड़ों पर आश्रित रहता है, इसलिए बड़ों से सुविधाएं-संरक्षण प्राप्त करना उसका अधिकार है और उसे बिना किसी प्रतिदान की अपेक्षा के यह अधिकार देना समाज का दायित्व.

माता-पिता क्या करें ?

संयुक्त राष्ट्र संघ का बाल-अधिकार का घोषणा-पत्र सरकारों और संबधित समाजों के लिए एक निर्देशक सिद्धांत मात्र है, जो बाल-रक्षण, बाल-कल्याण योजनाओं और तत्संबंधित विधि-विधान के लिए प्रेरणा का काम करता है और विश्व-बचपन को सुरक्षा की गारंटी प्रदान करने वाली आधारसंहिता बनाने में सहायता करता है. पारिवारिक स्तर पर यह आधारसंहिता हर माता-पिता को स्वयं बनानी और क्रियान्वित करनी है. और यह केवल बच्चे का अधिकार समझने-मानने से ही संभव है. बच्चा आपके जिगर का टुकड़ा है; आप उसके लिए आसमान के तारे तोड़ लाने की बातें करते है, पर देखा जाए तो आप उसके लिए वही करते या करना चाहते हैं जो आपकी अपेक्षाओं के अनुरूप बैठता हो. कभी-कभी तो उसकी जरा सी बात, निर्दोष बात मानने मे भी आप उसके अधिकार की अवहेलना कर जाते हैं आप भूल जाते हैं कि बच्चे आपकी भावात्मक जरूरत हैं, तो बच्चों की अपनी भी कुछ भावात्मक जरूरतें होती हैं. प्रायः आप उनकी वही बात मानते हैं जिससे आपकी भावना संतुष्ट होती हो, उनका अधिकार मानकर नहीं.

आइए, देखें, गलती कहां पर होती है ?

बच्चा आपके लिए एक प्यारा सा खिलौना है, पर आप अक्सर भूल जाते हैं कि यह एक जीवंत खिलौना है, बेजान नहीं कि उससे आप अपने 'मूड' के अनुसार पेश आए और उससे खेलते समय उसकी भावना, अहं, आत्मसम्मान इच्छा-अनिच्छा को कोई अहमियत न दें. प्रायः उस पर आपका प्यार बरसता है आपके अच्छे मूड के अनुरूप और उसे डांट-फटकार मिलती है, आपके उखड़े मूड के अनुसार. क्या यह उसके नन्हे स्वतन्त्र व्यक्तित्व की अमान्यता नहीं ?

बच्चे को अपने खिलौने उसी तरह प्यारे होते हैं, जैसे आपको अपनी धन-सम्पत्ति. उसके पास वही तो सम्पत्ति है जिस पर वह अपना पूरा अधिकार चाहता है. किसी दूसरे बच्चे को अपने बच्चे का खिलौना उठा कर देते समय क्या आप उसके इस अधिकार का ध्यान रखते हैं कि उससे पूछ लिया जाए और उसकी सहमति से दिया जाए ? आजमा कर देखिए, आप स्वयं उसका खिलौना उठाकर किसी को दे दें या यों ही बिखरा हुआ देख कर उठाकर फेंक दें तो बच्चे का मूड उखड़ जाएगा और यदि उसके हाथ से संभलवाएं या किसी को दिखवाएं तो इसमें वह असीम सुख, संतुष्टि व गौरव

घर में छोटा बच्चा आया है. अक्सर माताएं एक झटके से बड़े बच्चे का मां की गोद का अधिकार छीनकर छोटे बच्चे को दे देती हैं, जिसे बड़ा बच्चा सहन नहीं कर पाता. तब वह रोने, मचलने, उद्दण्डता करने, मां की अवज्ञा करने के बहाने खोजने के साथ मौका मिलने पर छोटे भाई-बहन को नोचने, मारने, उसके खिलौने छीनने-तोड़ने में भी एक अजीब सुख का अनुभव करता है कि उसने बदला ले लिया. इसके बदले यदि छोटे भाई-बहन के आगमन से पूर्व ही उसे इसके लिए धीरे-धीरे मानसिक रूप से तैयार किया जाए और नए बच्चे के घर में आने पर उसे बड़े बच्चे के आगे कर उसे उससे प्यार करना सिखाया जाए तो वह न केवल उसे स्वीकार कर लेगा, खुशी से अपनी चीजें भी उसे देने में नहीं हिचकिचाएगा. बात केवल उसके अहं और अधिकार की रक्षा करने की है.

छोटे बच्चों की भी अपनी एक नन्ही दुनिया होती है, कल्पना का अपना एक निजी संसार होता है. आपका घर, छोटा हो या बड़ा, आप उसे एक पूरा कमरा दे सकें या एक कोना या मात्र एक आलमारी का एक दराज ही, उस जगह पर उसका अधिकार होना चाहिए. घर में मेहमानों के आगमन पर या अन्य किसी कारण से वह जगह उससे लेना जरूरी हो तब भी उससे पूछ अवश्य लिया जाए तो समस्या नहीं पैदा होगी, क्योंकि किसी वस्तु के छीने जाने में जो अपमान है, और स्वयं देने में जो आत्मगौरव है, उसे छोटे से छोटा-बच्चा भी बखूबी समझता है. उससे अनुमति लेकर आप उसके अधिकार व सम्मान की रक्षा आसानी से कर सकते हैं. पर क्या आप इन छोटी-छोटी बातों का ध्यान रखते हैं ?

शिशु को अपनी मां का दूध, मिलना भी उसका प्राकृतिक अधिकार है, माता-पिता और पूरे परिवार द्वारा प्यार, सुरक्षा, उचित देखभाल और संभव सुविधाएं (जिसमें सही शिक्षण-प्रशिक्षण, उचित पोषण व समय पर बीमारियों के इलाज की सुविधा भी शामिल है) पाना भी. आप उसे उसका अधिकार देंगे, उसके नन्हें व्यक्तित्व को भी मान्यता और सम्मान देंगे तो कोई कारण नहीं कि बच्चा आपको सम्मान और सहयोग न दे. जरूरत है केवल इस दृष्टिकोण से सोचने की और बच्चों के प्रति आपके व्यवहार में कोई खामी है तो उसे सुधारने व स्वयं को बदलने की.

प्रस्तुत पुस्तक इसी सोच, समझदारी और सक्रियता के लिए देश की माताओं को समर्पित है.

इस निर्देशिका को तैयार करने में जिन अनेक स्वदेशी और विदेशी लेखकों की पुस्तकों का सहारा लिया गया है, उन सबके प्रति आभार. विशेष मेडीकल विषयों पर जिन बालपोषण व बाल-चिकित्सा विशेषज्ञों का सहयोग उनसे साक्षात्कार करके प्राप्त किया गया है, उनके प्रति मैं विशेष आभारी हूं कि उनके ज्ञान व अनुभव का लाभ पुस्तक को प्रामाणिक व अधिक उपादेय बनाने के लिए मिल सका. प्रिंसिपल, सुचेता कृपलानी मेडीकल कालेज एवं अस्पताल तथा कलावती सरन चिल्ड्रेन अस्पताल और सुपरिंटेंडेंट, सफदरजंग अस्पताल तथा राममनोहर लोहिया अस्पताल के प्रति मैं विशेष रूप से कृतज्ञ हूं कि उन्होंने अपने योग्य डाक्टरों से साक्षात्कार की अनुमति प्रदान करने के साथ संबधित विषयों पर दुर्लभ छाया-चित्र तैयार कराने के लिए भी मुझे पूरी सुविधा व सहयोग प्रदान किया. संयुक्त राष्ट्र संघ बाल कोष (यूनिसेफ) द्वारा प्रदान उपयोगी चित्रों के लिए उनके अधिकारियों का साधुवाद करने के साथ, नर्सरी शिक्षण और कामकाजी माताओं के लिए चलाये जा रहे 'क्रेच' से संबधित चित्रों में सहयोग देने के लिए मैं 'शेडले क्रेच' व नर्सरी स्कूल, राजौरी गार्डन तथा 'सेक्रेड चाइल्ड जूनियर स्कूल', नारायणपुरी की संचालिकाओं को भी धन्यवाद देना चाहती हूं. छायाकार श्री कुलवंत सिंह और पुस्तक में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से किसी भी प्रकार की सहायता पहुंचाने वाले अपने सभी मित्रों-सहयोगियों के प्रति आभार प्रगट न करना तो धृष्टता होगी. साथ ही प्रकाशक श्री राम अवतार गुप्ता भी धन्यवाद के पात्र हैं कि उन्होंने देश की माताओं के प्रशिक्षण के लिए 'अंतर्राष्ट्रीय बाल वर्ष' में इस पुस्तक की योजना बनाई और इसे समय पर क्रियान्वित भी किया.

अंत में परिचित-अपरिचित अपने असंख्य पाठकों के प्रति भी मेरा विनम्र साधुवाद कि जिनकी प्रेरणा-प्रोत्साहन से घरेलू स्तर पर महिलाओं के प्रशिक्षण के लिए प्रस्तुत मेरी पुस्तक माला में यह एक पुष्प और जुड़ सका.

सी० 6 बी०, एम० आई० जी० फ्लैट्स,

आशारानी व्होरा

अनुक्रम







खंड 1

पालन पोषण





आपके शिशु के पालन–पोषण में सहयोगी कु



चाहे इससे फीडिंग टेबल का काम लीजिए,



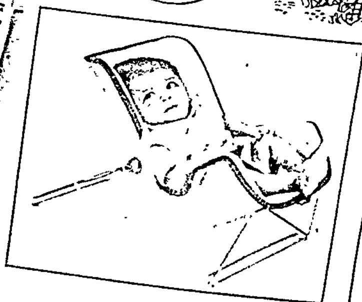
चाहे झूला झुलाइए

बहुपयोगी (मल्टी परपज) कुरसी



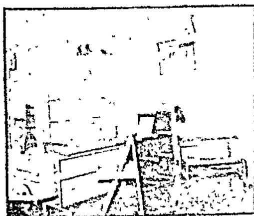


च्चे की सुरक्षा के लिए भी उपयोगी

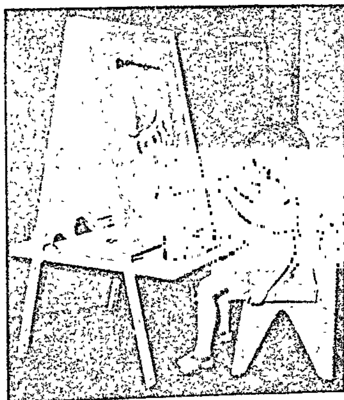


र केयर' से साभार

आकर्षक, उपयोगी व सुविधाजनक फरनीचर



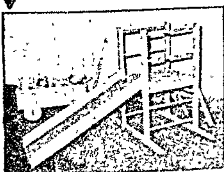
छोटे बच्चे के कमरे की सज्जा



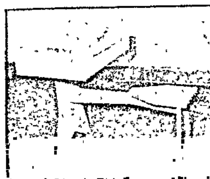
ईजल एंड ब्लैक बोर्ड



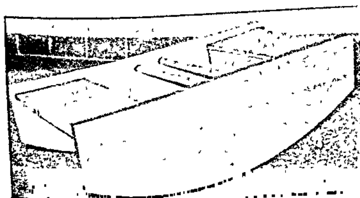
▲ स्लाइडर (फिसलपट्टी)
▼



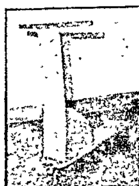




स्टडी टेबल



रॉकिंग बोट

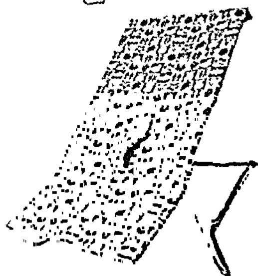






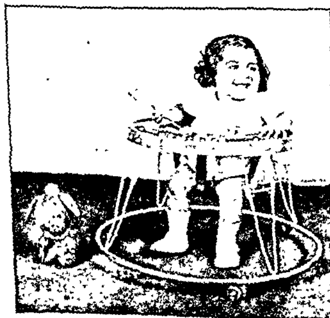
प्ले पेन





बेबी बाउंसर







फीडिंग चेयर

सभी/ केयर' से साभार

कुछ अन्य उपयोगी उपहार



प्रारंभिक प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त आरामदेह पॉटी



पॉटी व टॉयलेट सीट



फ्लोटिंग सोप केस



शैंप शील्ड : शैंपू से आंखों के बचाव के लिए

सभी चित्र 'चाइल्ड केयर' से साभार

माताओं से

क्या आप जानती हैं ?

- कि शिशु की सार-संभाल गर्भावस्था से ही प्रारंभ हो जाती है. तब एक स्वस्थ, सुंदर, प्रसन्नचित्त शिशु प्राप्त करने के लिए गर्भकाल में क्या सावधानियां अपेक्षित हैं ?
- कि जन्म के बाद सामान्य स्वस्थ शिशु की पहचान क्या है ? और यदि कोई समस्या या असामान्यता है तो क्या करना चाहिए ?
- कि शिशु के दूध में पानी नहीं मिलाना चाहिए. उसकी आंख में काजल-सुरमा नहीं डालना चाहिए ? उसकी आंख दुखने, दस्त लगने जैसी बीमारियों का उसके दांत निकालने से कोई संबंध नहीं है ?
- कि मां का दूध ही शिशु के लिए क्यों सर्वाधिक उपयोगी है ? और सही ढंग से स्तन-पान कैसे कराना चाहिए ?
- कि बच्चे को पूरक भोजन कब से देना शुरू करें ? क्या और कितना खिलाएं कि उसे संतुलित, पौष्टिक भोजन मिल सके व उसकी बढ़त ठीक हो ? भोजन संबंधी सही आदतें डालने के लिए क्या करें, उन्हें कैसे सुधारें ?
- कि आंख, कान, नाक, गले की देख-भाल व सुरक्षा के लिए क्या करें कि बच्चे इन रोगों से न घिरें ?
- कि अपोषण व कुपोषणजन्य बीमारियों के क्या खतरे हैं व उनकी रोक-थाम कैसे करें ?
- कि पेट के रोगों, पेट के कृमि व श्वास संबंधी रोगों से बचाव के लिए क्या करें, और दस्त, जुकाम-खांसी आदि होने पर क्या उपाय करें ?
- कि खसरा, छोटी माता आदि निकलने पर बच्चे की देखभाल कैसे करें व इनके बचावी उपाय क्या हैं ?
- कि बच्चों को [illegible] करें ?
- कि तपेदिक, [illegible]
- कि कुछ जन्म-जात [illegible] विकार सुधारने के लिए क्या संभव उपाय किए जा सकते हैं ? इनके लिए बचावी उपाय क्या हो सकते हैं ?
- कि बच्चों को मानसिक उलझनों, विकृतियों, व्यवहार संबंधी समस्याओं से बचाने के लिए क्या करें ? मंदबुद्धि बच्चों की देख-भाल, शिक्षण-प्रशिक्षण की विधियां क्या हैं ?
- कि बच्चों के संतुलित मानसिक विकास, चारित्रिक विकास और व्यक्तित्व निर्माण के लिए उन्हें भावात्मक सुरक्षा कैसे प्रदान करें ? उनके अधिकारों व अपनी अपेक्षाओं के बीच तालमेल कैसे बैठाएं ? उनमें सही आदतों के विकास के लिए क्या करें ?

प्रस्तुत पुस्तक में आपकी इन सभी जिज्ञासाओं, शंकाओं, दुविधाओं और समस्याओं का सहज सरल ढंग से समाधान करने का भरसक प्रयत्न किया गया है. आशा है, अपने अनमोल बच्चे के लिए सब कुछ करने-सीखने के लिए उत्सुक आप इस निर्देशिका को एक बार अवश्य पढ़कर देखना चाहेंगी, और उसके बाद इसे हमेशा अपने पास रखने की अनिवार्यता अनुभव करेंगी.

इसी में मेरे इस प्रयत्न की सार्थकता होगी.

—लेखिका

1

शैशव की सार-संभाल गर्भकाल से ही

[लेडी हार्डिंग अस्पताल की प्रसूति विशेषज्ञ डा० एस. वोहरा के निर्देशन में तैयार]



मातृत्व : हर नारी का एक सुखद सपना

शिशु की सार-संभाल पर लिखते समय हमें गर्भकाल से ही प्रारंभ करना होगा, क्योंकि शिशु के स्वास्थ्य की बुनियाद यहीं से बनती है. जन्म के समय शिशु का वजन, कद, ठीक समय पर उसका जन्म, जन्म के बाद उसकी रोगों से लड़ने की क्षमता, उसके शारीरिक-मानसिक विकास का स्तर बहुत कुछ गर्भकाल में मां के पोषण और शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य पर ही निर्भर करता है.

खेद है कि हमारे देश में मां-शिशु के अच्छे स्वास्थ्य में गरीबी तो आड़े आती ही है, उससे भी अधिक आड़े आती है बहुसंख्यक माताओं की इस बारे में अनभिज्ञता— कि अपने प्राप्त साधनों में ही वे किस तरह अपनी व अपने शिशु की ठीक से देखभाल कर सकती हैं—कि पौष्टिक भोजन का अर्थ महंगा भोजन ही नहीं होता, उसे कम खर्च में भी जुटाया जा सकता है, यदि सहज प्राप्य खाद्य-पदार्थों में से ही उचित भोज्य-तत्वों का चुनाव किया जा सके— कि आसपास ग्रामीण-केंद्रों में, कस्बाई व शहरी अस्पतालों में जो मां-शिशु के लिए स्वास्थ्य सेवाओं, जिनमें पौष्टिक भोजन व ताकत की दवाओं का वितरण भी शामिल है, से कैसे लाभ उठाया जाए. या डाक्टरी निर्देश में रह कर कैसे अनेक बीमारियों व प्रसूति संबंधी जटिलताओं को टाला जा सकता है. अज्ञानता के साथ परंपरागत अंधविश्वासजनित खानपान की गलत आदतें, सफाई-स्वच्छता की आदतों का अभाव और लापरवाही भी इसके पीछे है.

अधिकांश माताएं न तो व्यायाम-विश्राम का उचित सतुलन जानती हैं, न स्वच्छता-सफाई के प्रति सावधान होती हैं न उचित भोजन लेती हैं, न समय पर डाक्टरी सहायता प्राप्त करती हैं. फिर जब दुष्परिणाम का सामना करना पड़ता है तो भाग्य को दोष देने लगती हैं. तब भी बीमारी या जटिलता का समय पर समाधान प्रायः नहीं खोजा जाता. सभी अस्पतालों व मातृ-केंद्रों के डाक्टरों की शिकायत है कि उनके पास बीमारी बढ़ाकर लाई जाती है, जबकि समय पर उचित इलाज से ही अच्छे परिणाम की आशा की जा सकती है, श्रम, समय व परेशानी की बचत भी. अतः पहली जरूरत

है, इस बारे मे व्यापक रूप मे माताओं का प्रशिक्षण. माताएं
दुर्बल और रोगी बच्चों को जन्म न दें, स्वय रोगों से न
घिरें और प्रकृति के वरदान, अपने मातृत्व को सरल-सफल
बना सकें, बच्चो को रोगो से,विकृतियो से बचा कर अच्छे
स्वास्थ्य की नीव पर उनके जीवन का ढाचा खडा कर सकें,
इस के लिए उन्हे समय पर उचित डाक्टरी सलाह मिलना
बहुत आवश्यक है. यहा एक वरिष्ठ लेडी डाक्टर सुश्री
एस. वोहरा की सहायता से यही प्रयत्न किया जा रहा है.
लीजिए डाक्टरी निर्देश व सुझाव प्रस्तुत हैं :

सामान्य सावधानियां

□ गर्भ का पता चलते ही सही तिथि नोट करके रख
लें कि बाद मे डाक्टर को बताने मे भूल न हो.

□ प्रारभ से ही डाक्टर से सपर्क करें. समय-समय पर
अपनी जाच कराती रहे और पूरी तरह डाक्टरी निर्देशन
मे चलें. समीप के मातृ-केंद्र, अस्पताल या प्राइवेट क्लीनिक
मे अपना नाम रजिस्टर्ड करा लें वहा डाक्टर द्वारा खून,
पेशाब, रक्तचाप, वजन, पोषण, आदि की जाच होते रहने
से गर्भवती को बहुत लाभ होगा. शरीर मे यदि किन्ही तत्त्वो
की कमी है, गर्भवती को कोई रोग है तो उसका निदान व
इलाज समय पर किया जा सकेगा. वह डाक्टरी सलाह मे
उचित भोजन, टानिक व दवाएं ले सकेगी. खून की परीक्षा
से पता चल जाएगा कि गर्भवती मे खून की कमी तो नही
है? साथ ही उसके 'ब्लड-ग्रुप' का भी पता चल जाएगा और
समय पर खून देने की आवश्यकता पडे तो उसका पहले से
से इतजाम किया जा सकेगा. जिन महिलाओ मे खून आर०
एच० नेगेटिव होता है, उनके शिशु की पीलिया या अन्य
जटिलता से मृत्यु हो जाने का डर रहता है. समय से पूर्व
आर० एच० नेगेटिव का पता चल जाने से सावधानी बरती
जा सकती है और शिशु मे नया खून 'ट्रासफ्यूजन' करा कर
उसकी प्राण-रक्षा की जा सकती है.

□ जाच मे आर० एच० नेगेटिव मिलने पर बच्चा
होने के तीन दिन के भीतर मा को एक इजेक्शन (जो महगा
होता है व तीन-चार सौ मे आता है) देकर अगले बच्चे की
सुरक्षा की जा सकती है. खून की जाच से यौन रोग का भी
समय मे पूर्व पता लगा लिया जाता है और समय रहते
उसका उपचार कर शिशु को विकृतियों से बचा लिया जाता
है. इसके अलावा समय-समय पर वजन लेकर डाक्टर यह
भी बता सकेगी कि गर्भ मे शिशु का विकास ठीक हो रहा
है कि नही ? इस प्रकार वजन, खुराक, रक्तचाप, बीमा-
सभावित जटिलताओ पर नियत्रण रखने में



नियमित डाक्टरी जाच आपको प्रसव सम्बन्धी कई
जटिलताओं से सुरक्षित रखेगी

सहायता मिलेगी और प्रसव सामान्य सरल व कष्टरहित,
जच्चा-बच्चा के लिए हानिरहित कराया जा सकेगा.

□ डाक्टर को पूर्व इतिहास की भी पूरी व सच्ची
जानकारी दीजिए. यह सभी तरह मा व शिशु दोनो के हित
मे है. सामान्य जांच के अलावा डाक्टर आपके रोग का
इतिहास जान आपको कई संभावित जटिलताओं से बचा
सकेगी. आपको ज्यादा उल्टिया तो नही होती ? दौरे तो
नही पड़ते ? बीच-बीच मे रक्तस्राव तो नही होता ? समय
से पूर्व पहले कोई गर्भ गिर तो नही गया ? समय से पूर्व
प्रसव तो नही होते ? मरे हुए बच्चे तो नही पैदा होते रहे ?
पूर्व गर्भकाल मे या प्रसव के समय रक्तचाप की क्या स्थिति
रही ? क्षय, मधुमेह, गुप्त रोग जैसे रोग तो नही ? बच्चो की
सख्या कितनी है और यह प्रसव किस नबर का है ? तीसरे
बच्चे के बाद चौथे, पाचवें, छठे नंबर पर प्रसव मे कठिनाई
इसी अनुपात मे बढती जाती है.

□ कई महिलाएं पहले बच्चो की संख्या सही नही
बताती तो अपेक्षित सावधानी से वचित रख समय पर
डाक्टर को कठिनाई मे डाल देती है, जो स्वय उनके हित मे
ठीक नही होता. पहले बच्चे के समय भी प्रसव कुछ कठिन
होता है, दूसरे पूर्व इतिहास न होने से प्रसूता की विशेष

प्रकृति या प्रवृत्ति का भी ज्ञान नही होता, तीसरे अनेक बार नई मां मनोवैज्ञानिक रूप से इसके लिए तैयार नही होती और भयाक्रांत होती है, जिससे प्रसव में कठिनाई व जटिलताएं पैदा होती हैं. तो यह बहुत आवश्यक है कि पहला बच्चा अस्पताल में ही हो या घर पर कुशल प्रशिक्षित दाई द्वारा, ताकि समय पर कोई जटिलता पैदा होने पर उसे संभाला जा सके.

□ यदि ये आवश्यक सावधानियां बरती जाएं और ठीक खुराक ली जाए तो आजकल डाक्टरी विज्ञान ने प्रसव को इतना सरल व हानिरहित बना दिया है कि भय या चिन्ता की कोई बात नही. नई माताओं को भी भय, चिंता से मुक्त होकर इसका सामना करना चाहिए और प्रसन्नता व गौरव से होने वाले शिशु की प्रतीक्षा करनी चाहिए. वैसे भी गर्भावस्था कोई बीमारी नही है, न ही इसका स्त्री के स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है. बल्कि बहुत बार तो मातृत्व के बाद नारी का सौंदर्य अधिक निखरता है. अत: चितारहित प्रसन्न मन से इसके लिए स्वयं को तैयार करना चाहिए. यह मानसिक तैयारी और डाक्टर से सहयोग भी प्रसव को सामान्य बनाने में मदद करता है. गर्भ में शिशु की सुरक्षा, उसका अच्छा शारीरिक-मानसिक विकास और प्रसव के बाद मां की दूध पिलाने की क्षमता इससे प्रभावित होती है. यह बात भी प्रत्येक मा को याद रखनी चाहिए.

□ सही खुराक के साथ व्यायाम और विश्राम के संतुलन पर भी ध्यान देना होगा. गर्भवती के लिए आठ घंटे की नीद आवश्यक है, इस समय उसे पहले की अपेक्षा अधिक आराम की जरूरत है. गर्भ के अंतिम महीनों में स्त्रियां जल्दी थक जाती हैं, तो उन्हे दिन में भी घंटे-दो-घंटे आराम की आवश्यकता होती है. जब भी थकान का अनुभव हो, शरीर को ढीला छोड़ कम से कम पंद्रह मिनट अवश्य आराम करें. पर जब तक कोई विशेष स्थिति न हो और डाक्टर मना न करे, दिन भर लेटे रहना या सामान्य दैनिक कामकाज न करना ठीक नहीं.

□ घर के कामकाज के साथ हलके व्यायाम करना या सुबह-शाम टहलना भी चाहिए ताकि स्वच्छ हवा, धूप मिले और खाना ठीक हजम हो. धूप से विटामिन 'डी' मिलता है जो मां, शिशु की हड्डियों के लिए आवश्यक है. स्वच्छ हवा से अनेक बीमारियों से बचाव होता है. गर्भवती के लिए टहलना सर्वोत्तम व्यायाम है. पर आरंभिक दिनो में और अंतिम दिनों में अधिक दूरी तक टहल कर थकना ठीक नही. यों भी अधिक परिश्रम के थकाने वाले कामों से बचना चाहिए. भारी वजन उठाने, लंबी यात्रा करने, दौड़-कूद करने तथा लंबे समय तक सीधे खड़े रहने से बचना जरूरी है. प्रथम तीन महीने मे और अंतिम दिनों में तो इन बातों का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए. यदि पहले गर्भपात हो चुका हो तो कामकाज व विश्राम के बारे में डाक्टर की राय से ही चलना ठीक होगा.

□ गर्भवती के कपड़े ढीले व सुविधाजनक हों. पेट पर नाड़ा कस कर नही बांधना चाहिए. न ही तंग कपड़े पहनने चाहिए.

□ गर्भकाल में दांतों की विशेष देखभाल भी जरूरी है. दांतों की सफाई का पूरा ध्यान रखें और कैलशियम व विटामिन 'सी' की ठीक मात्रा डाक्टर से पूछ कर लें. इन तत्त्वों की कमी के कारण मां के दांत खराब हो सकते हैं. अतिरिक्त कैलशियम न लेने के कारण मा के शरीर मे इसकी कमी हो जाती है, क्योंकि शिशु की हड्डियो के निर्माण मे मा के शरीर से कैलशियम खिंच जाता है. इसके अलावा यदि गर्भावस्था में दांतो की किसी तकलीफ के कारण दंत-चिकित्सक के पास जाना पड़े तो उसे अपनी गर्भावस्था के बारे मे बता देना चाहिए. गर्भावस्था मे दांत उखड़वाना ठीक नहीं होगा.

□ सिर के बालों और शरीर के सभी अंगों की सफाई-स्वच्छता का भी विशेष ध्यान रखें. बालो मे रूसी न पड़े, इसके लिए उनकी नियमित सफाई जरूरी है. गुप्तांगों की सफाई भी नियमित करनी चाहिए.

□ गर्भावस्था में स्तनों पर तो विशेष ध्यान देने की जरूरत है, ताकि वे ठीक हालत मे रहे और शिशु को दूध पिलाने में कठिनाई न हो. नियमित सफाई के अलावा निपल्स को हलके हाथ से ऊपर की ओर खींचते रहना चाहिए कि वे दबी हुई स्थिति मे न रहे. इसके लिए चुस्त, पर ठीक फिटिंग वाली सुविधाजनक ब्रेजरी पहनना भी आवश्यक है जो स्तनो को उठाकर रखे, पर अधिक कसी न हो. स्तनों की बढोतरी में उससे बाधा नही पड़नी चाहिए. आठवें महीने से निपल्स के छिद्रों को गर्म पानी से साफ करना शुरू कर दें. निपल्स दबी हुई हो तो क्रीम से मालिश कर उन्हें उठाने का प्रयास किए बिना दूध पिलाने मे कठिनाई आ सकती है.

□ प्राय: महिलाएं यह जानने के लिये भी उत्सुक रहती हैं कि गर्भावस्था मे सहवास करें या नही. उनके लिए यह जानकारी भी जरूरी ही है. शिशु की सुरक्षा की दृष्टि से प्रथम तीन महीने मे और अंतिम छ: सप्ताह पूर्व इससे बचना चाहिए. छठे मास से ही इस बात का ध्यान रख लेना ठीक होगा कि गर्भस्थ शिशु पर दबाव न पड़े.

का इतिहास हो तो प्रथम तीन महीनो के बाद भी डाक्टर की राय से चलें. वैसे बीच का समय हानिरहित ही होता है

□ एक विशेष सावधानी यह भी कि गर्भकाल मे डाक्टर से पूछे बिना स्वय कोई दवा न लें. प्रथम तीन महीनो मे तो एटीबायोटिक दवाओ, सलफा दवाओ, कुनीन, शामक दवाओ और नीद की गोलियों से बच्चे को हानि होने का विशेष खतरा रहता है. अत रोग विशेष मे दवा लेनी ही पडे तो डाक्टर को गर्भावस्था के बारे मे अवश्य बता दें. इसी तरह कब्ज होने पर जुलाब लेना भी ठीक नही. कब्ज न हो, इसके लिए पर्याप्त पानी पीना चाहिए और हरी सब्जियो, फलो का भरपूर प्रयोग करना चाहिए. इनसे खनिज और विटामिन भी मिलेंगे.

□ गर्भावस्था में 16 से 22 पाउंड तक वजन बढ़ता है. प्रथम तीन महीनो के बाद प्रति सप्ताह एक पाउड या मास मे चार पाउंड से ज्यादा वजन नहीं बढना चाहिए. इससे काफी कम या अधिक वजन होने पर अपनी डाक्टर से परामर्श करें. समय-समय पर वजन लेते रहने से डाक्टर स्वय ही इस बारे मे निर्देश देगी इसीलिए तीन महीने से पूर्व ही रजिस्ट्रेशन करा लेने व समय-समय पर जाच कराते रहने की सलाह दी जाती है. इससे वजन नियंत्रण के साथ अन्य स्थितियो पर भी डाक्टर की निगाह रहेगी.

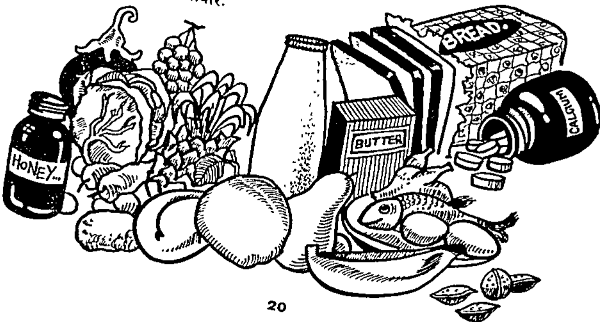
□ उल्टिया अधिक होती हों, रक्त का धब्बा लगता हो, पैरो मे सूजन हो, थकान अधिक महसूस होती हो, कमर मे दर्द हो, नीद ठीक न आती हो, त्वचा मे खुजली हो, अपच या गैस हो, कब्ज की शिकायत हो, पेशाब अधिक आता हो, गर्भ के अंतिम दिनों में छाती मे जलन व बेचैनी हो, सांस फूलती हो, इनमें से यदि एक भी शिकायत हो तो डाक्टर से परामर्श करना चाहिए. पांवों पर सूजन, सिर दर्द, कम पेशाब, बढ़ी हुई दिल की धड़कन, चक्कर, आखों के आगे अंधेरा, ये लक्षण हों तो तुरंत डाक्टर के पास जाएं और यदि डाक्टर अस्पताल में भरती होने के लिए कहे तो उससे कतराएं नहीं, क्योंकि ये लक्षण बढ़े हुए रक्तचाप के हो सकते हैं, जिससे मां, शिशु दोनों को खतरा हो सकता है. ऐसे मे खानपान व विश्राम आदि के बारे में पूर्णतया डाक्टर की राय से ही चलना चाहिए. अन्य किसी प्रकार की तकलीफ मे भी स्वयं इलाज न कर डाक्टर के पास ही जाना चाहिए, ताकि जटिलताए पैदा न हों.

गर्भवती का भोजन

बच्चे का निर्माण, पोषण, उसका स्वास्थ्य और मां का स्वास्थ्य गर्भवती के भोजन पर ही सर्वाधिक निर्भर करता है, इसलिए यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है, जिसके बारे मे हर माता को जानना चाहिए.

हमारे यहां पुराने विचार के लोगों में आम धारणा पाई जाती है कि गर्भवती को दो प्राणियों का भोजन करना है इसलिए अधिक खाना है, जबकि अधिक मात्रा मे भोजन नही, कुछ पोषक-तत्त्वो की अतिरिक्त मात्रा मे जरूरत होती है. गर्भवती के भोजन मे अतिरिक्त बढाए जाने वाले ये तत्त्व है . प्रोटीन, कैलशियम, लोहा विटामिन. इसलिए

गर्भवती मां के लिए संतुलित व पौष्टिक आहार,
शिशु के स्वास्थ्य का आधार.



इन भोज्य-तत्वों से भरपूर खाद्य पदार्थों की मात्रा बढ़ाई जानी चाहिए, न कि अनाज और घी की. कुछ आधुनिक विचार की महिलाओं में एक और गलत धारणा पाई जाती है कि कम खाने से प्रसव में सरलता होगी और मोटापा नहीं बढ़ेगा. यहां भी कम खाने का अर्थ अनाज और चिकनाई की कम मात्रा न लेने से होना चाहिए, न कि आवश्यकता से कम खाकर स्वयं को और बच्चे को कमजोर बनाने से.

एक तीसरे प्रकार की भी गलत धारणा स्त्रियों में आम पाई जाती है कि गर्भवती की जिस खाद्य पदार्थ को ग्रहण करने की इच्छा हो, वह उसे अवश्य मिलना चाहिए. उल्टी आने की स्थिति में तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से कथन में कुछ सार अवश्य है पर इसका यह अर्थ नहीं कि मिट्टी खाने का मन है तो वही खाए चला जाय या अधिक मिर्च मसाले वाले, खट्टे और तले भोजन का अधिक उपयोग किया जाए, जैसा कि आम महिलाएं करती भी हैं. इसका परिणाम होता है, आवश्यक भोज्य-तत्वों की कमी और इनके प्रयोग से होने वाली हानियां और बीमारियां.

पौष्टिक किंतु सुपाच्य भोजन

गर्भवती का भोजन पौष्टिक किंतु सुपाच्य होना चाहिए, जिसमें दूध, फलों और हरी सब्जियों को प्रमुखता दी गई हो. दूध का प्रयोग नियमित रूप से किया जाना चाहिए और पर्याप्त मात्रा में. विशेष रूप से जो महिलाएं मांस व अंडे का सेवन नहीं करतीं, उन्हें प्रतिदिन कम से कम एक लिटर दूध का प्रयोग दही, पनीर, दूध आदि किसी भी रूप में करना चाहिए. पूरा दूध न मिल सके तो बदले में सपरेटा दूध व छाछ से भी लाभ होगा, क्योंकि इनमें भी कैल्शियम पूरी मात्रा में मिलता है जो बच्चे की हड्डियों के निर्माण व मां के दांतों की सुरक्षा के लिए आवश्यक है. दूध की मात्रा कम होने पर डाक्टर से पूछकर कैलशियम की गोलियों का प्रयोग अवश्य करें. इसी तरह लोहा, फासफोरस आदि आवश्यक खनिज-तत्वों और रोग-निरोधक विटामिनों की पूर्ति के लिये भरपूर मात्रा में फलों व शाक-सब्जियों का प्रयोग भी आवश्यक है.

खुराक से इन तत्वों की पूर्ति न होने पर फोलिक एसिड, विटामिन 'बी काम्प्लैक्स' विटामिन 'डी' की अतिरिक्त मात्रा भी दवाओं के रूप में लेनी पड़ती है,जिसके लिए अपनी डाक्टर से परामर्श करना चाहिए और टॉनिक की मात्रा उसके निर्देशन के अनुसार ही लेनी चाहिए. जो महिलाएं ये आवश्यक टानिक खरीद नहीं सकतीं, उनके लिए आजकल सभी अस्पतालों, मातृ-शिशु केंद्रों में ये चीजें मुफ्त वितरित करने की व्यवस्था है. इस उपलब्ध सेवा से लाभ उठाना चाहिए. हरे शाक, सब्जियां हर मौसम में उपलब्ध होती हैं. फलों से तात्पर्य भी महंगे फलों से ही नहीं है, प्रत्येक मौसम के मौसमी सस्ते फल भी उतने ही उपयोगी हैं. गाजर, टमाटर, पालक का महत्व किसी भी तरह सेब से कम नहीं है. फिर आजकल तो बहुत से मौसमी फल सब्जी के भाव बाजार में उपलब्ध हो जाते हैं.

प्रोटीन के लिए दूध के अलावा मांस, मछली, अंडे की जरूरत होती है. जो महिलाएं मांस या अंडा नहीं लेतीं, वे बदले में थोड़ा पनीर लें. यह भी न मिले तो भोजन में चने, मूंग, मटर, राजमा आदि दालों की मात्रा बढ़ा लें. सोयाबीन, अंकुरित दालें व अंकुरित अनाज प्रोटीन और खनिज-विटामिन की दृष्टि से बहुत ही उपयोगी हैं. साथ में थोड़ी मूंगफली ली जा सकती है जो कि प्रोटीन का भंडार है. बादाम आदि मेवों के स्थान पर मूंगफली से कुछ अधिक लाभ ही मिलेगा और यह बहुत सस्ती भी होती है.

विटामिन 'डी' के लिये धूप सेकनी चाहिए. विटामिन 'सी' की पूर्ति के लिए आंवला, अमरूद, नींबू का अधिक प्रयोग करें. ये चीजें भी महंगी नहीं हैं. अतः यह कहना कि गर्भवती के भोजन में आवश्यक तत्वों की पूर्ति के लिए महंगाई आड़े आती है, ठीक नहीं होगा. आड़े आती है अधिकतर अज्ञानता और लापरवाही, अन्यथा भोज्य-तत्वों की उचित जानकारी से कम बजट में भी संतुलित पौष्टिक भोजन लेना कोई कठिन समस्या नहीं. हां, वहां समस्या अधिक गंभीर है जहां (अभावग्रस्त वर्गों में) गर्भधारण से पूर्व ही माताओं में भूख और कुपोषण के कारण पोषक-तत्वों की बहुत कमी होती है. गर्भधारण के पश्चात प्राकृतिक नियम से गर्भस्थ शिशु तो मां के शरीर में से अपने लिए आवश्यक तत्व खींच लेता है और मां और भी कुपोषित हो जाती है. परिणाम होता है समय से पूर्व प्रसव, मृत शिशु कमजोर और रोगी बच्चा और बाद में मां का रोगों से घिर जाना, मां की मृत्यु भी संभावित है. इसीलिए आजकल हर ग्रामीण-केंद्र और कस्बे में मातृ-शिशुकल्याण-केंद्र में, माताओं और शिशुओं के पोषण की नि.शुल्क व्यवस्था की गई है. इन केंद्रों पर नियमित जांच कराते रहने से डाक्टर स्वयं ही आपको बीमारियों से बचाव और खान-पान संबंधी निर्देश देने के साथ ये टॉनिक भी देगी. जरूरत है केवल जानकारी रखने की तथा इन केंद्रों से लाभ उठाने की.

कैलोरी बढ़ाएं, पर गरिष्ठ भोजन से नहीं : गर्भवती को अधिक मात्रा में भारी भोजन —पूरी, कचौरी, पराठा, हलुआ, मलाई, रबडी. मिठाइयां, चाट-पकौड़ी और अधिक घी व मिर्च मसालों से भून-भून कर पकाई सब्जिया आदि नही लेनी चाहिए. इस तरह के गरिष्ठ भोजन से ताकत बनने का वहम मन से निकाल दे. उलटे इससे कब्ज, अपच, छाती में जलन के साथ अन्य अनेक बीमारिया घेरेंगी. आवश्यकता से अधिक वजन बढने पर भी कई तरह की जटिलताओं का सामना करना पड़ सकता है और प्रसव कठिन हो सकता है. जिस तरह कुपोषण से मां-शिशु को अनेक रोग होते है उसी तरह गलत पोषण से भी. सामान्य स्त्री की आवश्यकता है : 1800-2400 कैलोरी. गर्भवती मां को 2500 से 3000 तक कैलोरी वाले भोजन की आवश्यकता होती है. अतिरिक्त कैलोरी की पूर्ति मास, मछली, लिवर, अंडा, दूध, दही, पनीर, दालें, सोयाबीन, मूगफली या अन्य मेवे, चने, मटर आदि की मात्रा बढाकर की जानी चाहिए, न कि घी युक्त तले भोजन या मिठाइयों से. हां, थोडा मक्खन जरूर दिया जाना चाहिए. घी, चीनी की भी थोड़ी मात्रा ली जा सकती है. पर रक्तचाप, मधुमेह आदि की शिकायत हो तो इस सबध में डाक्टरी निर्देश से ही चलें. तब भोजन नियत्रण से ही स्थिति पर नियत्रण लाना होता है. पर हर हालत मे फलो, सब्जियों की भरपूर मात्रा बहुत आवश्यक है या बदले में खनिज या विटामिनों की गोलियो की.

स्वच्छ व ताजा भोजन : यह भी आवश्यक है कि भोजन ताजा हो. स्वच्छता से पकाया गया हो. साथ ही पकाने का तरीका ऐसा हो कि भोजन के गुण नष्ट न हों. अधिक तलने, भूनने से विटामिन नष्ट हो जाते हैं. बिना ढके रखा हुआ भोजन, बासी भोजन, बाजार के कटे हुए व गले-सड़े फल कभी न खाएं. खट्टी चीजें खाने की इच्छा हो या जी मिचलाता हो तो नीबू, आवले को पोदीने में मिलाकर चटनी बना लें. इससे जी ठीक होगा. हाजमा बढेगा और विटामिन 'सी' भी मिलेगा. मिट्टी खाने का मन करता हो तो बदले मे कैलशियम की गोलिया लें. स्वाद और पोषण दोनों आवश्यकताएं पूरी होंगी. अधिक चाय, काफी का सेवन ठीक नहीं. सामान्य मात्रा ली जा सकती है.

सब्जियों का सूप लेने की आदत डालें व पानी अधिक पिएं, ताकि कब्ज न हो और पेट साफ रहे. सूप से विटामिनों की पूर्ति भी होगी. कब्ज-निवारण के लिए सुबह उठ कर एक गिलास ठडे या सरदी में गुनगुने पानी में एक नीबू और एक बड़ा चम्मच शहद पिए. इस प्रयोग से चेहरे पर झाइयां भी नहीं पड़ेंगी. कब्ज अधिक हो तो दूध के साथ तीन-चार अजीर, या मुनक्का लेने और 'बी काम्प्लेक्स' लेने मे लाभ होगा. जुलाब कभी नहीं लेना चाहिए. गर्भ के आखिरी दिनों में पेट पर अधिक कसाव के कारण और कुछ चिंता के कारण भोजन ठीक से नही पचता. पर उस समय कम मात्रा में आहार लेने पर यह ध्यान रखना होगा कि उसमे पोषक तत्वों की मात्रा कम न हो जाए. इस संबंध मे अपनी डाक्टर से राय लें तो अधिक अच्छा होगा.

मुख्य सावधानियां : इस प्रकार गर्भवती को भोजन सबधी इन मुख्य सावधानियों की जानकारी आवश्यक है :

□ आहार मे तली भुनी, मिर्च मसाले वाली चीजों का कम से कम प्रयोग.

□ चरबी बढ़ाने वाली चीजों का कम से कम प्रयोग.

□ प्रोटीन, कैलशियम, लौह, विटामिनों की अतिरिक्त मात्रा की आवश्यकता. इसके लिए प्रोटीनयुक्त पदार्थों तथा फल-साग-सब्जी का भरपूर मात्रा मे प्रयोग.

□ कब्ज न होने देना. इसके लिए पर्याप्त पानी पीना, सब्जियों का सूप लेना. फिर भी कब्ज हो तो डाक्टर की राय से उसका उपाय करना.

□ भोजन में पोषण की कमी होने पर डाक्टर की राय से विटामिनो की गोलियां व टॉनिक लेना.

□ बजट के अभाव मे सस्ते पौष्टिक भोजन की जानकारी प्राप्त करना.

□ भोजन में स्वच्छता और पोषक-तत्वों की रक्षा का ध्यान रखना, ताजा भोजन लेना.

□ न भूख से अधिक खाना, न भूखा रहना. देर तक भूखे रहने या अधिक व्रत-उपवास से हानि.

□ भोजन चितारहित, शांत मन:स्थिति में करना. भोजन के उपरांत कम से कम आधा घंटा विश्राम लेना.

आहार से संबंधित बीमारियां

एनीमिया या खून की कमी : हमारे देश मे कुपोषणजनित यह बीमारी आम है. गरीबी के अलावा अनभिज्ञता और लापरवाही भी इसका कारण है. बच्चे के खून के निर्माण के लिए माता के शरीर मे कुछ अतिरिक्त खून बनाने के लिए सामान्य स्थिति की अपेक्षा अधिक मात्रा में लौह तत्त्व की आवश्यकता होती है. गर्भ धारण के अंतिम दो-तीन महीनो मे तो लौह तत्त्व की आवश्यकता और भी बढ जाती है. अत: लौहयुक्त खाद्य पदार्थों—पालक, अन्य हरी सब्जियां, केला, मांस मछली, अंडा, लिवर, सेब जैसी

चीजें लेनी चाहिए. साथ में डाक्टर की राय से फोलिक एसिड भी, अन्यथा मां के शरीर में खून की कमी से कई रोगों, जटिलताओं का सामना करना पड़ सकता है और बच्चा भी कमजोर पैदा हो सकता है. कई बार तो एनीमिया का समय पर इलाज न करने से यह बीमारी जानलेवा भी सिद्ध हो सकती है. इसलिए कमजोरी महसूस होते ही डाक्टर से परामर्श करें.

कब्ज : लगातार कब्ज रहती हो तो भी अनेक बीमारियों, जटिलताओं का अंदेशा रहता है, इसलिए कब्ज कभी न होने दें. इससे बचने के लिए पहले बताए अनुसार गरिष्ठ भोजन कम से कम लेकर भरपूर मात्रा में हरी साग-सब्जियों का प्रयोग करें. फलों के रेशे, खाए जा सकने वाले सब्जियों के छिलके, चोकर सहित रोटी लेने और पर्याप्त पानी पीने से कब्ज का निवारण होता है. फिर भी कब्ज रहती हो तो स्वयं रेचक दवा न लेकर डाक्टर की सलाह से उसका उपाय करें.

गर्भावस्था की सामान्य शिकायतें व उनका उपचार

उल्टी होना : उल्टियां सभी गर्भवती महिलाओं को नहीं आती. जिन्हें आती है, उन्हें भी यह प्रवृत्ति प्रायः प्रथम तीन महीने ही रहती है. उसके बाद गर्भ में बच्चा स्थिर हो जाने पर स्वयं ही यह शिकायत दूर हो जाती है. अक्सर सुबह उठते ही जी मिचलाता है. कई बार दिन में भी किसी चीज से अरुचि पैदा होने पर या गंध विशेष को न सहन करने पर उल्टी हो जाती है. ऐसी सामान्य उल्टी से घबराने की जरूरत नहीं. गर्भवती को चाहिए कि जिस चीज से उल्टी होती है वह न ले. एक बार में अधिक न खाकर थोडी-थोड़ी देर में थोड़ा-थोडा खाए. पानी अधिक न पिए. सुबह उठकर खाली पेट पानी न पिए. सुबह मुंह साफ करने के बाद ग्लूकोज बिस्कुट जैसी कोई हलकी मीठी चीज ले लेनी चाहिए. उसके बाद दूध, चाय, नीबू ,पानी आदि पेय लेना चाहिए. खाली पेट भी कभी न रहें. न एक बार में पेट भरकर खाएं ,पर उल्टी अधिक होती हो तो डाक्टर की राय अवश्य लेनी चाहिए, क्योंकि इसके कई कारण होते हैं. डॉ. एस. वोहरा की राय में कभी-कभी पेट में बच्चा अंगूर के गुच्छे जैसा बन जाता है और बार-बार उल्टी होने लगती है. जिसका उपाय डाक्टर ही कर सकती है. डा० वोहरा का यह भी कहना है कि उल्टी हमेशा प्रारंभिक अस्थिर गर्भ के कारण ही नहीं होती. इसके कुछ मनोवैज्ञानिक कारण भी होते है ,जैसे मातृत्व की अनिच्छा, भय आदि. इसके लिए स्वयं का विश्लेषण कर उस कारण को दूर करना चाहिए या डाक्टर की राय लेनी चाहिए. पर यह ध्यान रखें कि उल्टी के डर से खाना कम न किया जाए. थोड़ा-थोड़ा खाते रहना ठीक होगा. फिर उल्टी बंद हो जाने पर खुराक बढ़ा देना चाहिए.

छाती में जलन : गर्भ के आखिरी दिनों में पेट पर दबाव के कारण कुछ बेचैनी व छाती पर जलन होना स्वाभाविक है. इसके लिए दूध, दही थोडी-थोडी देर से लेते रहना चाहिए कि जलन ठीक हो और खाना कम करने पर भी भोज्य तत्वों की कमी न होने पाए. हलका सुपाच्य भोजन लेने के साथ सुबह-शाम टहलना भी जरूरी है.

पैरों में सूजन आना : गर्भाशय में बच्चे बढ़ने के साथ पेट पर दबाव से जो सामान्य सूजन आ जाती है उसके लिए थोड़ी देर पैर ऊंचा करके लेटने से लाभ होगा. बैठते समय पालथी मार कर न बैठें, देर तक खड़ी न रहें और कुरसी पर पैर लटका कर न बैठें. कुरसी पर बैठ कर काम करते समय पैरों को किसी पटरे पर थोड़ा ऊंचा उठाकर रख लेना चाहिए. पर पेशाब कम होने के साथ पैरों में सूजन आए या मुंह पर भी सूजन हो तो तुरत डाक्टर को दिखाएं.

सांस फूलना : यह शिकायत भी गर्भ-भार बढ़ने के साथ ही प्रायः पैदा होती है. पेट में भारीपन न होने देने, खुली हवा में रहने, कसे कपड़े न पहनने और काम के बीच-बीच में थोडा विश्राम लेते रहने से यह शिकायत नहीं होगी. हां, सांस संबंधी कोई रोग हो तो डाक्टर से परामर्श लें.

कमर में दर्द होना : गर्भावस्था के अंतिम दिनों में कमर में कुछ दर्द महसूस करना सामान्य बात है. बीच के दिनों में कमर दर्द का सामान्य कारण झुककर बैठना या काम करते समय ठीक मुद्रा में न रहना ही होता है. असामान्य कमर दर्द, जिसके साथ एनीमिया, योनि से पानी जाने, खून का दाग लगने या पेशाब में संक्रमण की या कोई अन्य शिकायत जुड़ी होती है, इस हालत में डाक्टर से परामर्श जरूरी है.

बार-बार पेशाब होना : गर्भ के प्रारंभिक तथा अंतिम दिनों में यह शिकायत भी एक सामान्य स्थिति है. पर लगातार यह शिकायत बनी रहे, साथ में जलन व दर्द हो तो डाक्टर को दिखाना चाहिए.

जटिलताओं से बचने के लिए आवश्यक सावधानियां

□ गर्भावस्था में टिटनस [illegible] इंजेक्शन जरूर लगवा लेने चाहिए, ताकि प्रसव के समय टिटेनस का खतरा न रहे. छः सप्ताह के अंतर से [illegible] इंजेक्शन लेने होते है जो आपको डाक्टर स्वयं बता [illegible] लेना है.

□ मामूली सफेद या हलका पीला पानी आना सामान्य बात है. पर पानी अधिक हो और उसका रग गहरा हो तो डाक्टर को दिखाए.

□ रक्तचाप बढने के लक्षण दिखाई दें तो तुरंत डाक्टर के पास जाएं. सिर दर्द, चक्कर, कम पेशाब, दिल की धड़कन का बढ़ जाना, पैरो में सूजन इसकी कुछ आम निशानिया हैं.

□ क्षय, मधुमेह, दौरे या अन्य कोई बीमारी हो तो डाक्टर को अवश्य बताएं ताकि समय पर उसका उपचार कर मा, शिशु की रक्षा की जा सके.

□ एनीमिया व सख्त कब्ज का इलाज अवश्य करें. इस बारे मे भी डाक्टर की राय से चलें.

□ आवश्यकता से अधिक घी युक्त पौष्टिक भोजन लेकर अनावश्यक वजन न बढने दें. समय-समय पर जाच करवा कर, वजन लेकर वजन पर नियत्रण रखें. इसके लिए खानपान सबधी डाक्टर की राय लें.

□ कोई चोट लगने पर, रक्तस्राव होने पर तुरत डाक्टर को दिखाए. गर्भपात के लिए स्वय कोई देसी या एलोपैथिक दवाए ली गई हो तो उनके बारे मे भी डाक्टर को अवश्य बताए. गर्भपात, समय पूर्व प्रसव, मृत शिशु को जन्म देने आदि के अपने पूर्व इतिहास और पूर्व बच्चो की संख्या के बारे में अपनी डाक्टर से कुछ भी न छिपाकर उसे सही-सही स्थिति बताए कि वह उसी प्रकार आपके लिए सुरक्षित प्रसव की व्यवस्था कर सके.

□ डाक्टर से पूछे बिना कोई दवा न लें. शामक, नशीली व एण्टीबायोटिक दवाएं और रेचक दवाएं तो हरगिज नही. प्रथम तीन महीनो मे यह सावधानी और भी अपेक्षित है, अन्यथा बच्चा किसी विकृति का शिकार हो सकता है.

□ प्रसव से पूर्व अपने 'ब्लड-ग्रुप' की जांच अश्वय करवाए.

□ जाच मे कोई असामान्यता पाई जाने पर या मां को पहले से कोई गभोर बीमारी होने पर प्रसव हर हालत में किसी वड़े अस्पताल में करवाना चाहिए. प्रथम बच्चे के समय भी प्रसव अस्पताल में या घर पर कुशल डाक्टर, प्रशिक्षित नर्स से कराना ठीक होगा ताकि समय पर कोई जटिलता पैदा होने पर उस पर सफलता से काबू पाया जा सके.

□ अधिक बच्चों पर रोक लगाई जानी चाहिए, क्योंकि बार-बार प्रसव से मा कमजोर हो जाती है, प्रसव उत्तरोत्तर कठिन होता जाता है और मां अनेक रोगों से घिर सकती है. बच्चे भी रोगी व कमजोर हो सकते हैं. दो बच्चों के बीच कम से कम दो-तीन साल का अंतराल भी मा-बच्चे के स्वास्थ्य की दृष्टि से आवश्यक है. आगे और बच्चे बंद कराने के लिए डाक्टर वोहरा की राय है, "नसबदी आपरेशन अतिम प्रसव के समय ही करा लेना ठीक रहता है. इसके लाभ हैं : आपरेशन-प्रक्रिया का छोटा व सरल होना, जटिलताओं की कम से कम सभावना, आपरेशन के बाद की पीड़ा कम अनुभव होना और प्रसव व आपरेशन के दोनों कामों से एक ही बार मे निबट कर अलग कष्ट व समय से बच कर 'एक पथ, दो काज' का लाभ प्राप्त करना.

"यह आपरेशन प्रसव के छः घटे बाद ही हो सकता है या उसके बाद जितना जल्दी करा लें, उतना अच्छा. रही नसबंदी के बाद वजन आदि उठाने में कठिनाई या मोटापे की शिकायत, तो केवल भ्रम है. यदि डाक्टरी निर्देशो का ठीक पालन किया जाए तो बाद मे कोई तकलीफ होने का प्रश्न ही पैदा नही होता. मोटापा भी आपरेशन से नहीं आता, जरूरत से ज्यादा खाने व अधिक आराम करने से आता है. परहेज हम केवल उतना ही बताते हैं जितना कि सामान्य प्रसव के बाद जरूरी होता है. वे ही व्यायाम भी किए जा सकते हैं. उतने ही परहेज व उतने ही आराम की आवश्यकता होती है, कोई असामान्य बात न हो तो इससे अधिक की नही हां प्रसव के छः सप्ताह बाद मां-बच्चे की जांच अवश्य करवा लेनी चाहिए और इस बीच यदि कोई शिकायत या भ्रम हो तो डाक्टर से परामर्श कर लेना चाहिए."

●

ये परिस्थितिया असामान्य है :

* निरतर या उग्र रूप से उल्टी होना
* निरतर या तीव्र सिर पीड़ा
* बार-बार सिर चकराना
* धुंधला दिखाई देना या अन्य दृष्टि दोष
* चेहरे पर सूजन विशेषकर आंखो के नीचे
* उदर के उपरी भाग मे तीव्र पीड़ा
* पैरों, गट्टो या अन्य अंगो पर सूजन
* रक्त स्राव
* पेशाब मे कमी
* ऊंचाई से या जोर से गिर पडने पर
* अधिक वजन वृद्धि.

इनमें से एक भी लक्षण होने पर डाक्टर की सलाह अवश्य लें.

2

शिशु के आगमन की तैयारी

[गर्भकाल की सावधानियों के बारे में जानने के बाद आइए, अब नव-मानव के आगमन व स्वागत की तैयारी पर कुछ चर्चा करें]

प्रसव की तैयारी

जब आप गर्भवती हों तो समीप के अस्पताल, स्वास्थ्य केन्द्र मे अपना नाम रजिस्टर्ड कराइए व नियमित परीक्षण के लिए जाइए.

भोजन, सफाई तथा चिकित्सा के बारे मे डाक्टर द्वारा दी गई सलाह मानिए. प्रसव, घर पर या अस्पताल मे, कही भी कराया जाए, इस बारे में अपनी डाक्टर, हेल्थ विजिटर या दाई की सलाह पर पूरा ध्यान दीजिए.

आप यदि प्रसव घर पर कराना चाहती हैं तो निम्नलिखित बातो पर ध्यान दीजिए:

—यदि यह दूसरा बच्चा है तो क्या पहला बच्चा सामान्य रूप से हुआ था और प्रसव मे कोई परेशानी तो नही हुई थी?

—क्या घर मे आपकी सहायता करने तथा घर की देखभाल करने के लिए कोई सहायक है?

—क्या आपके घर में इतनी जगह है कि आप एक कमरा या कम से कम कमरे का एक हिस्सा प्रसव के लिए अलग रख सकें?

हवादार कमरा: प्रसव के लिए मकान का वह हिस्सा चुनिए जो काफी हवादार हो तथा जहा काफी रोशनी आती हो.

—कमरा साफ करवाइए और उसमे सफेदी करवाइए.

—फर्श को अच्छी तरह रगडवाकर किसी कीटनाशक दवाई से साफ करवाइए.

—कमरे मे प्रसव की जरूरत की चीजें साफ करके ऐसी जगह रखिए कि वे आसानी से मिल जाए.

वस्त्र : प्रसव के दौरान प्रयोग के लिए पुराने कपड़ों का संग्रह कीजिए. ऐसे कपडों को पहले उबालिए, फिर धोइए और फिर उन्हें धूप मे सुखा कर प्रेस करिए. उन्हें

ट्रंक में रखिए और सप्ताह मे एक बार धूप दिखाइए.

अन्य वस्तुएं

स्वास्थ्य केंद्र, डाक्टर या दाई द्वारा दी गई चीजो की सूची देखिए और इस बात की जाच कीजिए कि सभी वस्तुए आ गई है ? प्रसव के लिए जरूरी वस्तुए है ·

☐ एक सफेद कपडे के थैले मे दो दर्जन पैड, ताकि उन्हे कीटाणु रहित (स्टेरिलाइज) किया जा सके या 'सैनेटरी' पैड के दो डिब्बे.

☐ आपके अपने कपडे तीन या चार जोड़े.

☐ चार आऊस डिटोल, साफ की हुई रुई, बेडपेन, चिलमची आदि.

☐ अच्छी रोशनी का साधन, एक स्टोव, एक ढक्कन वाली केतली या दूसरा बर्तन.

☐ अपना आरक्षण या बुकिंग कार्ड भी सभाल कर वही रख लें कि समय पर मिल सके.

बच्चे के स्वागत की तैयारी

आपको अपने बच्चे के आगमन (जन्म) का स्वागत करने के लिए घर मे आवश्यक व्यवस्था करनी होगी, ताकि समय पर कोई परेशानी न हो और सभी वस्तुए हाथ की पहुच मे मिल जाए. सभी वस्तुओ की पहले से व्यवस्था करना स्वय आपके हित मे है. इस प्रसंग मे इस बात पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है कि बच्चे के प्रयोग की सभी वस्तुए साफ होनी चाहिए और धूल एवं गन्दगी से उनकी रक्षा की ठीक व्यवस्था होनी चाहिए, क्योंकि बच्चे के जन्म के बाद स्वस्थ और साफ पर्यावरण चाहिए.

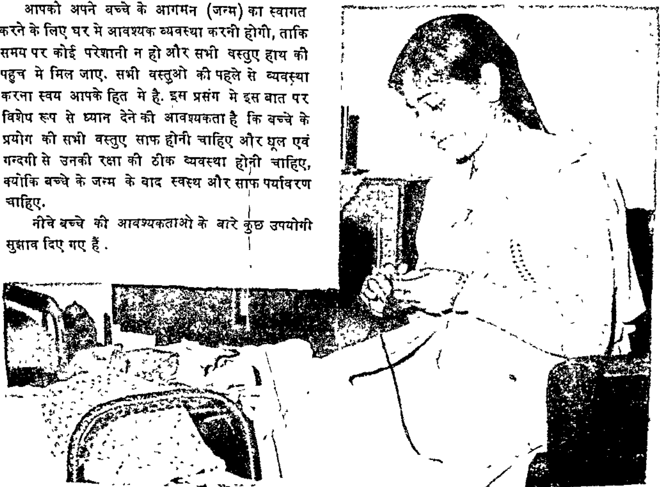
नीचे बच्चे की आवश्यकताओ के बारे कुछ उपयोगी सुझाव दिए गए हैं .

शैया और बिस्तर—बच्चे के लिए अलग शैया, पालना खटोला या टोकरी की व्यवस्था करना सदैव अच्छा है, इससे उसे पूरा आराम और स्वतंत्रता मिलती है.

शैया, पालना, खटोला या टोकरी की व्यवस्था परिवार की आर्थिक स्थिति के अनुसार की जा सकती है. छोटी आम चारपाई भी काम मे लाई जा सकती है. टोकरी मे पर्याप्त बिस्तर आदि बिछाकर उससे भी काम लिया जा सकता है. इस बारे मे नीचे दी गई बातो का विशेष ध्यान रखना चाहिए :

—बच्चे की छोटी चारपाई बहुत कीमती नही होनी चाहिए, क्योंकि बच्चे के बढने के साथ शीघ्र ही वह बेकार हो जाएगी. ठडी जगहो मे इस्पात की चारपाई या खटोला आरामदेह नही होता.

—चारपाई, खटोले आदि के चारों ओर छड़ें या शलाकाएं आदि लगी होनी चाहिए, जिससे बच्चा गिरने न पाए और सुरक्षा के साथ अकेला छोडा जा सके.



गर्भावस्था में अच्छे स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक सुख शांति व प्रसन्नता भी जरूरी हैं

शलाकाओं वाली शिशु शैया : मां व शिशु दोनों के लिए सुविधाजनक

—खटोले, चारपाई आदि का आकार ऐसा होना चाहिए कि उसे आसानी से मां की खाट या शैया के समीप रखा जा सके.

—खटोला या चारपाई इस तरह बनी होनी चाहिए कि उसमें मच्छर, मक्खी और कीड़े-मकोड़ों से बच्चे की रक्षा करने के लिए मच्छरदानी लगाई जा सके.

—बच्चे के बिस्तर पर ऊपर से बिछाने के लिए काफी नर्म और सूती कपड़े होने चाहिए. ऐसे कपड़े पुराने साफ या नए कपड़ों से बनाये जा सकते है.

—बच्चे की चारपाई या खटोले के बराबर गद्दा.

—गद्दे के ऊपर बिछाने के लिए पुराने कपडों की दोहरी या नए कपड़े की मोटी चादर.

—मोमजामे के दो टुकड़े या प्लास्टिक की चादरे जो गद्दे के निचले हिस्से को पूरी तरह ढक लें.

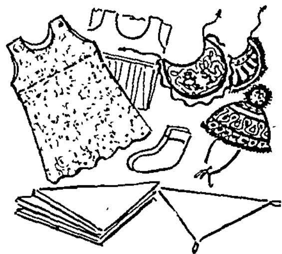
—बच्चे के नीचे बिछाने के लिए रुई की मोटी गद्दी.

—चारपाई या खटोले के लिए मच्छरदानी.

—बच्चे के लिए जो तकिए बनाए जाएं वे मुलायम, बराबर और पतले होने चाहिए. बगलो के तकिए गोल होने चाहिएं.

—सर्दियों के लिए कंबल या रजाई

कपड़े : बच्चे के कपडे ढीले-ढाले, मौसम के लिए उपयुक्त और ऐसे होने चाहिए कि उन्हे पहनाते समय बच्चे को किसी प्रकार का कष्ट न हो. बच्चे की बनियान हमेशा सूती होनी चाहिए, क्योंकि ऊन बच्चो के कोमल शरीर पर चुभ सकती है और कुछ बच्चों को ऊनी कपडो से 'एलर्जी' हो सकती है. जाड़ों में सूती बनियान के ऊपर ऊनी बनियान पहनाई जा सकती है. बच्चे की कमीज, कुर्ता या फ्राक ढीला-ढाला और ऐसा होना चाहिए जो आसानी से पहनाया जा सके. बच्चों के कपड़ों में जहा तक हो सके बटन नही लगाने चाहिए बल्कि बाधने वाले मुलायम फीते पीछे की तरफ लगाने चाहिए,ताकि बच्चा उन्हे चबा न सके.



शिशु के वस्त्र नरम, ढीले व मौसम के अनुसार होने चाहिए

सर्दियों में स्वेटर, कार्डिगन, मैटिनी कोट और जुराब पहनाए जा सकते हैं. बच्चे की लगोट काफी बडी होनी चाहिए उसे त्रिभुजाकार या वर्गाकार मोडा जा सकता है. लगोट को सेपटीपिन द्वारा बनियान के साथ मोड़ देना चाहिए, ताकि वह अपनी जगह पर रहे.

लंगोट और कपड़ों की सफाई : बच्चे के टट्टी-पेशाब से सने लगोट आदि को अलग रखकर साफ करना चाहिए. ऐसे सभी कपडो को धोने के बाद (एंटीसेप्टिक) कीटाणु निरोधक दवा वाले पानी में डुबोकर और गर्म पानी मे उबाल कर सुखा देना चाहिए.

पेशाब सने कपडो को काफी पानी मे धोकर धूप मे सुखा लेना चाहिए. इन कपड़ों को सप्ताह मे एक या दो बार उबालकर साबुन से धो लेना चाहिए.

बच्चे के कपडो को अलग मे धोना चाहिए. उन्हे बडो के कपड़ो के साथ नही मिलना चाहिए. बच्चे के कपड़ो को काफी पानी मे धोना चाहिए, ताकि कपडो मे कतई साबुन न रहे अन्यथा इससे बच्चे की नरम खाल मे जलन हो सकती है बच्चे के कपडे धोने के लिए अच्छे साबुन का इस्तेमाल भी जरूरी है. घटिया साबुनों मे कास्टिक सोडा अधिक होता है, जिससे बच्चों की नरम खाल मे जलन हो जाती है.

अन्य आवश्यकताएं

बच्चे के कपडे किसी बक्से या टोकरी में तथा अन्य आवश्यक चीजें एक ट्रे में डालकर एक ही स्थान पर रखी जा सकती हैं. कुछ वस्तुओं की आवश्यकता बच्चे को दूध पिलाते समय, कुछ की उसे नहलाते समय और कुछ की उसे पेशाब या टट्टी कराते समय पड़ती है.

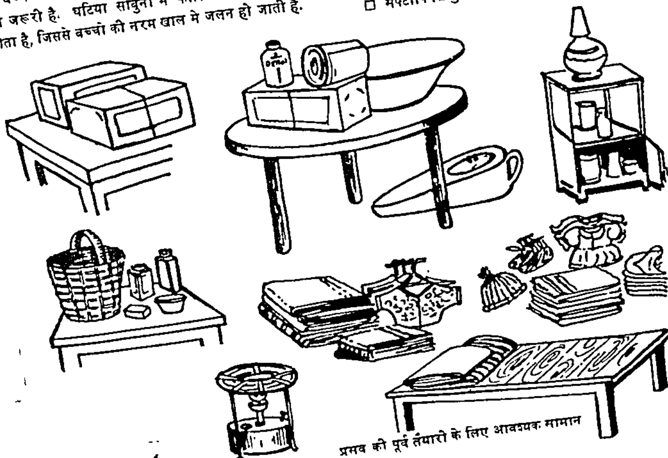
ट्रे में रखी जाने वाली वस्तुएं—

□ ग्लीसरीन-साबुन या कोई भी अच्छी कम्पनी का 'बेबी-सोप'.

□ एक चौड़े मुंह वाली साफ शीशी या छोटे मर्तबान मे रुई के फाहे—रुई के फाहों की आवश्यकता स्तनों की सफाई के लिए पडेगी. इसके लिए फाहो को रोगाणुरहित कर लेना चाहिए और इन्हे एक ढक्कनदार पात्र मे बद रखना चाहिए. बच्चे की सफाई के लिए भी फाहों की आवश्यकता पडती है. आंखों की सफाई के लिए कुछ फाहे एक पृथक पात्र मे रखे जाने चाहिए.

□ मालिश के लिए जैतून का तेल सर्वोत्तम है. बदले मे तिल का, नारियल का या कोई और उपयुक्त तेल काम मे लाया जा सकता है.

□ सेपटीपिन : कुछ बड़े, कुछ छोटे.



प्रसव की पूर्व तैयारी के लिए आवश्यक सामान

☐ कपड़े के वर्गाकार छोटे-छोटे टुकड़े.

☐ *कोई बढ़िया बेबी-पाउडर. आवश्यक दवाएं.* इन्हें घोलने के बाद खाने व लगाने की दवाओं का स्थान अलग-अलग कर लेना चाहिए.

☐ एक ढक्कनदार प्याला.

टोकरी में रखी जाने वाली वस्तुएं : बच्चे की सफाई के लिए छोटे नरम तौलिए, उसके नेपकिन तथा कुछ आवश्यक वस्त्र.

जब प्रसव-पीड़ा शुरू हो

इस बात की पूरी तसल्ली कर लीजिए कि आपको जो पीड़ा हो रही है वह वास्तव में प्रसव-पीड़ा ही है, यह पता लगाने में, निम्न बातों से आपको सहायता मिल सकती है :

—दर्द पीठ से शुरू होकर आगे पेट तक फैल जाता है और थोड़ी-थोड़ी देर में नियमित रूप से होता है.

—दर्द के दौरान पेट कड़ा हो जाता है.

—कुछ स्राव भी हो सकता है.

—समय पर अस्पताल जाने की तैयारी करिए या 'बुकिंग कार्ड' भेजकर दाई को बुलवाइए.

—यदि आपने स्नान नहीं किया है तो कर लीजिए.

—घर पर प्रसव है तो बिस्तर और दूसरी सभी चीजें तैयार कर लीजिए.

—एक बर्तन में पानी उबाल लीजिए और उसे ढक कर ठंडा होने के लिए रख दीजिए. दूसरे बर्तन में पानी उबालने के लिए रख दीजिए. लैम्प और स्टोव इस्तेमाल के लिए तैयार रखिए.

—यदि आपका कोई सम्बन्धी पास नहीं है तो अपनी किसी सहेली या पड़ोसिन को दाई की सहायता के लिए बुला लीजिए.

प्रसव के समय क्या करें ?

डाक्टर या दाई की सलाह मानिए और उसे पूरा सहयोग दीजिए, ताकि बच्चे का जन्म कम से कम कष्ट से हो.

—काफी मात्रा में तरल तथा हल्का पोषक आहार लीजिए.

—शौच जाइए तथा जितनी बार इच्छा हो पेशाब कीजिए.

—पीड़ा उठने के दौरान जब पीड़ा रुक जाए तो आराम कीजिए और हो सके तो सो जाइए.

प्रसव के बाद

कुछ गरम पीजिए और आराम कीजिए, तथा अपने *बच्चे की देखभाल और उसे दूध पिलाने आदि के बारे में* डाक्टर या दाई से निर्देश लीजिए. ●

इन स्थितियों में प्रसव किसी कुशल चिकित्सक से करवाएं :

* यदि मां की आयु 35 वर्ष से अधिक है
* यदि प्रथम प्रसव के समय मां की आयु तीस वर्ष से अधिक है
* यदि प्रसव चौथे नंबर के बाद है
* यदि मां का कद पांच फुट से कम है
* यदि मां टाक्सीमिया, गुर्दे की बीमारी, तपेदिक या डायबटीज की मरीज है
* यदि इससे पहले गर्भपात या मिसकैरेज हो चुके हो.



3

नवजात शिशु की देखभाल व समस्याएं

[कलावती सरन अस्पताल के नवजात शिशु विभाग की अध्यक्ष एवं नवजात विशेषज्ञ डा. इन्द्रा नारायणन से भेंट पर आधारित]



भारत में नए शिशु के आगमन पर घर वालों की पहली उत्सुकता यह जानने की होती है कि आगन्तुक शिशु लड़का है या लड़की ? यदि लड़की हुई तो उपस्थित चेहरों पर निराशा झलक जाती है, विशेष रूप से दूसरी-तीसरी लड़की के आगमन पर. इसी अनुसार औसत भारतीय घरों में प्रसूता और नवजात शिशु की देखभाल पक्षपातपूर्ण रवैये से की जाती है, जबकि सर्वप्रथम मा-शिशु के स्वास्थ्य पर ही ध्यान दिया जाना चाहिए और यह देखना चाहिए कि बच्चा सामान्य है कि नहीं ?

कुछ विकार प्रसव की जटिलता से कठिन प्रसव के समय भी आ सकते है. इसीलिए गर्भवती मा को समय-समय पर जांच कराते रहने तथा प्रथम प्रसव व कोई जटिलता रहने पर प्रसव अच्छे कुशल हाथों से या किसी बड़े अस्पताल में कराने की सलाह दी जाती है.

स्वस्थ शिशु की पहचान

हमारे यहा जन्म के समय बच्चों का औसत वजन साढ़े पाच पाउड से सात पाउड के बीच, सिर की गोलाई लगभग 13 इंच और शरीर की लम्बाई लगभग 20 इंच हो तो बच्चा सामान्यतः परिपक्व समझा जाता है. यदि बच्चा पैदा होते ही रोने लगे, ठीक सांस लेने लगे तथा उसकी दूध पीने





पूर्णतया स्वस्थ नवजात शिशु

की क्षमता सामान्य लगे तो बच्चा सामान्य स्वस्थ होना चाहिए. साथ ही ये कुछ बातें और भी ध्यान से देखें :

—थोड़ी सी आवाज से या ताली बजाने पर बच्चा हाथ-पैर फेंकता है कि नही ?

—उसके मल विसर्जन का मार्ग ठीक बना हुआ है कि नही?

—जन्म के समय शिशु का रंग सामान्य से कुछ अधिक लाल हो सकता है पर उसका नीला होना घातक है. हां, सर्दियो में नवजात शिशु के हाथ-पैरो का रंग स्वाभाविक रूप से भी नीला हो सकता है. यदि हाथो-पैरो के सिवाय भी शिशु का रग नीला हो तो तुरत डाक्टर को दिखाए.

सिर पर सूजन : कुछ बच्चों मे प्रसव के समय दबाव पड़ने से सिर मे एक गूमड सा हो जाता है. इसके लिए घबराने की जरूरत नही. यह दो-तीन दिन मे ठीक हो जाएगा. कठिन प्रसव या 'फोरसेप' के इस्तेमाल से जन्म के एक-दो दिन बाद एक खास किस्म की नरम सी सूजन हो जाती है. जो कुछ दिन से लेकर कुछ सप्ताह तक स्वय ही ठीक हो जाती है. यह रक्त के जमाव के कारण होती है. इससे छेड़-छाड़ नही करनी चाहिए हां, यह बहुत ज्यादा हो तो डाक्टर से परामर्श कर लेना ठीक होगा. कभी 'फोरसेप' से शिशुओं के चेहरे पर कुछ निशान भी पड जाते हैं. ये अधिक गहरे न हों तो स्वय ही ठीक हो जाएगे, कुछ करने की आवश्यकता नही. पर कभी-कभी इन बच्चों में नसों पर दबाव के कारण कुछ विकृतियां भी आ सकती है. तब विशेषज्ञ से सलाह लेनी चाहिए.

नाभि : देहातों मे प्राय देखा जाता है कि अकुशल दाइया पुराने जग लगे चाकू, ब्लेड या दराती से नाल काट देती है जिससे अनेक बच्चे धनुष्टकार (टिटनेस) की बीमारी से मर जाते है. इसलिए परिवार वालों को ध्यान रखना चाहिए कि काटने का औजार चाकू, कैंची या ब्लेड इस्तेमाल से पहले दस मिनट तक पानी मे अवश्य उबाल लिया जाए.

बच्चे के जन्म के तुरत बाद नाभि की नाल काट देने से बच्चे मे खून की कमी हो सकती है. नाल काटते समय बच्चे का स्थान मां के स्थान से कुछ नीचा होना चाहिए ताकि मा का खून बच्चे मे जा सके. फिर नाल को दुह कर बच्चे की तरफ ले जाएं, तब नाल काटें.

नाभि से डेढ़-दो इच छोड़ कर शेष नाल काटने से पूर्व नाल को धागे मे अच्छी तरह कस कर बाध लेना चाहिए, धागा ढीला रहने से नाभि से खून गिर सकता है. बांधने का यह धागा भी दस मिनट तक पानी मे उबाल कर विसंक्रमित कर लेना जरूरी है.

नाल काटने के बाद नाभि की सफाई पर भी पूरा ध्यान देने की जरूरत है, अन्यथा गदगी के प्रवेश से सक्रमण (इंफेक्शन) होकर नाभि के घाव, टिटनेस जैसे घातक रोग लग सकते हैं. नाल सामान्यत: सात से नौ दिन तक सूख कर गिर जाती है. पर इस अवधि मे दो-तीन दिन इधर-उधर होने मे भी कोई असामान्यता नही माननी चाहिए इस बीच नाभि को यदि भीगने से बचाया जाए और बच्चे को नहलाने के बाद पोछ कर नाभि उठाते हुए नाभि-जोड को स्पिरिट मे साफ कर देने के बाद नीली दवा (कीटाणु नाशक दवा) लगा देने से संक्रमण का खतरा नही रहता. नाल गिरने के बाद भी वहा गीलापन रहे तो ठीक होने तक उसे स्पिरिट से साफ करती रहे. ऊपर से सूख जाने पर भी जड में गीलापन रह सकता है अत: खोल कर नीचे जड मे भी देखना चाहिए कि नाल जड़ तक पूरी तरह सूख गई है कि नही ? नही, तो वहां स्पिरिट से सफाई जरूरी है. टेलकम तभी छिडकना चाहिए जबकि नाल पूरी तरह सूख जाए. यदि नाभि मे मवाद दिखाई दे तो तुरत डाक्टर को दिखाना चाहिए कि जटिलताओं से बचाव हो सके.

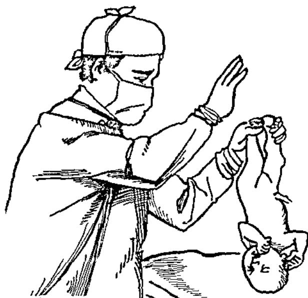
स्वच्छता

जन्म के शीघ्र बाद स्नान जरूरी नही, परतु परिपक्व व सामान्य, स्वस्थ शिशु को पहले दिन नहलाया जा सकता है. किंतु बच्चो को नहलाते समय विशेषकर अपरिपक्व बच्चो को, इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसे सर्दी न लग जाए. यदि यह संभव न हो तो रोज स्पंज करना आवश्यक है.

लेकिन जन्म के शीघ्र बाद हर शिशु की भलीभांति

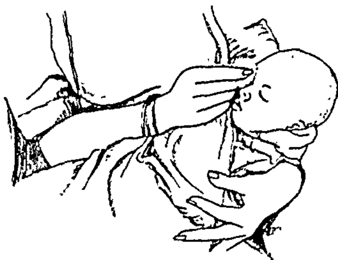
सफाई अनिवार्य है. बच्चे के बाहर आते ही उसकी आखों को कीटाणु रहित की हुई साफ गीली रुई से पोंछ दें, पर एक ही फाहे से नही, दोनों ओर की सफाई के लिए दो अलग फाहे इस्तेमाल करने चाहिए. अब पैरों से पकड़ कर बच्चे को थोड़ी देर के लिए उल्टा लटका दें ताकि उसके पेट मे गया अतिरिक्त द्रव बाहर आ जाए. इसके बाद स्वच्छ रुई से तेल लगा कर उसके शरीर पर लगा सारा लसीला पदार्थ (वरनिक्स) रगड़ कर पोंछ सकते हैं. बच्चे को साफ करते समय कानो के पीछे, बगलों और जोड़ों के भीतर से यह जमी हुई 'वरनिक्स' की परत अच्छी तरह से हटा देनी चाहिए.

इस तरह शिशु को अच्छी तरह साफ कर लेने के बाद उसे साफ, नरम व मौसम अनुसार कपड़े में लपेट कर मां के पास सुला दें, ताकि जन्म के समय के सारे कष्ट और तनाव के बाद उसे मानसिक संतुष्टि व शांति मिल सके.



बच्चे को पैर से पकड़कर उल्टा लटकाने से उसके पेट मे गया गंदा द्रव बाहर आ जाता है

नोट—सफाई का यह सारा काम अस्पतालों में या जच्चा-बच्चा केन्द्रो मे डाक्टर, नर्स या दाई के हाथो ही सम्पन्न होता है. माताओ या सहायक महिलाओ द्वारा नही. पर घर मे प्रसव कराते समय यह जानकारी होने पर ध्यान रखा जा सकेगा कि दाई इस संबंध मे कोई लापरवाही न बरते. उसके हाथ पहले साबुन से धुला लिए जाएं और औजार काटने का धागा आदि प्रयोग मे लाई जाने वाली चीजें उबली जाएं. मा-शिशु को संक्रमणजन्य रोगों से बचाने के स्वच्छता संबंधी यह जानकारी बहुत आवश्यक है.



नवजात शिशु की आंख की सफाई

कान, नाक और आंख

नहलाते समय नाक के छिद्र को साफ की हुई रुई की फाड़ी से साफ करें, कानों को भी, लेकिन बहुत गहरे तक नही. आंखों को साफ करने के लिए तो विशेष सावधानी बरतने की जरूरत है. उबाल कर ठंडी की हुई गीली रुई के एक फाहे से एक आख साफ करें, दूसरे फाहे से दूसरी. आंख पोंछते समय हाथ भीतर से बाहर की ओर लाए इस तरह आंख में गंदगी निकालने से आख रोगी नही होगी. विशेष रूप से यदि मा को सूजाक की बीमारी रही हो तो आख की हिफाजत बच्चे के जन्म से ही शुरू कर देनी चाहिए.

शिशु की आंखो की सफाई करने के बाद यदि आवश्यकता हो तो डाक्टर से पूछ कर आखो मे एक-एक बूंद 'आई-ड्राप' की डाल दें. पर काजल, सुरमा न लगाएं.

आमतौर पर नवजात शिशु के आंसू नहीं निकलते पर एक सप्ताह बाद बच्चे की आख में आंसू बनने लगते है. यदि जन्म के तुरत बाद बच्चे की आख में आंसू दिखाई दें तो विशेषज्ञ से परामर्श कर सकते हैं कि कही कोई संक्रामक रोग तो नही है?

पहला स्तनपान

कुछ लोगो का ख्याल होता है कि पहले दो दिन का मां का दूध शिशु को नही दिया जाना चाहिए. पर डा॰ इन्द्रा नारायणन की राय में यह धारणा गलत है. पहले दो दिन का दूध जितना ताकतवर और शिशु के लिए लाभकर होता



बच्चे को जितनी जल्दी हो सके मां का दूध दिया जाना चाहिए

है, उतना बाद का कभी नहीं. थोड़ा पीलापन लिए यह गाढ़ा दूध, जिसे आम भाषा मे फेनुस (कोलस्ट्रम) कहते हैं, अमूल्य प्रोटीन तत्व (ग्लोबूलिन) तथा बीमारियों से सुरक्षा के लिए 'एंटीबाडीज' लिए होता है, जो रोग-निरोधक क्षमता बढ़ाने की दृष्टि से बच्चे के लिए बहुत ही उपयोगी है.

डा० नारायणन की राय में, पहली बार मां का दूध पिलाने के लिए 12 से 24 घंटे तक रुकने या शिशु को भूखा रखने की धारणा भी गलत है. भूखा रखने से शिशु के खून में चीनी कम हो जाने से उसके दिमाग को खतरा तक हो सकता है. *अतः कभी भी शिशु को 6 घंटे से अधिक भूखा* नही रखना चाहिए और अपरिपक्व व कम वजन वाले बच्चों को दो-तीन घंटे से अधिक भूखा नही रखें. उसमे निगलने की क्षमता सामान्य है तो जितनी जल्दी शिशु मां का दूध ले सके उतना अच्छा. केवल दूध पिलाने से पहले मां के स्तनों की सफाई का ध्यान रख लेना होगा और यह देखना होगा कि शिशु दूध ठीक से गटक सकता है कि नही ?

अतः पहले उसे उबालकर ठंडा किया हुआ सादा या चीनी मिला पानी पिला कर देखना चाहिए. यह इसलिए आवश्यक है कि यदि नवजात शिशु जन्म के शीघ्र बाद ठीक से दूध न पी सका तो दूध उसके फेफड़ों में जा सकता है और उसे छाती के रोग लग सकते हैं, पानी देकर पूर्व परीक्षण कर लेने पर इस हानि का डर नही रहेगा. यदि शिशु ने पानी ठीक पी लिया है तो थोड़ी देर बाद उसे मां के स्तन से लगाना आरंभ कर देना चाहिए. यदि बच्चा एकदम दूध न पी पाए तो मा को धीरज से काम लेना चाहिए, उ[से] बार-बार स्तनों से लगाना चाहिए और साथ में यह भ[ी] देखना चाहिए कि बच्चा दूध क्यो नही पी पाता ? शिशु दू[ध] न पी पाए या प्रारंभिक पानी पिलाते समय मुंह से झा[ग] निकले तो डॉक्टरी परामर्श लेना चाहिए. डाक्टरी जांच [से] पता चल जाएगा कि शिशु की खाने की नली ठीक है [कि] नहीं ?

स्तनपान कराने से पहले मा के स्तनों के चूचक ठीक [से] तैयार किए होने चाहिए. यह काम गर्भकाल में ही किय[ा] जाता है (देखें 'शैशव की संभाल गर्भकाल से ही' अध्याय [में] डा० वोहरा की राय). प्रसव के बाद शिशु को स्तन से लगाने से पूर्व चूचकों (निपल्स) की ठीक से सफाई करके उनके कील निकाल देना चाहिए. प्रारंभ मे शिशु को तीन से पांच मिनट तक स्तनपान कराएं. उसकी दूध चूसने की क्षमता का विकास होने पर धीरे-धीरे यह समय बढा कर आठ-दस मिनट किया जा सकता है. शुरू के दो-तीन बार के प्रयत्नो से यदि दूध न उतरे तो भी प्रयत्न बंद नही करना चाहिए. यदि मां दूध पिलाने की इच्छुक है, मानसिक तनावग्रस्त नही है तो कोई कारण नहीं, दूध न उतरे. प्राकृतिक नियम से शिशु को प्यार से देखने पर ही मा के स्तनो मे दूध उतर आता है और यही दूध शिशु के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है. इसलिए जब तक शिशु ठीक से दूध न पीने लगे, प्रयत्न जारी रखना चाहिए और उसे बार-बार स्तनों से लगाना चाहिए. यदि मां कष्ट अनुभव करे तो पहले सहते-सहते चुसाएं, फिर धीरे-धीरे समय बढ़ाएं. शीघ्र ही मा भी इसी मे राहत अनुभव करेगी और बच्चा भी चूसने की क्षमता का विकास कर भर पेट दूध पीने लगेगा.

यह धारणा भी गलत है कि मां के अधिक खाने से उसे दूध अधिक उतरेगा. दूध पिलाने वाली माताओं को पौष्टिक भोजन करना चाहिए और दूध व पानी जैसे तरल पेय पीने चाहिए. लेकिन आरंभ में कभी-कभी शिशु के कम दूध पी सकने के कारण मां को दूध चढ़ने की समस्या सामने आती है. दूध चढ़े नही, इसके लिए एक तो दोनो स्तनों से बारी-बारी से पिलाएं, दूसरे अतिरिक्त दूध को निकाल कर स्तन खाली करती रहे, *अन्यथा दूध चढ़ने से स्तनों मे कसाव* बढ़ेगा और स्तन पक भी सकता है, उसके कष्ट से बुखार भी आ सकता है. स्तनो मे कसाव बढ़ते ही गरम पानी से सेंक कर स्तन गरम कर लें व फिर हाथ से दबाकर स्तन खाली कर लें. पंप का इस्तेमाल न करें तो अच्छा है. दर्द-तनाव बढ़ने की नौबत ही नही आने देनी चाहिए.

दूध पिलाते समय मा के पेट मे कुछ दर्द व खिंचाव अनुभव हो तो इससे चिंतित होने की आवश्यकता नही यह बच्चे-

दानी के सिकुड़ने का दर्द होना है जो कुछ दिनों बाद अपने-आप ठीक हो जाता है. शिशु को घड़ी देखकर दूध पिलाने की बात भी ठीक नही. यदि शिशु रात को भी दूध पीना चाहता है तो भी देने मे हर्ज नही. दो-तीन महीने बाद वह स्वयं ही रात को दूध लेना बंद कर देगा या फिर उसे वैसी आदत डाली जा सकती है खास बात यह है कि शिशु को भूखा न रखा जाए. उसकी दूध पीने की क्षमता बढ़ने पर वह समय पर दूध पीना ही पसंद करेगा और रात को दूध लेना नहीं चाहेगा. फिर भी यदि कोई शिशु रात को दूध लेना बंद न करे तो उसकी भूख व मांग देख कर उसे रात मे दूध देने से हानि नही. यदि मां को अधिक असुविधा हो तो रात के समय उबला हुआ पानी पिलाया जा सकता है. प्राय पानी देने से उसकी रात को दूध लेने की आदत छूट ही जाती है. समय से पूर्व उत्पन्न कम वजन वाले या किसी अन्य कारण से कमजोर बच्चो, जो एक समय मे भर पेट दूध नही ले पाते, पर तो विशेष ध्यान देने की जरूरत है कि वे भूखे न रहे और उन्हें घड़ी के अनुसार नही, उनकी आवश्यकता व मांग के अनुसार दूध दिया जाए

बच्चे का वजन ढाई किलो से कम हो तो उस पर आरंभ से ही विशेष ध्यान दें. शुरू में पानी पिला कर देखने के बाद ही दूध शुरू करें. पानी व दूध शीशी पर नरम निपल लगा कर पिलाएं, चम्मच से नही. चम्मच से पिलाने पर दूध के फेफड़ों मे चले जाने का डर रहता है. यह भी जरूरी है कि कमजोर शिशु को एक बार में अधिक नही, थोड़ा-थोड़ा दूध बार-बार पिलाएं स्तनपान कराते समय ध्यान रखें कि स्तन अधिक भरा या कसा हुआ न हो, अन्यथा शिशु दूध नही पी पाएगा या उसे कठिनाई होगी. यदि स्तन व चूचक ठीक रखने पर भी शिशु ठीक से स्तन चूस न पाए तो उसे अस्पताल मे दिखाना चाहिए. यदि चूचक मे कोई घाव या दरार हो तो शिशु को दूध पिलाने मे हानि नही. इसके लिए मां साधारण तेल या क्रीम इस्तेमाल कर सकती है. किंतु दूध पिलाने से पूर्व स्तन के चूचक को धो अवश्य लेना चाहिए. यदि इस कारण मां को अधिक दर्द महसूस हो तो वह कुछ समय के लिए शिशु को स्तनपान कराना बंद कर सकती है. पर इस अवधि मे स्तन को दबा कर दूध निकालना आवश्यक है.

यदि शिशु कारणवश अस्पताल मे भरती है तो मां को दूध बंद करने की दवा नही लेनी चाहिए. संभव हो तो अस्पताल जाकर शिशु को स्तनपान करा देना चाहिए, नही तो दूध निकाल कर शिशु को पिलाना चाहिए. यह भी संभव न हो तो घर पर (शिशु से अलग रहते हुए) हाथ से दबाकर स्तन खाली करते रहना चाहिए ताकि छाती भारी न हो और मां को कष्ट न हो.

सरदी से बचाव

अपरिपक्व या 'प्रि-मैच्योर' बच्चे को सरदी से बचाने के लिए गरम रखें. गरम बोतल रखने के बजाए मां के शरीर की गरमाई अधिक अच्छी रहती है, उसे मां से चिपटाकर रखें. यदि कारणवश बोतल का सेंक देना आवश्यक हो तो ध्यान रहे, पानी बहुत गरम न हो और बोतल कपड़े मे अच्छी तरह लपेटी गई हो ताकि शिशु की कोमल त्वचा का उससे बचाव हो सके. ऐसे कमजोर बच्चे को पैदा होने के शीघ्र बाद डाक्टर को दिखाकर आवश्यक हिदायतें ले लेना चाहिए. यदि वजन कम है या बच्चा पानी, दूध ठीक से नही पी सकता है या उसे कोई जन्मजात रोग या विकृति है तो उसे शीघ्र अस्पताल में भर्ती कराना आवश्यक हो सकता है. डाक्टर की राय से शिशु को अस्पताल मे रखना आपके व शिशु के लिए हितकर होगा. इसलिए भरती के नाम से डरना या हिचकिचाना नहीं चाहिए. शिशु के अस्पताल में भरती के समय डाक्टर से पूछे बिना उसे स्वयं कुछ न दें और स्तनपान संबंधी उपरोक्त हिदायतों का पालन करें.

इस प्रकार कुछ सावधानियां बरतने, कुछ जानकारियां रखने और आवश्यक होने पर डाक्टरी राय से चलने पर नवजात की देखभाल संबंधी आपकी कठिनाई हल होगी और शिशु को भी बीमारियों, जटिलताओं व समस्याओं से बचाया जा सकेगा. फिर भी नवजात के साथ कुछ समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है अतः कुछ मुख्य समस्याओं पर नवजात विशेषज्ञ डा. इन्द्रा नारायणन के ये सुझाव भी माताओं के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे.

नवजात की समस्याएं

टट्टी-पेशाब संबंधी शिकायतें

यदि बच्चा पहले चौबीस घंटे पेशाब न करे तो चिंता की बात नही. उसे पानी पिलाए. गरमी मे तो अवश्य ही. फिर दूसरे दिन भी वह पेशाब न करे तो डाक्टर को दिखाना चाहिए. शुरू मे शिशु का पेशाब कुछ पीला व कम मात्रा मे रहता है.

नवजात शिशु जन्म के बाद 24 घंटे के भीतर पाखाना जरूर करता है. शुरू मे इसका रंग काला-सा होता है और वह लसीला भी होता है. इसे 'मिकोनियम' कहते हैं. धीरे-धीरे पाखाने का रंग बदलता है और फिर सामान्य हो जाता है. दो से चार दिन मे यह पहले हरा व फिर पीला हो जाता है.

बच्चा दिन, रात मे कितनी बार पाखाना करता है, यह बहुत कुछ उसे दिए जा रहे दूध पर निर्भर करता है और कुछ आदत पर भी. मा का दूध पीने वाले शिशु अधिकाश रोगो से बचे रहते हैं—कब्ज और अतिसार से भी, पर वे पाच-सात बार पतली टट्टी कर सकते है. इससे घबराना नही चाहिए. अक्सर ऊपरी दूध पीने वाले बच्चे कब्जियत का शिकार होते है और मा का दूध पीने वाले बच्चे दिन में कई बार टट्टी करते है और प्रायः पतली भी. मां का दूध पीने वाले नवजात शिशु का पाखाना जन्म के तीन-चार दिन बाद हरे रग का और पतला हो सकता है. इस दौरान शिशु चैतन्य व चुस्त रहेगा और उसे भूख भी ठीक लगेगी. अतः इसमे घबराने जैसी कोई बात नही, धीरे-धीरे यह स्वयं ही ठीक हो जाएगा. हा, टट्टी मे पानी की मात्रा अधिक हो और बच्चा बार-बार टट्टी करे तो डाक्टर को दिखाना चाहिए. शिशु देर से व कड़ी टट्टी करता हो तो दूध की दो खुराको के बीच शिशु को चीनी मिला, उबला पानी अवश्य पिलाए. शहद चटाने से भी टट्टी साफ होगी. कड़ी टट्टी की तकलीफ से शिशु की गुदा में कष्ट न हो, इसके लिए गुदा मार्ग मे तेल या क्रीम लगानी चाहिए.

उल्टी : कुछ नवजात शिशु जन्म के बाद पहले दिन दो-तीन बार उल्टी करते है. यह थोड़ी-थोड़ी उल्टी शिशु मां के पेट में गर्भाशय का निगला हुआ तरल पदार्थ बाहर निकालने के लिए ही करता है. अत इसके लिए भी चिंतित होने की आवश्यकता नही. सामान्यत ये उल्टियां स्वय ही रुक जाती है. इस बीच शिशु को थोड़ा-थोड़ा पानी पिलाते रहना चाहिए. पर नवजात शिशुओं में उल्टी के कुछ गंभीर कारण भी होते हैं. अत. ज्यादा उल्टी होने पर या पेट फूल जाने पर शिशु-रोग विशेषज्ञ से जाच करा लेनी चाहिए.

शरीर पर सफेद दाने : जन्म के बाद पहले कुछ दिनो में शिशु की नाक व ठोड़ी पर कुछ सफेद दाने या शरीर पर लाल-लाल धब्बे दिखाई देते हैं. यह भी चिंता की बात नही, पर फुसियों का सदेह हो तो डाक्टर को दिखाना चाहिए.

नवजात में पीलापन : कुछ बच्चों में जन्म के दूसरे या तीसरे दिन चेहरे पर पीलापन आ जाता है. यह पीलापन भी स्वाभाविक है और पाच-सात दिनों में अपने आप ठीक हो जाता है. इससे घबराना नही चाहिए. पर यह हलका पीलापन यदि दूसरे या तीसरे दिन उतरने के बजाए पहले की तरह ही दिखाई दे और उसका रंग भी गहरा होता जाए या यह पीलापन एक सप्ताह के बाद शुरू हो या अधिक देर तक बना रहे तो यह पीलिया की बीमारी होगी, जो बच्चे के लिए घातक सिद्ध हो सकती है. अत. शका होते ही तुरंत डाक्टर को दिखाना चाहिए. समाज के कुछ वर्गों मे नवजात शिशु को अंधेरे मे रखने की प्रथा है. इन लोगो को चाहिए कि वे शिशु को हर रोज पर्याप्त प्रकाश में ले जाकर देखें कि उसे पीलिया तो नही ? या उसके शरीर पर फुंसिया तो नही ? अधिकतर यह पीलिया माता और बच्चे का 'ब्लड-ग्रुप' न मिलने या आर. एच. नेगेटिव हो जाने से होता है. ऐसा होने पर डाक्टर शिशु को खास किस्म की रोशनी मे रखते हैं और आवश्यकता पड़ने पर उसका खून बदलते है. अगले बच्चों की सुरक्षा के लिए मां को प्रसवोपरात एक इंजेक्शन देने की भी जरूरत होती है. इसीलिए इस मामले मे तुरंत डाक्टर से परामर्श करने की सलाह दी गई है.

अन्य विकार

शिशु के मुंह से झाग आए, पैदा होने के बाद शिशु अधिक रोता रहे, उसे दौरे आए, उसकी सांस फूलती हो, वह दूध न पी सके तो डाक्टर से जाच करानी चाहिए कि उसे कोई रोग तो नही ? उसके खाने का या टट्टी का मार्ग अवरुद्ध तो नही ? कोई अन्य जन्मजात विकृति तो नहीं ? फिर जांच द्वारा पता चलने पर उसका शीघ्र इलाज कराना चाहिए ताकि शिशु को आगे अधिक हानि या मृत्यु से बचाया जा सके. यदि शिशु जन्म के समय रोए नही तो दिमाग में आक्सीजन की कमी से उसके विकृत मस्तिष्क या मंद-बुद्धि हो जाने का खतरा रहता है.

बढ़े हुए स्तन या योनि से खून

नवजात शिशुओं—लड़के, लड़कियो दोनों मे—कई बार स्तन कुछ बढे हुए होते है. लड़कियों के स्तनों में दूध भी भरा होता है. जन्म से पूर्व मां के हारमोन्स बच्चे में आ जाने से ऐसा होता है, यह लक्षण फिर अपने आप मिट जाता है. इसके साथ कोई छेड़छाड़ नही करनी चाहिए, न ही स्तनों को दबाकर दूध निकालना चाहिए, अन्यथा स्तनों मे घाव हो जाने का डर रहता है. इसी तरह मां के हारमोन्स के कारण

शिशु-लड़की की योनि से मासिक धर्म की तरह खून भी आ सकता है. इसके लिए भी किसी उपचार की जरूरत नहीं है. एक-दो दिन में यह अपने आप ही बंद हो जाएगा. एक सप्ताह तक भी थोड़ा-थोड़ा पानी आता रहे या पानी में लाल रंग का मिश्रण रहे तो हानि नहीं. पर अधिक खून आ रहा हो तो डाक्टर से जांच करानी चाहिए. विटामिन 'के' की कमी से नवजात में किसी अन्य अंग से भी रक्त-स्राव हो सकता है. अस्पतालों में इसकी रोकथाम के लिए विशेष निगरानी में रखे गए शिशुओं को इंजेक्शन लगा दिया जाता है. घर पर ऐसी समस्या सामने आए तो डाक्टर से परामर्श करें या शिशु को अस्पताल ले जाए.

सिर के अग्रभाग पर पपड़ी

सिर की भलीभांति सफाई न होने से ही उस पर पपड़ी जमती है. अच्छी तरह सफाई रखने के बाद भी पपड़ी जमे तो तेल लगाना बंद कर दें और किसी भी कीटाणुनाशक दवा से साफ करें.

वजन व तापमान

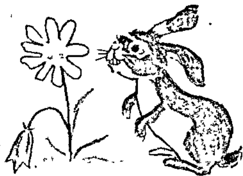
जन्म के दो-तीन दिन बाद तक शिशु का वजन पहले गिर सकता है. यह एक सामान्य प्रक्रिया है. इससे घबराना नहीं चाहिए और उसके विकास की स्थिति पर निगाह रखनी चाहिए. कई बार, विशेष रूप से गर्मियों में नवजात शिशु का तापमान सामान्य (97 डिग्री से 98.4 तक) से कुछ बढ़ा हुआ यानी 99 डिग्री के आसपास रहता है. ऐसे शिशुओं को अधिक मात्रा में उबला हुआ पानी पिलाने की आवश्यकता होती है. पर शिशु यदि ठीक खुराक लेता है, ठीक खेलता है, ठीक सोता है और उसका सामान्य विकास ठीक है तो न इसे बुखार रहने का लक्षण मानना चाहिए, न ही चिंता करनी चाहिए.

कुछ शिशुओं को 3-4 दिन की उम्र में एकाएक बुखार आता है, यह बुखार तेजी से बढ़ता है, फिर 12-14 घंटे बाद उतर कर उसका तापमान सामान्य हो जाता है. कभी-कभी यह वातावरण का तापमान अधिक होने के कारण ही होता है. यह बुखार चढ़ने और शिशु का वजन घटने का समय प्रायः एक ही रहता है. वजन शरीर का पानी सूखने के कारण घटता है अतः इस बीच शिशु को केवल पानी पिलाने की ही आवश्यकता है, किसी उपचार की नहीं. गर्मी के दिनों शिशु वाले कमरे को कूलर या पंखे की सहायता से ठंडा रखें, यदि गर्मी अधिक हो तो शिशु के बिछौने के और गीला कपड़ा लपेट दें, जिससे कि वाष्पीकरण द्वारा ठंडक पैदा हो सके. वातावरण के तापमान के कारण आए इस बुखार से भी घबराने की आवश्यकता नहीं. पर बुखार तेज हो, शीघ्र न उतरे और साथ में अन्य लक्षण भी हों तो डाक्टर को दिखाना चाहिए. पहचान न होने पर भी परामर्श लेना ठीक होगा.

बच्चे की दिनचर्या, दैनिक देखभाल, खुराक व रोगों से बचाव के लिए आगे अलग-अलग अध्यायों में भी जानकारी दी जा रही है. अतः नवजात के संदर्भ में यहां इतना ही...पर अंत में डा. इन्द्रा नारायणन फिर जोर देकर कहती हैं कि मां का दूध बच्चे के लिए बहुत लाभदायक है अतः जहां तक संभव हो, उसे मां का दूध ही पिलाना चाहिए. बहुत कम स्थितियों में शिशु से मां का दूध छुड़ाना आवश्यक होता है. मां की छोटी-मोटी बीमारियों में स्तनपान का निषेध नहीं है. केवल मां लंबे समय से बीमार हो या अत्यधिक कमजोर हो तो स्तनपान कराना निषिद्ध होता है. ऐसी माताओं को 'सल्फा' या 'टैट्रासाइक्लिन' जैसी दवाएं, कैंसर की दवाएं, कंठमाला की दवाएं लेनी पड़ें तो उन्हें शिशु को दूध पिलाना रोक देना चाहिए.

इस बारे में कुछ शंका हो तो डाक्टर की सलाह ली जा सकती है. तब दूध पिलाने वाली ये माताएं जरूरत पड़ने पर इन दवाओं की जगह कम हानिकारक दवाएं ले सकती हैं. पर सामान्यतः गर्भवती माताओं को और दूध पिलाने वाली माताओं को, जब तक अत्यावश्यक न हो, ऐसी दवाएं लेनी ही नहीं चाहिए. आवश्यक होने पर भी डाक्टरी राय से ही लेनी चाहिए, स्वयं नहीं.





4

अपरिपक्व शिशु

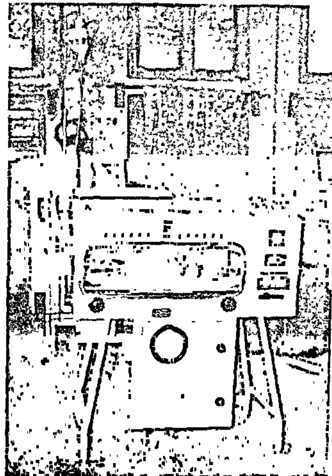
सबसे पहले तो यह जानना जरूरी है कि अपरिपक्व शिशु किसे कहते है ? समय से पूर्व जन्म लेने वाले शिशु तो अपरिपक्व होते ही हैं,किसी कारण पूरे समय पर पैदा होने वाले बच्चे भी कम वजन व कम विकास के साथ अपरिपक्व रूप में संसार मे प्रवेश करते हैं.इन दोनों प्रकार के अपरिपक्व शिशुओ की देखभाल, पालन-पोषण और खान-पान पर सामान्य शिशु की अपेक्षा अधिक ध्यान देने की आवश्यकता होती है.

इस प्रकार मोटे तौर पर अपरिपक्व शिशुओं को दो श्रेणियों मे रखा जा सकता है. एक तो वे जो पूरे समय पर तो जन्म लेते है,किंतु कुपोषण अथवा किसी अन्य कारण से कम वजन व आकार के साथ इस संसार में प्रवेश करते है. ऐसे शिशु का वजन सामान्यत 2500 ग्राम से कम व लबाई 45 सेंटीमीटर से कम होती है. ऐसा शिशु पूर्णतया विकसित होने के बावजूद बहुत कमजोर होता है. उसकी त्वचा शुष्क एव झुर्रीदार होती है. इडिमा नही रहता. मृत्युदर कम होती है किंतु उनका मानसिक विकास धीमा रहता है.

दूसरे प्रकार के अपरिपक्व शिशु वह होते हैं जो कि किसी कारण से निश्चित अवधि मे पहले उत्पन्न होते हैं. ऐसे शिशु वजन व आकार मे भी छोटे होते हैं. इन्हे दो श्रेणियो मे रखा जा सकता है : एक तो वे जो गर्भाधान के 32-36 सप्ताह बाद जन्म लेते हैं इन का वजन साढे तीन पाऊंड से चार पाऊंड तक हो सकता है.

गाल, कंधों तथा कमर पर गर्भलोम होते है. भूख लगने पर बच्चा रोता है किंतु स्वर मध्यम व धीमा होता है.

दूसरी किस्म के अपरिपक्व शिशु वे होते है. जो गर्भाधान के 28, 32 सप्ताह बाद जन्म लेते है, इन शिशुओं की देख-रेख प्राय: अस्पतालों मे की जाती है. जहां पूर्ण विकास होने तक उन्हें एक विशेष यंत्र इन्क्यूबेटर में रखा जाता है.



इन्क्यूबेटर में चिकित्सीय सार संभार

ऐसे शिशु का वजन जन्म के समय लगभग दो पौंड होता है. हाथ-पैर अविकसित होते है. गर्दन लबी, ढीली व सिर अपेक्षाकृत बडा होता है. त्वचा झुर्रीदार एव खुरदरी होती है. उसे उठाने या छेड़ने पर कोई हलचल व्यक्त नही करता. शिशु के शरीर का तापमान स्थिर नही रहता. बच्चे मे चूसने की क्षमता बिल्कुल नहीं होती.

समय से पूर्व उत्पन्न शिशुओं मे कई प्रतिक्रियाएं अनुपस्थित होती है. जैसे यदि उसे बाह पकड़कर ऊपर

उठाया जाए तो वह सिर को ऊपर उठाने का प्रयत्न नहीं करेगा. दूसरे ऐसे शिशुओं में पादतल रेखाएं या तो बहुत कम होती है या बिल्कुल नहीं होतीं. ऐसे शिशुओं में वजन वृद्धि बहुत धीमी होती है.

कारण और रोकथाम

अपोषण, कुपोषण, और कुछ बीमारियों के कारण बच्चे समय से पूर्व व कमजोर पैदा होते हैं. अपोषण का कारण कमजोर आर्थिक स्थिति के कारण उचित आहार का अभाव तो होता ही है अंध-विश्वासों, गलत रूढ़ियों का हाथ भी इसमें कम नहीं होता. पर मुख्य कारण होता है, अनभिज्ञता. इस दृष्टि से गरीब और अशिक्षित वर्ग में यह स्थिति अधिक दयनीय है. गर्भ काल में संतुलित पौष्टिक आहार न मिलने से मां और शिशु दोनों खून की कमी, कमजोरी, रोगों व कई प्रकार की विकृतियों के शिकार हो जाते है, इसीलिए प्रसवकालीन स्त्री मृत्यु-दर और शिशु-मृत्यु-दर गांवों और पिछड़ी बस्तियों में अधिक होती है और यही अपरिपक्व बच्चों की समस्या भी अधिक सामने आती है.

यहां यह समझ लेना भी जरूरी है कि पोषक तत्त्वों के अभाव में गर्भस्थ शिशु अपनी आवश्यकता के लिए जरूरी पोषण मां के शरीर से खींच लेगा और शिशु को हानि तभी पहुंचेगी जबकि मां के शरीर में पोषक तत्त्वों की अधिक कमी हो. पहली स्थिति में कमी का शिकार अपेक्षाकृत मां ही अधिक होगी, जबकि दूसरी स्थिति मां व शिशु दोनों के लिए घातक है. अतः बच्चे सामान्य पैदा हों और मां को भी प्रसव में खतरा न रहे, प्रसवोपरान्त वह कमजोरी-बीमारी का शिकार न हो इसके लिए गर्भकाल में मां के पोषण पर समुचित ध्यान दिया जाना चाहिए.

दूसरा कारण है गर्भवती मां का बीमारियों से ग्रस्त होना—जैसे एनीमिया या खून की कमी, हृदय रोग, तपेदिक, गुर्दे संबंधी रोग, बच्चेदानी पर किसी दुर्घटना से चोट लगना, कोई संक्रमण अथवा मानसिक रोग. गर्भकाल में समय-समय पर परीक्षण कराते रहने से डाक्टर इन बीमारियों या बाधाओं का पता लगाकर उचित उपचार कर सकती हैं और अपरिपक्व शिशु के जन्म की संभावना घट सकती है.

इसके अलावा कम उमर की किशोरी माताओं में भी अपरिपक्व शिशु के जन्म के आसार अधिक हैं. जुड़वा बच्चों के मामले में भी कम वजन या अपरिपक्वता का सामना करना पड़ सकता है.

अपरिपक्व शिशु की देखभाल

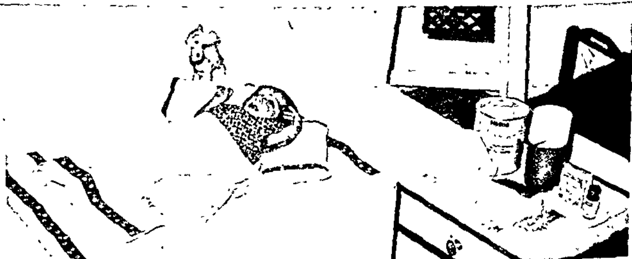
सबसे पहले तो अपरिपक्व शिशु (वजन पांच पौंड से कम) की पूरी परीक्षा किसी कुशल बाल-चिकित्सक से करानी चाहिए, फिर जब तक बच्चा सामान्य न हो जाए, उसका पालन-पोषण, खानपान डाक्टरी निर्देशन में करना चाहिए. अपरिपक्व शिशु के साथ निम्न समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है :

□ पेट के भीतरी अंग पूरी तरह विकसित न होने से दूध पीने और उसे पचाने में कठिनाई.

□ शरीर के तापक्रम को संतुलित रखने में कठिनाई.

□ रोग-निरोधी क्षमता कम से कम होने के कारण उस पर संक्रमण (इंफेक्शन) व रोगों का शीघ्र आक्रमण.

अपरिपक्व बच्चे का बिस्तर बहुत आरामदेह व नरम होना चाहिए



आंखों व चेहरे की सफाई

आहार में सावधानियां : अपरिपक्व शिशु को जन्म के बाद सामान्य शिशु की अपेक्षा खुराक शीघ्र मिलनी चाहिए. पर शुरू में दूध नहीं, चीनी मिला पानी ही दिया जाना चाहिए. ऐसे शिशु में निगलने की क्रियाशीलता का अभाव होने से दूध श्वास-नली द्वारा फेफड़े में प्रवेश कर जाने का खतरा होता है, जो जानलेवा भी सिद्ध हो सकता है. यदि पानी फेफड़े में चला भी जाए तो इतनी हानि नहीं होती. शिशु द्वारा पानी पी लेने के बाद उसे दूध देना शुरू करना चाहिए. पहले साफ ड्रापर द्वारा बूंद-बूंद करके व फिर छोटी बोतल के साथ छोटी निपल लगाकर. स्तनपान कराते समय भी पहले स्तन से दूध निकालकर इसी तरह साफ ड्रापर से या स्वच्छ रुई की बत्ती से बूंद-बूंद करके दिया जाए

10-12 दिनों बाद एक-एक चम्मच दूध एक बार में देना शुरू करें व प्रतिदिन हर खुराक में आधा चम्मच दूध की मात्रा बढ़ाते हुए सामान्य मात्रा पर आएं. जब बच्चा ठीक से दूध पीने लगे तो प्रति दो से तीन घंटे पर स्तनपान कराया जा सकता है या कारणवश बदले में पाउडर-दूध दिया जा सकता है.



इन्क्यूबेटर में शिशुओं को एक विशेष ट्यूब द्वारा आहार दिया जाता है

दूध की मात्रा अपरिपक्व बच्चे की तीन श्रेणियों के हिसाब से डाक्टर से पूछकर निर्धारित करें तो अधिक अच्छा होगा. वजन 3-4-5 पौंड से कम होने पर इन तीन श्रेणियों का विभाजन होगा. इसी अनुसार अपरिपक्व शिशु की देखभाल में भी सावधानी बरतनी होगी.

शरीर का तापक्रम : अपरिपक्व शिशु में ताप-नियंत्रण क्षमता नहीं होती. अतः बाहरी उपायों से ताप नियंत्रित करना पड़ता है. बहुत कमजोर बच्चे की जीवन-रक्षा के लिए उसे किसी बड़े अस्पताल के संबंधित विभाग में भरती कराना चाहिए. वहां एक विशेष यंत्र (इनक्यूबेटर) में उसे सामान्य होने तक रखा जाता है. घर पर यह व्यवस्था सुलभ नहीं होती. किंतु कम कमजोर अपरिपक्व बच्चे को घर पर भी विशेष सावधानी से ठीक रखा जा सकता है. इसके लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें :

बच्चे का बिस्तर बहुत आरामदेह नरम व गरम हो. उस पर ओढाया जानेवाला वस्त्र भारी न हो. सरदी में थोड़ा आधार देकर ऊंचा उठाते हुए भारी कंबल आदि ओढाया जा सकता है. या फिर बच्चे को रुई में लपेटकर रखें और उसके कोमल शरीर को ताप के सीधे संपर्क से बचाते हुए गरम पानी की बोतल से गरम रखें. कमरे के बाहर भारी परदा टांग दें. गरमी में खस की टट्टी लगा दें. गरमी में कमरा ठंडा हो, बरसात में नमी से मुक्त रहे, सरदी में गरम रहे. पर हर मौसम में एक ओर से ताजी हवा आने का मार्ग उसमें खुला रहना चाहिए.

रोगों की रोकथाम : सर्वप्रथम संक्रमण के बचाव के लिए स्वच्छता पर पूरा ध्यान देना होगा. मां स्वयं भी स्वच्छ रहे और और शिशु को किसी भी रोगी व्यक्ति के संपर्क से बचाया जाए. जुकाम-खांसी वाले कोई भी व्यक्ति उसके कमरे में न जाएं. स्वस्थ व्यक्तियों को भी अपेक्षित स्वच्छता का प्रबंध करके ही कमरे में प्रवेश करना चाहिए.

कमरे की नियमित सफाई और वातावरण-शुद्धि पर भी ध्यान दें. बर्तनों, दूध की बोतल, निपल की सफाई पर तो विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए. शिशु के कपड़ों व लंगोटों, चादरों आदि को धोने के बाद कीटाणुनाशक दवा से विसंक्रमित करें.

दवा, टॉनिक, विटामिन आदि के लिए डाक्टरी परामर्श पर ही चलें. बिना पूछे ताकत के लिए स्वयं कोई चीज न दें. ●

पोषण संबंधी सावधानियां

* अपरिपक्व शिशु को जहां तक हो सके कम से कम उठाएं व जब भी उठाएं बहुत सावधानी के साथ.

* शिशु के पोषण व तापक्रम संबंधी परिवर्तन धीरे-धीरे करें.

* बहुत छोटे शिशु को नहलाना नहीं चाहिए. केवल साफ व स्वच्छ रुई से व गरम पानी से उसका मुंह पोंछ दें.

* फीड देने के बाद शिशु को अलग-अलग करवट से सुलाना चाहिए. एक घंटे बाद करवट बदलते रहना चाहिए.

* फीड देने और कपड़े बदलने के समय में थोड़ा अंतर होना चाहिए क्योंकि बार-बार उठाने से शिशु थक जाता है.

* नाभि-नाल को प्रत्येक चार घंटे बाद एंटीसेप्टिक घोल से पोंछते रहना चाहिए.

* चूंकि अपरिपक्व शिशु बहुत जल्दी संक्रमण पकड़ता है अतः कोई भी ऐसा व्यक्ति जिसे जुकाम, खांसी या कोई अन्य बीमारी हो, उसके कमरे में नहीं जाने देना चाहिए.

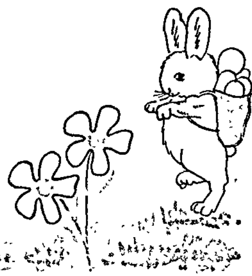
* शिशुओं को पहला पोषण जन्म के 3 से छह घंटे बाद दिया जाता है. 2000 ग्राम से अधिक वजन वाले शिशु को बोतल से दूध पिलाया जा सकता है. वैसे, यह शिशु के चूसने व निगलने की क्षमता पर निर्भर करता है. यदि शिशु निपल या मां का स्तन ठीक से न चूस पाए या चूसते समय उसके चेहरे का रंग नीला पड़ जाए तो इसे कुछ दिनों तक स्थगित कर दें.

* समय से पूर्व होने वाले शिशु को दूसरे सप्ताह के बाद कुछ विटामिन ड्राप्स की आवश्यकता होती है. इसे डाक्टर की सलाह के बिना न दें.



5

जुड़वां बच्चे



एक अनुमान के अनुसार 80 से 100 गर्भ-स्थितियों में से एक गर्भ जुड़वां होता है. यह जानने की जिज्ञासा स्वाभाविक है कि ऐसा क्यों होता है ? साथ ही जुड़वां बच्चों के पालन-पोषण मे भी माताएं काफी घबराती है. यहा इस जिज्ञासा का समाधान और जुड़वां बच्चो की देखभाल पर कुछ सुझाव प्रस्तुत हैं :

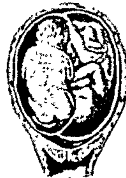
दो प्रकार के जुड़वां

ये जुड़वा दो प्रकार के होते हैं—एक, जो समान लिंग के होते है और प्रायः हमशक्ल भी. इन्हें एक अंडज जुडवा या अभिन्न जुड़वा कहते है. दूसरे, जो भिन्न लिंग के हो सकते हैं और इनकी शक्ल में भी साम्यता जरूरी नही होती. इन्हे द्वि-अंडज या भ्रातृ जुडवां कहते हैं. इसका अर्थ है,प्रथम प्रकार के एक जैसे जुडवां बच्चो का गर्भाधान एक ही बार के सहवास से सभव हुआ और स्त्री की एक अंडकोपिका से पुरुष के एक शुक्राणु के मिलान से उनका निर्माण हुआ, लेकिन बाद मे वह निषेचित डिम्ब दो खण्डों मे विभाजित हो गया.

दूसरे प्रकार के जुड़वा दो अलग सहवासों के परिणामस्वरूप हो सकते हैं. कभी-कभी सयोगवश प्राकृतिक लीक से हटकर गर्भाशय में दो अडक एक समय में (दो मासिक के बीच का समय) एक की जगह दो अडकोपिकाए बन जाती हैं, थोडे समय के हेर-फेर से दूसरी कोपिका भी निषेचित हो जाती है और दो भ्रातृ जुडवा गर्भ में आ जाते है. गर्भ स्थान का प्रवेश द्वार गर्भ की अवस्थिति के शीघ्र बाद एक श्लेष्मा से बद हो जाता है जो कि गर्भस्थ शिशु को सुरक्षित रखने का एक प्राकृतिक तरीका है. लेकिन निषेचित डिम्ब को डिम्बवाहिनी-नलिका (फैलोपियन ट्यूब) मे गर्भाशय मे स्थित होने तक की यात्रा मे छ: दिन लग जाते है. दो अलग सहवासो के परिणामस्वरूप यह भ्रातृ जुड़वा इस दौरान ही गर्भाशय में अवस्थित हो जाते हैं.

इस तरह इन दो प्रकार के जुड़वां की गर्भाशय मे भी दो भिन्न स्थितिया होती हैं. एक अडज जुडवा एक ही थैली या झिल्ली के अन्दर लिपटे रहते है और उनकी अपनी दो अलग नाभि-नाल क बावजूद वे एक ही जेर (प्लैसेंटा) से जुड़े रहते हैं, जबकि द्वि-अडज भ्रातृ-जुडवा अपनी अलग-अलग थैली या झिल्ली मे रहते हैं और दो जेर से जुडे होते हैं. पर सुरक्षा की दृष्टि से इन दोनों थैलियो के ऊपर एक और बडी थैली या झिल्ली लिपटी रहती है.







गर्भ में जुड़वां बच्चों की तीन स्थितियां

कभी-कभी जुड़वा दोनों बच्चे सामान्य व ठीक वजन के होते है, कभी दोनों कमजोर और अपरिपक्व और कभी-कभी दोनो मे से एक सामान्य और एक कमजोर प्रसव के समय प्राय अभिन्न जुडवा एक के बाद एक साथ-साथ जन्म लेते हैं, पर भ्रातृ जुडवां मे भी प्रसव के दौरान कुछ मिनटों का ही अन्तर रहता है. यानी प्रथम गर्भाधान वाला बच्चा गर्भ मे दो-तीन दिन अधिक रहकर भी पैदा होने के समय कुछ मिनट की आयु मे ही दूसरे से बडा होता है.

किसी भी गर्भवती महिला के पेट मे दो बच्चे हैं, इस तथ्य की जानकारी प्राय बीसवें सप्ताह के बाद हो पाती है. गर्भ की अवधि और उसके अनुपात मे पेट का बड़ा होना इसके लिए सदेह तो पैदा करता है, पर बड़े पेट का कारण दो बच्चों का होना जरूरी नही. इसके और भी कारण हो सकते है. इसलिए डाक्टर से परामर्श करनी चाहिए. प्राय पेट को टटोलने पर दो की जगह तीन सिरे हाथ मे आने पर जुडवा बच्चों के बारे मे पता चल जाता है. पर गर्भाशय मे इनकी स्थिति एक दूसरे के ठीक सामने होने पर यह पहचान करना कठिन भी हो सकता है. 'एक्स-रे' से पहचान काफी देर मे सभव होती है. इसके अलावा समय पूर्व 'एक्स-रे' खतरे से खाली नही होता. अत केवल जिज्ञासा पूर्ति के लिए स्वय 'एक्स-रे' न करवा कर इस सबध में डाक्टरी जाच कराना व उसके बाद पूरी तरह डाक्टरी निर्देशन मे ही चलना ठीक होगा.

जुड़वां बच्चों की देखभाल

यदि दोनो या दोनो मे से एक बच्चा अपरिपक्व नही है तो एक साथ दो बच्चो की देखभाल के अलावा कोई विशेष समस्या सामने नही आती. सामान्यत: भी दोनो बच्चो का वजन कम होता है. फिर भी दोनों पाच पौड से कम हो तो इनकी देखभाल अपरिपक्व शिशु की तरह ही करनी होगी. पर अक्सर ऐसा होता है कि एक बच्चा दूसरे से ज्यादा कमजोर या अपरिपक्व रह जाता है, तो इस बच्चे की ओर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान देने की आवश्यकता पड़ती है.

यदि दो बच्चो मे से एक लड़का और एक लड़की है तो भारतीय परिवारों मे लडके की ओर अधिक ध्यान देकर लड़की की उपेक्षा कर दी जाती है, जिससे उसके शारीरिक विकास मे अतर पडे, न पडे, मानसिक विकास में जरूर पड़ जाता है. इसलिए स्तनपान या ऊपरी आहार का प्रश्न हो या देखभाल के लिए समय देने का, या फिर मा का



अभिन्न जुड़वां जो समान लिंग के होते हैं और प्राय: हमशक्ल भी

सान्निध्य देने का, दोनो मे भेद-भाव करना नैतिक, सामाजिक व मनोवैज्ञानिक रूप से दूसरे के विकास मे बाधा पहुचाना है.

स्तनपान : प्राय: माताएं, एक साथ दोनो बच्चो को स्तनपान कराने से घबराती है कि वह स्वय कमजोर न हो जाए या इस भय से कि दो बच्चो को दूध पूरा नही पड़ेगा. यदि सही समय पर स्तनपान प्रारंभ कर दिया जाए और सही तरीका अपनाया जाए तो मां का दूध दोनों के लिए पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध हो सकता है. दुग्ध-ग्रंथियो मे दूध

का जमा स्टाक नहीं होता, यह तो बच्चे के चूसने की क्रिया से भीतरी हारमोनल-प्रक्रिया से साथ-साथ उत्पादित होकर दुग्ध-नलिकाओं द्वारा स्तनों से बाहर आता है. यदि मां की अनिच्छा, किसी कारण कमजोरी या चिंता-तनाव आदि कारण नहीं हैं तो दोनों बच्चों को प्रथम तीन महीने तक मा का पर्याप्त दूध मिल सकता है. तीन महीने के बाद पूरक आहार वैसे भी शुरू कराया जाना चाहिए, जो दोनों बच्चों को अलग-अलग मात्रा में दिया जा सकता है.

यदि प्रथम तीन महीने में भी दोनों बच्चों के पेट भरने लायक दूध न उतरे तो साथ में उपरी दूध भी लगाया जा सकता है. तब भी एक बच्चे को स्तनपान कराना व दूसरे को ऊपरी दूध देना ठीक नहीं. दोनों को बारी-बारी से मां का व ऊपरी दूध दिया जाना चाहिए कि एक बच्चा (फिर चाहे वह लड़का हो या लड़की) मां की गोद, सान्निध्य और वात्सल्य की गर्माहट से वंचित न रहे. ध्यान रहे किसी भी शिशु की भावात्मक सुरक्षा और कुंठारहित सामान्य मानसिक विकास के लिए मां का यह स्निग्ध स्पर्श आवश्यक है और इस स्पर्श के लिए स्तनपान का समय सर्वाधिक उपयुक्त है.

दूध पिलाने के समय मे यदि बच्चे की मांग (डिमान्ड फीडींग) पर चलें तो दोनों बच्चों के दूध पीने का समय अलग-अलग हो सकता है. ऐसी स्थिति में यदि बच्चे को पालने के लिए दूसरी सहायक स्त्री नहीं तो मां को काफी परेशानी हो सकती है. इसलिए अच्छा यही होगा कि अतिरिक्त श्रम और समय की बचत के लिए दोनों बच्चों को दूध पिलाने का क्रम साथ-साथ या थोड़े समय के अंतर से रखा जाए.

जैसे प्रातःकाल की खुराक का समय एक के लिए 5.30 व दूसरे के लिए 6 बजे रखा जा सकता है. कई बार दूसरा बच्चा उसी समय दूध लेने से इंकार कर सकता है पर कुछ दिनों के प्रयत्न से उन्हें यह आदत डालनी चाहिए. इसी तरह प्रथम-दो-तीन सप्ताहों के बाद मध्य रात्रि की खुराक भी बंद कर देनी चाहिए, ताकि बच्चों व मा दोनों को रात्रि मे विश्राम मिल सके. संभव हो तो जुड़वा बच्चों की देखभाल के लिए मा को एक अन्य सहायक स्त्री पास में रख लेनी चाहिए. कोई नजदीकी रिश्तेदार या उसकी अनुपस्थिति मे आया आदि.

बच्चों का स्वास्थ्य: सामान्य बच्चों के साथ पालन-पोषण की दुहरी व्यवस्था के अलावा अन्य कोई कठिनाई नहीं होती. पर दोनों अपरिपक्व हैं तो उन्हे डाक्टरी निर्देशन मे रखकर अपरिपक्व शिशुओं की तरह संभालना होगा. (देखें : 'अपरिपक्व शिशु' अध्याय) यदि दोनों में से एक के साथ अपरिपक्वता या विशेष रोग संबंधी कठिनाई है तो उसे संभालने के लिए भी इसी नियम का पालन करना होगा. लेकिन जुड़वां बच्चों के बारे में यह पूर्व धारणा कि एक के रोगी होने पर दूसरा भी रोगी हो जाता है, गलत है. अभिन्न जुड़वा में भावात्मक समानता हो सकती है, पर शारीरिक दृष्टि से अभिन्न जुड़वा भी साथ-साथ बीमार नहीं पड़ते. एक साथ समान बीमारी के जो उदाहरण देखने मे आते है, उनका कारण होता है एक के साथ दूसरे को संक्रमण (इन्फैक्शन) लग जाना. अतः सावधानी के लिए एक बच्चे को कोई भी संक्रामक रोग होने पर दूसरे को उससे अलग रखा जाना चाहिए. ●

* जुड़वां बच्चे पूर्ण विकास व पूरे समय पर जन्म लेने के बावजूद सामान्य बच्चे की अपेक्षा कमजोर होते हैं. अतः इनके पालन-पोषण मे वही सावधानियां अपेक्षित हैं जो कि अपरिपक्व या कमजोर बच्चे के लिए जरूरी हैं.

* जुड़वां बच्चे को दूध पिलाते समय, नहलाते समय, सुलाते समय या प्यार करते समय कभी भी एक बच्चे को ही प्राथमिकता न दें, भले ही वह दूसरे की अपेक्षा कुछ कमजोर है या उसकी मांग अधिक है. ... की बारी मे

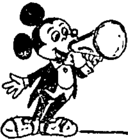
... में काफी

... न ही मिलते

जुलते नाम दें. जुड़वा होने के साथ में उनमें व्यक्तिगत पृथकता की भावना को भी प्रोत्साहित करें व उन्हें एक दूसरे पर निर्भर न होने दें.

* बच्चे चाहे अभिन्न जुड़वां हों या भ्रातृ जुड़वा, उन्हें 'विभिन्न व्यक्ति' के रूप में पहचानिए. उनकी आदतें, रुचियां मानसिक व शारीरिक विकास दूसरे से भिन्न हो सकता है. एक बच्चे की दूसरे से तुलना करना या एक बच्चे की रुचि या आदतों को आधार मानकर उनका पालन-पोषण करना दूसरे के विकास में बाधक हो सकता है.

* प्रायः हमशक्ल जुड़वां बच्चों मे बहुत आत्मीयता स्थापित हो जाती है [illegible]



6

पेशाब और पाखाने पर नियंत्रण



नवजात शिशु को पेशाब और पाखाने पर नियंत्रण नही रहता. फिर उमर बढने के साथ जैसे-जैसे मस्तिष्क का विकास होता है धीरे-धीरे यह प्रशिक्षण बच्चा ग्रहण करने लगता है.



नवजात शिशु में पेशाब-क्रिया

पैदा होने के बाद यदि बच्चा 24 घंटे तक भी पेशाब न करे तो चिंता की बात नही होती, क्योंकि जन्म के समय दूषित पदार्थ निगल लेने के बाद जो बच्चे उल्टी करने लगते है, उन्हे पहला पेशाब देर से उतर सकता है. इसलिए यदि बच्चा वैसे ठीक है तो घबराने की बात नहीं. पर उल्टी न करने की दशा में बच्चा देर तक पेशाब न करे, उसे लगातार बूंद-बूंद पेशाब आए, वह पेशाब करते वक्त चिल्लाए या ऐंठे, या अन्य कोई विकार नजर आए तो डाक्टर से परामर्श करना चाहिए.

प्रारंभ मे पेशाब कुछ पीलापन लिए और कम मात्रा में हो सकता है. बच्चे को उचित मात्रा में पानी पिलाते रहें तो धीरे-धीरे पेशाब की मात्रा व उसका रंग सामान्य हो जाएगा.

. **पेशाब पर नियंत्रण :** जन्म से एक-डेढ वर्ष की आयु तक बच्चे को पेशाब की क्रिया पर कोई नियत्रण नहीं रहता. इसलिए वे हर दो-ढाई घंटे पर पेशाब करते हैं, कुछ बच्चे एक-एक घंटे पर भी. लगातार एक-एक घंटे पर या उससे कम समय पर पेशाब हो तो गुरदे या पेशाब-नली मे खराबी हो सकती है, जिसकी जाच शिशु-रोग-विशेषज्ञ से करानी चाहिए. आयु मे वृद्धि के साथ बच्चे के पेशाब की थैली सक्षम होती जाती है, उसके साथ ही शिशु का थैली पर नियंत्रण भी बढ़ने लगता है. एक-दो वर्ष की आयु के बीच वह अपने नियत स्थान पर पेशाब करना सीख जाता है बशर्ते उसे ठीक प्रशिक्षण दिया जाए.

यह प्रशिक्षण एक मास की आयु के बाद ही शुरू कराया जा सकता है. शिशु को अपनी दोनो बाहो का सहारा देकर हाथो से उसकी टागें पकड़ चारपाई से बाहर लटकाने पर धीरे-धीरे वह लंगोट के बाहर पेशाब करना सीख जाएगा. माताएं समय-समय पर उन्हे इस तरह लटकाते हुए नीचे रखी चिलमची में पेशाब कराती रहे तो वे बार-बार गीले कपड़े (लंगोट व चादरें) बदलने व धोने का अपना झंझट कम कर सकती हैं. छ: महीने से एक वर्ष के बीच शिशु अपनी पेशाब की इच्छा का संकेत देने लगेगा. यही समय है उसके सही प्रशिक्षण का. यदि मा इन संकेतो पर ध्यान नही देती तो कुछ समय बाद शिशु भी सकेत देना छोड देते हैं और उनमे सही आदत का विकास नही हो पाता. इस बीच सही प्रशिक्षण मिलने पर तीन वर्ष के आसपास बच्चा स्वयं अपने कपड़े खोलकर यथा-स्थान पेशाब करने लगता है और माताओ की दिक्कत कम हो जाती है. पेशाब पर नियत्रण की सही ट्रेनिंग बच्चे के आत्मनियत्रण और मानसिक विकास मे भी बहुत सहायक होती है.

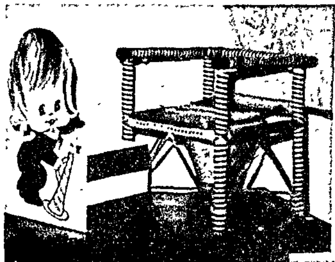
नवजात शिशु में शौच-क्रिया

जन्म के बाद 24 घटे के अन्दर शिशु पहली बार जो पाखाना करता है वह हरे-काले रंग का लेईनुमा होता है, जिसे 'मिकोनियम' कहते हैं. इसका कारण होता है जन्म के समय बच्चों द्वारा निगले गए पदार्थ. अगले पांच दिनों में फिर धीरे-धीरे उसके पाखाने का रंग सामान्य हो जाता है. लेकिन शिशु दिन में कितनी बार व कैसा पाखाना करता है, यह उसे दिए जा रहे दूध की किस्म और मात्रा पर निर्भर करता है. प्रायः मा का दूध पीने वाले बच्चे अधिक बार पतली टट्टी करते है और बोतल का दूध पीने वाले बच्चे कम व सख्त टट्टी करते हैं. पर यह कोई नियम नही है. यदि बच्चे का स्वास्थ्य ठीक है और वह भलीभाति पनप रहा हैं वह दिन मे पाच-छः पतली टट्टी करता है, तो इसमें चिंता की बात नही. पर इसके विपरीत बच्चा असामान्य कब्ज या दस्तों के रोग से पीड़ित है तो डाक्टरी परामर्श लें.

शौच पर नियंत्रण : यह धारणा गलत है कि केवल प्रशिक्षण से ही छोटे शिशु को पाखाने पर नियत्रण सिखाया जा सकता है. पहले वर्ष में मस्तिष्क का इतना विकास ही नही होता कि एक वर्ष के भीतर उसे इस क्रिया पर नियत्रण सिखाया जा सके. इस दौरान मां को ही शिशु को समय पर पाखाना कराने व सफाई रखने का ध्यान रखना होगा कि शिशु स्वय नियंत्रण के अभाव मे भी बार-बार के अभ्यास से सही आदत सीख सके.

एक वर्ष के बाद बच्चे में ईर्ष्या की भावना और अपनी निजी वस्तु पर अधिकार भावना का विकास साथ-साथ होता है. पर अभी वह गदगी और सफाई मे भेद नही कर पाता. इसलिए निश्चित जगह पर टट्टी न कर अलग-अलग स्थान पर करने, उसे निजी वस्तु समझ गर्व के साथ मां को दिखाने, उसके साथ खेलने व कभी-कभी मौका पाकर मुंह मे भी धर लेने की कोशिश करके प्रसन्नता अनुभव करता है. इस समय उस पर निगाह रखने व उसे सही आदत सिखाने के साथ गंदगी व सफाई में भेद करने का प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए. डेढ़-दो साल के बीच उसे यह समझ आ जानी चाहिए कि पाखाना एक गंदी चीज है, उसे अन्य वस्तु की तरह हाथ मे नही लेना है या शरीर मे उसे चिपका हुआ नही रहने देना है.

इसी आयु मे बच्चे अपनी मल-त्याग की इच्छा का संकेत भी देने लगते है, जिस पर ध्यान देकर उन्हे निश्चित स्थान पर ठीक ढग से बैठना सिखाया जाना चाहिए. फिर भी कभी वे भूल से अन्यत्र टट्टी कर दें तो डाटने-फटकारने के बजाए



एक वर्ष से बड़े बच्चे के लिए सुविधाजनक पौटी

उन्हें प्यार व सहानुभूति से सिखाएं कि अगली बार वे अपनी भूल को सुधार सकें. यदि शैशव में सही आदतें न सिखाई जाएं तो बच्चे देर तक इधर-उधर बैठकर मां को तो परेशान करेंगे ही, आगे चलकर उनके मानसिक विकास व आत्म-नियंत्रण मे भी यह आदत बाधा डाल सकती है.

इस प्रकार शिशु एक निश्चित अवधि के बाद मा-बाप के प्रशिक्षण का सहयोग लेकर, एक निश्चित क्रम से गुजर कर अपनी पाखाने की क्रिया पर नियत्रण करता है. दो-तीन वर्ष की आयु के बीच यह प्रशिक्षण सम्पन्न हो जाना चाहिए और तीन वर्ष बाद की आयु के बाद बच्चे को इस बारे मे आत्मनिर्भर हो जाना चाहिए. आयु बढने के साथ-साथ मानसिक विकास होते चलने से बच्चा देखादेखी स्वयं भी सीखता है. मा का काम है बस उसे उचित समय पर, निश्चित जगह पर और सही तरीके से इस क्रिया को संपन्न करने के लिए निर्देशित करना. इस काम को सही अंजाम देने पर उसे समय-समय पर शाबाशी देकर प्रोत्सा-हित करना. गलती करने पर उसी समय सहानुभूतिपूर्ण ढंग से गलती सुधारने के लिए प्रेरित करना. और इसके साथ-साथ गंदगी के दोष बताकर सफाई रखने की आदतें डालना.

यदि इस संबध मे सूझबूझ से काम न ले अधिक दुलार से बिगाड़ने या सख्ती से डांटने फटकारने अथवा बच्चे को अपमानित करने का तरीका अपनाया जाए तो बच्चा चेतन-अचेतन रूप से विद्रोही व जिद्दी हो जाएगा और मां को

तंग करने के लिए ही बिस्तर पर या गलत जगहों पर टट्टी-पेशाब करने लगेगा. बड़ी उमर में होने वाली कई मानसिक बीमारियों की जड़ शैशव में मल-मूत्र त्याग की गलत आदतों या सख्ती से उनके दमन में भी छिपी होती है. अतः इस प्रशिक्षण में अभिभावकों को पूरी सतर्कता से काम लेना चाहिए. ●



• एक-डेढ़ वर्ष से पहले बच्चे को शौच नियंत्रण संबंधी आदतें डालने में जबरदस्ती करना उचित नहीं.

• इस आयु में भी बच्चा सहयोग नहीं देता तो इसे कुछ दिनों के लिए स्थगित कर दें. बच्चे को डांटें या धमकाएं नहीं. न ही अधिक नाराजी करें और न ही इस बात को अधिक महत्व दें.

• यदि बच्चा स्वयं अपनी इच्छा से पॉटी प्रयोग करने में उत्सुकता दिखाता है तो उसकी प्रशंसा करें. उसकी पॉटी आरामदेह व सुविधाजनक होनी चाहिए ताकि वह बैठते हुए डरे नहीं.

• बच्चे की मल त्याग की अनिच्छा का कारण कब्ज या पेट में दर्द हो सकता है अत: समस्या के अनुसार उसका निवारण करें. •

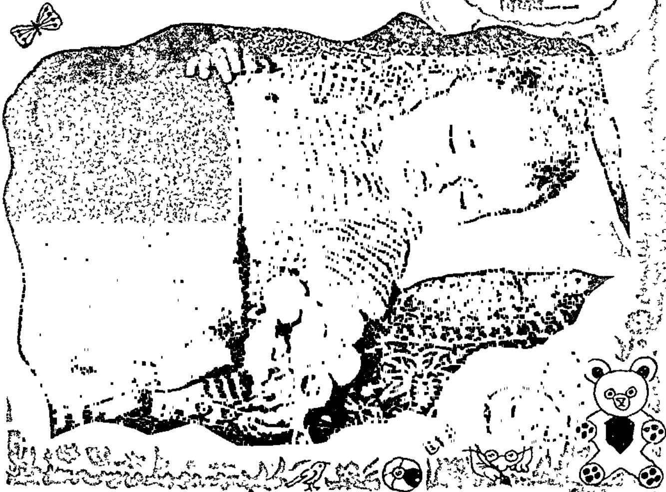
7

सोना

विश्राम हर व्यक्ति की बुनियादी जरूरत है. शिशु की यह जरूरत बड़े व्यक्ति से बहुत अधिक होती है. नवजात शिशु दिन-रात में 20-22 घंटे सोता है. फिर उमर बढ़ने के साथ नींद के घंटे कम होते जाते हैं. फिर भी कुछ बच्चे अधिक सोते हैं, कुछ कम. अनुभव में आया है कि बच्चा अगर ठीक से सो रहा है तो उसका स्वास्थ्य अच्छा है. यहां तक कि उसे पूरी खुराक मिल रही है या नहीं और उसे कोई रोग है या नहीं, इसका अनुमान भी प्रायः उसके ठीक सोने, न सोने से लगाया जाता है.

निद्रा-अवधि

प्रायः माताएं डाक्टरों से पूछती हैं कि बच्चे को कितनी देर सोना चाहिए अथवा अपने बच्चे के कम सोने की शिकायत करती हैं. शिशु-विशेषज्ञों के अनुसार, कोई बच्चा कम सोकर भी स्वस्थ रहता है तो कोई ज्यादा देर सोने के बाद ही स्वस्थ-प्रसन्न नजर आता है. इसलिए यदि बच्चा कम सोने पर भी जागने के बाद हंसता-खेलता रहे तो समझना चाहिए कि उसके लिए उतनी नींद पर्याप्त है. यदि उसे कोई बीमारी नहीं है तो यह कम सोना चिंता की बात नहीं.



जन्म के बाद कुछ समय तक बच्चा केवल दूध पीने या पाखाना-पेशाब करने के लिए ही जागता है और शेष पूरे समय सोता रहता है. एक वर्ष की उमर तक यह 20-22 घंटे का समय घटकर 14-15 घंटे हो जाता है और चार-छ: वर्ष की उमर तक 11-12 घंटे रह जाता है. इस तरह जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते जाते हैं, उनके सोने का समय घटता जाता है और सोने की आदत बदलती जाती है. अब वे पहले की अपेक्षा नींद में कम समय लेते हैं पर इस दौरान उनका गहरी नींद लेने का समय बढ़ जाता है. 3-5 वर्ष की उमर में वे सामान्यत: दिन में एक बार ही सोते हैं और छ: वर्ष के बाद कुछ बच्चे दिन में सोते ही नहीं. कुछ बच्चे तीन-छ: महीने की आयु के बाद भी रात को जाग जाते हैं. इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि उन्होंने रात की खुराक पूरी न ली हो. इसलिए कोशिश करनी चाहिए कि उन्हें रात को ठीक से खिला-पिला कर सुलाया जाए. या विशेष आवश्यकता पर अपवाद रूप से रात को भी भूखा होने पर उन्हें एक खुराक देने में संकोच न किया जाए. केवल दूध पीने वाले बच्चों को धीरे-धीरे रात वाली अंतिम खुराक की मात्रा बढ़ाकर देने से उनकी रात में जागने की आदत छूट जाएगी

निद्रास्थल

इसमें दो मत नहीं कि बच्चे को शांत वातावरण में सुलाना चाहिए. प्रश्न उठता है कि बच्चे को मां के कमरे में सुलाया जाए या दूसरे कमरे में? यदि मां के कमरे में रखा जाए तो उसी बिस्तर पर सुलाया जाए या अलग पालने अथवा छोटे पलंग पर? बहुत छोटे बच्चे को भारतीय घरों में अलग कमरे में रखने का प्रश्न नहीं उठता. पर घर में जगह की कमी न हो तो भी बच्चे को मां के सान्निध्य से वंचित करना ठीक नहीं. प्रशिक्षित आया के अभाव में इस तरह उसकी देखभाल में भी मां को कठिनाई होगी. अत: दो वर्ष से छोटा बच्चा मां के कमरे में ही रहना चाहिए और जब तक कोई विशेष बाधा न हो, एक महीने से छोटा बच्चा मां के साथ सुलाना चाहिए—पूरे समय नहीं तो बीच-बीच में कुछ समय के लिए अवश्य. शेष समय उसे पालने में या मां के पलंग के साथ सटे छोटे पलंग पर अलग सुलाकर धीरे-धीरे पूरे समय अलग सुलाने की आदत डालनी चाहिए

दो वर्ष की आयु के बाद बच्चे को दूसरे कमरे में सुलाना इसलिए आवश्यक है कि वह रात के समय भी देखभाल के लिए मां-बाप पर देर तक आश्रित न रहे और माता-पिता के आपसी संबंधों में बाधा न डाले. कुछ समझ आ जाने पर बड़े बच्चों में इस तरह रात को मां-बाप के बीच रहकर गलत प्रभाव ग्रहण कर लेने की आशंका रहती है. दो से पांच-छ: वर्ष की आयु में शिशु की बढ़ी-चढ़ी सहज जिज्ञासा-वृत्ति को इस क्षेत्र में लाना ठीक नहीं, क्योंकि इस आयु में समाधान ग्रहण करने के लिए उसकी बुद्धि का विकास पूरी तरह नहीं हो पाता है. यदि बड़े बच्चे के लिए अलग कमरे की व्यवस्था नहीं है तो मां-बाप के बिस्तर व बच्चे के बिस्तर के बीच पार्टीशन या मोटे परदे की व्यवस्था कर लेना ठीक होगा.

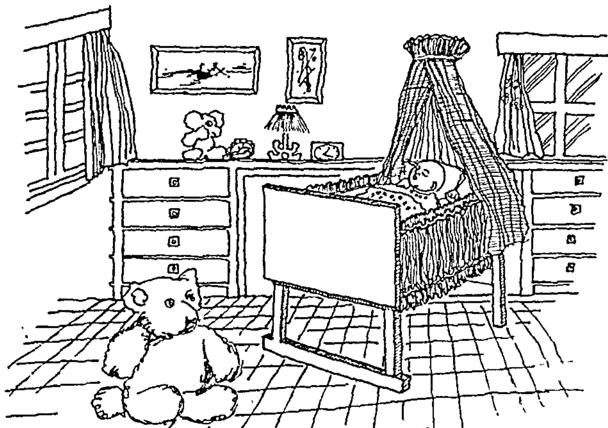
कमरे का तापमान

सोने वाले कमरे का तापमान मौसम के अनुसार हो. कमरे में अधिक सरदी के दिनों भी रात भर अंगीठी या हीटर जलाकर नहीं रखना चाहिए. सोने से पूर्व थोड़ी देर अंगीठी या हीटर से कमरा गरम कर लें व फिर बुझाकर बच्चे को सुलाएं. पर सरदी के दिनों भी हवा के आवागमन का मार्ग पूरी तरह बंद नहीं करना चाहिए. एक रोशनदान खुला रखें या दरवाजे को पूरा बंद न कर उसमें थोड़ी दरार रखें.

गरमी में खिड़कियां आदि खुली रखने व पंखा चलाने के साथ यह ध्यान रखना होगा कि शिशु खिड़की के ठीक सामने या पंखे के ठीक नीचे न रहे. बरसात में व लू के दिनों भी उसे बहुत पतले कपड़े या बिना ओढ़ाए सुलाना ठीक नहीं. मुख्य बात यह है कि सोने की जगह का तापमान मौसम अनुसार रखने व बच्चे को नींद के समय पूरा आराम देने की जरूरत है. इसके लिए गरमी-बरसात में मच्छरों व नमी से बचाव भी जरूरी है.

आरामदेह बिस्तर

बच्चे का बिस्तर भी आरामदेह हो व उसमें मौसम के अनुसार चादरों, कंबलों आदि की ठीक व्यवस्था हो. नीचे गद्दे पर मोमजामा बिछाने के बाद नमी सोखने वाले कपड़े की मोटी मुलायम चादरें बिछानी चाहिए, जो पुराने बेड-कवर आदि से भी बनाई जा सकती हैं. ये चादरें चार से छ: तक अवश्य होनी चाहिए ताकि गंदी होने पर उन्हें आसानी से बदला जा सके. ओढ़ाने के लिए भी कंबल या छोटी रजाई के नीचे सूती चादर का प्रयोग करें, जिससे कंबल या रजाई मल-मूत्र के संपर्क में न आए. तकिया बहुत पतला व मुलायम होना चाहिए. नवजात शिशु का सिर सीधा रखने के लिए आस-पास दो जरा मोटे और छोटे तकिए लगाए जा सकते हैं. सोने के समय कमरे में न तेज रोशनी हो, न पूरा अंधेरा.



बच्चे के लिए सुसज्जित व हवादार कमरा

नींद में अन्य बाधाएं

इस तरह धीमे प्रकाश, मुलायम बिस्तर व सही तापमान वाले आरामदेह कमरे में सुलाने पर शिशु की नींद में बाधा नहीं पड़ेगी और वह पूरे समय आराम से सो सकेगा. फिर भी ध्यान रखना होगा कि बिस्तर देर तक गीला या गंदा रहने, बच्चे के भूखा रहने, गरमी में प्यासा रहने, अधिक खुराक या अन्य कारणों से उसके पेट में दर्द अथवा अफारा रहने, जुकाम के कारण उसकी नाक बंद रहने या किसी अन्य बाधा से उसके ठीक सांस न ले पाने, आसपास शोरगुल होने आदि कारणों से भी उसकी नींद में बाधा पड सकती है.

चिंता तथा तनाव की स्थितियां

बच्चे की नींद मे व्यवधान का एक कारण बच्चे का चिंता-तनावग्रस्त होना भी हो सकता है. प्रायः तनाव की ये स्थितियां होती है :

—दूध पिलाने के तरीके मे परिवर्तन करना.

— मा का दूध छुड़ाकर दूसरा दूध देना.

—अपने पास सुलाने के बाद एकाएक अलग बिस्तर पर सुलाना आदि.

पर ये स्थितियां अस्थायी रूप से ही शिशु की नींद मे बाधा डालती हैं. इस दौरान बच्चे को मां का प्यार भरा आश्वासन मिलता रहे, उसे एक झटके से अलग कर नई स्थिति में न डाल दिया जाए तो वह शीघ्र ही नई स्थिति से अनुकूलन कर लेगा. यदि मां सूझबूझ से काम ले शिशु को नई स्थिति से धीरे-धीरे अभ्यस्त कराएगी तो उसके साथ तनाव की समस्या पैदा ही नहीं होगी.

छः महीने से एक साल की उमर में जब बच्चा घुटनों के बल व उठकर चलना सीखता है तो वह अपने लिए और घर की चीजों के लिए कुछ खतरा पैदा करता है. इस समय भी यदि बच्चे के उत्साह को सही दिशा देने की बजाय उसे डांट-फटकार से मना किया जाता है या झटके से उठा कर अलग किया जाता है तो बच्चा तनाव-ग्रस्त हो सकता है और उसकी नींद मे बाधा पड़ सकती है. इसी बीच की अवधि मे उसे ठीक से संभालने की जरूरत होती है. पूरी तरह चलना सीख जाने पर उसमे आत्मविश्वास आ जाता है और वह स्वयं ही ठीक हो जाता है.

इसके अलावा भी बच्चे के तनाव-ग्रस्त होने की दो स्थितियां हो सकती हैं : एक, जब कभी मां उसे किसी अन्य व्यक्ति के पास छोड़कर कुछ दिनो के लिए बाहर जाए,

▲ इस तरह के पालने में व बिस्तर पर गुड़ीमुड़ी सुलाने से शिशु का विकास अवरुद्ध हो जाएगा ▼

दूसरे, जब वह नया-नया स्कूल जाए. ऐसे में भी शिशु अस्थायी रूप से ही तनाव से घिरता है. यहा फिर उसे मनोवैज्ञानिक रूप से संभालने व नई स्थितियों से अभ्यस्त कराने की आवश्यकता होगी.

सोने का ढंग

बच्चे को पेट के बल सुलाया जाए या पीठ के बल, इस के लिए कोई विशेष नियम नहीं बनाया जा सकता. बेहतर यही है कि बच्चे को जिस ढंग से सोना पसंद हो, उसे वैसे ही सुलाएं. पर पेट के बल सुलाने के दो लाभ हैं : एक, पेट से गैस निकल जाने से बच्चे को पेट का दर्द कम होगा. दूसरे, यदि उसे सोते हुए उल्टी हो जाए तो उसके फेफड़े में जाने का डर नही रहेगा.

यदि बच्चा पीठ के बल सोता है तो भी उसे बीच-बीच मे पेट के बल सुलाने की आदत डालनी चाहिए. छोटा शिशु कई बार सीधा पड़े-पडे एक तरफ किसी खास चीज को देखता रहता है, तो उसका सिर पीछे मे चपटा व एक ओर से टेढ़ा हो जाता है. इसके लिए उसकी दृष्टि का केंद्र बदलते रहना चाहिए और एकदम सीधा न रख बीच-बीच में उसे करवट लेकर व पेट के बल भी सुलाते रहना चाहिए. पर सिर के प्रारंभिक चपटेपन या टेढ़ेपन से मस्तिष्क के विकास पर कोई विपरीत असर पडता है, यह धारणा गलत है. यह स्थिति भी अस्थायी होती है, फिर एक-दो साल की आयु के बीच सिर अपनी ठीक आकृति मे आ जाता है. अत चिंता करने की कोई बात नही.

सोने की आदतें

तीन-चार महीने की आयु के बाद बच्चे को सोने की ठीक आदत डालने की ओर भी ध्यान देना चाहिए. इसके लिए निम्न सुझाव नोट करें ·

☐ दिन मे मालिश-स्नान के बाद दूध की अगली खुराक देकर सुलाना.

☐ रात में दूध की अंतिम खुराक भर पेट देने के बाद सोने की आदत डालना.

☐ कभी-कभी बच्चे को लोरी सुना कर, गाना गाकर रेडियो खोलकर, बड़े बच्चे को कहानी सुनाकर सुलाना बुरा नही. पर नियमित रूप से इस तरह की आदत डालना ठीक नही है. फिर यदि किसी दिन घर मे मेहमानो के सामने या कही बाहर ले जाते समय अथवा अन्य कारण से भी ऐसा न कर सकें तो बच्चा सोने से इंकार कर सकता



बच्चे के मुंह में चूसनी देकर सुलाने की आदत न डालें.

है. इसी तरह किसी विशेष खिलौने के साथ या मुंह मे चूसनी देकर सुलाने की भी आदत ठीक नही. इससे एक तो उसे वही खिलौना लेने की आदत पड़ जाएगी या बिना चूसनी लिए वह सोएगा नही. दूसरे, चूसनी के साथ यदि स्वच्छता पर पूरा ध्यान न दिया जाए तो बच्चे को संक्रमण जल्दी पकड़ेगा. इसके अलावा चूसनी की लगातार आदत से बच्चों का गला खराब हो सकता है, उनके दांत टेढ़े आ सकते हैं.

□ दो वर्ष के बाद कभी-कभी बच्चे रात को डर जाते हैं. उनके चिल्लाने पर मा-बाप तुरत उन्हे उठाकर अपने बिस्तर पर ले लेते है तो बच्चे को यह आदत लग जाती है और फिर वे अलग सोना पसद नही करते. इसकी बजाए बच्चे डरें नही, इस ओर ध्यान देना चाहिए. सोते समय बच्चों को ऐसी कहानी न सुनाएं कि वे सपने मे भूत-प्रेत राक्षस आदि से डरकर चीखने लगें. (बच्चों को कैसी कहानिया सुनाए, इसके लिए सबधित अध्याय देखें) बच्चे को कभी भी डरा-धमकाकर अलग सोने के लिए मजबूर न करें, बल्कि स्वय उसके बिस्तर पर जाकर उसे प्यार भरी थपकी देकर सुलाए.

□ सोने से पहले बच्चो को प्यार व सुरक्षा का आश्वासन मिलना चाहिए. इसके बाद वे अलग सोने से डरेंगे नही और अपनी जगह शांति से सोते रहेंगे. फिर भी यदि वे कुछ समय तक इस तरह रात को डरकर चिल्लाएं या उठकर मा के पास आ जाएं तो माताओं को चाहिए कि उन्हें अपने बिस्तर पर न लेकर स्वय उठकर उनके बिस्तर पर जाएं और वही प्यार की गरमाहट देकर सुला दें. धीरज के साथ कुछ दिनो के ऐसे प्रयत्न से उनकी यह आदत सुधारी जा सकती है, जबकि डाटकर उन्हे उनके बिस्तर पर जबरदस्ती सुलाने से उनके मन मे भय की ग्रंथि बन सकती है.

□ पाच-छ वर्ष की आयु हो जाने पर बच्चा अपने सोने के समय की स्वय पहचान कर लेता है, तब उसे कुछ देर पहले सोने के समय की याद दिला देना चाहिए ताकि सोने के समय से पहले वह अपना खेल बंद करके या रात का खाना खाकर सोने के लिए तैयार हो जाए. उसे खेल के बीच एक झटके से उठाकर सोने का आदेश देना ठीक नहीं. इसी तरह सुबह भी बच्चा मां के जागने के थोड़ी देर बाद उठे, उसे ऐसी आदत डालें तो ठीक होगा, ताकि बच्चे के उठने से पहले मां उसके लिए दूध आदि तैयार कर सके.

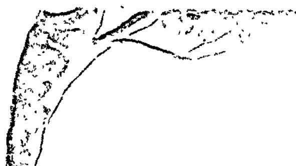


यदि शिशु रात को उठकर दूध की मांग करे तो कुछ दिन तक पानी पिलाने से उसकी यह आदत छूट जाएगी

नींद संबंधी कुछ समस्याएं

यदि बच्चा सभी संभव उपाय करने के बाद भी लगातार ठीक से नही सोता या उसे लगातार भयानक स्वप्न आते है या वह नीद मे उठकर चलने लगता है तो इसका कारण बच्चे को कोई सदमा पहुचना, उसके मन पर कोई बोझ होना या उसका भय, तनाव से ग्रस्त रहना हो सकता है. कारण की पहचान कर उसके निवारण से ही शिशु की निद्रा संबंधी ऐसी समस्या का समाधान होगा. यदि स्वयं समासमाधान न खोज पाएं तो इस सबध मे मनश्चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए. ●

* बच्चे को प्रतिदिन नियत समय व नियत स्थान पर सुलाएं.
* मुंह मे दूध की बोतल लेकर सोने की आदत न डालें. यदि सोते समय दूध पिलाना ही चाहे तो उसे गोद में लेकर पिलाए व बाद में बिस्तर पर सुला दें.
* सोते समय मुंह में उंगली तथा चूसनी लेकर सोने को प्रोत्साहित न करें.
* सोते समय गाना, कहानी या लोरी सुनाना ठीक है, मगर इसे आदत न बनाए.
* बच्चे को डरा-धमकाकर या सिर पर थपकी देकर कभी न सुलाए.



8
रोना



शिशु की पहली भाषा है रोना, जिसके माध्यम से वह हर जरूरत, तकलीफ व्यक्त करता है. चूंकि वह बोल कर बता नहीं सकता कि वह क्यों रो रहा है, इसलिए शिशु का रोना अक्सर माताओं के लिए एक समस्या बन जाता है. पर यह समस्या ऐसी नहीं कि अनुभव व समझदारी से उसे हल न किया जा सके.

डाक्टरों की राय में, रोना शिशुओं के लिए लाभदायक है, इस से उनके फेफड़ों का व्यायाम होता है. पर सामान्य से अधिक रोना किसी कष्ट या रोग का लक्षण होता है. हर समय रोने वाले बच्चे न तो स्वस्थ होते है, न ही रोते-बिसूरते बच्चे सबको अच्छे लगते हैं और ऐसे बच्चों के साथ मां की परेशानी की कोई सीमा नहीं होती.

बच्चा जन्म के कुछ मिनटों बाद ही जोर से रोना प्रारम्भ कर देता है जो एक स्वस्थ लक्षण है, क्योंकि रोने से उसके फेफड़ों में हवा जाती है. यदि जन्म के शीघ्र बाद बच्चा न रोए तो मस्तिष्क को आक्सीजन न मिलने से उसके मानसिक रूप से विकृत हो जाने का खतरा रहता है. न रोने का मतलब होता है, बच्चे में कोई नुक्स या खराबी, जिस के लिए उसे तुरन्त कुशल चिकित्सक को दिखाना चाहिए.

यहां यह बात भी ध्यान में रखनी आवश्यक है कि जन्म के प्रथम मास में बच्चे के रोने से आंसू नहीं निकलते. यदि निकलते हैं तो यह एक असामान्य बात है, जिसकी जांच जरूरी है.

रोने के अनेक कारण

बच्चे के रोने के अनेक कारण हो सकते है कुछ सामान्य और कुछ रोगजनित. ये मुख्य कारण हैं :





भूख

बच्चा अपनी भूख रोकर ही प्रगट करता है. वैसे भर-पेट दूध मिलने पर वह तीन से चार घंटे तक आराम से सोता या खेलता रहता है. पर यदि किसी कारण वह ठीक से दूध नही पी सका या ऊपरी दूध उसे पतला दिया गया है तो निर्धारित समय से पूर्व वह फिर भूख से रोने लगेगा और दूध पीते ही उसका रोना बंद हो जाएगा. इसीलिए आज-कल बच्चे की प्रकृति व माग के अनुसार उसे दूध पिलाने का समय बाधने पर जोर दिया जाता है.

पेट में हवा भर जाना

कई बार भर-पेट दूध पीने के बाद भी बच्चा रोता रहता है प्राय यह रोना दूध के साथ हवा पी लेने के कारण होता है हवा के कारण उसके पेट मे मरोड-सा उठता है और दर्द से बच्चा रोने लगता है इसके लिए हर बार दूध पिलाने के बाद बच्चे को कधे से लगाकर थपथपाएं ताकि वह डकार ले ले ऐसा करने मे उसे आराम मिलेगा और उसका रोना बद हो जाएगा.

अपच व गैस

यदि बच्चा दही के समान फटा हुआ और हरे रग का पाखाना करे और साथ मे रोए तो इसका मतलब है कि अपच और गैस के कारण उसके पेट मे दर्द है. इस स्थिति मे यदि बच्चे को जरूरत से ज्यादा दूध पिलाया जा रहा है तो मात्रा कम कर दें. फिर भी ठीक न हो तो डाक्टर से सलाह लें.

सामान्य पेट दर्द

जन्म के बाद पहले तीन महीने तक अक्सर यह प्रक्रिया चलती है. इसमें आत की ऐंठन के कारण पेट मे दर्द होता है. बच्चा पैर कडा करके पेट की तरफ सिकोडता है और रोते समय उसका चेहरा लाल हो जाता है. प्राय यह दर्द शाम के समय या आधी रात मे होता है. इसका कारण अज्ञात है. पर यह प्रक्रिया सामान्य है, जो तीन महीने की आयु के बाद धीरे-धीरे कम होने लगती है. ऐसे समय बच्चे को गोद मे लेकर पुचकारें और टहलाए. इससे थोड़ी देर मे वह शात हो जाएगा.

अकारण रोना

प्राय: ऐसा समझा जाता है कि पाचन-सस्थान स्नायु-सस्थान की अपरिपक्वता के कारण ऐसा होता है. जैसे-जैसे ये सस्थान परिपक्व होते जाते है वैसे-वैसे बच्चे का अकारण रोना भी कम होता जाता है. इन बच्चों को अच्छी तरह लपेट कर आराम से सुलाने, गोद मे लेने या प्यार करते हुए शहद, ग्लूकोज आदि चटाने से बच्चा राहत पा, चुप हो जाता है.

अकेलेपन के कारण रोना

छोटे बच्चे भी प्राय: किसी का साथ चाहते है, विशेष रूप से मां का. ये बच्चे यदि अकेलापन अनुभव करने के कारण रोते है तो मां की गोद मे आकर चुप हो जाते है. अत जहा यह जरूरी है कि बच्चे को हर समय गोद की आदत न डाली जाए, वहा यह भी उतना ही जरूरी है कि उसे मां की स्निग्ध गोद से वंचित न किया जाए. बच्चे को अलग लिटाते हुए भी उसे आखों से ओझल नहीं, सामने रखने, अपनी अनुपस्थिति मे घर के किसी अन्य सदस्य का साथ देने और अच्छी तरह लपेटकर शात जगह मे सुलाने मे भी इस समस्या का समाधान सभव है.

तनाव के कारण रोना

बच्चे भी तनावग्रस्त हो सकते है, विशेषरूप से नए जीवन का अभ्यस्त न होने के कारण जन्म के कुछ हफ्ते बाद तक. लेकिन शात व आरामदेह वातावरण उनकी इस समस्या का समाधान कुछ हद तक कर देता है.

दूध पीते समय रोना

कई शिशु स्तनपान करते समय रोते हैं. ऐसा देखा गया है कि अधिकतर यह रोना मां के मासिक-धर्म के दिनों बढता है और बाद मे पुन कम हो जाता है. इसका कारण उन दिनो मां का तनावग्रस्त होना *व शिशु को ठीक से सभाल न पाना भी हो सकता है.* पर दूध पीते समय रोने के सामान्य कारण होते है : स्तन के दबाव से शिशु का नाक बद हो जाना, स्तन की निप्पल भीतर धसी होने के कारण बच्चे को दूध पीने मे कठिनाई, दूध पिलाने का गलत ढग, बच्चे के मुह में कोई तकलीफ, बोतल से दूध पीते समय निप्पल का छिद्र अधिक तग या अधिक खुला होना, बच्चे की भूख के अनुसार स्तनों मे दूध की कमी आदि.

ऐसी स्थिति मे जल्दबाजी मे दूध की किस्म बदलने के बजाय सही कारण की पहचान कर उसका उपाय करना चाहिए.

असुविधाजनित अन्य कारण

उपर्युक्त कारणो के अलावा शिशु को कोई कष्ट या

असुविधा हो सकती है, जिसके निवारण से ही समस्या का समाधान संभव होगा. जैसे—

गर्मी लगने से रोना : हवा का प्रबंध करने व कपड़े ढीले या हल्के कर देने से बच्चा राहत पा जाएगा.

ठंड लगने से रोना : बच्चे को जरूरत भर कपड़े

1. मां के सामीप्य या गोद से वंचित होना

अक्सर बच्चे सहन नहीं कर पाते



पहनाने, सीधी हवा से बचाकर लपेटने, ओढ़ाने का प्रबंध करना चाहिए.

तंग या अधिक कपड़ों के कारण रोना : प्रायः माताएं फैशन-डिजाइन के चाव में बच्चों को अधिक फिट कपड़े पहना देती है या उसे ठंड न लग जाए, इस भय से अधिक कपड़ों से लाद देती हैं, तो बच्चा असुविधा अनुभव करने के कारण रोने लगता है. इसके अलावा तंग कपड़ों से उसकी बढ़त में बाधा पड़ती है और अधिक कपड़ों में बंद रहने के बाद उतारने पर वह जल्दी ठंड भी पकड़ता है. इसलिए कोमल शिशु को हमेशा नर्म व ढीले वस्त्र ही पहनाएं. गर्म कपड़े पहनाते समय ध्यान रखें कि वे वस्त्र न तो चुभने वाले हों, न अधिक भारी. कभी भी पूरी बांहों वाले दो वस्त्र एक साथ न पहनाएं.

त्वचा में चुभन व खुजलाहट के कारण रोना : शिशु का भीतरी वस्त्र हमेशा नरम व सूती होना चाहिए. बटन या हुक के बजाए बांधने वाली तनी रखें या बटन ऐसी जगह लगाएं कि वह बच्चे को चुभे नहीं. सुन्दरता के नाम पर गोटा-किनारी, मलमे वाली पोशाक या चुभने वाली चटाई या चारपाई पर लिटाने में भी बच्चे को असुविधा हो सकती है. लंगोट के सेफ्टीपिन भी इस तरह लगाए जाएं कि ये बच्चे को चुभें नहीं.



2. अचानक स्तनपान से बोतल के दूध पर परिवर्तन बच्चे को रुचिकर नहीं लगता



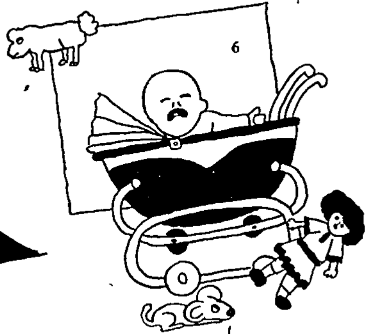
3. अधिक गरमी या ठंड भी उन्हें असहनीय हो जाती है

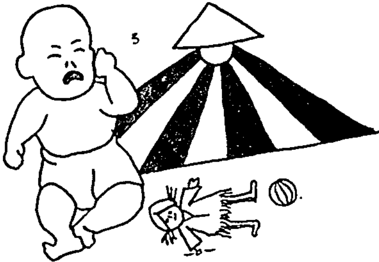


4. तीन महीने की आयु तक अपच या पेट की ऐंठन (कोलिक) बच्चों के रोने का एक प्रमुख कारण है

5. अचानक तेज प्रकाश या अंधेरा भी उन्हें भयभीत कर देता है

6. प्रिय खिलौना टूटकर गिर जाने पर दोबारा उठाने में असमर्थ होने के कारण भी रो पड़ते हैं





खटमल, मच्छर आदि के कारण रोना : शिशु के बिस्तर में खटमल, चींटी आदि रहने या मच्छरों के काटने से भी वह कष्ट पाएगा और रोएगा. अतः स्वच्छता का प्रबंध करने के लिए मच्छरदानी का प्रयोग भी करें.

गीले वस्त्रों के कारण रोना : बिस्तर पर टट्टी-पेशाब के कारण गीलापन होने या गीला लंगोट जल्दी न बदलने से शिशु रोने लगेगा. अधिक देर तक गीले में पड़े रहने पर बच्चे की त्वचा पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है अतः इस बात का विशेष ध्यान रखें कि वह गीले में न रह पाए.

कमरे में अधिक अंधेरा या अधिक रोशनी होना : कई बार सोने से जगने पर कमरे में अधिक अंधेरा दिखे तो शिशु रोने लगता है. इसी तरह आंखों पर तेज रोशनी न सह पाने के कारण भी वह रोएगा. इसके लिए जगने पर यह रोने लगे तो उसे रोशनी में ले जाएं या कमरे में हल्का प्रकाश आने दें, अथवा रात को धीमी रोशनी का प्रबंध रखें. इस तरह धूप के या बिजली के तेज प्रकाश में रखते समय उसकी आंखों को सीधी रोशनी से बचाएं.

शोर के कारण रोना : बच्चों को अधिक भीड़-भाड़ व शोर पसंद नहीं होता. इसलिए शोर बढ़ने या एकाएक ऊंची आवाज सुनने से वे रोने लगते हैं. उन्हें यथासंभव शांत वातावरण में रखा जाना चाहिए.

अरुचिकर गंध के कारण रोना : अधिक तेल लगा देने से; विशेषरूप से कड़वा तेल लगा देने से कई बार शिशु उसकी गंध सहन नहीं कर पाता. इसके अलावा कमरे



में फिनायल, डी. डी. टी. आदि छिडकने के शीघ्र बाद उसे कमरे में लाने से वह रो सकता है. उसे इस तरह की तीव्र गंध से बचाना चाहिए. स्वास्थ्य की दृष्टि से भी कीटाणु-नाशक दवा छिड़कने के कुछ देर बाद ही कमरे में प्रवेश करना चाहिए.

भय के कारण रोना : भय का अनुभव अधिकतर बच्चा पांच-छः महीने की उमर के बाद करता है और अकेले मे या अन्य कारण से भयभीत हो रोने लगता है. उमर बढ़ने के साथ ही उसका यह रोना कम होता जाता है. पर इस बीच यदि बच्चा स्वयं को असुरक्षित समझे तो भय की यह ग्रन्थि आगे चलकर उसे हानि पहुचा सकती है. इसलिए बच्चे को जहां तक हो सके अकेला न छोडें. भावात्मक सुरक्षा के लिए उसे मां से अधिक देर अलग न रखें. रोते बच्चे को डरा-धमकाकर जबरदस्ती चुप न कराएं, रोने का कारण समझकर उसे दूर करें.

रोना शिशुओं मे सामान्य बात है, कोई बीमारी नही. पर असाधारण रूप से रोना बीमारी का लक्षण हो सकता है. ऐसी स्थिति मे अनुभवी शिशु-विशेषज्ञ बच्चे के रोने की आवाज पहचानकर बीमारी का निदान कर सकते है. इसलिए जब बच्चे के रोने का कारण न मिले और बच्चा लगातार रोए तो डाक्टर की सलाह अवश्य लेनी चाहिए.

* रोते बच्चे की उपेक्षा करना या यह सोचकर उसे रोने देना कि बार-बार उठाने से वह बिगड़ जाएगा, ठीक नहीं.
* छोटे शिशु के रोने का कारण कुछ भी हो, उसकी उपेक्षा न करें चाहे थोडी देर के लिए ही सही, पर उसे गोद में उठाएं अवश्य. बच्चे को रोते रहने देने या अधिक उपेक्षा करने से उसके मानसिक विकास मे बाधा पड़ सकती है.
* दांत निकालते समय या टीका लगाने के बाद बच्चे अधिक रोते हैं, इन दिनों उन्हे अधिक देखभाल व मां के सामीप्य की आवश्यकता होती है, अतः शिशु को इससे वंचित न रखें. बच्चे को कभी भी सिर पर थपकी देकर चुप न कराएं.
* थोड़े बड़े बच्चे अपने रोने का कारण बताने में समर्थ होते है. कारण जान कर उसका निवारण करें. उसे डरा-धमका कर या किसी चीज का डर दिखाकर चुप न कराएं.
* बड़े बच्चे कई बार ईर्ष्या, द्वेष, उपेक्षा व क्रोध या किसी अन्य मानसिक तनाव के कारण रो सकते है. यदि ऐसा है तो उन्हे रोने दें. डांट कर या 'रोदू' कहकर चुप न कराए. रोने की इच्छा का अत्यधिक दमन करने से बडा होने पर वह भावनाओं की अभिव्यक्ति ठीक से नहीं कर पाएगा.
* कई बच्चे अधिक संवेदनशील होते है और जरा-सी डांट या बहन-भाई में थोड़ा भी झगड़ा होने पर रो पड़ते हैं, ऐसे बच्चे की भावनाओं की कद्र कर उसमें आत्मविश्वास जगाना चाहिए. लेकिन सहनशीलता व दूसरे व्यक्ति की बातों को समझने या धैर्य विकसित करना भी अनिवार्य है.



9 बोलना



बच्चा बोलने की क्षमता के साथ ही जन्म लेता है और फिर शरीर और मस्तिष्क के विकास के साथ उसकी इस क्षमता का विकास होता जाता है.

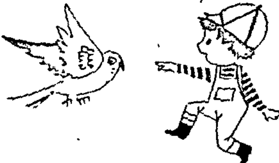
वाणी की बुनियाद

प्रायः यह समझा जाता है कि नवजात शिशु को अपने परिवेश से सामंजस्य स्थापित करने में काफी समय लगता है; लेकिन विशेषज्ञों के अनुसार दो महीने की आयु के आसपास ही बच्चा अपनी मां और संपर्क में आने वाले व्यक्तियों से अपने सम्बन्ध, अपने हाव-भाव या मुख-मुद्राओं द्वारा स्थापित करने का प्रयास करने लगता है. यहां तक कि दो-तीन सप्ताह के शिशु भी अपने संपर्क में आने वाली जड़ व चेतन वस्तुओं के प्रति भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएं व्यक्त करते है. जैसे : स्थिर वस्तु पर अपनी दृष्टि केंद्रित करना तथा हिलती हुई गतिशील वस्तु पर अपनी दृष्टि और सिर घुमाना. साथ ही हाथ-पैरों को एक व्यवस्थित ढंग से चलाना, मानो वे उस वस्तु को पकड़ने या उठाकर मुंह में रखने की चेष्टा कर रहे हों.

ये चेष्टाएं वाणी के प्रारंभिक प्रयास की चेष्टाएं कही जा सकती हैं. शिशु के चेहरे के भाव ही उसकी पहली मूक भाषा होते है.

निरर्थक शब्दों के अर्थ

सामान्य क्रम से बच्चा छः महीने की आयु के बाद 'आ' 'ई' आदि आवाजें निकालने लगता है और एक वर्ष की आयु में मामा, पापा, दादा आदि सरल शब्दों का अपने ढंग से उच्चारण करने लगता है. ऐसे समय बच्चे के निरर्थक शब्दों के अर्थ निकालने की बात तर्कसंगत नहीं लगती, क्योंकि विशेषज्ञों ने इस निष्कर्ष पर अधिकतर आम सहमति प्रकट की है कि ये अर्थ अधिकतर अभिभावकों की अपनी कल्पना और सुविधानुसार होते हैं. उनका कोई सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता. पर नौ महीने से एक साल के बीच शिशु द्वारा बोले गए ये निरर्थक शब्द भी उसके परिवेश व उसके आसपास बोली जाने वाली भाषा से साम्य अवश्य रखते है.



अनुकरण द्वारा भाषा

प्रारंभिक शब्दों का उच्चारण शिशु बार-बार एक लय में करता है. वास्तव में लय या शब्दों की बार बार आवृत्ति शिशु की ओर से शब्दों के उच्चारण का अभ्यास ही होता है. वैसे देखा गया है कि जो बालक भाषा सीखने में तीव्र बुद्धि का परिचय देता है वह आवृत्ति पर अधिक देर न रुक नए शब्द सीखने के लिए अपेक्षाकृत तेजी से आगे बढ़ जाता है. प्रखर बुद्धि वाले ये बालक अनुकरण-वृत्ति में भी तेज होते हैं और भाषा सीखने में भी.

भाषा-प्रशिक्षण में अनुकरण-वृत्ति और श्रवण-शक्ति का महत्वपूर्ण हाथ है. इसलिए जो बच्चा अकेला रहता है या कम सुनता है, उसकी वाणी का विकास भी अपूर्ण रह जाता है या देर से हो पाता है. मां जब बच्चों की तरह शब्दों का उच्चारण कर उसके साथ बातचीत करती है तो वे देर तक सही उच्चारण नहीं सीख पाते और तुतलाकर बोलते रहते हैं.

ऐसे समय अभिभावकों; विशेष रूप से मां की भूमिका बहुत महत्त्व रखती है. यह ठीक है कि बच्चे का हर प्रयत्न, वाणी का हर टुकड़ा मां के लिए आनन्ददायक होता है, लेकिन मा से अपेक्षा की जाती है कि वह इस विषय को अपनी दिलचस्पी तक ही सीमित न रख बच्चे की वाणी के विकास और अभ्यास के लिए उसे सही दिशा देने में समर्थ हो. इसके लिए शिशु के जानने-समझने के स्तर पर उतर कर उसके हर संकेत, हर कार्य, हर मूड व आनन्द में अपनी भागीदारी जोड़नी होगी. उसे हर चीज का ज्ञान व नाम उसके संदर्भ में देना होगा. शिशु के अर्द्ध-विकसित मस्तिष्क के लिए आसपास के संसार की ढेर-सी बातों की जानकारी एक साथ लेना भारी पड़ता है. इसलिए उसे एक समय में एक बात का ज्ञान देना चाहिए और एक नाम का अभ्यास कराया जाना चाहिए.

बच्चा हर बात जानने-सीखने के लिए केवल मा का ही मुंह नही जोहता, अपने आसपास की हर वस्तु, वाणी के हर शब्द के प्रति उसकी जिज्ञासा होती है. जो बात वह स्वय नही समझ या बोल पाता, उसके समाधान के लिए ही मा की सहायता की अपेक्षा करता है. यही पर मा का दायित्व होता है कि वह उसे सांसारिक वस्तुओं और बातों का ज्ञान तथा भाषा-ज्ञान साथ-साथ देकर उसके मानसिक-विकास की भागीदार बने. इस भागीदारी में मां-बच्चे के मध्य समझ और सद्भावना का एक तार भी जुड़ेगा, जो मां को सतोष व बच्चे को भावात्मक सुरक्षा प्रदान करेगा.





यदि मां बच्चे से बात करती रहती है तो बच्चा शब्दों की पकड़ जल्दी सीख जाएगा

स्पष्ट भाषा के लिए सही समय

बच्चों में भाषा-विकास की गति भिन्न हो सकती है. कुछ मे तीव्र, कुछ मे धीमी. धीमे या अपूर्ण भाषा-विकास के कई कारण होते हैं. परन्तु विशेषज्ञों के अनुसार, यदि साढे तीन वर्ष तक की उमर तक भी बच्चा ठीक से बोलना प्रारंभ न करे तो अवश्य ही वह किसी रोग या जन्मजात त्रुटि का शिकार होगा.

प्रायः देखा गया है कि शारीरिक रूप से कोई त्रुटि न हो तो भी प्रशिक्षण में कमी रह जाने से विकास धीमा व त्रुटिपूर्ण हो सकता है. जो माता-पिता बच्चे के बोलने से पहले उसके संकेतो पर ध्यान नही देते या उसके प्रारंभिक उच्चारणों पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त नही करते, उनके शिशु सही ढग से भाषा नही सीख पाते. यह भी देखा गया है कि जिस बच्चे की आवश्यकताएं बिना मांग, बिना प्रयास पूरी हो जाती हैं, वह बच्चा भी भाषा देर से सीखता है. यदि बच्चे की आयु सही उच्चारण सीखने के लायक है, फिर भी माताएं लाड मे आकर उनके साथ देर तक तुतला-कर बोलती रहती है या अपनी व्यस्तता मे घिरी उनके साथ बातचीत का समय ही नही निकाल पाती, तो उनके बच्चे काफी बड़े हो जाने पर भी भाषा-विकास और समझ-विकास मे पिछड़ जाते है.

जब ये बच्चे अपनी शिशु-वाणी व अल्प ज्ञान के साथ स्कूलों में प्रवेश करते है तो उन्हे अपने सहपाठियों के उपहास का शिकार बनना पडता है. इससे उनमें हीनता की भावना आने से उनके अगले विकास में और बाधा पड सकती है. वाणी-विशेषज्ञों की राय में यदि बच्चे को प्रारंभिक तैयारी और आत्मविश्वास के साथ बाहरी दुनिया में प्रवेश न कराया गया तो वे न केवल पढाई व व्यक्तित्व-विकास में पिछड़ सकते है, बल्कि इस हीनता-ग्रंथि को लेकर जीवन के हर कदम पर असफल रहने का मानसिक कष्ट झेलने के लिए अभिशापित भी हो सकते हैं.

वाणी-विकास में शारीरिक-मानसिक बाधाएं:

बोलने की क्रिया मे भागीदार अंग है :

1. बाहरी श्वास-नलिका, होंठ की मासपेशिया, तालू और जीभ

2. आंतरिक अंग—मस्तिष्क के विभिन्न हिस्से तथा उनसे श्वास-नली, होंठ, तालू और जीभ तक जुड़ने वाली मास-पेशिया तथा स्नायु-तंत्र.

3. मस्तिष्क और कान से जुडी सुनने की क्षमता.

इन तीनों कारणों मे से एक की भी गड़बड़ी होने से शिशु की बोलने की क्षमता प्रभावित होगी. बाहरी श्वास-नलिका (लैरिंक्स) से आवाज पैदा होती है. यह लकवा-ग्रस्त हो जाए तो व्यक्ति भाषा जानने पर भी बोल नही सकता. शिशु की तो बात ही और है. होंठ, तालू और जीभ मिलकर भिन्न-भिन्न शब्दों के उच्चारण में सहायक होते है. इसलिए इनमे से किसी अंग के त्रुटिपूर्ण या रोगग्रस्त होने से वाणी-क्रिया मे रुकावट पड़ती है. मस्तिष्क और कान की खराबी से बच्चा बहरा होगा तो शब्दों को बिना सुने बोलना सीख नही पाएगा. इसीलिए बहरे बच्चे गूगे भी रह जाते हैं.

बहरेपन के कारण अवरुद्ध वाणी

बहुत बार बच्चा शुरू से बहरा होने पर भी अपनी प्रकृतिदत्त क्षमता के कारण 'आ' 'ई' 'अ' उच्चारण करने लगता है. इसी तरह दूसरे के होंठों के संकेत देखकर वह 'मामा', 'दादा' भी बोल जाता है तो माता-पिता उसके जन्मजात बहरेपन को समझ नही पाते. आगे चलकर जब शिशु की वाणी मे कोई प्रगति नहीं होती तो इस बात का पता चलता है. इसलिए शब्दों के उच्चारण-स्तर तक आने से पहले ही बच्चे की सुनने की क्षमता का निरीक्षण कर लेना ठीक होगा.

यदि तीन महीने की आयु तक भी बच्चा आवाज़ों पर प्रतिक्रिया न दिखाए तो उसके सुनने की क्षमता का निर्णय कान-विशेषज्ञ से कराना चाहिए. जन्म के शीघ्र बाद भी यह परीक्षण किया जा सकता है, पर जिस आयु-अवधि में, जैसे ही शिशु के बारे में संदेह हो, तुरन्त कान-विशेषज्ञ की सलाह लें.

बच्चे की वाणी जब बहरेपन के कारण अवरुद्ध होती है, उसका वर्गीकरण इन तीन स्थितियों मे किया जा सकता है :

1. यदि बहरापन जन्मजात है तो बच्चा गूगा रह जाएगा, क्योंकि बच्चा सुनकर ही वाणी सीखता है.

2. यदि पाच साल की उमर में किसी बीमारी या दुर्घटना के कारण बच्चा बहरा हो जाए तो बच्चा बोल तो सकेगा परन्तु उचित शिक्षण के अभाव में उसकी वाणी का विकास सीमित रह जाएगा.

3. यदि नौ वर्ष की उमर में कारणवश बहरापन आ जाए तो बोलने की क्षमता पूरी रहेगी परन्तु बोलने का ढंग व स्वर सामान्य से भिन्न होगा.

मस्तिष्क की बीमारियां

मानसिक बाधता (मैंटल रिटार्डेशन), तथा 'इनसैफ़लाइटिस' और 'सैरीब्रल पालसी' जैसी मस्तिष्क की बीमारियो से भी बोली अवरुद्ध हो सकती है, जिसके लिए मनोरोग-विशेषज्ञों की राय तथा वाणी-विशेषज्ञों (स्पीच थैरापिस्ट) के प्रशिक्षण पर ही निर्भर करना होगा.

त्रुटिपूर्ण उच्चारण

कई बार सुनने और बोलने की क्षमता ठीक होने पर भी बोलने के ढंग और शब्दों के सही उच्चारण में गड़बड़ी हो जाती है और बच्चा बड़ा होकर हकलाने लगता है. कुछ बच्चे किन्ही विशेष शब्दो जैसे 'श' 'स' 'ज' 'झ' 'छ' 'क' का सही उच्चारण नही कर पाते तो गलत बोलने के या दूसरों की हंसी के भय से उन्हें छोड़ जाते हैं अथवा उनके बदले अन्य अक्षरों का प्रयोग करने लगते हैं. कुछ बच्चे 'र' 'ल' जैसे तालु से जीभ लगाकर बोलने वाले शब्द ठीक से नही बोल पाते तो इन शब्दो की आवाज निकालने के प्रयास में वे उन्हें बार-बार दोहरा जाते हैं. कुछ बच्चों में हकलाहट की प्रवृत्ति वंशगत भी पाई जाती है और यह एक परिवार के कई सदस्यों में होती है.



हकलाहट व त्रुटिपूर्ण उच्चारण प्रायः हीनभावना या मानसिक अस्थिरता के लक्षण होते हैं, बड़े बच्चे एकांत में शीशे के सामने बैठकर इस त्रुटि को दूर कर सकते हैं

लेकिन हकलाहट, त्रुटिपूर्ण उच्चारण जैसी कमियों के पीछे अधिकतर मनोवैज्ञानिक कारण ही होता है—मानसिक तनाव, मानसिक अस्थिरता या असंतुलन, हीनता-ग्रंथि अथवा आत्मविश्वास की कमी आदि. बच्चे को हंसी का पात्र बनने से बचाते और उसका आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए उसे निरंतर प्रोत्साहित करते. [illegible]

मिले तो किसी मनोवैज्ञानिक व वाणी-रोग-विशेषज्ञ (स्पीच थेरापिस्ट) की सहायता लेनी चाहिए.

* बोलना शुरू करने से पहले शिशु बातचीत सुनना व समझना आरंभ कर देता है. अतः बच्चा कितनी जल्दी बोलना सीखता है यह उसके पारिवारिक परिवेश व वातावरण पर भी निर्भर करता है. एक उपेक्षित व अकेला रहने वाला बच्चा उस बच्चे की अपेक्षा निश्चय ही देर से बोलना सीखेगा जिसके माता-पिता उससे बात करते रहते हैं या उसे बोलने के लिए प्रोत्साहित करते रहते हैं.

* शिशु का वाणी-विकास इस बात से भी प्रभावित होती है कि बच्चे की देखभाल करते समय मां तनावग्रस्त रहती है अथवा उससे बात करती रहती है. यदि मां उसे दूध पिलाते समय, नहलाते समय बोलती रहती है तो बच्चा शब्दों की पकड़ जल्दी सीख जाएगा, क्योंकि ऐसे समय बच्चे की दृष्टि मां पर ही केंद्रित रहती है.

* बच्चों को दूसरे बच्चों के साथ मिलने-जुलने या बोलने के कितने अवसर प्राप्त होते हैं, यह भी उसके शब्द ज्ञान व वाणी-विकास को प्रभावित करता है. अकेले खेलने वाला बच्चा समय पर बोलना तो सीख जाएगा लेकिन उसका शब्द-ज्ञान नहीं बढ़ पाएगा.

* उचित-वाणी विकास के लिए बच्चे को नए-नए छोटे व सरल शब्दों से परिचित कराइए. उन्हें फूलों, पशु, पक्षियों के चित्रों वाली रंगीन पत्रिकाएं दीजिए व उनके नामों से परिचित कराइए.

* जब भी बच्चा कुछ पूछना चाहे तो उसकी बात धैर्य से सुनें, उसे डांट कर चुप कराने या लापरवाही दिखाने से उसके मानसिक विकास पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है. अभी उसमें इतनी समझ विकसित नहीं होती कि आपके समय व मूड को देख कर ही वे आप से बात करें.

* बच्चे के साथ तोतली भाषा में बात न करें न ही उसके द्वारा बोले गए शब्दों को उसके सामने दोहराए.



10

शिशु का विकास-क्रम

"डाक्टर साहब, हमारा बच्चा खाता-पीता तो ठीक है पर न तो मोटा होता है, न अपने साथ के बच्चों की तरह इसका कद ही बढ़ा है." "डाक्टर, यह अभी तक बोलता नहीं है, इसे तंदुवा तो नही ?" "यह चार-पांच साल का होने पर भी अभी तक तोतला बोलता है, क्या करना चाहिए." "डाक्टर, यह इतना बडा होने पर भी बिस्तर भिगो देता है इसका क्या कारण है ?" आदि प्रश्न अक्सर डाक्टरों से पूछे जाते है, जिनका सबध बच्चे के विकास से कम, अभिभावको की अनभिज्ञता से अधिक होता है. जहा सचमुच अपोषण-कुपोषण की विवशताजन्य समस्या है, वहा इतनी चेतना ही नहीं है कि डाक्टर से पूछा जाए या उपयुक्त जानकारी हासिल की जाए.

पर जहा बच्चे के पोषण के लिए आर्थिक समस्या नही है, वहा भी पोषण और विकास का ठीक-ठीक संबध बैठाया जाए, यह आवश्यक नही समझा जाता. ऐसा होता तो यह जानने की जरूरत न रहती कि अच्छे स्वास्थ्य का मतलब मोटा होना ही नही है कि बच्चे का कद-काठ वंश-परंपरा, और खुराक के अलावा भी कई बातों पर निर्भर है कि बच्चे के न बोलने या देर से बोलने मे तदुवा बाधक नही है, इसके अन्य अनेक कारण हो सकते हैं कि बच्चे का देर तक तुतला कर बोलने का कारण प्राय: माता-पिता द्वारा डाली गई गलत आदत ही होती है. कि बिस्तर भिगोने का कारण शारीरिक कम व मानसिक अधिक होता है आदि. अत: पढी-लिखी माताओं को भी ये सारी जानकारियां हासिल करनी चाहिए व आगे अपनी अन्य बहनो तक पहुंचाना चाहिए.

यदि बच्चा स्वस्थ है तो सामान्यत: उसका शारीरिक-मानसिक विकास भी ठीक होना चाहिए और उसकी सामाजीकरण की प्रक्रिया भी अबाधित चलनी चाहिए. पर हमें यह नही भूलना है कि बच्चे का स्वास्थ्य एव शारीरिक-मानसिक विकास वंश-प्रभाव, भोजन, जलवायु, वातावरण, प्रशिक्षण आदि कई बातों पर निर्भर करता है. आयु, समय व मौसम भी विकास की इस गति को प्रभावित करते है—जैसे सभी शिशुओं का वजन पहले तीन-चार दिनों मे घटता है, फिर साल से दस दिन के भीतर पुन बढ़ जाता है. इसके बाद भी पहले तीन महीने तक यह तेजी



से (25-30 ग्राम प्रतिदिन के हिसाब से) बढ़ता है, फिर वृद्धि की यह गति कम हो जाती है. इसी तरह गर्मी, सर्दी, वसंत आदि मौसमों में भी वृद्धि की गति में अंतर पाया जाता है. एक धारणा के अनुसार, सर्दियों में वजन ज्यादा बढ़ता है, बदलते मौसम में लंबाई बढ़ता है. इस धारणा में सच्चाई हो या नहीं, पोषण और अभिभावकों द्वारा प्रशिक्षण का तो निश्चित ही बच्चे के सर्वांगीण विकास में महत्त्वपूर्ण हाथ है. आयु बढ़ने के साथ शारीरिक ढांचे में जो परिवर्तन आता है, वह भी समझने की जरूरत है.

इस संदर्भ में बच्चे के शारीरिक-मानसिक विकास के लिए हमें एक औसत पैमाना लेकर चलना होगा और विकास-क्रम, को दो मुख्य स्तरों पर देखना होगा :

1. कद, वजन, शारीरिक संगठन तथा अंग-प्रत्यंग की वृद्धि.

2. मानसिक और बौद्धिक विकास, जिसमें प्रतिक्रिया प्रगट करने, समझने, बोलने, चलने आदि क्रियाओं की गति और सामाजिक अनुकूलन की प्रक्रिया शामिल है.

पहले कद और वजन का औसत विकास ही लें :

पहले पांच वर्षों में वजन का अनुपात

आयु	प्रति सप्ताह वजन-वृद्धि
0-3 मास	200 ग्राम
4-6 मास	150 ग्राम
7-9 मास	100 ग्राम
9-12 मास	50-75 ग्राम प्रति वर्ष
1-2 वर्ष	2·5 किलोग्राम
3-5 वर्ष	2 किलोग्राम

पहले पांच वर्षों में कद का अनुपात

आयु	प्रति वर्ष कद की वृद्धि
पहला वर्ष	25 सेंटीमीटर
दूसरा वर्ष	12 सेंटीमीटर
तीसरा वर्ष	9 सेंटीमीटर
चौथा वर्ष	7 सेंटीमीटर
पांचवा वर्ष	6 सेंटीमीटर

इस तरह आपने देखा कि आयु बढ़ने के साथ वृद्धि की गति क्रमश: घटती जाती है और अधिकतम वृद्धि पहले वर्ष में होती है. आइए, अब इसे शारीरिक अनुपात में समझें :

शारीरिक अनुपात

जन्म के समय बच्चे का ऊपरी भाग निचले भाग से लंबा होता है. दो वर्ष की आयु पर नाभि से ऊपर तथा नाभि से नीचे की लंबाई प्राय: बराबर हो जाती है. इसके बाद निचले भाग में निरंतर वृद्धि का क्रम आरंभ हो जाता है और छह वर्ष की आयु में यह अंतर स्पष्ट दिखने लगता है. इसी तरह जन्म के समय सिर की गोलाई 13-13½" होती है. पहले छह महीने तक यह लगभग हर महीने आधा इंच बढ़ती है और छह महीने की आयु में लगभग 16-17 इंच हो जाती है. इसके बाद यह वृद्धि हर महीने ¼ इंच के हिसाब से होती है और एक वर्ष पूरा होते-होते सिर की गोलाई लगभग 18 इंच तथा दो वर्ष की आयु में लगभग 19 इंच हो जाती है. इसके बाद सिर का नाप धीरे-धीरे ही थोड़ा-थोड़ा बढ़ता है और सात-आठ वर्ष की आयु में बच्चे का सिर लगभग वयस्क व्यक्ति के बराबर हो जाता है.

यह अध्ययन इसलिए जरूरी है कि बचपन में मस्तिष्क का विकास भी तेजी से होता है और सीखने की प्रक्रिया भी तेजी से चलती है. खोपड़ी का विकास और मस्तिष्क का विकास साथ-साथ होने से वृद्धि का विकास इससे प्रभावित होता है. अत: चिकित्सकों के अनुसार, सोलह वर्ष की आयु तक ही बुद्धि बढ़ती है, इसके बाद तो अनुभव ही बढ़ता है. इसी कारण अपोषित बच्चे बुद्धि-प्रतिभा के विकास में भी पिछड़ जाते हैं. इसी तरह सिर की गोलाई और छाती की गोलाई के नाप में वृद्धि के बीच भी एक निश्चित संबंध होता है. जन्म के समय सिर ही बच्चे का सर्वाधिक बड़ा अंग होता है, छाती का नाप उससे लगभग एक इंच कम होता है. सिर और छाती का आकार एक वर्ष की आयु में लगभग समान हो जाता है, फिर छाती का नाप सिर के नाप से क्रमश: बढ़ने लगता है. पांच वर्ष की आयु में छाती का नाप सिर की गोलाई से लगभग डेढ़ इंच अधिक हो जाता है. अपोषित बच्चों में तीन साल की आयु में भी छाती का नाप सिर की गोलाई से कम देखने में आया है. अत: आयु के अनुसार छाती का नाप और सिर की गोलाई का नाप अनुपात में काफी कम या अधिक है तो डाक्टर से परामर्श करना चाहिए.

अन्य अंगों का विकास

जन्म के समय प्राय: हर बच्चे का जिगर बढ़ा हुआ लगता है. पांच वर्ष की आयु में भी 25-40 प्रतिशत बच्चों में यह थोड़ा बढ़ा हुआ हो सकता है. यह एक सामान्य स्थिति है जिसे रोग मानने या चिंता करने की जरूरत नहीं. यदि

लिवर या जिगर बहुत ज्यादा बढा हुआ लगे, वह सख्त हो, उसकी सतह या किनारे ऊंचे-नीचे अथवा नुकीले हों तो यह रोग का सूचक है. पीलिया, बदहजमी, पेट का फूलना, बार-बार दस्त होना, खून की कमी आदि शिकायतें भी इसके साथ हो सकती हैं. बढ़े जिगर के साथ यदि तिल्ली भी बढ़ी हुई हो तो भी जिगर की यह वृद्धि रोग का चिह्न है. इन स्थितियों में डाक्टर से परामर्श करना चाहिए.

आयु के साथ बच्चे के शारीरिक ढांचे में भी परिवर्तन होते रहते हैं. जन्म के समय शिशु की हड्डियों में हड्डियों के तत्त्व बहुत कम होते हैं, अत वे नरम व लचकीली होती हैं. पर जैसे-जैसे बच्चा बढ़ता जाता है, उसकी हड्डिया क्रमशः कठोर व मजबूत होती जाती हैं. यदि रोग के कारण या अपोषण के कारण हड्डिया समय के साथ सुदृढ न हो तो वे अंगो की बनावट को बिगाड देंगी और टागें शरीर का भार वहन करने मे समर्थ न होने पर टेढी-मेढी हो जाएगी. लडकियो की हड्डिया लडकों की अपेक्षा अधिक पुष्ट होती हैं.

अंग-प्रत्यंग की क्षमता और मानसिक विकास

बच्चे के अंगों का विकास और उसका मानसिक व सामाजिक विकास परस्पर आधारित है. इसलिए यह अध्ययन भी महत्त्वपूर्ण है. वैसे तो किसी भी बालक का बौद्धिक विकास उसकी जन्मजात प्राकृतिक शक्तियों, वातावरण, वंश तथा उसके पालन-पोषण, शिक्षादीक्षा के ढंग पर निर्भर करता है पर अपोषण या गलत पोषण के कारण शारीरिक विकास में आई बाधा से मानसिक व बौद्धिक विकास भी बाधित होता है. अत इस प्रश्न को निम्न स्तरों पर समझना आवश्यक है :

1. शारीरिक विकास-क्रम.

2. समझ का विकास और व्यवहार-प्रक्रिया.

3. बच्चे का सामाजीकरण और उसमें पारिवारिक प्रशिक्षण की भूमिका.

4. उपरोक्त आधारों पर निर्मित सामाजिक व्यवहार.

शारीरिक विकास-क्रम

—नवजात शिशु सिर को क्षण भर ही एक स्थिति मे साध सकता है. उसकी मुट्ठियां बंद रहती हैं और टांगें सिकुड़ी हुई सी.

—छ सप्ताह की आयु में वह सिर को साधने और छाती को चारपाई से सीधा उठा लेने का प्रयत्न करता है. टांगों को भी ऊपर उठाने व हिलाने लगता है.

—दो-तीन महीने की आयु में वह सिर को अच्छी तरह साध लेता है.

—चार-पाच महीने की आयु में वह हाथ उठाकर मुंह तक ले जाने मे सफल हो जाता है. खिलौने पकड़ने का प्रयत्न करने लगता है.

—छः महीने की आयु मे बिना सहारे बैठने का प्रयत्न करने लगता है, कुछ बच्चे छः महीने में अच्छी तरह बैठने भी लगते हैं. अब खिलौनों व अन्य वस्तुओं पर उसकी पकड़ मजबूत होने लगती है, वह एक हाथ से दूसरे हाथ मे भी खिलौना बदल लेता है.

—सात महीने की आयु मे लगभग सभी स्वस्थ बच्चे बिना सहारे बैठने लगते हैं और चीजों को स्वय अपने हाथ से उठाने लगते हैं.

—आठ महीने की आयु में घुटनों के बल चलने और सहारा लेकर खड़ा होने का प्रयास आरंभ हो जाता है.

—इसके बाद बच्चा सहारा लेकर चलने लगता है या बिना सहारे खड़ा होने लगता है और चलने की प्रक्रिया एक वर्ष से डेढ वर्ष के बीच शुरू होकर तीन वर्ष तक दौड़ने तक पहुंच जाती है.

मानसिक-बौद्धिक-भावात्मक विकास

शारीरिक विकास के इस क्रम के साथ-साथ ही बच्चे का मानसिक, बौद्धिक, भावात्मक विकास भी होता रहता है और साथ-साथ ही उसकी सामाजीकरण की प्रक्रिया भी चलती रहती है. समझ और व्यवहार के इस क्रम को भी आयु के साथ ही जोड़कर समझना होगा. इस प्रकार ये स्थितिया होंगी :

—नवजात शिशु बाहों मे लेने पर शांत रहता है. कोई विशेष प्रतिक्रिया प्रगट नहीं करता. प्रकाश में देख सकता है पर गर्भ के अंधेरे से बाहर आने पर एकाएक प्रकाश को सहन नहीं कर सकता. आंखो पर रोशनी डालने पर भौंहें ऊपर करेगा, आखें मिचमिचाएगा, फिर बंद कर लेगा.

—एक-डेढ़ महीने की आयु मे अचानक ध्वनि होने पर चौंक उठेगा. पालना हिलाने पर शरीर को सिकोड़ लेगा या रो पड़ेगा. मुंह के पास लाने पर प्रतिक्रिया व्यक्त करेगा. गले से थोडी-थोड़ी आवाज निकालेगा. हथेली में उंगली या कोई चीज पकडाए तो उसे दबाने की कोशिश करेगा. प्रकाश की ओर क्षणभर नजर टिका कर देख सकेगा. लगभग सात सप्ताह में प्रकाश को एक ओर से

दूसरी ओर तक देखने लगेगा और तेज रोशनी मे भी देख पाएगा.

—डेढ़-दो महीने की आयु मे वह आंख मिलाकर देखने लगेगा,पहले से अधिक देर तक जागने लगेगा. मुह से कू-कू की ध्वनि निकालेगा. प्रेरित करने पर मुस्कराने का प्रयत्न करेगा. अपने चारों ओर के व्यक्तियों को ध्यान से देखने लगेगा. उसकी दृष्टि ठहरने लगेगी. कोई चमकीली चीज देखने पर उसके अधखुले हाथ उस ओर बढ़ने लगेंगे.

—तीन-चार महीने की आयु में उसके हाथ खुलने लगेंगे. हाथों मे छोटी चीज पकड़ने की शक्ति आने लगेगी. इशारा करने पर वह उस ओर नजर जमा कर प्रतिक्रिया व्यक्त करने की चेष्टा करेगा. अपने खुले हाथ देखकर वह दोनों हाथो से खेलने लगेगा. हिलती हुई चीजों व जाते हुए व्यक्तियों का नजर से पीछा करेगा. खिलौना उठाकर मुह में डालने की कोशिश भी करेगा. अब वह पेट के बल लेट कर सिर उठा कर सामने देख सकने में भी समर्थ होगा. अपने हाथ-पैर जोर-जोर पटक भी सकेगा. थोड़ा हंसने भी लगेगा.

—पाच-छः महीने की आयु में वह खिलौनो की ओर लपकना शुरू कर देगा. मुंह और हाथ के बीच संबंध स्थापित कर लेने के बाद अब वह अपने हाथ और अपनी नजर के बीच भी संबंध जोड़ लेगा. मां को पहचानने लगेगा. उसकी गोद में जाने का हठ करेगा. मुह से एक शब्द की कई ध्वनियां निकालने लगेगा.

—छः-सात महीने की आयु में बच्चे की गतिशीलता व चंचलता मे काफी वृद्धि हो जाती है. वह अपने कपड़े खीचने लगता है. हर चीज को पकड़ कर मुंह मे धरने लगता है. अगूठा या चूमनी की आदत भी प्रायः यहीं से लगती है. अब वह अपनो व दूसरो के बीच पहचान भी करने लगता है और मा को स्पष्टतया पहचान लेता है. आंखों से देख कर, हाथों मे छूकर, मुह मे डाल कर चीजों को पहचानने, समझने की कोशिश करने लगता है. बिना सहारे बैठना सीख, ध्वनि व प्रकाश की ओर गर्दन घुमा लेता है. दोनो आंखों को एक जगह स्थिर करके देख सकता है. मा के गले का हार, पल्लू या पिता का चश्मा खीच लेता है.

—सात-आठ महीने की आयु मे वह मा के अलावा आस-पास के अन्य लोगो को भी पहचानने लगता है. मुट्ठी मे कोई चीज पकड़ सकता है. अब यह पकड़ मजबूत और उद्देश्यपूर्ण होगी, अचेतन नही. दूसरों की क्रियाओं को, गतिविधियों को ध्यान से देखने, समझने की कोशिश करने लगता है. चिल्ला कर, रोकर, अपना विरोध या क्रोध प्रगट करने लगता है. खिलौना पकडने के लिए अपनी हथेली फैला सकता है. पकड़े हुए खिलौने को एक हाथ से दूसरे मे आसानी से बदल सकता है. घुटनों के बल चल कर अपने हाथों, पैरों और नजर मे सामजस्य स्थापित करने लगता है. सहारा ले कर, चारपाई आदि पकड कर स्वयं खडा होने की चेष्टा भी करने लगता है.

—आठ-नौ महीने की आयु मे लेटने के बाद बिना सहारे स्वयं उठने की चेष्टा करने मे गर्व अनुभव करता है, घुटनों के बल चल कर देहरी लाघने में भी उसे आनन्द आता है, अब दो अक्षरों के शब्द मामा, पापा आदि भी बोलने की चेष्टा करता है. नाम पुकारे जाने पर उस ओर आंख उठा कर घूम कर देखने लगता है.

—नौ-दस महीने की आयु में वह छोटी-मोटी चीजों को उगली व अगूठे की मदद से भी पकडने लगेगा. दो चीजों को आपस में खटखटा कर उनकी आवाज सुनने-समझने की चेष्टा भी करने लगेगा. अपनों व दूसरो के साथ उसके व्यवहार मे अतर स्पष्ट हो जाएगा. फरनीचर आदि के नीचे छुपने, मा के पल्लू के साथ लुकाछिपी का खेल खेलने मे उसे आनद आएगा. बाहर के अजनबी लोगों से वह छिपने व शरमाने लगेगा. चारपाई, कुर्सी, छोटी मेज आदि को पकड़ कर खडा होने मे गर्व अनुभव करेगा. खाने का चम्मच स्वय पकडने, अपने छोटे-मोटे काम स्वय करने की चेष्टा करेगा और न करने देने पर हठ से रो कर अपना विरोध प्रगट करेगा.

—दस-ग्यारह महीने की आयु मे वह खिलौनो व लुका-छिपी के अलावा अन्य कई छोटे-छोटे खेलो मे भी रुचि लेने लगेगा. झुक कर वस्तु उठाने की चेष्टा करेगा, मागने पर चीज दे देगा या इकार मे सिर हिलाकर हाथ पीछे ले जाएगा. पहले से कुछ अधिक शब्द बोलने लगेगा.

—एक वर्ष का होते-होते बच्चा थोडा-थोडा चलना सीख लेता है, उसके पैरों में शरीर को साधने की क्षमता आ जाने पर वह अपनी इस आत्मनिर्भरता पर खुश होता है. स्वय चलकर, कुछ शब्द बोल कर अपनी प्रसन्नता हंस कर, किलकारी मारकर प्रगट करने लगेगा. यही नहीं, आत्म-चेतना जाग्रत हो जाने पर अब वह शीशे मे अपना मुंह देख कर भी खुश होगा, इसलिए बार-बार शीशा देखने की चेष्टा करेगा. क्रोध, प्यार, खुशी, भय आदि भावनाओं को समझने व प्रगट करने की मानसिक क्षमता अर्जित कर लेगा. डाटने या प्यार करने पर अपने मानापमान को उससे



◀ बाहरी दुनिया का प्रथम अनुभव : स्वस्थ नवजात शिशु

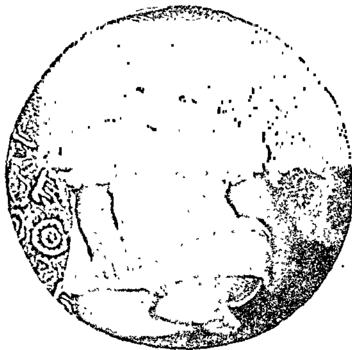
जीवन की पहली मुस्कान : दो तीन माह की आयु में बच्चे जान-पहचान की वस्तु व व्यक्ति को देखकर मुस्कराने का प्रयत्न करने लगते हैं ▼



शिशु का विकास क्रम



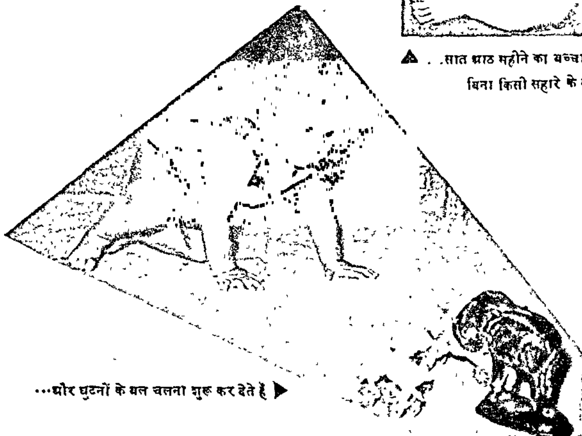
चार-पांच महीने की आयु में बच्चे सिर का संतुलन साधना और…



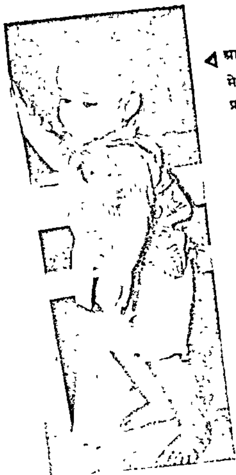
तकिए कुशन आदि के सहारे से बैठना सीख जाते है ▲



▲ . .सात आठ महीने का बच्चा स्वयं बिना किसी सहारे के बैठना . . .



...और घुटनों के बल चलना शुरू कर देते हैं ▶



◄ आठ-नौ महीने की उमर मे बच्चा कुरसी मेज आदि का सहारा लेकर खड़े होने में प्रसन्नता अनुभव करते हैं

साल सवा साल की आयु मे स्वयं या उंगली पकड़ कर बाहर आने-जाने मे उन्हें आनन्द आने लगता है ▼

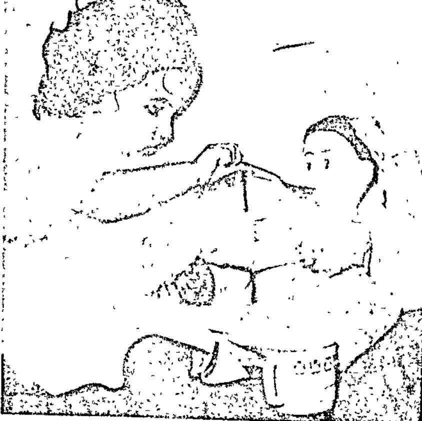


...लगभग इसी आयु मे बच्चे घर से बाहर खेलने ▶





और अपने हाथ से स्वयं खाने-पीने मे रुचि लेने लगते हैं



तीमारदारी बीमार गुड़िया की : दो ढाई वर्ष की आयु में लड़कियां स्वभावतः घर-घर खेलने और गुड़ियों की देखभाल करने में गौरव अनुभव करती हैं.



तैयारी स्कूल जाने की ढाई तीन वर्ष का होने पर बच्चे प्रायः अक्षर ज्ञान और रंग-बिरंगी पत्र-पत्रिकाएं देखने में उत्सुकता दिखाने लगते हैं.





और चार-पांच वर्ष की आयु तक पहुंचते पहुंचते अपने लिंग भेद के अनुसार लड़कियां घर के कामों ...

... तथा लड़के सृजनात्मक [illegible]

ज़ोड़कर देखने लगेगा और तदनुसार प्रतिक्रिया भी व्यक्त करने की चेष्टा करेगा.

—एक से सवा वर्ष की आयु तक वह चीजों को उछालने, फेंकने, तोड़ कर देखने की कोशिश करने लगता है. यही जिज्ञासा उसे कुरसी को ढकेलने, छोटी मेज आदि को उलट देने, चारपाई पर स्वयं चढ़-उतर जाने के लिए प्रेरित करने लगती है. यहां तक आकर उसकी जिज्ञासा की कोई सीमा नही रहती. वह हर वस्तु को स्पर्श कर, हर चीज तक पहुच कर, खिलौने आदि को तोडकर उसके भीतर झांकने, उसे समझने की कोशिश करेगा. उसे अपने गीले या सूखे, गदे या साफ कपडो की समझ भी आने लगती है. गदे कपडे बदलने के लिए वह इशारे से या चेष्टा करके अपना मतव्य दूसरो तक पहुचाने लगता है. पहले से अधिक शब्द बोलना सीख कर खुश होगा. अपेक्षाकृत अधिक वाक्यो, बातो का अर्थ समझने लगेगा।

—सवा-डेढ़ वर्ष की आयु मे वह थोड़ा-थोड़ा अपने ढग से दौडने और सीढ़िया आदि चढने की कोशिश करने लगता है. पहले से अधिक शब्द बोल कर प्रसन्नता व गर्व से भर उठता है.

—डेढ़ से दो वर्ष की आयु के बीच उसमें काफी समझ आ जाती है. टट्टी-पेशाव के लिए बताने मे, दौडने, सीढ़ी आदि चढ़ने मे और कपडे पहनाते समय मां की सहायता करने में सक्षम हो जाता है. इसलिए स्वयं नहाने, अपने हाथ से खाने, अपनी ताकत से अधिक भारी चीज उठा लाने की जिद करने लगता है. अब वह शब्दों को समझ कर बोलने लगता है, अनेक शब्दों के अर्थ जानने लगता है. अतः यही समय उसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त है, उसकी समाजीकरण की प्रक्रिया आरम करने का, उसके व्यवहार-प्रशिक्षण का. यहां से चूक जाने पर माता-पिता को आगे चल कर काफी कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है.

पारिवारिक परिवेश में

शिशु का यह प्रशिक्षण वैसे तो जन्म से ही आरंभ करना पड़ता है. क्योंकि उसके सोने, रोने, जिद करने, टट्टी-पेशाब की आदतें वनने का क्रम बहुत जल्दी शुरू हो जाता है. पर आरभ में ये आदतें निरंतर अभ्यास से डालनी होती है, स्वय शिशु की समझ का उसमें बहुत कम हाथ होता है, यहां आकर वह स्वयं भी चीजो को, स्थितियो को, कामों को, जानने-समझने, अपनाने की चेष्टा करने लगता है, तो उसके प्रशिक्षण मे उसका सहयोग लेना आवश्यक है. एक सुघड मा व कुशल अभिभावक यही से सोच-समझ कर उसे सामाजीकरण की ओर बढ़ने के लिए सही दिशा देने का काम आरंभ कर दें तो यह बच्चे के व स्वयं उनके भी हित में होगा. यही से यह प्रशिक्षण विधिवत आरंभ होकर बच्चे के पूरे जीवन की बुनियाद बनाता है और उसके व्यक्तित्व का निर्माण करता है.

इस आयु में आकर बच्चा अपने भाई-बहनों को, मां-बाप को काफी समझने लगता है. अपने हम-उम्र साथियों के साथ उठ-बैठ कर प्रसन्नता अनुभव करता है. उनसे सीखता है, उन्हें अपनी समझ से सिखाता है. बालवाड़ी या नर्सरी स्कूल मे भी जाने लगता है. टट्टी-पेशाव पर यद्यपि अभी पूरा नहीं, काफी हद तक नियंत्रण करने लगता है. मां, पिता, शिक्षक-शिक्षिका, भाई, बहन, साथियों की नकल करके सभी बातें सीखने की चेष्टा मे व्यस्त रहने लगता है. चेतना आ जाने पर बच्चा अब बिना मा के स्वयं को असुरक्षित अनुभव करने लगता है. इसलिए अलग करने पर रोने लगता है. पेशाव निकल जाने पर डांट से भय खाने लगता है. गलत काम को छिपाने या अचेतन रूप से कुछ बहाने बनाने की ओर भी अग्रसर होने लगता है. जैसे अलग सुलाने पर बार-बार मा को पेशाव के बहाने जगाना, फिर नाली पर ले जाने के बाद पेशाब न करना सिद्ध करता है कि वह पेशाब के बहाने केवल मा को जगाना चाहता है कि उस का सान्निध्य पा सके. ऐसे समय यदि समझदारी से इसे सभाला न जाए, उसकी उपेक्षा कर केवल डाट से काम लिया जाए तो उसके मन मे भय या असुरक्षा की ग्रंथि बन जाने की संभावना हो सकती है.

तीन से पाच-छ. साल की आयु तो बच्चे की बुनियाद की दृष्टि से बहुत ही महत्वपूर्ण है. इस आयु मे उसकी जिज्ञासा खूब बढ़ी-चढ़ी होती है, उसकी स्वयं-निर्भरता व स्वतन्त्रता की चाह भी साथ-साथ विकसित होती जाती है और इसके साथ ही उसमे अपने मानापमान की चेतना भी दिनोदिन बलवती होती जाती है. भाषा सीखने, वाणी सुधारने, अपना काम अपने हाथ से करने की आदत डालने, छोटे भाई-बहन के प्रति जिम्मेदारी अनुभव करने, सभी बातो के अर्थ समझने, रोचक प्रश्न पूछ कर अपनी जिज्ञासा शांत करने व जानकारी बढ़ाने, उचित-अनुचित का भेद करने व अनुशासन सीखने की दृष्टि से उसके सामाजीकरण की यही सही उम्र है. इस नींव के बाद उसके चरित्र व व्यवहार का ढाचा खड़ा होगा, इसलिए नींव की मजबूती जरूरी है. किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण के ये ही चंद बुनियादी वर्ष होते हैं, पाच-छः वर्ष की आयु तक व्यक्तित्व की यह नींव बन जाती है, आगे

केवल उसका विकास और प्रसार होता है. अतः हर समझदार माता-पिता को इस आयु में बच्चे पर पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए, उसके प्रश्नों का सही समाधान करना चाहिए, उसे सामाजिकता और अनुशासन सिखाने के लिए उसे भरपूर प्यार व समय देना चाहिए. उसके बाद तो वह स्वयं भी संभाल लेगा. इस संबंध में विस्तृत जानकारी के लिए चरित्र-विकास व व्यक्तित्व निर्माण से संबंधित विविध अध्याय देखें क्योंकि भय, असुरक्षा, हीन भावना आदि ग्रंथियां भी यहीं से बनती हैं, अपराधी प्रवृत्तियां, विद्रोही भावनाएं भी यहीं से पनपती हैं और कुंठारहित सहज आत्मविश्वासी व साहसी जीवन को भी यहीं से राह मिलती है. अतः इस पर अलग अध्यायों में विस्तृत जानकारी देना आवश्यक समझा गया है.

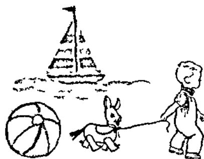
* आयु के आरंभिक पांच वर्ष जीवन के बुनियादी वर्ष होते हैं, जिनमें बच्चे के शारीरिक व मानसिक विकास की नींव पड़ती है.

* प्रत्येक बच्चे के विकास की गति अलग होती है, अतः यदि आपका बच्चा जन्म के समय स्वस्थ व सामान्य है तो विकास की गति में थोड़ा हेर-फेर असामान्य बात नहीं है. लेकिन यदि विकास की संपूर्ण गति असामान्य रूप से धीमी है तो डाक्टर से अवश्य परामर्श लें.

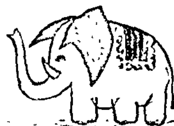
* शिशु के मानसिक विकास का उसके शारीरिक विकास से कोई सीधा संबंध नहीं होता. यह जरूरी नहीं है कि यदि एक बच्चा शारीरिक विकास में पिछड़ा है तो उस का बौद्धिक विकास भी उसी के अनुरूप होगा. कई बच्चे शारीरिक विकास में दुर्बल होते हुए भी स्वस्थ व तेजी से बढ़ने वाले बच्चों की अपेक्षा पढ़ाई में तेज व होनहार निकलते हैं.

* बच्चा कुछ वंशानुगत गुणों के साथ जन्म लेता है किंतु उन गुणों का सही विकास पारिवारिक परिवेश माता-पिता के प्यार व सहयोग पर ही निर्भर करता है.

* यह निर्विवाद तथ्य है कि बच्चे के स्वस्थ व संतुलित मानसिक विकास में, माता-पिता के लाड-प्यार भावात्मक सुरक्षा का बहुत हाथ होता है. मां-बाप द्वारा उपेक्षित हर समय डांट-फटकार खाने वाले व तनावपूर्ण वातावरण में पलने वाले बच्चे या तो दब्बू व हीनभाव से ग्रस्त निकलते हैं या उद्दंड व बिगड़ैल.



11
मालिश व स्नान



साफ-सुथरा, स्वस्थ बच्चा सबको अपनी ओर आकर्षित करता है. मां भी बच्चे को स्नान कराने के बाद नए स्वच्छ कपड़ों में सजा-संवरा देख फूली नहीं समाती इस स्नान-कार्य में उसे आनंद आता है व इसके बाद बच्चे को शांति से सोते देख संतोष अनुभव होता है. बच्चे के स्वास्थ्य, उसके ठीक विकास और उसके आराम के लिए स्नान बहुत आवश्यक है. भारत जैसे गरम देश में दैनिक रूप से, अत्यधिक गरमी में सुबह-शाम दोनों समय तथा अधिक सरदी में एक दिन छोड़कर बच्चे को स्नान अवश्य कराना चाहिए. बच्चा स्वस्थ हो तो सरदी के दिनों में भी उसे हर रोज नहलाया जाना चाहिए, अन्यथा जिस रोज न नहला सकें, स्पंज अवश्य किया जाना चाहिए.

पुराने जमाने में संयुक्त परिवार होते थे. नौकर, नौकरानियां व आया, दाई भी आसानी से मिल जाते थे. अतः शिशु को नहलाने का काम या तो आया, दाई करती थी या घर की कोई बड़ी-बूढ़ी. अब संयुक्त परिवार टूट गए हैं और आया रखने की सामर्थ्य बहुत कम लोगों में रह गई है. बच्चे को स्वच्छ व नीरोग रखने की चेतना का धीरे-धीरे विकास हो रहा है. यह विकास तेजी से किया भी जाना चाहिए, क्योंकि राष्ट्र का भावी विकास इस नन्हीं पीढ़ी पर ही निर्भर करता है. इसलिए शिशु को नहलाने की कला आज हर मां को सीखनी चाहिए.

नहाने से पहले सभी सामान अपने पास रखकर बैठें

शिशु को नहलाना एक कला

नन्हा शिशु बहुत कोमल होता है. जरा से झटके से उसे हानि पहुंच सकती है. जरा-सी लापरवाही से उसके कान में पानी जा सकता है, उसकी आख में साबुन लग सकता है, जरा सी असावधानी से उसे सरदी लग सकती है या जोड़ों में मैल छोड देने से उसे त्वचा रोग हो सकता है. इस कला में निपुण होने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखिए :



कपड़े उतारकर किसी अच्छे तेल से मालिश करें

—शिशु की पहली आवश्यकता है, आराम व सुरक्षा. वह संसार में नया-नया आया है. उसे, विशेष रूप से नवजात शिशु को हर बात से डर लगता है. यदि नहलाने का काम आप कोमलता से नही करेंगी तो शिशु को शारीरिक हानि पहुचे न पहुचे, उसे मानसिक हानि जरूर पहुंच सकती है. भय, तनाव और असुरक्षा की भावना उसमे जागृत हो गई तो न केवल वह स्नान से भय खाकर नहाते समय रोए-चिल्लाएगा, इस मामले में जबरदस्ती करने से उसके मन में भय की यह ग्रथि आगे चल कर उसे काफी हानि पहुचा सकती है. इसलिए नहलाते समय न तो उसे झटके दीजिए, न कठोर हाथो से पकडिए, न उस पर पानी इस तरह उछाल कर डालिए कि वह भयभीत होकर चिल्लाने लगे.

वैसे शिशु नहलाते समय थोड़ा-बहुत रोए तो उसकी परवाह नही करनी चाहिए, न ही इस डर से उसे नहलाना स्थगित ही करना चाहिए. रोने से शिशु को व्यायाम का लाभ मिलता है. आपकी पूरी कोशिश यही हो कि बच्चा नहाते समय पानी से डरे नही, स्नान मे आनद व प्रसन्नता अनुभव करे. प्राय: बच्चे ऐसा करते भी है. टब या चिलमची मे बैठ कर पानी से किलोल करने में उन्हें आनंद आता है, जिसे वे अपनी किलकारियों से प्रगट करते हैं उनके इस आनद मे शामिल होने में मा को भी कम आनद नही आता तो उनके इस आनद में सम्मिलित हो आप अपने व अपने बच्चे के आनद को बढाइए. पर इसके लिए आवश्यक है सही ढग से बच्चे को नहलाना.

समय : शिशु को स्नान कराने का एक विशेष समय निश्चित कर लें. गरमी, सरदी के मौसम अनुसार यह समय गरमी मे सुबह की पहली खुराक के एक घटे बाद तथा सरदी में दूसरी खुराक के एक घटे बाद अधिक सुविधाजनक रहता है, ताकि बच्चा मालिश-स्नान के थोड़ी देर बाद अगली खुराक लेकर आराम व शाति से सो सके. कामकाजी माताए, जो सुबह-सुबह काम पर जाने के कारण शिशु को स्नान नही करा सकती, उन्हे स्नान का यह काम बच्चे को

पीछे सभालने वाली घर की बडी-बूढी के जिम्मे छोडना चाहिए या यदि आया है तो उसे शिशु को नहलाने की सही ट्रेनिंग देनी चाहिए.

सामान की व्यवस्था · स्नान से पहले सभी सामान एक जगह इस तरह एकत्रित करके रख लेना चाहिए कि बीच मे शिशु को छोड उठने की जरूरत न रहे और हर वस्तु आसानी से हाथ की पहुच के भीतर मिल जाए. नहलाने के लिए स्नान-घर सर्वाधिक उपयुक्त स्थान है या रसोई मे अगीठी, गैस आदि नही जल रही है तो रसोई-घर का तापमान भी इसके लिए उपयुक्त रहेगा खुले मे शिशु को नहलाना ठीक नही. विशेष रूप से सरदी के दिनो

अब उसे गरम पानी के टब में बिठाइए

रोएं हटाने के लिए उबटन

अच्छी तरह लपेटकर सुला देना चाहिए. पर धूप में रखते समय भी देखना होगा कि सीधी धूप शिशु की आंखो पर न पड़े और उसे अच्छी तरह धूप-स्नान भी मिल जाए.

स्नान से पहले ये सभी चीजें अपने पास एक ऊची तिपाई या ट्राली मे रख लें : तौलिया, गरम व ठंडा पानी, लोटा या मग, साबुन, उतारे कपडे व नेपकिन डालने के लिए अलग-अलग ढक्कनदार बाल्टी या चिलमची आदि, बेबी-क्रीम, तेल, पाउडर आदि. साफ रुई के फाहे वाला मर्तबान, महलाने का छोटा टब या बडी चिलमची, बच्चे के पहनने के कपड़े, नेपकिन, सेफ्टी-पिन आदि और अपने बैठने के लिए एक पटरी. यदि आपके स्नान-घर मे ऊचा लगा हुआ बडा सा वाश-बेसिन है तो यह काम खड़े होकर भी सुविधा से किया जा सकता है. तब सामान रखने की जगह साथ ही ऊंचाई पर बनी होनी चाहिए.

- शिशु को नहलाने से पूर्व एक प्लास्टिक का एप्रिन बाध लेना अच्छा है. इससे आपके कपड़े नही भीगेंगे.

स्नान का क्रम व ढंग

आइए, अब देखें, शिशु को नहलाने का सही क्रम क्या होना चाहिए और किस प्रकार उसे नहलाया जाना चाहिए. इसके लिए निम्न बातो को ध्यान में रखिए

नहलाने से पहले मालिश शिशु के लिए कई दृष्टियो से उपयोगी है : इससे शिशु के शरीर पर से अनावश्यक रोए साफ करने में मदद मिलती है, यदि रोए अधिक दिखाई दें तो उपयुक्त उबटन प्रयोग में लाइए. यह उबटन जैतून के तेल में जरा सी हल्दी, थोड़ा बेसन और आटा मिला कर बनाया जाता है. नीबू का रस उबटन में तभी मिलाया जाना चाहिए जब बच्चा कुछ बड़ा हो गया हो, वह भी दो बूद से अधिक नही. मालिश के समय ही उबटन मल कर धीरे-धीरे रोएं साफ किए जा सकते हैं. मालिश के लिए किसी अच्छी कंपनी का बेबीआयल या जैतून का तेल सर्वोत्तम है. पर इसके अभाव मे कोई भी मीठा तेल इस्तेमाल किया जा सकता है. जैसे तिल का या नारियल का तेल. सरसों का तेल तभी इस्तेमाल करें जब बच्चा कुछ बडा हो.

मालिश करने का भी एक नियम होता है. मालिश टांगों, बाहो पर नीचे से ऊपर हाथ चला कर की जानी चाहिए. पीठ के ऊपरी भाग पर हाथ ऊपर से नीचे की ओर व निचले भाग पर नीचे से ऊपर की ओर रहेगा, यानी हर बार मालिश के लिए हाथ की स्थिति सभी ओर से हृदय की तरफ लाई जानी चाहिए. इस तरह मालिश का सही लाभ बच्चे को मिल सकेगा व उसका रक्त-संचार ठीक



आंखों को बचाते हुए कोई अच्छा सा बेबी सोप पहले उसके बालों व फिर बदन पर मलिए

.में तो इस बात का विशेष ध्यान रखना होगा. हां, सरदी के दिनो एक दीवार की ओट में, जहा सीधी हवा न पड़ती हो, 11-12 बजे की धूप मे शिशु को स्नान कराना ठीक रहेगा. मालिश के बाद उसे थोड़ी देर धूप मे रखने से उसे विटामिन 'डी' भी मिलेगा और उसके अंग भी खुलेंगे. फिर स्नान के बाद

बच्चे ने अभी थोडी देर पहले दूध पिया है तो पेट पर मालिश न करें. पेट और मुह पर मालिश जरूरी नही. सिर पर हलके हाथ से मालिश की जा सकती है उसके बाद साबुन से सिर धो देना चाहिए. मालिश करते समय सावधानी बरते कि हाथ कोमलता से चले और बच्चे के नाजुक अगो को कोई झटका न लगे.

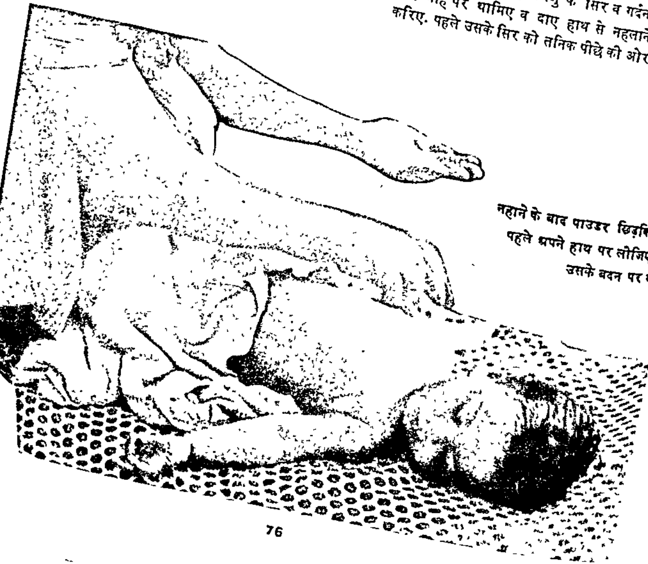
मालिश के बाद कुछ समय बाद ही नहलाना ठीक होगा सरदी के दिनो इस बीच बच्चे को धूप-स्नान देना चाहिए. इसके बाद नहलाना चाहिए. इस प्रकार मालिश के बाद नहलाने से शिशु की त्वचा स्वस्थ होगी, उसके अनावश्यक रोम साफ होंगे. उसकी मासपेशियो को व्यायाम व विश्राम मिलेगा और बच्चा तनाव-थकान से बचा रहेगा, उसे आराम की नीद मिल सकेगी.

नवजात शिशु मे जब तक नाभि की नाल सूख कर गिर न जाए व नाभि पूरी तरह खुश्क न हो जाए, नाभि को स्नान के समय भीगने से बचाना चाहिए.

कमरे का तापमान उचित व बच्चे के लिए सुविधाजनक रख कर व सरदी मे कमरा बद करके शिशु के कपडे उतारने चाहिए. कपडे उतारकर पहले उसे बड़े तौलिए में लपेटें फिर स्नान-स्थल तक ले जाए.

टब मे पहले ठडा पानी डालें, व फिर आवश्यकतानुसार उसमे गरम पानी मिलाएं. पहले गरम पानी टब मे नही डालना चाहिए. मिलाने के बाद पानी का तापक्रम अपनी कुहनी डुबो कर देख ले कि वह हलका गरम ही हो. मौसम अनुसार व बच्चे की आयु अनुसार यह तापमान 112 से 116 डिग्री F हो सकता है.

बच्चे को नहलाते समय उसे इस तरह पकड़ कर रखिए कि उसके पांव आपकी तरफ रहे और सिर टब या चिलमची मे पानी से ऊपर. छ: महीने मे छोटे शिशु को हाथ से पकड कर नहलाएं, बडे बच्चे को आधे भरे टब में बैठा कर नहलाया जा सकता है. शिशु के सिर व गर्दन को अपनी बाईं बाह पर थामिए व दाए हाथ से नहलाने का काम करिए. पहले उसके सिर को तनिक पीछे की ओर झुका कर



नहाने के बाद पाउडर छिड़किए नहीं पहले अपने हाथ पर लीजिए फिर उसके बदन पर मलिए

धो डालिए व पोंछ लीजिए. फिर साफ रुई के भीगे फाहे से उसका मुंह, नाक, कान साफ करिए. आंखें साफ करते समय दोनों आंखों के लिए फाहा अलग-अलग लीजिए. नवजात शिशु के पहले आठ-दस दिन तक तो आंखों की सफाई पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है ताकि उसकी आंखें संक्रमण-जनित रोग से बची रहे. बहुत छोटे बच्चों को नहलाते समय मुंह पर साबुन नहीं लगाना चाहिए, अन्यथा आंखों में साबुन लगने से यदि वह भयभीत हो गया तो नहाने से ही भय खाने लगेगा और हर रोज नहाते समय रोने-चिल्लाने लगेगा.

इसके लिए यह भी जरूरी है कि उसे मजबूती से तो पकड़ा जाए पर कठोर हाथों से नहीं. इसी तरह सारे शरीर पर साबुन लगाते समय ध्यान रहे कि साबुन की चिकनाई से वह आपके हाथों से फिसलने न लगे. सिर को ऊंचा उठा कर पेट, पीठ, टांगों, बांहों पर साबुन लगाएं और सभी जोड़ों की सफाई पर विशेष ध्यान दें. अक्सर माताएं यही गलती करती हैं. ऊपर-ऊपर से नहला कर कपड़े बदल देती हैं व लापरवाहीवश जोड़ों में मैल की, पाउडर की धारियां बनने देती हैं. छोटा-बच्चा मल-मूत्र से सनता रहता है,अतः मल-मूत्र के बाद उसी समय सफाई का ध्यान रखने के साथ उसे नहलाते समय इन भागों की सफाई पर भी विशेष ध्यान देने की जरूरत है कि उन्हें नितंबों के जोड़ों में लाली, घाव की शिकायत न हो. फिर सारे शरीर पर हलके हाथ से पानी डाल कर बच्चे को शीघ्र उठा लेना चाहिए

नहलाने का यह काम सावधानी से करने के साथ जल्दी में भी निबटाना चाहिए कि बच्चा कष्ट या असुविधा अनुभव न करे और उसे सरदी लगने से भी बचाया जा सके. लेकिन ध्यान रहे, सरदी नहलाने से नहीं लगती, खुली हवा में कपड़े उतारने व नहलाने से लगती है या सरदी के दिनों देर तक नंगा रखने से. इसके अलावा अधिक कपड़े पहनाने पर भी एकाएक उतारने से बच्चा सरदी से पकड़ जाता है. कम कपड़े या मौसम अनुसार जरूरत के कपड़े पहनाने से यह खतरा नहीं रहता. फिर भी ध्यान रखना होगा कि नहलाते समय कपड़े बंद कमरे में उतारे जाएं और कपड़े पहना कर शिशु को बाहर लाया जाए. अथवा कमरे से स्नानघर तक लाने, ले जाने के समय बड़े व मोटे तौलिए से शिशु को लपेट लिया जाए.



जोड़ों की जलन या लाली से बचाने के लिए क्रीम लगाइए

स्नान के बाद शिशु का सारा शरीर नरम रोएंदार तौलिए से पोंछकर नितंबों के जोड़ों पर जरा सी बेबी-क्रीम या तेल लगा दें. *कानों के पीछे व जोड़ों में शिकनों के बीच* नमी रह जाने से 'सोर' या घाव बन सकते हैं. अत. इन जगहों को पोंछकर पहले सुखा लेना चाहिए, फिर जरा सी क्रीम लगाकर पाउडर डाल देना चाहिए. ध्यान रहे, बहुत छोटे बच्चे पर पाउडर छिड़का न जाए, अपने हाथ पर डाल कर जोड़ों में लगाया जाए. पाउडर छिड़कने से उसकी धूल उड़कर बच्चे को एलर्जी कर सकती है जिससे उसे जुकाम व न्यूमोनिया तक हो सकता है. दो महीने की आयु के बाद ही सारे शरीर पर पाउडर लगाना चाहिए, पहले केवल जोड़ों में, गरदन में और कानों के पीछे. बाद में भी सारे शरीर पर पाउडर छिड़कें नहीं, हाथ से मलें.

बच्चे के लिए कभी भी कपड़े धोने वाला साबुन इस्तेमाल न करें. नहाने वाला साबुन भी उसके लिए अलग

रखना चाहिए कि वह संक्रमण से बचा रहे. यदि 'बेबी सो
ले सकें तो अधिक अच्छा रहेगा.

नहलाने के बाद उसे मौसम अनुसार स्वच्छ कपड़े
पहनाए. उसके बालों पर ब्रुश करें और लपेट कर लिटा दें.
उसे दूध की खुराक पिलाने से थोड़ी देर पहले नहलाना
चाहिए व अब दूध पिलाकर सुला देना चाहिए. मालिश-
स्नान के बाद बच्चा थकान-तनाव से मुक्त हो ताजगी अनु-
भव करेगा और शांति व आराम के साथ देर तक सोता
रहेगा. इस तरह उसका स्वास्थ्य अच्छा रहेगा और उसके
ठीक विकास में सहायता मिलेगी, क्योंकि स्वच्छता-सफाई
नीरोगता की पहली शर्त है, मानसिक प्रफुल्लता की भी. पर
स्नान के बाद बच्चे को शांति, आराम देने के लिए नहलाने
का सारा कार्य सावधानी व आनंदपूर्वक होना चाहिए. यदि
गरमी के दिनों बच्चा थोड़ी देर टब मे बैठकर किलकारिया
मारकर जल-किलोल करना चाहता है तो ऐसा करने दें व
इस आनंद मे उसका साथ दें. आपका काम केवल यह देखना
है कि पानी मौसम अनुसार ठीक तापमान का रहे और
टब मे इतना न भरा हो कि बच्चे के उसमें गिरकर डूबने
का खतरा हो. दो साल से छोटे बच्चे को नहलाते समय
उसे थोड़ी देर के लिए भी अपनी आंखों से ओझल नही होने
देना चाहिए. इसीलिए नहलाने की सारी तैयारी पहले
करके रखना जरूरी है ताकि उठकर जाना न पड़े. फिर भी
कोई आकस्मिक व्यवधान आ पड़ने पर उठकर जाना पड़
ही जाए तो बच्चे की सुरक्षा पर पहले ध्यान देना चाहिए.
जल्दबाजी मे उसे जैसे-तैसे छोड़कर उठ जाने का खतरा
मोल नही लेना चाहिए.



... कपड़े पहनाने की तैयारी

इस प्रकार थोड़ी सावधानियां बरतने से आपका बच्चा स्वस्थ, प्रसन्न रहकर विकसित होता रहेगा और आप भी अपने साफ-सुथरे बच्चे को आराम से सोता, खेलता देखकर खुश रहेंगी. 

... और राजा बेटा सज-संवर कर तैयार

* बच्चे को नहलाना शुरू करने से पहले सभी आवश्यक सामान अपने पास रख कर बैठें ताकि आपको बीच में उठना न पड़े.

* बच्चे को नहलाने का समय तभी नियत करें जब आपके पास पर्याप्त समय हो, हड़बड़ी या जल्दबाजी में नहलाने से बच्चा पानी से भय खा सकता है.

* शिशु को न तो दूध पिलाने के एकदम बाद नहलाएं न ही जब वह बहुत भूखा हो या किसी अन्य कारण से जोर से रो रहा हो.

* नहलाते समय आपके हाथ एकदम साफ हों. नाखून कटे हुए हों. यदि आपके हाथ में चुभने वाली घड़ी, चूड़ी या अंगूठी है तो उसे उतार दें.

* जहां तक हो सके नहलाने के लिए सिंक या प्लास्टिक के टब प्रयोग करें. यदि धातु का टब या चिलमची प्रयोग में ला रही हैं तो उसके नीचे कोई तौलिया या कपड़ा बिछा लें.



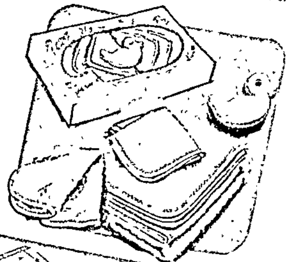
12
शिशु के वस्त्र व उनकी सफाई

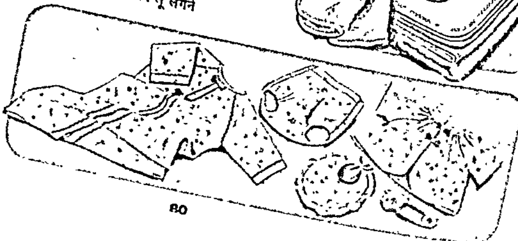
शिशु के वस्त्र मौसम के अनुसार भी होते हैं और अपनी जेब अनुसार भी. पर भिन्नता ऋतु को ध्यान मे रख कर हो, या कपड़े की महगी, सस्ती किस्म के अनुसार, बच्चे की पहली आवश्यकता है, सुविधा व सुरक्षा, और यह आवश्यकता गरीबी-अमीरी मे भेद नही करती. आप अपने शिशु के लिए कैसे कपड़े बनाएं, कितनी संख्या मे बनाएं, शिशु की सुविधा व सुरक्षा का सिद्धांत सर्वोपरि रहना चाहिए. आइए देखें, इसके लिए हमें क्या करना है .

प्रारभ से ही बच्चे को कम कपड़े यानी जरूरत भर कपड़े पहनाने की आदत डालनी चाहिए. अक्सर माताएं उन्हें सरदी मे अनेक कपड़ो से लादे रखती हैं,इस विचार से कि बच्चा सरदी से बचा रहे, पर होता इसका उल्टा है. बच्चे को अधिक कपडे पहनने की आदत पड़ जाती है और बाद में जरा भी खुला रहने पर उन्हे सरदी लगने का भय रहता है. इसके विपरीत सरदी में भी जरूरत भर गरम व नरम कपड़े पहनने वाले बालक सरदी-जुकाम से बचे रहते हैं और कम कपड़ो मे सुविधा व आराम अनुभव करने के कारण उनका विकास भी ठीक होता है. अधिक कपडों मे जकड़े रह कर छोटे बच्चे अपने हाथ-पैर नही चला सकते तो उनका विकास कठिन हो जाता है. वे सुस्त पड़ जाते हैं, आगे चल कर आरामपसंद भी.

बच्चे के वस्त्र मौसम अनुसार हों. पर इस मामले मे बच्चे की सुविधा पहले देखी जानी चाहिए, फैशन या डिजाइन की नकल बाद में. गरमी में उन्हे पतले सूती कपड़े पहनाएं पर वे इतने पतले न हो कि बच्चे को लू लगने का भय हो या बरसात में हलकी ठंड होने पर वे सरदी से बच्चे का बचाव न कर सकें. बरसात में हलकी ठंड होने पर जरा मोटे सूती कपड़े पहनाना ही ठीक होगा. पर भूल कर भी बच्चे को नायलोन के या रेशमी कपड़े गरमी मे न पहनाए जाएं, अन्यथा उमस से उन्हें महौरियां निकल आएंगी. नायलोन से फोड़े-फुंसी होने का भी डर रहता है. कुछ बच्चो को एग्जीमा जैसे त्वचा-रोग भी हो सकते हैं. हां, नीचे सूती बनियान डाल कर विशेष अवसरों पर हलके रेशमी कपड़ों का उपयोग कर सकती है. तब भी ध्यान रखना होगा कि सुंदर वस्त्र होने के साथ आरामदेह भी हों.

जहां तक संभव हो, शिशु के कपड़ों पर गोटा-किनारी व अन्य चुभने वाला काम नही होना चाहिए. खूबसूरती के लिए डिजाइन के साथ वे कपड़े हलके, नरम व ढीले-ढाले





शिशु के लिए कुछ अनिवार्य वस्त्र



ढीली-ढाली आरामदेह नाइटी

भी हों, इसका ध्यान रख लेना होगा. सरदी के दिनों में एक वर्ष से छोटे बच्चे को भीतरी कपड़ा गरम न पहनाएं. पहले साल ऊनी बनियान, कमीज या झबला पहनाने से शिशु की कोमल त्वचा पर खुजली व चिरमिराहट हो सकती है. यदि भीतर ऊनी बनियान पहनाना ही चाहे तो उसके नीचे डाली जाने वाली सूती बनियान बिना बाहों की नहीं, आधी बांहों व छोटे गले वाली होनी चाहिए कि ऊनी बनियान उसके ऊपर ही रहे, कहीं से बाहर निकल कर उसके अंगों को स्पर्श न करे. अच्छा तो यही होगा कि सूती बनियान के ऊपर सूती या मुलायम रेशमी झबला, फ्राक आदि पहनाकर उसके ऊपर ही स्वेटर पहनाएं—दोपहर में हलका व सुबह-शाम जरा मोटा. पर मोटा होकर भी वह नरम ऊन का हो और ढीले हाथ से बुना गया हो, जो शरीर को न बुनाई में कसे, न नाप मे.

बढने वाले बच्चे का स्वेटर, मैटिनी-कोट, पुलोवर आदि नाप मे थोड़ा बड़ा व ढीला-ढाला ही अच्छा रहेगा, लेकिन वह लंबाई मे अधिक नहीं होना चाहिए. यह भी जरूरी है कि सरदी के दिनों बच्चे को हर समय सिर से लेकर पैरों तक ढक कर न रखें क्योंकि इससे बढत में बाधा पड़ती है, और बच्चे को कपड़े उतारने पर सरदी लगने का भय रहता है. पैरो में मोजे जरूरी हैं, छाती को ढक कर रखने के लिए एक स्वेटर भी. एक के ऊपर दूसरा स्वेटर पहनाने के बजाए, बाहर ले जाते समय उसे बेबी-कंबल से लपेट लें व सिर पर कानों को ढकने वाली टोपी पहना लें. घर में दिन भर सिर को टोपी से ढक कर रखना ठीक नही. विशेष रूप से धूप के समय तो टोपी जरूर उतार दें, अन्यथा बच्चा पसीने से भीगता रहेगा और उतारने पर हवा लगने से बीमार पड जाएगा. सरदी में स्वेटर जल्दी सूखते नही और बच्चे के कपड़े रोज बदलने जरूरी हैं, इसलिए स्वेटर एक से अधिक होना भी आवश्यक है.

मौसम के अनुकूल वस्त्र

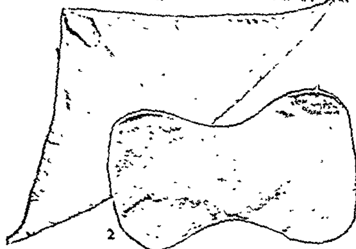
बच्चे के कपड़े मौसम के अलावा अवसर अनुसार भी बनाए जाने चाहिए. घर पर लेटते, खेलते समय हमेशा बच्चे को ढीले-ढाले कपड़े पहनाना ही उचित होगा कि वह अच्छी तरह हाथ-पैर चला सके, उसके अगो का ठीक व्यायाम हो सके और उसकी-बढत में बाधा न पड़े. ये कपडे सादे व नरम भी होने चाहिए जिससे बच्चे को आराम मिले. यदि आपको सुंदर डिज़ाइनो के व अच्छी फिटिंग वाले विविध कपड़ों का शौक है तो बाहर ले जाते समय बच्चे को पहनाने के लिए ऐसी कुछ पोशाकें भी बना सकती है. पर फिटिंग के नाम पर वे कपड़े अधिक कसे न हों और डिज़ाइन के नाम पर असुविधाजनक न बन जाएं. उनमें बच्चे को चुभने वाला कोई भी नमूना नही होना चाहिए. न ही वे ऐसे हों कि जिनसे बच्चे की स्वास्थ्य-सुरक्षा को हानि पहुंचने की सभावना हो.

यह भी आवश्यक है कि शिशु के कपड़े हमेशा हलके (पेस्टल) रगो मे बनाए जाएं कि वे स्वच्छ रहें व उनमें मैल न भरे. गहरे रंग के कपड़ों में मैल दिखाई नही देती और माताएं उन्हें साफ रखने में लापरवाही बरत सकती हैं. विशेष रूप से गरमी के दिनो तो सफेद या हलके रंग के कपड़े ही पहनाए जाएं व उन्हें दिन में दो-तीन बार बदला जाए. सरदी में कुछ गहरे रगों का प्रयोग भी किया जा

सकता है. पर धूप के समय फिर भी गहरे रंग के वस्त्र अच्छे नही लगेंगे. गरमी में गहरे रंगों से बच्चा अधिक गरमी व बेचैनी भी अनुभव करता है. अत: गहरे रंगों से उसे बचाना चाहिए, अधिक पसीना लाने वाले गहरे रंग के 'सिंथेटिक' कपड़ो से तो अवश्य ही बच्चे के लिए हलके रंगों के सूती कपड़े ही अधिक सुविधाजनक रहते है. ये रोज धुलते हैं अत: मां के लिए भी इसी मे सुविधा है. सूती कपड़ों में भी रंग कच्चा न हो और वे खुरदरे न हों. इसका ध्यान रख लेना होगा.

छोटे शिशुओं के कपड़ों मे चुभने वाले बटनो की जगह बांधने वाली तनियां लगाइए. यदि बटन या हुक लगाए जाएं तो वे ऐसी जगह हो कि बच्चे को गले पर या पीठ पर चुभें नहीं. कंधे के ऊपर या सामने भाग में लगाने पर भी. बच्चे को उठाते समय ध्यान रख लेना चाहिए कि ये बटन, हुक आदि उसे चुभ तो नही रहे ? कई बार बच्चा केवल इसी कारण कष्ट पाकर रोता रहता है और माताएं समझ न पाने पर उसे जबरदस्ती दूध पिला कर चुप कराने का प्रयत्न करती रहती हैं या बच्चे के चुप न होने पर डाक्टर के पास भागती है.

बच्चे के कपड़े ढीले-ढाले हो पर वे लंबाई में कम होने चाहिए कि बच्चा उन्हे टट्टी-पेशाब से हर समय सानता न रहे. नीचे की ओर भीतर पट्टी चौड़ी मोड़ देनी चाहिए कि बच्चे की बढ़त के साथ उसे खोल कर लंबाई बढ़ाई जा सके. इसी तरह पूरी बांहो की भी. बढ़त का ख्याल करके पहले से ही लंबी बाहे बनाकर पहनाना ठीक नही होगा, इससे बच्चे को असुविधा होगी. बांहों का नमूना ऐसा हो कि उन्हे खोल कर बढ़ाना आसान रहे. हां, रात को सोते समय पहनाने वाली झबलानुमा नाइटी ढीली व पैरों तक लंबी



नेपकीन के दो नमूने


सर्दी के लिए सुविधाजनक बेबी सेट

भी होनी चाहिए कि बच्चा गरमी मे मच्छरों से व सरदी में ठंड से बचा रहे. भीगने पर इसे तुरंत बदल देना चाहिए. इसलिए कम से कम दो नाइटी (या लंबे फ्राक) तो हों ही.

मालिश के समय पहनाने के लिए, खाना खाते समय पहनाने के लिए भी वस्त्र अलग हों. खाना खिलाते समय फ्राक आदि के ऊपर 'फीडर' बांधा जा सकता है, पर छोटा बच्चा जब अपने हाथ से खाना आरंभ करे तो थोड़ा-बहुत कपड़ों पर फैलाएगा ही. उसे इस डर से स्वयं खाना न खाने देना गलत होगा. इसके बजाए अच्छा यही है कि उसके खाने के समय के कपड़ों को अलग कर दिया जाए व बाद मे शीघ्र उन्हें धोकर साफ कर लिया जाए. इस तरह घर में पहनने के सुविधाजनक सादे कपड़े अलग होंगे, बाहर के लिए सुंदर व डिजाइनदार अलग, खाना खाते समय, सोते समय पहनाने के लिए अलग व मालिश के समय पहनने के लिए अलग. माताएं अपनी सुविधानुसार इस व्यवस्था में थोड़ा हेरफेर कर सकती है. अपने बजट अनुसार पोशाकों की संख्या में भी और उनकी किस्म मे भी. पर बच्चे की सुविधा सबसे पहले देखी जानी चाहिए व दिखावे या फैशन को ताक मे रख कर उसकी आवश्यकता पर ध्यान देना चाहिए. इसके लिए कम बजट में भी कठिनाई न होगी, पर बच्चे की जरूरत भर कपड़ों के लिए कुछ खर्च करना पड़े तो भी उसकी स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से यह खर्च कुछ '. री न पड़ेगा.

दांत निकालते समय या वैसे किसी कारण लार टपकाते समय शिशु के गले में 'बिब' बांध देना चाहिए जिससे उसके मुख्य वस्त्र की सुरक्षा हो सके. 'बिब' और 'फीडर' को गंदा होने पर तुरंत बदलने व धोकर साफ करने की ओर भी ध्यान देना चाहिए.

नेपकिन या लंगोट आरंभ से ही दो-तीन दर्जन बना कर रख लेने चाहिए. ये पुरानी सफेद चादरों से भी बनाए जा सकते हैं और नए मुलायम सूती कपड़े से भी. पर नए कपड़े में कलफ नहीं होना चाहिए. पहले कपड़े को धोकर प्रेस करें, फिर नेपकिन के लिए प्रयोग में लाएं ताकि वे नरम रहें और कलफ से शिशु को कोई हानि न पहुंचे. अधिक संख्या में लंगोट रखने से मां को सुविधा रहेगी व बार-बार धोने के लिए नहीं जाना पड़ेगा. बरसात व सरदी में सूखने की समस्या का सामना भी नहीं करना पड़ेगा. पेशाब व टट्टी करने के बाद लंगोट तुरंत बदला जाना चाहिए. बच्चा गीले लंगोट में नहीं रखना चाहिए. टट्टी के बाद हर बार धुलाई भी आवश्यक है. पर हर बार पेशाब करने के बाद बच्चे को उठा कर धोना ठीक नहीं. लेकिन साफ रुई के भीगे फाहे से हर बार पोंछना जरूरी है कि बच्चे को नितंब-जोड़ में तकलीफ न हो. इस तरह पोंछने के बाद लंगोट बदल लेना चाहिए. उतारे गए सारे मूत्र-सने लंगोट एक ढक्कनदार बालटी या चिलमची मे जमा करके रखते जाना चाहिए व फिर सुबह-शाम या दोपहर को फुरसत से धुलाई का काम साथ कर लेना चाहिए. पर टट्टी से सने लंगोट को उसी समय धोने में सुविधा रहती है. यदि बच्चा दस्तों से बीमार है और मां का पास से उठ कर जाना संभव नहीं है तो इन लंगोटों के लिए एक दूसरी बालटी या चिलमची का प्रयोग करें, जिस पर ढक्कन अवश्य हो, ताकि दस्तों पर मक्खी बैठ कर बीमारी न फैलाए. इन्हें बाद में साफ करते समय नल के बहते पानी का प्रयोग करें कि धुलाई सुविधा से हो सके.

यह भी आवश्यक है कि घर के अन्य कपड़े व शिशु के कपड़े एक साथ मिलाकर न धोए जाएं. शिशु के कपड़ों में भी नेपकिन व पेशाब से सनी चादरों आदि की धुलाई अलग करनी होगी, अन्य कपड़ों की अलग. पेशाब सने लंगोट उबालकर धोने चाहिए, उन्हें अधिक सोडे वाले सस्ते साबुन से नहीं धोना चाहिए, धोने के बाद 'पोटाशियम परमेंगनेट' मिले पानी में खंगालकर निकाल लेने से अतिरिक्त सुरक्षा रहेगी, विशेष रूप से जब तेज धूप में उन्हें सुखाने की सुविधा न हो. तेज धूप में सुखाकर या कीटाणुनाशक दवा के पानी से शुद्ध किए लंगोट पहनाने पर बच्चा त्वचा-रोगों से बचा रहेगा, अन्यथा लंगोट में साबुन रह जाने से या पेशाब का अमोनिया रह जाने से उसकी त्वचा में जलन हो सकती है और लाली, घाव होने का खतरा हो सकता है. बीमारी के बाद तो पहनने के सभी कपड़ों को भी विसंक्रमित कर लेना आवश्यक होता है.

लंगोट तैयार करना

लंगोट या तो किसी अच्छी कंपनी के बने-बनाए लें या घर पर तैयार करते समय इन बातों का ध्यान रखें :

□ लंगोट का कपड़ा जरा मोटा, पर मुलायम होना चाहिए. यह कपड़ा नमी सोखने वाला हो, नहीं तो सूती अवश्य हो.

□ यदि लंगोट नमी सोखने वाले नरम 'टावेल क्लाथ के बनाएं तो भीतर मुलायम पतली मलमल की तह लगाएं और उन्हें तिकोना नहीं, नंबर दो नमूने अनुसार सीधा बनाएं, जिनमें कमर पर व निचले भाग पर दोनों ओर बांधने के लिए तनियां लगी हों. या दोनों ओर दो बड़े पिन लगाकर बंद कर दिया जाए. इसे 'टू-पिन डिजाइन' कहते हैं. फलालैन में से बनाते समय भी यही विधि काम में लानी चाहिए. सफेद सूती कपड़े या पुरानी चादर में से बनाते समय भीतर तह देने की आवश्यकता नहीं. केवल नाप अनुसार एक रूमाल की तरह चौकोर कपड़ा लेकर उसे दोहराकर तिकोन बना लिया जाता है और तिकोन को भीतर से सी कर उसके निचली ओर एक बड़ा लूप लगा दिया जाता है. लूप में से लंगोट के ऊपरी दोनों कोनों को निकालकर तीसरे कोने पर बांध दिया जाता है. बांधने के बजाए इसे एक बड़े पिन से भी तीनों कोनों पर जोड़ा जा सकता है. इसीलिए इसे 'वन-पिन डिजाइन' कहते हैं. घरों में व्यवहार में लाया जाने वाला परंपरागत नमूना यही है जिससे प्रायः माताएं परिचित हैं.

जूते

एक साल से छोटे बच्चे को गरमी में जूता पहनाने की आवश्यकता नहीं. सरदी में सूती व ऊनी मोजे ही काफी हैं. पर बच्चा जब चलने का प्रयत्न करने लगे, पर अभी ठीक से चल नहीं पाए, तब उसे फलालैन के या मुलायम गरम कपड़े के जूते पहनाए जा सकते हैं, जिनके तले पर नरम बकरम या पतला प्लास्टिक लगा हो. पर केवल प्लास्टिक के जूते पहनाना सुरक्षा की दृष्टि से उचित नहीं.

हर आयु के बच्चे के जूते उसके सही नाप के होने चाहिए और ढीले पंजे वाले तंग जूते या नाप से ढीले जूते

से बच्चे को कष्ट होगा व उसके सहज विकास में बाधा पड़ेगी. जूते की एड़ी भी ऐसी हो कि बच्चे के टखने को सहारा मिले और उसके गिरने का भय न हो. ऊंची एडी वाले जूते भी ठीक नही, न एक दम फ्लैट ही. डेढ-दो साल के बच्चे व उससे बडे बच्चे को नीची ऐड़ी वाला मुलायम जूता पहनाए, व छोटे शिशु को बिना एडी वाला. पर बच्चे के जूते किसी भी हालत मे कठोर व भारी नही होने चाहिए. वे मुलायम और हलके हों, भले ही फिर सस्ते हो या महगे.

बिस्तर

बच्चे के बिस्तर के लिए आवश्यक चीजें नवजात के स्वागत की तैयारी वाले अध्याय में बताई गई हैं. यहा इतना ही कि बच्चे का बिस्तर नरम, सरदी मे गरम व आरामदेह होना चाहिए और उसे हमेशा स्वच्छ रखना चाहिए. कभी भी गीला गद्दा बच्चे के नीचे न रहे. छोटे बच्चे के लिए छोटा गद्दा अलग बनाया जाए, बडे बच्चे के लिए उसके छोटे पलग के बराबर. पालने या बच्चा-गाडी (प्राम) के लिए अलग गद्दी उसी नाप की बना लें कि बार-बार उठाने का झझट न करना पड़े. पर यह न कर सकें तो वही छोटी गद्दी उठाकर बच्चे को किसी भी जगह लिटाते समय रख लेनी चाहिए. इस छोटे गद्दे के ऊपर मोमजामा बिछाकर स्वच्छ धुली चादर बिछाएं, तब बच्चे को उस पर लिटाए. ये चादरें गीली होने पर तुरंत बदली जा सकें, इसके लिए चार या छह चादरो का एक सेट बना लेना ठीक रहेगा.

यह जरूरी नही कि सभी चादरें नए कपड़े की हों या कढाई वाली महगी ही खरीदी अथवा बनाई जाएं. बाहर के लिए दो सुदर चादरें खरीदने या बनाने के साथ ये चार-छह चादरें पुराने बेड-कवरो मे से भी बनाई जा सकती हैं. बस, वे नमी सोखने वाले कपड़े की सूती हों, सफेद या हलके रगो मे हों और उन पर चुभने वाला काम न हो. ऊपर ओढाने के लिए अपना कोई पुराना शाल स्वच्छ करके रख लें व एक छोटा कंबल खरीद लें. अलग से छोटी रजाई कुछ बडे बच्चे के लिए ही बनानी चाहिए. छोटे बच्चे उसे उतारकर सोते समय नगे न पड़े रहें, इसके लिए उन्हें छोटी रजाई न उढाकर पहले छोटे कंबल से लपेटें, फिर ऊपर (सरदी के दिनो) बडा कंबल या बड़ी रजाई ओढा दें. गरमी के लिए एक जालीदार मच्छरदानी भी अवश्य रख लेनी चाहिए. इसके लिए बच्चे की नीद वाले अध्याय मे अलग से भी जानकारी दी जा रही है .



छोटे बच्चों के लिए आकर्षक व आरामदेह जूते

कुछ अन्य वस्त्र

बच्चे के अन्य कपड़ों मे आवश्यक हैं, कुछ तौलिए व हाथ-मुंह पोंछने वाले नेपकिन. बच्चे को स्नान के समय लपेटने के लिए एक या दो बडे तौलिए लें. दो तौलिए नहलाने के बाद बदन पोंछने के लिए, कि वे बारी-बारी से धोए व सुखाए जा सकें. इनके अलावा, दूध की बोतल पर लपेटने के लिए, दूध गिराने पर सफाई करने के लिए, दूध पिलाने के बाद मुह पोंछने के लिए चार छोटे मुलायम तौलिए भी अलग रखें. इन पर नर्सरी-कढाई की हल्की सज्जा भी की जा सकती है. इसी तरह बच्चे के बिस्तर पर बिछाने वाली चादरो पर भी. पर यह कढाई बच्चे की पीठ के नीचे नहीं आनी चाहिए. या तो चारो ओर बेल काढ़ें या लेस लगाएं या फिर किनारो पर काढें अथवा केवल निचली ओर कि बच्चे के लेटने पर वह दिखाई भी देती रहे और बच्चे को चुभे भी नही. बडे-छोटे तौलिए या नेपकिन पर कढाई-सज्जा करते समय भी इसी नियम का पालन करना चाहिए. पर ओढ़ाया जाने वाला कंबल चाहे जैसा सजा सकती हैं क्योंकि उसके नीचे पहले सूती चादर ओढ़ाई जाएगी.



इस प्रकार आपने देखा, बच्चे के कपड़े चाहे पहनाने के हों या बिछाने के, उनके बनाने में महंगी, सस्ती किस्म व डिजाइन का नही, बच्चे की सुविधा व सुरक्षा का महत्त्व है. इसी महत्त्व को सामने रखकर फिर आप अपने बच्चे के लिए चाहे जो खरीदने-बनाने के लिए स्वतंत्र है. इसके लिए न कोई सीमा बाधी जा सकती है, न विशेष नियम निर्धारित किए जा सकते है. अपने शौक व खुशी को बच्चे की सुविधा के साथ जोड़ दीजिए. ●

छोटी लड़कियों को बाली, चूड़ी, चेन आदि पहनाना ठीक नहीं

* शिशु के वस्त्र आरामदेह, सुविधानजक, जल्दी धुलने व सूखने वाले और मौसम के अनुकूल होने चाहिए. ठंडे मौसम मे उसे जरूरत से ज्यादा कपड़ो से न लादें.

* दो-तीन वर्ष की आयु के बच्चे अक्सर अपने कपड़े खुद पहनने की जिद करने लगते हैं, तब उन्हें प्रोत्साहन दें. क्योंकि वस्त्र पहनने में बच्चा जितनी जल्दी आत्मनिर्भर हो जाए, उतना ही अच्छा.

* बच्चे के कपड़ों की सफाई का ध्यान रखना आवश्यक है, लेकिन कपड़े गदे होने के भय से उसके बाहर खेलने पर रोक लगाना या स्वयं न खाना खाने देना भी ठीक नहीं.

* थोड़ा बड़ा होने पर उसे अपने कपड़े, जूते, मोजे आदि यथास्थान रखना सिखाएं. स्कूल जाना शुरू करने पर रात को ही उसके कपड़े-जूते आदि तैयार करके रखें.

* चार-पांच वर्ष की आयु के बच्चे किसी खास पोशाक या रंग के बारे में अपनी पसंद व्यक्त करने लगते हैं, तब उनके लिए वस्त्र खरीदते समय उनकी पसंद को प्राथमिकता देने में कोई हानि नही.



13
शिशु स्वास्थ्य के लिए व्यायाम

छोटे वच्चों के लिए व्यायाम की व्यवस्था प्रकृति स्वयं करती है शिशु लेटे-लेटे अपने हाथ-पैर चला कर अपना व्यायाम स्वय कर लेता है. माताओ का काम केवल प्रकृति के इस काम मे वाधा न डालना व सभव सहायता करना ही है.

तंग कपड़ों व अधिक कपड़ों से व्यायाम में बाधा

यदि सरदी मे बच्चों को अधिक कपडो से लादकर वद कमरे मे न रखा जाए तो उनके विकास मे वाधा नही पडती वे अपना व्यायाम स्वय कर लेते हैं. हाथ-पैर चला कर, रो कर, घिसट कर, उलटे-सीधे होकर और चलने के वाद खूब घूम-फिर कर, खेल कर व दौड़कर. माताओ को चाहिए कि उन्हे न तो तंग कपड़े पहनाएं, न अधिक कपडो से लादें. न उनके हानिरहित खेल में बाधा डालें, न उन्हे ताजी हवा से वंचित करें. शिशु को शाम को बाहर खुली हवा मे या बगीचे में घुमाने ले जाने से वह प्रसन्न रहेगा.

व्यायाम में सहायता

बैठने वाले वच्चों को घिसटने या घुटनों के बल चलने के लिए (थोड़ी दूरी पर खिलौना आदि रख कर) प्रेरित करें. उगली पकड़ कर चलाए. दोनो हाथो से पकड कर झूले की तरह झुला दें. एकाध बार सावधानी पूर्वक ऊपर भी उछाल सकते हैं. बच्चा ठीक से चलने लगे तो उसे कुछ तेज चलाने व फिर दौडाने का अभ्यास कराएं. पर प्रारंभ मे इतना ही कि बच्चा थके नही और यह व्यायाम उसके लिए भारी न पड़ जाए. धीरे-धीरे समय व दूरी की सीमा बढ़ाई जा सकती है.

मालिश : एक अच्छा व्यायाम

नन्हें शिशु से लेकर हर आयु के बच्चों को स्नान से पूर्व मालिश करते समय अच्छा व्यायाम कराया जा सकता है. मालिश की गति निचले हिस्सों में नीचे से ऊपर व हृदय से ऊपरी भागों मे ऊपर से नीचे की ओर रहनी चाहिए. फिर मालिश के बाद शिशु की टांगों-बांहों को पकड़ कर थोड़ा ऊपर, नीचे, दाएं, बाएं घुमाते हुए इन्हें व्यायाम दिया जा सकता है. इस तरह व्यायाम देने के एकदम बाद नहीं, थोड़ी देर बाद स्नान कराएं. शिशु प्रसन्न व स्फूर्त रहेगा और खूब आराम से सोएगा.

बड़े बच्चों को खेल-खेल में ही काफी व्यायाम मिल जाता है. उन्हें जी-भर खेलने दें व दौड़-भाग के खेलों के लिए भी प्रोत्साहित करें. पर विधिवत् व्यायाम के लिए उन्हे मालिश के बाद हलके व्यायाम व फिर स्नान की नियमित आदत डालने, खुली हवा में लंबी सांस लेने का तरीका सिखाने, सैर के समय थोड़ा दौड़ाने मे अभिभावक उन्हे मदद करें तो वे इसके अभ्यस्त हो सकेंगे.

मुख्य लाभ

व्यायाम से बच्चों की मांस-पेशिया सुदृढ़ होंगी. उनका कद बढ़ेगा. शरीर पुष्ट होगा. रक्त-सचार ठीक रहेगा तो वे स्वस्थ रहेंगे. उनके अग प्रत्यंग को पोषण प्राप्त होगा. उनका पाचन ठीक रहेगा और वे पूरी खुराक ले सकेंगे. इसके अलावा वे मानसिक रूप से भी सुदृढ बनेंगे. सुस्त और डरपोक नही रहेंगे. चुस्त, साहसी और आत्म-विश्वासी बनेंगे.

आत्मनिर्भरता और व्यायाम

इसके लिए यह भी जरूरी है कि बच्चों को उनकी आयु व सामर्थ्य भर काम करने दिए जाएं. यदि बच्चा कोई चीज स्वयं उठाना चाहता है तो उसे उसकी शक्ति भर बोझ उठाने दें. अपनी शक्ति से कुछ अधिक भी वह प्रयत्न करता है तो उसे ठीक ढंग से संतुलन साधना सिखाए, अनुचित ढंग से मना न करें. जो काम बच्चा स्वयं कर सकता है, स्वयं करने के लिए प्रोत्साहित करें. यदि गलत करता है तो आपका काम सही ढंग बताना होना चाहिए.

इस तरह अपना काम स्वय करने और घर के छोटे-मोटे कामों मे मदद करने से बच्चा पुष्ट, साहसी, आत्म-निर्भर व आत्मविश्वासी बनेगा, जोकि स्वस्थ विकास व सफल जीवन के लिए उसे बनना चाहिए.



बैठने वाले बच्चों को घुटनों के बल चलाने लिए थोड़ी दूर पर खिलौना आदि रखें

14

दांतों की देखभाल व सुरक्षा

[लेडी हार्डिंग अस्पताल के दंत-रोग विभाग की अध्यक्ष व वरिष्ठ दंत-चिकित्सक डा० दया सघल से भेंट पर आधारित]



दात शरीर का एक महत्वपूर्ण अग है, जिनका सबध केवल भोजन चबाने से ही नही, ये शब्दो के ठीक उच्चारण और चेहरे के आकर्षण के लिए भी जरूरी है. दातो के स्वास्थ्य का शरीर के सामान्य स्वास्थ्य से भी गहरा सबध है, क्योंकि दातों की खराबिया भी कई बीमारियो का कारण होती हैं दातो का रग साफ न हो, उनकी बनावट ठीक न हो तो दातो के कार्य मे चाहे रुकावट न आए, इससे 'मोती जैसे दातों' की मुस्कराहट या खिलखिलाहट में बाधा आएगी ही. यह बाधा व्यक्ति मे आत्महीनता की भावना पैदा करती है अत अप्रत्यक्ष रूप मे सुदर-असुदर दातो का मानसिक स्वास्थ्य से भी सबध है

प्राकृतिक वरदान से भारत के बच्चो मे पाश्चात्य देशो की तरह दातो की बीमारिया अधिक नही है लेकिन एक ओर ग्रामीण व निम्न वर्गों मे कुपोषणजन्य स्थितिया दातो की खराबी के लिए उत्तरदायी है, तो दूसरी ओर शहरी समृद्ध लोगो मे पाश्चात्य ढग का खान-पान बढ़ने से यहा भी पश्चिमी देशो की तरह दातो की बीमारी बढ़ गई है. आइस-क्रीम, टाफी, डिब्बा बद खाद्य पदार्थों, नरम व तरल चीजों और 'एन्टीबायोटिक' दवाओ का प्रचलन बढ़ना इसका एक मुख्य कारण है.

लीजिए, शैशव मे ही जीवन भर के लिए दांतो की सभाल व सुरक्षा के लिए राजधानी के सुप्रसिद्ध लेडी हार्डिंग अस्पताल की दत-विशेषज्ञ डा० दया सघल भेंट पर आधारित उपयोगी सुझाव यहा प्रस्तुत है :

गर्भावस्था में दांतों की सुरक्षा

गर्भकाल मे मा के आहार का आने वाले बच्चे के दातो पर गहरा असर पड़ता है. दांत बनने की प्रक्रिया गर्भावस्था के छठे सप्ताह मे ही शुरू हो जाती है. गर्भावस्था के चौथे

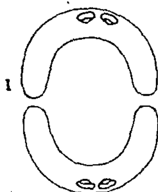
पहले दो दांत

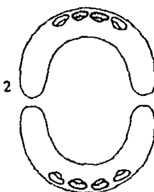
महीने से दांत के सख्त भाग का बनना भी आरंभ हो जाता है इसलिए शिशु के दांतों को सुंदर व मजबूत बनाने के लिए मां को गर्भकाल से ही कैलशियम, क्लोराइड, विटामिन 'सी' और 'डी' युक्त पौष्टिक व संतुलित भोजन की आवश्यकता होती है. स्थायी दांत भी दूध के दांतों के नीचे गर्भकाल से ही बनने शुरू हो जाते हैं अतः यह धारणा गलत है कि बच्चे को बाद में कैलशियम व विटामिन 'सी'-'डी' देकर दांतों की बनावट की कमी-पूर्ति हो सकती है. गर्भकाल में इन तत्त्वों की कमी से मां के स्वास्थ्य को काफी हानि पहुंचती है और इस कमी से शिशु भी प्रभावित हुए बिना नही रहता. प्रारंभिक बनावट में इन तत्त्वों की कमी से जो त्रुटि रह जाती है, उससे बाद मे शिशु के दांतो में कीड़ा लगने की संभावना बढ जाती है.

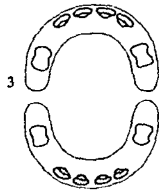
इसके अलावा मां को 'जरमन मीज़ल्स' निकलने, किसी समय तेज बुखार होने या 'टैट्रासाइक्लिन ग्रुप' की दवाएं लेने से शिशु के दांतों मे विकृति और पीलापन आ जाता है. इसलिए जहां तक संभव हो, गर्भवती को इन स्थितियो से बचाना चाहिए और बिना कुशल चिकित्सक की राय के 'टैट्रासाइक्लिन समूह' की दवाएं नहीं लेनी चाहिएं. इन दवाओं से प्रारंभिक दूध के दांत ही नहीं, उनके पीछे आने वाले स्थायी दांत भी प्रभावित होकर कमजोर व पीले हो जाते हैं.

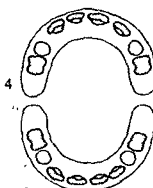
यदि गर्भकाल में ये सावधानियां बरती जाए और मा के पोषण पर पूरा ध्यान दिया जाए तो शिशुओ को दांतो की प्रारंभिक त्रुटियों से बचाया जा सकता है.

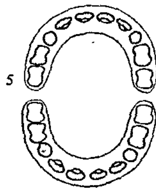
शिशु के दांत निकलने का क्रम व समय











1. नीचे के जबड़े के मध्य के दो दांत (केन्द्रीय कृन्तक) पांच से सात माह

ऊपर के जबड़े के मध्य के दो दांत : सात से नौ मास

2. ऊपरी जबड़े के दो ग्रौर दांत (पार्श्व कृन्तक) : नौ से ग्यारह माह

निचले जबड़े के दो ग्रन्य दांत (पार्श्व कृन्तक): 12 से 14 माह

3. ऊपरी जबड़े का प्रथम चर्वणक (चबाने वाला दांत) 12 से 14 माह

निचले जबड़े का चर्वणक : 12 से 16 माह तक

4. ऊपरी व निचले जबड़े के रदनक (काटने वाले दांत) : 16 से 20 माह की ग्रायु तक

5. निचले जबड़े का द्वितीय चर्वणक (चबाने वाला दांत): 20 से 28 माह तक

ऊपरी जबड़े का द्वितीय चर्वणक : 20-30 माह तक

दांत निकलने का समय

शिशु में दांत निकलने की प्रक्रिया पांच और सात महीने के बीच कभी भी प्रारंभ हो सकती है. सामान्यतः छः महीने की आयु में नीचे वाले जबडे के अगले दो दांत सबसे पहले निकलते हैं. इसके एक-डेढ़ माह बाद नीचे के सामने वाले दो और दांत और ऊपरी जबड़े में सामने वाले दो दांत निकल आते हैं. नौ महीने की आयु मे शिशु के मुंह में ऊपर व नीचे सामने के चार-चार दांत हो जाते है. दूध के दांत निकलने की क्रिया दो वर्ष तक पूरी हो जाती है और बच्चे के मुह में दूध के बीस दांत आ जाते हैं. कुछ बच्चों मे यहां बताए गए समय में थोड़ा हेर-फेर सभव है जो चिंता की बात नही.

यदि प्रारंभिक दो दांत नीचे के बजाए ऊपरी जबडे में पहले आए तो यह खराबी नही, इसलिए इसमे घबराने या चिंता करने की कोई बात नही. अपवाद रूप मे किसी-किसी शिशु के जन्म के समय भी एक-दो दात निकले हुए रहते हैं. यह भी कोई चिंता करने की बात नही है. पर ये दात जल्दी निकलवा देने चाहिए. कई बार ये दात ढीले होते है तो इनके अचानक टूटकर गले या फेफड़े मे चले जाने का भय रहता है. यदि ये टूट कर न गिरें तो भी इनके रहने से कठिनाइयां आ सकती हैं. जैसे; बच्चा अपनी जीभ काट सकता है. दूध पीते समय उसके मसूडे छिल सकते है. मां के स्तन पर दात गड़ने से वहां घाव बन सकता है. अत. ये दांत इस तरह की परेशानिया पैदा करें या टूट कर गले मे फसें, इसके बजाए बिना हिचकिचाहट या घबराहट के उन्हे निकलवा देना ही ठीक होगा.

दांत निकलते समय होने वाले रोग

दांत निकलते समय बच्चे को मसूढ़ों मे दर्द व सूजन से कुछ परेशानी अवश्य होती है, जिससे वह सिर पटकता है. जबड़े भीचता है व चिड़चिड़ा-सा हो जाता है. पर दात निकलते समय दस्त, उल्टी, बुखार आना, आंख दुखना आदि रोग दात आने के लक्षण नही, उस समय बच्चे को ठीक से न सभालने पर अस्वच्छताजनित संक्रमण से लगने वाले रोग हैं. बहुत सी माताओं मे यह धारणा पाई जाती है कि बच्चा दांत निकाल रहा है तो बीमार होगा ही. पर यह धारणा गलत है और इस पूर्वाग्रह के कारण बच्चे की चिकित्सा न कराना और भी गलत है. कई बार बच्चे इसी कारण भयंकर रोगों के शिकार हो जाते हैं.

दरअसल जिस आयु में बच्चा दांत निकालता है, उसी अवधि में यह बैठने लगता है, बाहर भी आने-जाने लगता है और जमीन से हर चीज उठाकर मुंह में डालने लगता है. ऐसे समय उसे ठीक पोषण न मिलने और ठीक सफाई न रखने के ये दो कारण जब परस्पर मिल जाते हैं तो बच्चा इन बीमारियों का शिकार हो जाता है. अतः दस्तों का संबंध दांतों से नही, गंदी चीज उठाकर मुंह मे रखने से है. इसी तरह आंख दुखने का संबंध भी दांतो से नही, गंदगी भरे हाथ आंखों पर लगाने से है. ऐसे समय शिशु मे रोग-निरोधक शक्ति कम हो जाने के कारण चूसनी, खिलौना या हाथ बिना धोए मुंह मे डालने से बच्चा संक्रमण का जल्दी शिकार होता है. इससे दांत निकलते समय तो तकलीफ बढ़ती ही है, बच्चा अन्य रोगों का शिकार भी हो सकता है. इसलिए इस अवधि में स्वच्छता-सफाई व पोषण पर अतिरिक्त ध्यान देने की आवश्यकता है.

माताओं का सहयोग

बच्चा बिना अधिक कष्ट के सुविधा से दात निकाल सके, इसके लिए माताओं को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए :

मसूढ़ों मे दर्द व खुजली होने से बच्चा मा के स्तन को और किसी भी चीज को काटना चाहता है, उसे काटने के लिए मूली-गाजर का टुकड़ा, थोडा सख्त फल, रोटी का टुकडा, इसके लिए ही बाजार में मिलने वाली रबड़ की एक विशेष चूसनी या बिना रंग का मुलायम लकड़ी का खिलौना आदि दें. दी जाने वाली ये वस्तुएं इतनी बड़ी न हों कि बच्चा उन्हें मुंह मे न डाल सके और इतनी छोटी भी न हों कि बच्चा उसे निगल सके. प्लास्टिक, रबड या लकड़ी के ये छोटे खिलौने बिना रग के या पक्के रग के और गोल किनारी वाले होने चाहिए, ताकि वे बच्चे की काटने, चबाने की इच्छा तो पूरी करें, पर चुभने वाले किनारो या उतरने वाले रंगों से उन्हें हानि न पहुचाएं. इसके अलावा, ये वस्तुएं और खाने के लिए दिए जाने वाले फल, मूली, गाजर आदि उन्हें अच्छी तरह धोकर स्वच्छ रूप मे देना चाहिए. बच्चे के हाथ भी बार-बार धुलाते रहना चाहिए.

इस तरह बच्चे को गंदगी से बचाने पर संक्रमण से बचाया जा सकता है. मां के दूध की बजाए बोतल का दूध पीने वाले बच्चो के साथ स्वच्छता का ध्यान रखने की और भी अधिक जरूरत होती है. बोतल से दूध पिलाने से पहले हर बार बोतल, उसके ढक्कन व निपल को पानी से खूब

अच्छी तरह धोकर, काफी देर तक पानी में उबाल ले ना चाहिए. संक्रमण लगने के भय से बच्चों को कोई चीज चबाने से रोकना ठीक नही. चबाने की क्रिया से विशेष रूप से मूली, गाजर, फल, रोटी आदि काटने की क्रिया से दांत जल्दी निकलेंगे, खाना चबाए बिना निगलने से बच्चे का पेट खराब हो सकता है.

स्थायी दांत

सामान्यतः छः-सात साल की आयु में दूध के दांत गिरने लगते हैं और उनकी जगह स्थायी दांत आने लगते है. इन दांतों के आने की अवधि या क्रम सभी बच्चों मे एक जैसा नहीं होता. पर यह निश्चित है कि दूध के दांतों के नीचे ही पक्के दांत बनने शुरू हो जाते हैं. अतः इस समय भी बच्चे को सही पोषण देने व गंदगी-संक्रमण से बचाने की उसी तरह जरूरत होती है. बच्चे को दूध, दही, अंडा, पनीर आदि प्रोटीन, कैलशियम, विटामिन युक्त भोजन दें. धूप विटामिन 'डी' प्राप्ति का सबसे सस्ता उपाय है. यह विटामिन ही कैलशियम को पचाने में मदद करता है, कैलशियम जो हड्डियों और दांतों के निर्माण मे सर्वाधिक सहायक है.

स्थायी दांतों की यह प्रक्रिया छः वर्ष से लेकर 12-14 वर्ष की आयु तक चलती है और यही उमर शारीरिक-विकास और स्वास्थ्य-निर्माण की भी होती है. इसलिए दांतों की सही बनावट, उनकी मजबूती व दंत रोगों से बचाव के लिए स्वच्छता और पोषण पर दिया गया ध्यान बच्चे के सामान्य स्वास्थ्य व विकास में भी सहायक होगा.

चौदह वर्ष की आयु तक दूध के 20 दांत, 28 स्थायी दांतों मे बदल जाते है. इसके बाद तो अंतिम चार दाढ़ें, (जिन्हें अक्ल-दाढ़ें भी कहते हैं) ही शेष रह जाती हैं. इनके निकलने का समय 18 से 25-26 वर्ष की आयु तक कभी भी हो सकता है.

दांतों की सुरक्षा

सुरक्षा का पहला कदम तो गर्भ-काल में दांतों की सुरक्षा का ही है, ताकि दांत सही बनावट में, सुंदर व मजबूत आएं, क्योंकि यहां कमी रह जाने पर फिर न मां उस कमी पूर्ति के लिए कुछ कर सकती है न विटामिन-कैलशियम ही. फिर भी दांत निकलते समय यदि दांत ठीक नही आ रहे हैं तो इस संबंध मे दंत-चिकित्सक की सलाह लेनी चाहिए. वह उन्हें सही जगह लाने में मदद कर सकता है. पर बनावट में सुधार या मरम्मत का यह काम स्थायी दांतों में ही हो सकता है, दूध के दांतों में नहीं. दूध के दांत व स्थायी दांत सही आएं और साफ, सुंदर, नीरोग रहे, इसके लिए उपर्युक्त बताए स्वच्छता व पोषण संबंधी उपाय काम मे लाने के साथ निम्न बातों पर भी ध्यान दें :



बचपन से ही बच्चे को प्रतिदिन दोनों समय ब्रुश करने की आदत डालें

सफाई

जैसे ही दांत निकल आएं, उनकी सफाई का कार्यक्रम प्रारंभ कर देना चाहिए, विशेष रूप से दाढ़ें निकल आने के बाद अवश्य ही. फिर यह सफाई मुलायम ब्रुश पर टुथपेस्ट लगाकर हो, उंगली से हो या दातुन से. बच्चों के लिए टुथपेस्ट 'फ्लोराइड' युक्त होनी चाहिए. उंगली से मंजन करते समय कोयले या मिट्टी की बजाए उपले की राख अच्छी रहती है. पर इसे अच्छी तरह छान लें व इसमें बारीक पिसा नमक मिलाएं.

सफाई का यह काम सुबह, रात को सोते समय व खाना खाने के बाद होना चाहिए. पर इतना न कर सकें तो रात को सुलाने से पहले बच्चे का अवश्य मुंह साफ करके सुलाएं. सुबह की सफाई से रात की इस सफाई का अधिक महत्त्व है, माताओ को ही यह बात याद रखनी है. बच्चा तो न जानता है, न याद रख पाता है, जब तक कि उसे इसकी नियमित आदत न डाली जाए.



कोई विशेष समस्या न हो तब भी हर छठे महीने
दांतों की जांच करवाते रहना चाहिए

कीड़े से बचाव

दात मे कीडा लगने के तीन ही मुख्य कारण होते है : जन्मजात कमजोरी, कुपोषणजन्य रोग निरोधक शक्ति-हीनता और मीठे खाद्य पदार्थों का दातो मे चिपका रहना. वढने वाले बच्चे को कारबोहाइड्रेट, प्रोटीन, जैसे पोषक-तत्वो की बडो की अपेक्षा ज्यादा जरूरत होती है. अत. अपेक्षित शक्ति के लिए मीठा दूध, दलिया, खीर आदि तो देना जरूरी है पर उन्हे दानों मे चिपकने वाली मीठी चीजो की अधिक आदत नही लगानी चाहिए. वे बच्चे है तो समय-समय पर मिठाई, चीनी, गुड, खजूर, टाफी आदि खाएगे ही, ऐसे समय उन्हे एक सीमित मात्रा मे ये चीजें खाने से रोकने की नही, खाने के बाद उनके दातो की सफाई पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है.

चिपकने वाली इन मीठी चीजों के कण दातों में रह-कर जब सडने लगते है तो दातो मे कीड़ा लगने की सभावना वढ जाती है. इसलिए जब भी वे इस तरह की मीठी चीजें खाए, उसके शीघ्र वाद उन्हे अच्छी तरह कुल्ला करा दें या वच्चा बहुत छोटा है तो उसे थोडी देर वाद पानी पिला दें मीठी चीज खाने के वाद (या कोई भी चीज खाने के वाद) वच्चे को दातो मे काटकर खाने वाला फल खिलाए तो भी दात साफ हो जाएगे. इसलिए वच्चो, वड़ो सभी को मिठाई खाना खाने के मध्य मे और फल भोजन के वाद खाने की आदत डालनी चाहिए.

दूध के दातो मे कीड़ा पक्के दातो की अपेक्षा जल्दी लगता है. दूध के दातो मे कीडा लग जाने पर अक्सर मा-वाप सोचते है, ये तो गिर ही जाने है, इनका क्या इलाज कराना ? अत उन पर ध्यान नही देते, जो एक वडी भूल है यदि निर्धारित समय से पहले दूध के दात गिर जाए तो इसका पक्के दातो पर बुरा असर पड़ता है. दूध के दातो का एक मुख्य कार्य पक्के दांतो के लिए उपयुक्त स्थान बनाना भी है. इनके समय-पूर्व गिर जाने पर पक्के दात टेढे-मेढ़े आ सकते हैं इसलिए ऐसी स्थिति मे दंत-चिकि-त्सक से परामर्श करना चाहिए.

वच्चे को अधिक गरम चीजे और अधिक ठडी चीजें भी न दें. गरम पदार्थ हल्के गरम हों और शीतल-पेय गरमी के दिनो मे भी वर्फ डालकर नही, वर्फ मे कुछ ठडे करके दिए जाए. अधिक कुल्फी, आईसक्रीम खिलाने मे वच्चो के दातो को हानि होगी. उनका गला भी खराव हो सकता है. अतः वर्फ और वर्फ वाली चीजो का प्रयोग कम से कम करने की आदत डालें. यदि वच्चा जिद करे तो उसे आइस-क्रीम आदि ठडी चीजों को थोडी देर रखने के वाद खाने के वारे मे समझाएं. उसे वताएं कि अधिक ठडी चीजो से उसके दात खराव होगे और वह असुदर लगेगा या उसे दात ठीक कराने डाक्टर के पास जाना पडेगा.

इसी तरह अधिक खटाई, एसिड वाली चीजों से दातों का एनेमल जल्दी उतरता है. अतः इन चीजो का प्रयोग भी कम करके वच्चे को प्रारभ मे ही सतुलित व पौष्टिक भोजन लेने को प्रेरित करना चाहिए.

टैट्रासाइक्लिन जैसी दवाओ मे या कभी तीव्र बुखार जैसे कारणो मे भी दातो पर दुष्प्रभाव पडता है. इसलि बुखार वढने पर उसे कम करने का उपाय करना चाहि टैट्रासाइक्लिन जैसी दवाए बिना कुशल डाक्टरी निर्देशन स्वयं नही देनी चाहिए.



बच्चे आइसक्रीम कैंडी आदि चाव से खाते हैं, लेकिन इनका अधिक प्रयोग दांतों को नुकसान पहुंचाता है

दांतों की कोई समस्या न हो, तब भी यदि हर छठे महीने दंत-चिकित्सक से दांतों की जांच कराते रहें तो कीड़ा लगने में पूर्व-बचाव हो सकता है और पक्के दांतों को ठीक स्थिति में लाया जा सकता है. बेढंगे दांत आ जाने या उनमें कीड़ा लगने के बाद तो फिर सुधार का नहीं, मरम्मत का काम ही शेष रह जाता है. इसलिए चिकित्सा की बजाए पूर्व सावधानी के लिए समय-समय पर यह जांच अधिक उपयोगी होगी.

कुछ अन्य सावधानियां

यदि प्रारंभिक दांत दस महीने तक न आए, उनका रंग काला, पीला हो, उनका आकार ठीक न हो, तो इन स्थितियों में विशेष सावधानी की जरूरत है. जल्दी ही डाक्टरी जांच करा लेना चाहिए.

शिशु को लगातार चूसनी या अंगूठा चूसने की आदत से भी बचाना चाहिए ताकि दांतों, जबड़ों की बनावट में फर्क न आए.

दुर्घटनाओं की टूट-फूट से दांत हिल जाएं, टूट जाएं, काले पड़ जाएं या उनमें पस पड़ जाए तो तुरंत डाक्टरी सहायता लें. यदि दंत-चिकित्सक समीप न हो तो सामान्य डाक्टर भी समय पर प्रारंभिक सहायता कर सकता है.

* छोटी उम्र से ही बच्चों को दांतों की उचित सफाई व देखभाल करना सिखाएं.
* तीन वर्ष की आयु के बाद उन्हें, सुबह और रात को सोने से पहले ब्रुश करने की आदत डालें. आरंभ में बेबी ब्रुश [illegible] का सही तरीका सिखाएं.
* हर [illegible]
* मिट [illegible]
* रात को ब्रुश करने के बाद कुछ मीठा खाने या पीने को न दें.
* बच्चों को अधिक ठंडी बरफयुक्त चीजें न खाने दें. न अधिक गरम-गरम खाने के बाद ठंडा या ठंडे पदार्थ के एकदम बाद गरम चीज खाने को दें.
* हर छठे महीने दंत चिकित्सक से दांतों की जांच करवाते रहें.



15

आंखों की देखभाल



[राजधानी के एक वरिष्ठ नेत्र-विशेषज्ञ डा. आर. के. भुटानी से साक्षात्कार पर आधारित]

'आखो से बड़ी कोई नियामत नही'—यह उक्ति व्यावहारिक अनुभव से उपजी है, क्योंकि आंखें शरीर का ही नही, हमारे जीवन का भी महत्वपूर्ण अंग हैं.

आंखो की देखभाल मे त्रुटिया मामूली बीमारियो से ले कर अंधता तक जाती है. स्वास्थ्य व चिकित्सा विज्ञान मे इतनी प्रगति के बावजूद भारत मे प्रति वर्ष हजारो व्यक्ति नेत्र-ज्योति हीनता के शिकार होते हैं. एक अनुमान के अनुसार हमारा देश अंध-कल्याण-कार्यक्रम पर जितना खर्च करता है, उसका दसवा भाग भी अंधता-निवारण कार्यक्रम पर खर्च करे तो राष्ट्र की बहुमूल्य शक्ति के इस अपव्यय का तीन-चौथाई भाग बचाया जा सकता है.

घरेलू स्तर पर तो माताओ को नेत्र-सुरक्षा कार्यक्रम पर कुछ भी खर्च करने की आवश्यकता नही. जरूरत है केवल पूर्वाग्रहों व रूढ़ियो से मुक्त हो नवीन जानकारियों के प्रकाश में देखने की. बच्चो की नेत्र-सुरक्षा जैसे महत्वपूर्ण विषय मे लापरवाही की बजाए थोड़ी सावधानी बरतने की. और आंखो की किसी गडबडी या बीमारी मे तुरंत चिकित्सा पर ध्यान देने की, ताकि सामयिक सतर्कता से आखो को किसी बडी हानि से बचाया जा सके.

इसके लिए जरूरी है, माताओं का प्रशिक्षण. लीजिए, राजधानी की एक वरिष्ठ नेत्र-विशेषज्ञ डा. आर. के. भुटानी के उपयोगी सुझाव यहा प्रस्तुत हैं :

गर्भकाल में नेत्र-सुरक्षा

बच्चे की आखों की सुरक्षा का घरेलू कार्यक्रम उसकी गर्भस्थ स्थिति से ही प्रारभ हो जाता है, क्योंकि गर्भवती मां के खानपान का इस पर असर पडता है. विशेष रूप से गर्भ के प्रारंभिक पांच महीने तक यदि मा को पर्याप्त विटामिन 'ए', प्रोटीन, खनिज, लवण युक्त पौष्टिक भोजन न मिले तो अन्य हानियों के साथ गर्भस्थ शिशु की आखो को भी हानि पहुच सकती है. इसके अलावा, गर्भवती को यौन-रोग हो तो समय पर उसकी जाच व चिकित्सा करानी चाहिए, अन्यथा बच्चे की नेत्र-ज्योति भी नष्ट हो सकती है.

गर्भकाल में कोई भी बीमारी आए, बिना कुशल चिकित्सक से परामर्श किए स्वयं कोई एंटीबायोटिक दवा, कुनीन आदि नही लेनी चाहिए. (इस संबंध मे 'गर्भकाल मे सुरक्षा' वाले प्रारंभिक अध्याय मे डा. एस. वोहरा के सामान्य निर्देश भी देखें.)

नवजात शिशु की नेत्र-सुरक्षा

डा. भुटानी के अनुसार, आम तौर पर नवजात शिशु की आंखो मे प्रथम सप्ताह मे पानी नही आता. यदि पहले दो दिनो में शिशु की आंखों मे पानी व गीद है तो यह जन्म के समय आंखो में गंदगी चले जाने से लगे संक्रमण के कारण हो सकती है. इसके लिए जन्म के शीघ्र बाद शिशु की आखों की भली-भांति सफाई होनी चाहिए (देखिए, 'नवजात शिशु की देखभाल' अध्याय) और ऐसी समस्या सामने आने पर तुरंत नेत्र-विशेषज्ञ से परामर्श करना चाहिए.

यदि शिशु की आख से केवल पानी निकलता है और इसमे निरंतरता रहती है तो इसका मतलब नाक और आख के बीच के मार्ग का अवरुद्ध होना हो सकता है, जो एक गंभीर बात है. डाक्टरी राय से इस त्रुटि में सुधार के लिए तीन से छः महीने की आयु के बीच एक छोटे से आपरेशन की जरूरत हो सकती है. अतः नेत्र-विशेषज्ञ की सलाह से ही चलें.

सामान्य देखभाल

शिशु की आखो की सामान्य देखभाल व सुरक्षा के लिए माताओं को नेत्र-विशेषज्ञ के निम्न सुझावो पर ध्यान देना चाहिए :

छोटे शिशु का मामूली भेंगापन छह-आठ महीने की आयु तक ठीक न हो तो जांच करानी चाहिए



□ यह धारणा गलत है कि काजल, सुरमा डालने से शिशु की आंखें मोटी होंगी, सुरक्षा की दृष्टि से भी इनका कोई लाभ नहीं है. हां, सफाई-नियमों का पालन न करने से इससे आंखों को संक्रमण (इंफेक्शन) लगने का भय जरूर रहेगा. संक्रमण से बचाव के लिए काजल, सुरमा न डालने में ही भलाई है.

□ शिशु के नाखून बढ़ने पर काट दें जिससे वह आंख में घाव कर उसे हानि न पहुंचाए.

□ उसे चुभने वाले नुकीले खिलौने देने से भी आंखों में चोट लगने का भय रहता है. इसलिए शिशु को हमेशा गोलाइयों वाले बिना रंग के या पक्के रंग के खिलौने ही दें व उन्हें धोकर स्वच्छ करके दें. विशेष रूप से जब बच्चा दांत निकाल रहा हो या घुटनों के बल चल कर हर चीज नीचे से उठाकर आंखों से लगा लेता हो या मुंह में डाल लेता हो. दांत निकलते समय आंखें दुखने का संबंध, गंदगी से लगने वाले संक्रमण से ही होता है. अतः यह सावधानी बरतनी आवश्यक है.

□ घर में पालतू पशु-पक्षी हो तो उनकी खुराक साफ करते समय उड़ने वाले कणों से भी शिशु की आंखों को हानि पहुंच सकती है. इसी तरह पक्षी के परों व जानवर के रोएं से भी. इनसे बचाव के लिए सावधानी बरतनी चाहिए.

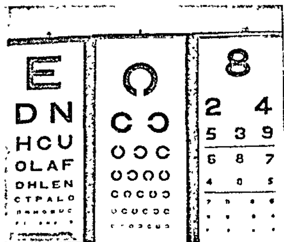
□ घर में सफाई करते समय भी शिशु की आंखों को धूल-मिट्टी से यथासंभव बचाएं. इसी तरह अंगीठी के धुएं से, बाहर ले जाते समय आंधी से, व रेलयात्रा के समय उड़ने वाले कोयला-कणों आदि से भी.

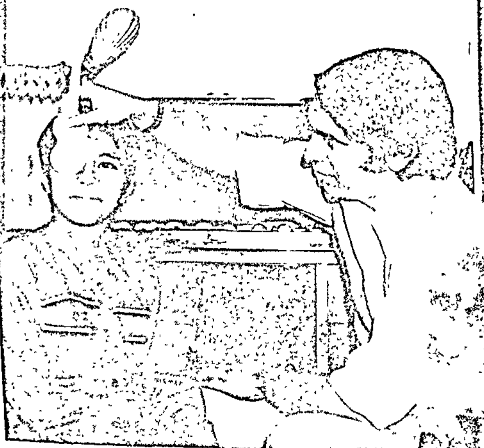
□ शिशु की आंख में काली की जगह सफेद पुतली दिखाई दे तो लापरवाही न करें, तुरन्त डाक्टर को दिखाएं यह मोतियाबिंद या कैंसर का लक्षण हो सकता है.

□ उसकी आंखें एक जगह स्थिर न रह कर हिलती रहती हों तो यह दिमागी कमजोरी या नजर की कमजोरी का लक्षण हो सकता है. नवजात शिशु में ऐसा होना संभव है. पर महीने-डेढ़ महीने बाद भी यह लक्षण रहे तो डाक्टरी जांच करानी चाहिए.

□ नवजात शिशु कई बार टेढ़ा देखते हैं. पर शिशु की आंख में यदि छः महीने की आयु के बाद भी भेंगापन दिखाई दे तो डाक्टरी परामर्श लेना चाहिए.

□ शिशु को अक्सर दस्तों का रोग होने पर कमजोरी बढ़ने से उसकी आंखों को हानि पहुंच सकती है. इसलिए उसके पोषण पर विशेष ध्यान देना चाहिए. पोषक-तत्वों की कमी होने पर डाक्टर की राय से विटामिन 'सी', 'ए' व प्रोटीन की उसके भोजन में अतिरिक्त व्यवस्था करनी चाहिए.





यदि बच्चा आंखों में पानी आने, धुंधला दीखने या पढ़ने के बाद सिरदर्द की शिकायत करे तो दृष्टि की तुरन्त जांच करवाएं···



··· और यदि डाक्टर चश्मे की सलाह दे तो चश्मा जरूर लगवाएं

□ शिशु की आंखों को किसी भी चोट, दुर्घटना व संक्रमण से बचाने के लिए माताओं को ही उन पर निगरानी रखनी होगी. घर में खेलते छोटे बच्चे का स्वयं ध्यान रखें. बड़े बच्चे को बाहर खेलने जाते समय आवश्यक निर्देश दें और उसके बाहर से आने पर उसके हाथ व आंखें दोनों धुलाएं.

आंखों में मामूली विकार आने पर

आंख में संक्रमण लगने पर लाली, खुजली, पानी, गीद हो तो स्वयं कोई दवा न डालें. केवल गरम पानी में बोरिक एसिड डालकर उससे साफ करें. अधिक कष्ट होने पर डाक्टर को दिखाएं.

आंख दुखने के कई कारण हो सकते हैं—बैक्टीरियल इंफेक्शन, ट्रिकोमा या कुकरे रोग, किसी अन्य रोगी व्यक्ति के रूमाल आदि के स्पर्श से लगा संक्रमण आदि. इसके लिए स्वच्छता-नियमों का पालन और डाक्टरी जांच व चिकित्सा जरूरी है.

आंख में फुंसिया (गुहेरियां) निकलने के कारण हैं: अस्वच्छता के कारण लगा संक्रमण, अनियमित व असंतुलित भोजन, शारीरिक कमजोरी, नजर की कमजोरी, मंद रोशनी में पढ़ना, गले की खराबी या बढ़े टांसिल्स आदि. बार-बार गुहेरियां निकलती हों तो डाक्टरी जांच कराएं.

आंख में कोई बाहरी वस्तु—कंकड़, तिनका, कोयला-कण आदि पड़ जाए तो बच्चा किसी भी उम्र का हो, लापरवाही ठीक नहीं होगी. नीचे झुक कर पलकें झपकाने से बड़े बच्चे उसे तुरंत बाहर निकाल सकते हैं. छोटे बच्चों को आंख मसलने न दें. पानी के छींटे मारने से फंसा कण न निकले तो उबली रुई की बत्ती से उसे निकालें, (रूमाल, साड़ी आदि से नहीं). फिर भी न निकले तो शीघ्र डाक्टरी सहायता लेनी चाहिए, अन्यथा देर हो जाने पर आंख को हानि हो सकती है.

सफर में धूल, कोयला-कणों से आंख के बचाव के लिए सामने की ओर न देखने व पीठ करके खिड़की के पास बैठने के लिए बच्चे को समझाएं. रसोईघर में खाना बनाते समय यदि शिशु गोद में या पास है तो उसकी आंखों को गरम घी-तेल के छींटों से बचाएं.

बड़े बच्चों को गुल्ली-डंडा खेलते समय, तीर-कमान चलाते समय आंखों की सुरक्षा के बारे में निर्देश दें. त्योहारों पर पटाखों से बच्चों का बचाव करें कि आंख किसी दुर्घटना से क्षतिग्रस्त न हो जाए. छोटे बच्चे इधर-उधर



खेलते समय गंदे हाथ आंखों पर मलने से भी संक्रमण का भय रहता है

चलते-घिसटते समय किसी भी चीज में हाथ मार कर उन्हीं हाथों से आंख मल लेते हैं. इसलिए मसाले आदि खुले न छोड़ें या ऐसे समय शिशुओं को उनसे बचाने पर ध्यान दें. इसी तरह टट्टी की गंदगी में हाथ मार कर आंख न मल लें, माताओं को इस ओर सतर्क रहना चाहिए.

होली पर गुब्बारे चलाते समय भी आंखों को बचाएं. टूटे कांच की किरचनों से बचाव के लिए विशेष सावधानी बरतनी चाहिए, क्योंकि आंख में कांच का कतरा जाने पर आंख घातक रूप से चोट खा सकती है. ऐसे समय जरा भी बिना विलंब किए डाक्टरी सलाह लेनी चाहिए.

कमजोर नजर

नवजात शिशु में दृष्टि कमजोर होती है, तीन मास की आयु तक बढ़ती है, फिर तीन से पांच-छः मास तक सामान्य हो जाती है. बच्चे में पैदायशी रूप से नजर कमजोर होने के पीछे वंशगत रोग, अपोषण आदि कारण होते हैं. यदि बच्चा दूर की वस्तु में रुचि न प्रदर्शित करे, नजदीक की वस्तु को बहुत समीप लाकर देखे या अक्सर ठोकर खाकर गिरे तो डाक्टरी जांच करा लेनी चाहिए. छोटे शिशु का मामूली भेंगापन छः-आठ महीने की आयु तक ठीक न हो या अधिक भेंगापन दिखाई दे तो भी जांच कराएं.

कई बार शैशव में नजर की कमजोरी का पता [illegible] चलता और अभिभावकों को [illegible] पता चलता है

पढ़ाई में पिछड़ने लगता है. इसलिए बच्चे की पढ़ाई की रिपोर्ट ठीक न हो तो अन्य कारणों के साथ यह भी जाच करें कि उसे ब्लैकबोर्ड पर लिखा दूर से दिखाई देता है कि नहीं? वह पढ़ने के बाद सिर दर्द की शिकायत करे या उसकी आंखों मे पढ़ते समय पानी आए तो दृष्टि की जाच करवाएं. यदि डाक्टर चश्मा लेने की राय दे तो बच्चे को बिना किसी हिचकिचाहट के जल्दी व जरूर चश्मा लगवा देना चाहिए. बच्चे को दृष्टि की अधिक हानि व अहित से बचाने के लिए यह बहुत जरूरी है.

बच्चो को तेज धूप से, पढते समय आंखों पर पड़ने वाली सीधी रोशनी से भी बचाए और उन्हें ठीक मुद्रा में बैठ कर पीछे से रोशनी लेने के बारे मे निर्देश दें.

अत मे यह भी कि आंखों मे पानी, खुजली, लाल-रेखा, जलन जैसे लक्षण देर तक चलें तो ये कुकरे आदि नेत्र-रोगों के लक्षण हो सकते हैं. इनका इलाज जल्दी न किया जाए तो बाद में रोग जटिल होने पर आखों को काफी हानि हो सकती है. इसलिए इस मामले में लापरवाही बरतना ठीक नहीं.

आंखों के बचावी-उपायों पर ध्यान देने के बाद भी यदि कोई ऐसी स्थिति आती है तो समय पर उचित चिकित्सा द्वारा भी आंखों को बचाने पर ध्यान देना चाहिए ताकि बाद में अंधता की सीमा तक भयंकर हानि न सहनी पड़े.

शरीर के इस महत्त्वपूर्ण, किंतु नाजुक अंग की सुरक्षा मे किसी प्रकार की कोताही करना ठीक नहीं होगा. ●

---

* स्वस्थ व नीरोग आंखों के लिए पोषक आहार व स्वच्छता पहली शर्त है.

* आंखों मे जलन, लाली, सूजन या कोई अन्य विकार होने पर डाक्टर से पूछे बिना कोई दवा आदि न डालें.

* बच्चो को बहुत तेज या बहुत धीमी रोशनी में न पढने दें. यह भी ध्यान रखें कि पढते समय रोशनी बगल से या पीछे से आए सामने से नहीं.

* लेटकर, किताब को बहुत दूर से या नजदीक लाकर, चलती बस, ट्रेन या कार मे पढने की आदत ठीक नहीं.

* टी० वी० देखते समय कमरे में पर्याप्त प्रकाश [illegible] जरूरी है लेकिन यह ध्यान रखें कि प्रकाश का [illegible] (रिफ्लैक्शन) टी० वी० स्क्रीन पर न पड़े.

* यदि घर मे किसी बड़े व्यक्ति की गुहेरियां [illegible] निकली हों तो छोटे बच्चे को उठाना ठीक नहीं.

* यदि बच्चा टी० वी० बहुत पास से देखता है [illegible] बहुत पास लाकर पढ़ता है, आखें जल्दी झपकाता [illegible] के बाद सिरदर्द की शिकायत करता है तो उसे तुरंत [illegible] के पास ले जाएं, उसे चश्मे की आवश्यकता हो [illegible]

16

नाक-कान-गले के रोग

[कान, नाक, गला विशेषज्ञ डा० राजेन्द्र कुमार भुटानी से साक्षात्कार पर आधारित]

जन्म के शीघ्र बाद शिशु जिन रोगों से प्रभावित हो सकता है, उनमें कान, नाक, गले की खराबिया मुख्य है. लेकिन थोड़ी सावधानी बरतने पर इनकी रोकथाम की जा सकती है.

जन्मजात खराबियों को आगे बढने से रोकना भी आवश्यक होता है. अतः माताओं की जानकारी के लिए संबंधित विषय के विशेषज्ञ डा० भुटानी के उपयोगी सुझाव यहा प्रस्तुत हैं : .

जन्मजात खराबियां

जन्म के बाद बच्चे के पास ताली बजाकर बच्चे की प्रतिक्रिया देखिए. अधिकांश बच्चे जल्दी ही प्रतिक्रिया प्रगट कर अपनी श्रवणशक्ति ठीक होने का आभास देते हैं. यदि दो-तीन महीने बाद भी बच्चा ऐसी प्रतिक्रिया न दिखाए तो डाक्टर को उसका कान दिखाना चाहिए. यदि कान मे कोई खराबी होगी तो समय पर उसका इलाज कर बच्चे को आगे चल कर होने वाले बहरेपन से बचाया जा सकेगा.

यदि बच्चा समय पर बोलना न सीखे तो भी डाक्टर को दिखाकर उसके कान का परीक्षण कराएं. यदि कान बहता है तब तो डाक्टरी परामर्श और भी जरूरी है. अक्सर माताएं इसे गंभीरता से नही लेती और घर पर ही उसका इलाज करती रहती है. जिससे बाद मे बच्चे को काफी हानि उठानी पड सकती है और वह गूंगा-बहरा हो सकता है. प्रायः कान बहने का कारण माताओ की लापरवाही ही होती है.



नाक, कान व गला एक भीतरी नली द्वारा आपस में जुड़े रहते हैं. इस नली का एक सिरा कान के परदे के पीछे मध्य भाग मे खुलता है व दूसरा सिरा गले के नासिका वाले भाग मे. नवजात शिशु में यह नली आनुपातिक रूप से कुछ चौड़ी होती है. यदि दूध पिलाते समय शिशु का सिर थोड़ा ऊंचा न उठाए तो बोतल द्वारा पिलाया गया दूध इस नली से होकर गले से कान मे चला जाता है और कुछ समय तक वहा सड़ने पर पीप बन कर कान से बहने लगता है.

स्तनपान कराते समय भी इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि दूध की बूंदें कान मे न गिरें, स्तनपान हमेशा बैठ कर ही कराए. कारणवश लेट कर दूध पिलाना पड़े तो इस बात का विशेष ध्यान रखे कि बच्चे का सिर नीचा न हो और दूध कान में न जाने पाए. बच्चा जब भी दूध निकाले या उलटी करे तो पहले उसका सिर उठा कर ऊंचा करें, फिर मुंह साफ करें, इसके बाद कपड़े बदलें.

कान की सफाई

कान साफ करते समय कभी भी भीतर सलाई आदि न डालें. न ही कान मे तेल डालना चाहिए. जब भी कान साफ करना हो, साफ रुई की काडी बना कर उससे कोमलता से साफ करें. या विशेष कठिनाई हो तो डाक्टर द्वारा साफ कराए. सलाई या बालों की सुई आदि डालने से बच्चे के कान की भीतरी नरम त्वचा पर जखम हो सकता है, जिससे आगे चल कर कान में खराबी पैदा हो सकती है.

कान मे मच्छर या कीड़ा चला जाए तो कान मे स्पिरिट की एक बूद डाल कर प्रवेश-द्वार पर रुई का फाहा लगा दें. कीड़ा या मच्छर तुरत मर जाएगा और कान के परदे को कोई हानि नहीं होगी. बाद में उसे डाक्टर से निकलवा दें. यदि यह मरा हुआ कीडा या अन्य कोई चीज कान के भीतर गहरी चली जाए, तब तो कभी भी स्वयं न निकालें. बच्चे को डाक्टर के पास ले जाएं. इसी तरह यदि बडा बच्चा कान मे सांय-सांय होने की शिकायत करे तो भी डाक्टर को दिखाना चाहिए.

कान के प्रमुख रोग

कान बहना

कान बहता हो तो नहलाते समय कान मे रुई का फाहा रख कर बच्चे को नहलाएं ताकि कान में पानी न जाने पाए. बहते हुए कान को कीटाणु रहित की गई साफ रुई से साफ करते रहना चाहिए और उसे रुई के फाहे से ढक कर रखना चाहिए. कान मे खून आना, कान के पीछे दर्द होना या कान से बदबूदार पीप आना, खतरे की निशानी है. ऐसे बच्चे को विशेषज्ञ को दिखाए, उसे आपरेशन की जरूरत हो सकती है.

कभी-कभी कान बहना बंद हो कर जरा सी असावधानी मे वह फिर बहना शुरू हो जाता है. यह स्थिति देर तक चलती रहे तो बच्चा गूंगा-बहरा हो सकता है. इसलिए कान बहता हो तो बच्चे को रोग के आरम्भ से ही डाक्टरी निर्देशन में रखना ठीक होगा. समय-समय पर कान के परीक्षण से रोग नियंत्रण में लाया जा सकेगा.

बहरापन

जन्म के शीघ्र बाद ही बच्चा सुनना आरंभ कर देता है. डेढ़-दो साल तक वह अपने आसपास की आवाजें सुनता है, फिर उन आवाजों की नकल पर बोलना सीख जाता है. इस अवधि में जरा भी संदेह हो कि बच्चा ठीक से नहीं सुन रहा है तो डाक्टर से परामर्श करें, क्योंकि बहरा शिशु बाद में गूंगा भी हो जाता है.

कई बार किसी जन्मजात खराबी से भी बच्चा बहरा हो सकता है. तब श्रवण-यंत्र (हियरिंग एड) लगाने से भी काम नहीं चलेगा. इसलिए गर्भकाल में 'एंटीबायोटिक' दवाओं तथा अन्य दर्दनाशक तेज दवाओं से परहेज रखना चाहिए और प्रसव किसी प्रशिक्षित नर्स, डाक्टर की देखरेख में या अस्पताल में कराना चाहिए ताकि प्रसवकालीन संक्रमण से बचाव हो सके. मां को 'जर्मन मीजल्स' निकल आने पर भी गर्भस्थ शिशु बहरा हो सकता है.

इन जन्मजात खराबियों के अलावा बहरेपन के अन्य कारण हैं : लगातार कान बहना और गले की खराबी— 'टांसिल्स' व 'एडीनायड्स' का बढना. इस संबंध में कान-नाक-गला विशेषज्ञ की राय से चलना चाहिए व समय पर इन रोगों की उचित चिकित्सा करनी चाहिए कि बच्चे को बहरेपन से बचाया जा सके.

नाक के रोग

जुकाम

यदि शिशु को जुकाम हो, वह नाक से सांस न ले पाए तो वह दूध पीते समय बार-बार मुंह खोल कर मुख से श्वास लेगा और ठीक से दूध नहीं पी पाएगा. इसलिए उसे सर्दी से बचाने का प्रयत्न करना चाहिए और नाक साफ करके,

उबाल कर ठंडा किया पानी,बराबर का मिला कर 'नोजल ड्राप्स' या बूंदों वाली दवा नाक में डालनी चाहिए ताकि नाक खुले व बच्चा दूध पी सके. परन्तु डाक्टर से पूछे बिना लंबे अनिश्चित समय तक इस दवा का प्रयोग करना ठीक न होगा.

बार-बार जुकाम होता हो तो वह केवल जुकाम तक सीमित नहीं रहेगा. साथ में गला भी खराब होगा और नाक बंद रहने पर बच्चा ठीक से दूध नहीं पी पाएगा तो वह भूखा रह कर अस्वस्थ हो जाएगा. आगे चलकर गंभीर कुपोषण व अन्य कई रोगों का शिकार भी हो सकता है. इस-लिए जुकाम बार-बार हो या लंबे समय तक ठीक न हो तो डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए. जुकाम का कारण सरदी लगना ही नहीं, नाक की भीतरी खराबी भी हो सकती है. किसी चीज से 'एलर्जी' भी और 'साइनस' रोग भी.

सरदी से बचाव के लिए बच्चे को अधिक कपड़ों से लादना या अधिक लपेटकर रखना ठीक नहीं. मौसम अनु-सार जरूरत भर कपड़े पहनाएं व सीधी हवा से बचाए—बस. सरदी में अधिक गरम कपड़ों से लपेट कर रखने से कपड़े उतारते, नहलाते समय, बच्चा ठंड सहन नहीं करेगा व उसे जुकाम हो जाएगा. इसी तरह बदलते मौसम में और बरसात में भीगने पर भी जुकाम होने का डर रहता है. जुकाम वाले व्यक्ति की सांस, छींक व रूमाल आदि के स्पर्श से भी बच्चे को जुकाम लग सकता है. अतः इन कारणों से, धूल-गर्द से तथा किसी चीज से 'एलर्जी' हो तो उससे बचाव पर ध्यान देना चाहिए.

कुछ सावधानियां

जन्म के बाद ध्यान से देखें, बच्चा नाक से सांस लेता है या मुंह से ? यदि वह लगातार मुंह से सांस लेता है और जुकाम के कारण या अन्य किसी कारण उसकी नाक बंद नहीं है तो समय-समय पर धीरे से उसके होंठ मिलाकर मुंह बंद करके देखें. यदि वह बिना कारण आदत-वश मुंह से सांस लेता है तो उसकी यह आदत ठीक हो जाएगी और वह सही ढंग से नाक से सांस लेना सीख जाएगा. यदि नहीं, तो नाक से सांस न ले पाने की खराबी का संदेह हो सकता है. तब उसकी डाक्टरी जांच करनी चाहिए ताकि यदि वास्तव में उसे नाक से सांस लेने में कठिनाई है तो समय पर उसका उपचार हो सके.

इस मामले में लापरवाही बरती जाए और बच्चा लगातार मुंह से सांस लेता रहे तो उसके दांत टेढ़े आ सकते हैं और वह बार-बार 'इन्फेक्शन' का शिकार हो सकता है.

जुकाम से बचाव : बच्चे को बार-बार जुकाम होता है तो उसे संतरे के रस के रूप में विटामिन 'सी' दें. जुकाम में संतरा नहीं देना है, यह धारणा गलत है. लेकिन रस ठंडा व खट्टा नहीं होना चाहिए. विटामिन 'सी' से उसकी रोग-निरोधक क्षमता बढ़ेगी. बच्चे को घुटन में न रख ताजी हवा में सैर कराएं. लंबी सांसें लेने की आदत डालें. ताजी खुली हवा से 'साइनस' रोग में भी आराम मिलता है बच्चे को सीधी ठंडी हवा या कूलर की हवा से ही बचाना है, हवा से नहीं.

जुकाम से बचाने के लिए बच्चे को धूल-गर्द व भीड़-भाड़ वाली जगह से भी बचाना चाहिए और किसी चीज से 'एलर्जी' का संदेह हो तो उससे भी.

कभी नाक में से बदबू आती लगे तो डाक्टर को दिखाएं. कई बार कोई बाहरी वस्तु नाक में अटक कर सड़ने लगती है तो यह बदबू उसी कारण से पैदा होती है. इस अटकी चीज को निकालना व नाक साफ करना डाक्टर का काम है. स्वयं कोई सलाई आदि डाल नाक साफ न करें.

नाक में कोई चीज, गुठली, बटन, मोती आदि फंस जाए तो भी स्वयं सलाई आदि से न निकालें. बच्चे को डाक्टर के पास ले जाएं. वह बच्चे को बेहोश किए बिना चंद मिनटों में नाक की सफाई कर देगा. नाक में सलाई डालना,नसवार सुंघाने से अधिक हानिकारक है.

नकसीर आने पर : नकसीर अधिकतर नाक को खुरचने से आती है, या गरमी के कारण. नाक में खुरंड जमते हैं और बच्चा उन्हें खुरच कर खून निकाल लेता है. बच्चे के नाखून काट दें. नाक खुरचने की आदत छुड़वाएं. उसे गरम चीजें देना कम कर दें. नकसीर आने पर बच्चे को सिर नीचा करके लिटाएं और नाक को चुटकी से दबा कर रखें. नाक और गले पर ठंडी पट्टी रखने से भी नकसीर रुकेगी. यदि न रुके तो डाक्टर को दिखाएं.

हड्डी बढ़ना

बच्चे को गिरने व चोट लगने से बचाएं. कभी-कभी ऊंचे स्थान से गिरने पर चोट के कारण नाक के दोनों छिद्रों के बीच की दीवार टेढ़ी होकर एक ओर का छिद्र अवरुद्ध कर लेती है, जिसे नाक की हड्डी बढ़ना कहते है. यदि चोट के बाद ऐसा दोष दिखाई दे तो भी डाक्टर की सलाह लेनी चाहिए. कभी-कभी अपने आप भी नाक की हड्डी बढ़ जाती है. इसका इलाज ठीक आयु में आप-



गले में दर्द, नाक से सांस लेने में कठिनाई आदि की शिकायत हो तो तुरंत डाक्टरी परीक्षण करवाएं

रेशन द्वारा ही हो सकता है. आपरेशन नाक के अन्दर से किया जाता है और बाहर निशान तक नहीं पड़ता.

गले के रोग

नवजात शिशु के गले से प्रायः घर्र-घर्र की आवाज निकलती है. इसके लिए चिंता करने की जरूरत नहीं. शैशव में गले की यह खराबी अस्थायी होती है, जो बच्चे के बड़े होते जाने पर अपने आप ठीक हो जाती है. पर ध्यान रखना चाहिए कि शिशु को अधिक गरम और अधिक ठंडा पेय न दिया जाए. दूध का तापमान अपनी हथेली पर रखकर देख लेना चाहिए.

गले के बचाव के लिए निम्न बातों पर भी ध्यान दें :

□ बच्चे को चूसनी देने या अंगूठा चूसने देने से भी उसका गला खराब होता है. आगे चलकर यह आदत 'टांसिल्स' बढ़ने का कारण बनती है. इसलिए जहां तक संभव हो, बच्चे को अंगूठा या चूसनी चूसने की आदत न डालें.

□ बच्चे को खिलौने देते समय ध्यान रखें कि वे चुभने वाले न हों. उनका रंग भी कच्चा न हो. कच्चे रंग के रंगीन खिलौने मुंह में डालने से बच्चे का गला व पेट दोनों खराब हो सकते हैं.

□ बच्चा सामान्यतः नाक से ही सांस लेता है. न ले तो उसे होंठ बंद कर नाक से सांस लेना सिखाना चाहिए, अन्यथा मुंह से सांस लेने पर बच्चा बार-बार छाती के रोगों का शिकार होगा और उसके दांत भी टेढ़े-मेढ़े आएंगे. बच्चा मुंह से ही सांस ले पाए तो उसे डाक्टर को दिखाएं. जन्म से भी उसके 'टांसिल्स' बढ़े हो सकते हैं या उसके 'एडीनायड्स' में खराबी हो सकती है.

तंदुआ गूंगेपन का कारण नहीं

तंदुआ या जीभ के नीचे का तार दिखाई दे तो कुछ बच्चों को इस कारण से कुछ खास शब्द, जो तालू से जीभ लगाकर बोले जाते हैं, बोलने में कठिनाई हो सकती है पर बच्चा इस कारण से गूंगा नहीं हो सकता. केवल गूंगापन

बहुत ही कम स्थितियों में होता है. शिशु प्रारंभ में केवल बहरा होता है. कान का शीघ्र इलाज न कराने से वह गूंगा भी हो जाता है, क्योंकि बच्चा शब्द सुनकर ही बोलना सीखता है. सुनेगा नहीं तो बोलेगा कैसे ? अत: इस बारे में डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए. कुछ मामलों में एक छोटे आपरेशन द्वारा यह खराबी सुधारी जा सकती है :

गूंगे-बहरे बच्चे

जन्म से बहरे शिशु को एक विशेष प्रक्रिया से बोलना सिखाया जाता है. इसे 'स्पीच थेरापी' कहते हैं. यह उपचार छः महीने से एक साल के बीच प्रारंभ कर देना चाहिए और चार-पांच वर्ष की उमर तक चलाते रहना चाहिए. इस तरह आगे चल कर कठिनाई नहीं रहेगी, अन्यथा बाद में पता चलने पर फिर बच्चे को मूक-बधिर स्कूल में भेज कर विशेष विधि से ही सिखाना-पढाना पड़ता है.

तुतलाना और हकलाना

तुतलाने और हकलाने का संबंध प्रायः जीभ और गले से नहीं, मस्तिष्क से होता है. लाड़ में आकर अक्सर माता-पिता बच्चे के साथ उसकी तोतली भाषा में ही देर तक बोलते रहते हैं, तो उस वातावरण से बच्चा वैसी ही आदत पकड़ लेता है. माताओं को चाहिए कि स्वयं भी बच्चे के साथ तोतला बोलने के बजाए बच्चे को शुद्ध भाषा का उच्चारण सिखाएं.

इसी तरह बड़े होकर हकलाने की आदत भी अधिकतर हीन भावना, सकोच या नर्वसनेस के कारण लगती है, जिसे निरंतर अभ्यास व आत्मविश्वास जुटा कर ही दूर किया जा सकता है. इस संबंध में विशेष समस्या होने पर मनश्चिकित्सक से भी परामर्श लेना चाहिए.

टांसिल्स और एडीनायड्स

शिशुओं में जन्म से जो 'टांसिल्स' बढ़े हुए दिखाई देते हैं, वे बच्चे के बड़े होते जाने के साथ स्वयं ही ठीक हो जाते है, अत: उनके लिए चिंता करने की आवश्यकता नहीं.

तीन-चार साल की आयु के बाद 'टांसिल्स' बढने के लक्षण हैं : बार-बार बुखार होना, बार-बार जुकाम होना, आवाज बदल जाना, भूख की कमी, जोड़ों में दर्द, सांस फूलना आदि. ये लक्षण हो तो डाक्टर से जांच कराएं. यदि डाक्टर आपरेशन की सलाह दे तो उसमे देर न करें. देर



गले में टांसिल्स व एडिनायड्स की स्थिति

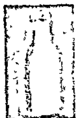
करने पर कान, नाक में खराबी आ सकती है और बच्चे की बढ़त रुक सकती है. एक बार आपरेशन करा लेने के बाद 'टांसिल्स' दोबारा नही बढ़ते, पर देर से आपरेशन कराने पर ये लक्षण दोबारा उभर सकते है.

यों 'टांसिल्स' की बीमारी वंशगत भी होती है, पर अधिकतर इसके कारण हैं : अस्वच्छता से लगने वाला 'इन्फेक्शन' तथा आइस्क्रीम, टाफी, सैक्रीन, तली हुई चीजें ज्यादा खिलाना. 'टांसिल्स' से बचाव के लिए मां को चाहिए कि बच्चे को दूध पिलाते समय स्तन की चूचक व बोतल-निपल की सफाई पर विशेष ध्यान रखे जिस से बच्चा संक्रमण का शिकार न हो.

'एडीनायड' बढ जाने के लक्षण हैं : बच्चे की नाक दबी सी रहना नाक से सांस लेने में कठिनाई, तंदुआ ऊपर उठा रहना, रोने की व बोलने की आवाज में परिवर्तन आ जाना. और इसके परिणाम हो सकते हैं : मुंह खोलकर सांस लेने से बच्चे का बार-बार 'इन्फेक्शन' का शिकार होना, उसके दांतों के बीच जगह छूटना व उनमें टेढ़ापन आ जाना आदि.

अत: ये उपरोक्त लक्षण हों तो डाक्टर की सलाह अवश्य लें. केस के अनुसार कभी केवल 'एडीनायड्स', कभी केवल 'टांसिल्स' व कभी दोनों ही आपरेशन से निकालने की जरूरत हो सकती है. बच्चे को बार-बार अस्वस्थ होने से बचाने, उसे दांतों की हानि से बचाने तथा उसके स्वस्थ विकास की बाधा दूर करने के लिए डाक्टर के निर्देशानुसार सही समय पर आपरेशन करा लेना चाहिए. इस बारे में लापरवाही या हिचकिचाहट ठीक नहीं होगी. ●

खंड 2

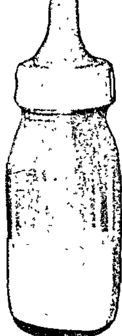
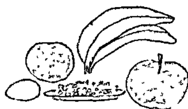


आहार और पोषण






17
आहार और बाल पोषण

व्यक्ति के विकास में आहार का महत्त्व हमेशा ही रहता है किंतु प्रारंभिक पांच वर्षों में, जब वह तेजी से बढ़ रहा होता है, इसका महत्त्व और भी अधिक हो जाता है. खुराक की कमी या असंतुलित खुराक से वजन में भी कमी रहेगी और बढ़त में भी. शरीर में शक्ति कायम रखने के लिए खुराक की जो भूमिका है, शक्ति के इस माप को 'कैलोरी' कहते हैं. 'कैलोरी' की कमी से शरीर कार्बोहाईड्रेट और चिकनाई के अलावा प्रोटीन से भी शक्ति खीचने लगता है, जिससे शरीर मे प्रोटीन की कमी हो जाती है. किसी रोग के कारण भी प्रोटीन की कमी होती है और परिणाम होता है : प्रोटीन की कमी से विकास का अवरुद्ध होना.

कैलोरी की आवश्यकता

भारत की सुप्रसिद्ध पोषण-विशेषज्ञ डा० शांतिघोष के अनुसार, शिशु को प्रतिदिन उसके प्रति किलोग्राम वजन के हिसाब से 120 कैलोरी की आवश्यकता होती है. इस प्रकार एक से दो वर्ष के शिशु को प्रतिदिन औसतन 1000 कैलोरी चाहिए, जो कि मां की खुराक का लगभग आधा भाग है. परंपरागत धारणा के अनुसार यह अविश्वसनीय लग सकता है लेकिन वास्तविकता यह है कि एक वयस्क व्यक्ति को दो वर्ष के बच्चे की तुलना मे दुगना आहार चाहिए. एक वर्ष की आयु के बाद शिशु की शक्ति बनाए रखने के लिए उसकी आयु के प्रत्येक वर्ष के हिसाब से 100 कैलोरी और जोडी जानी चाहिए. इस तरह पांच वर्ष के बच्चे को प्रतिदिन लगभग 1400 कैलोरी की आवश्यकता होगी. यदि हम बच्चे की कैलोरी-आवश्यकता की पूर्ति नहीं करेंगे तो इस कमी-पूर्ति के लिए शरीर में प्रोटीन का उपयोग होने लगेगा.

प्रोटीन

शरीर के तंतुओ के निर्माण और टूट-फूट की मरम्मत के लिए प्रोटीन की आवश्यकता होती है. जाहिर है कि शरीर के विकास में प्रोटीन का सर्वाधिक महत्त्व है. विशेष रूप से तेजी से बढ़ती उमर के पहले पांच-छ वर्षों मे. शिशु की खुराक मे मा के दूध और अंडे से प्राप्त होने वाली प्रोटीन सर्वोत्तम मानी जाती है.

पशुओं से प्राप्त प्रोटीन मास, मछली, अंडा, दूध और दूध के अन्य उत्पादनों में मिलती है. वनस्पतियों से प्राप्त प्रोटीन चना, मटर, सेम, राजमा में प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है. इनके मुकाबले अनाजों से प्राप्त प्रोटीन मात्रा और गुण दोनों में कम होती है. इसीलिए आहार मे संतुलन बनाए रखने के लिए अंडे के अलावा अनाज और दालों का मिश्रण बच्चे के लिए उपयुक्त आहार के रूप मे सुझाया जाता है और इसीलिए प्रोटीन की कमी वाले बच्चो को आजकल अस्पतालों के बाल-स्वास्थ्य-केन्द्रो पर गेहू और चने के मिश्रण से बनाया गया 'पोषाहार' दिया जाता है.

माताओं के लिए समझने की मुख्य बात यह है कि बच्चे की खुराक में प्रतिदिन दी जाने वाली कैलोरी मे 8-10 प्रतिशत प्रोटीन अवश्य हो. फिर चाहे वह पशुओं के प्राप्त प्रोटीन हो या दालों से.

वसा

पशुओं से प्राप्त वसा चर्बी वाले अगों, कलेजी, अंडे की जर्दी और दूध मे तथा वनस्पतियों से प्राप्त वसा, मेवों तथा तेलो मे होती है. कैलोरी का 20-25 प्रतिशत भाग वसा से मिलना चाहिए. अपने बच्चों की खुराक मे माताए घी, मक्खन. दूध मेवों का समावेश इसी अनुपात मे करें.

खनिज लवण

शिशु के विकास की दृष्टि से खनिजों में कैलशियम और लौह-तत्त्व का महत्त्व सबसे अधिक है.

कैलशियम : हड्डियों और दांतों के निर्माण के लिए कैलशियम जरूरी है. इसे मां के दूध और ऊपरी दूध से प्राप्त किया जाता है. इसके अलावा मेथी, चौलाई जैसी पत्तेदार भाजियां और ज्वार, बाजरा, रागी, भी इसकी प्राप्ति के स्रोत हैं. कमी-पूर्ति के लिए, विशेष रूप से जब बच्चा दांत निकाल रहा हो, डाक्टर से पूछ कर बाजार से उपलब्ध तरल व गोलियों के रूप में अतिरिक्त कैलशियम भी दिया जाना चाहिए.

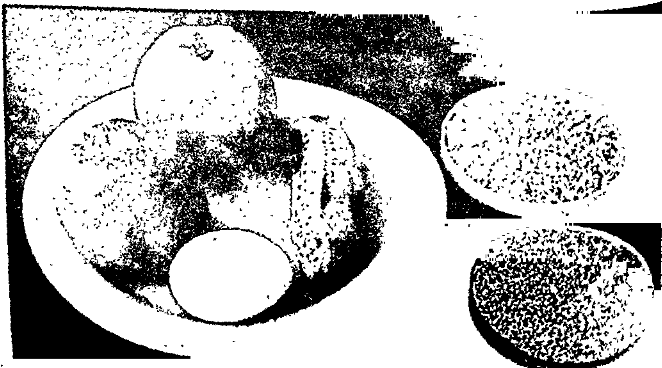
लौह-तत्त्व लौह-तत्त्व रक्त के लाल कणों में आक्सीजन पहुंचाने वाले पदार्थ के निर्माण के लिए आवश्यक है. इसकी कमी से खून की कमी का रोग (एनीमिया) हो जाता है. शिशु को इसकी आवश्यकता एक मिली ग्राम प्रति किलोग्राम वजन के लिए होती है. मांस, अंडा, कलेजी इसके अच्छे स्रोत हैं. थोड़ी मात्रा में यह हरी सब्जियां व अनाज से भी मिलता है. पर दूध में इसकी मात्रा बहुत कम होती है. इसलिए केवल दूध पीने वाले शिशु के लिए मां के दूध से इसकी पूर्ति दो-तीन महीने तक ही हो पाती है. इसके बाद लौह मिश्रित टॉनिक फोलिक एसिड के रूप में दिया जाना चाहिए.

ठोस आहार लेने वाले बच्चों को अंडे की जर्दी और कलेजी देकर लौह-तत्त्व की पूर्ति की जा सकती है. छोटे बच्चे को तरल रूप में कलेजी का सूप दें.

विटामिन

रोग-निरोधक शक्ति के लिए विटामिन आवश्यक हैं. इनकी कमी से कई रोग हो जाते हैं. मां का दूध शिशु के लिए एक संतुलित आहार है, जिसमें विटामिन 'डी' के अलावा अन्य सभी खनिज, विटामिन्स विद्यमान होते हैं, किंतु कम मात्रा में. इसलिए इनकी पूर्ति अतिरिक्त रूप में भी करनी पड़ती है.

विटामिन 'ए' : यह बच्चे की आंखों और त्वचा की रक्षा के लिए आवश्यक है. मां के दूध में इसकी मात्रा केवल 60 'आई, यू' प्रति औंस के हिसाब से होती है, जबकि छः महीने तक के शिशु के लिए इसकी निर्धारित आवश्यकता 1500 'आई यू' है. इतनी मात्रा में विटामिन 'ए' लगभग 25 औंस दूध से मिल सकता है, जो बच्चा बड़ा होने पर ही



बच्चे के आहार में सभी पोषक तत्त्वों का समावेश जरूरी है

ले सकता है तब तक डाक्टर से पूछ कर विटामिन 'ए' की मात्रा अलग से भी अवश्य दी जानी चाहिए.

विटामिन 'डी' : बच्चे की हड्डियों के विकास में इसका योगदान है. इसके अलावा यह कैलशियम को पचाने में सहायता करता है. केवल मां के दूध से बच्चे की विटामिन 'डी' की निर्धारित आवश्यकता की पूर्ति नही हो पाती. हमारे यहां इस विटामिन की प्राप्ति का सबसे अच्छा स्रोत है : धूप. इसके अलावा मछली की कलेजी का तेल इसका सबसे बड़ा प्राकृतिक स्रोत है. यों यह कलेजी, अंडे की जर्दी और दूध से भी थोड़ी मात्रा में मिलता है. पर रोज कुछ समय धूप में रखे जाने वाले शिशु और धूप में खेलने वाले बड़े बच्चे को विटामिन 'डी' की अतिरिक्त मात्रा देने की जरूरत नहीं पड़ती है.

विटामिन 'डी' की कमी से बच्चा देर से चलता है और इसकी अधिक कमी से उसे हड्डियां टेढ़ी होने वाला रोग हो सकता है. अतः ऐसी कोई समस्या हो तो डाक्टर की सलाह से बच्चे को विटामिन 'डी' की अतिरिक्त मात्रा दी जानी चाहिए.

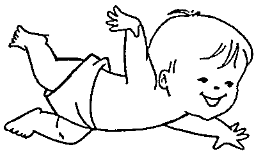
विटामिन 'सी' : इसकी आवश्यकता बच्चों को दांतों, मसूड़ों और रक्त-नलिकाओं को ठीक रखने के लिए होती है. इसके अभाव में एक तरह की बीमारी हो जाती है, जिसे 'स्कर्वी' कहते हैं. अगर मां उचित मात्रा में विटामिन 'सी' अपने भोजन में ग्रहण करे तो स्तनपान करने वाले बच्चे में इसकी कमी नही होती. पर अक्सर मां की खुराक में कमी होती ही है, अत. शिशु को साथ में थोड़ी मात्रा में संतरे का रस भी दे दिया जाना चाहिए. बड़े बच्चों को टमाटर का रस, हरी सब्जियों का सूप, अमरूद, नीबू की शिकंजी देकर विटामिन 'सी' की पूर्ति की जा सकती है.

पानी

स्तनपान के समय केवल अधिक ठंडे मौसम में ही शिशु को अलग से पानी की जरूरत नही रहती, क्योंकि मां के दूध में से ही शिशु की आवश्यकता भर पानी मिल जाता है. फिर भी बच्चा प्यासा न रहे, इसके लिए उबाल कर ठंडा किया पानी बीच-बीच में एक-दो चम्मच देना चाहिए. पर गर्म मौसम में किसी भी आयु के शिशु को पानी अवश्य पिलाया जाना चाहिए. शिशु के वजन के अनुसार इसकी दैनिक औसत मात्रा पांच औंस प्रति किलोग्राम होनी चाहिए.

छोटा बच्चा बहुत बार पानी लेने में आनाकानी करता है. इसलिए उसके पानी में थोड़ी चीनी मिला लेनी चाहिए. गर्म जगहों में व अधिक गर्म मौसम में पानी की यह जरूरत पांच औंस प्रति किलोग्राम वजन से ज्यादा भी हो सकती है और शिशु को जरूरत भर पानी न मिलने से शरीर में पानी की कमी (डि-हाइड्रेशन) शिकायत हो सकती है; विशेष रूप से जब बच्चा आदतन दिन में कई बार दस्त करता हो या उसे दस्तों की बीमारी हो. अतः ध्यान रखना चाहिए कि शिशु को जरूरत भर पानी भी अवश्य मिले. ●

* मां का दूध शिशु के लिए सर्वोत्तम आहार है. यदि कोई विशेष कारण नही है तो बच्चे को इससे वंचित नहीं किया जाना चाहिए.
* तीन-चार माह की आयु के बाद शिशु को मां के दूध से पर्याप्त पोषण नही मिल पाता. इस कमी को पूरा करने के लिए उसे इस आयु में अर्ध ठोस व ठोस आहार शुरू कर देना उचित होगा.
* आहार का चुनाव बजट व सुविधा के अनुसार किया जा सकता है लेकिन उससे बच्चे को सभी आवश्यक पोषक तत्त्व प्राप्त होने चाहिए. क्योंकि अपोषित बच्चे शारीरिक विकास में तो पिछड़ते ही हैं, अधिक कुपोषण से उनका मानसिक विकास भी ठीक नही हो पाता.
* यदि किसी कारण बच्चे का स्वास्थ्य ठीक नहीं है तो नया आहार न शुरू करें.
* पहले दिन एक चम्मच से आरंभ करें व धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाती जाएं.
* यदि किसी नए आहार से उसकी पाचन क्रिया में कोई विकार उत्पन्न हो गया है तो उसे तुरंत बदल दें उस आहार का विकल्प ढूंढें या थोड़े दिन बाद आरंभ करें.
* एक साथ एक से अधिक नई चीजें देना न शुरू करें.
* अधिक पोषण के लिए उसे हर समय कुछ-न-कुछ खाने को न देती रहें. इससे एक तो उसे अधिक खाने की आदत पड़ जाएगी दूसरे उसकी दूसरी वस्तुओं के प्रति रुचि घट जाएगी.



18

स्तन-पान

मातृत्व स्त्री जीवन की सपूर्णता और सार्थकता समझी जाती है. शिशु को गोद मे लेकर मा जिस नैसर्गिक उल्लास से भर उठती है उसकी तुलना संसार की किसी खुशी से नही की जा सकती. भारतीय मा-शिशु की तसवीर कल्पना मे लाते ही प्राय दो तरह की उभरती है—एक, साफ सुथरा गोलमटोल खूबसूरत वस्त्रो मे लिपटा या सुदर से आरामदेह पालने मे लेटा किलकारी मारता स्वस्थ, सुखी बच्चा और उसे देखकर सतोष से भरी-भरी गर्वित मा. दूसरी, मा के सूखे से स्तन से चिपटा कमजोर-सा गदा-सा बच्चा और शून्य मे निहारती, विवशता की साकार मूर्ति मा ये दो तसवीरे दो विपरीत छोरो की है, दो स्पष्ट विभाजित वर्गो का प्रतिनिधित्व करती सी इनके बीच विभिन्न स्तरों पर भी मा-शिशु की तसवीर के अनेक रूप है, अनेक रग है. पर एक रग सर्वत्र समान है, मातृत्व की स्नेहिल अभिव्यक्ति, जिस पर अमीर-गरीब सभी बच्चो का समान हक है.

इस समान हक को सज्ञा देता है मा का दूध. मा का दूध, जिस मे प्रकृति ने बच्चे के लिए वह सभी कुछ दिया है, जिससे बच्चे को पोषण मिलता है, उसकी बीमारियो से रक्षा होती है, उसे मानसिक और भावात्मक सुरक्षा मिलती है और मिलती है वह अद्‌भुत, अलौकिक शक्ति, जिसे 'मा के दूध की लाज' रखना कहते है. शिशु के लिए मा का दूध अमृत तुल्य है, प्रकृति-प्रदत्त एक ऐसा अनुपम आहार, जिसका मुकाबला अन्य कोई आहार नही कर सकता. मा का दूध छोटे बच्चे के लिए तो सर्वोत्तम आहार है ही, स्तन-पान मा के लिए भी बहुत लाभकारी है. शारीरिक, मानसिक, भावात्मक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी और सुविधा व बचत की दृष्टि से भी. कोई भी मा इस प्रक्रिया के लिए शिशु-जन्म मे पूर्व ही मानसिक रूप से तैयार रहती है, यदि वह किन्हीं पूर्वाग्रहों या धार्मिक विचारो की शिकार न हो या उसके साथ कोई रोग-जनित विवशता न हो.

सयुक्त राष्ट्र बाल आपात निधि (यूनिसेफ) की ओर से भारत मे मातृत्व और शैशव की स्थिति का व्यापक अध्ययन कर, उपयोगी साहित्य प्रस्तुत करने वाली वरिष्ठ बाल-विशेषज्ञ डा. शांति घोष के अनुसार, "हाल की खोज इस परपरागत मान्यता से सहमत है कि स्तन-पान कराते समय गर्भाधान की सभावना काफी घट जाती है, इस दृष्टि से दो बच्चों के बीच उचित अवधि के अंतर के लिए भी इस सहज प्राकृतिक साधन को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए".

स्तन-पान और इसके लाभ

□ बच्चे के भोजन की समस्या का यह प्रकृति द्वारा दिया गया सहज, सरल, सर्वोत्तम हल है.

□ दूध पिलाने का यह एक इतना सरल तरीका है कि बिना कष्ट उठाए शिशु को गरम, ताजा और शुद्ध दूध दिया जा सकता है. दूध की मात्रा का अनुमान लगाने की भी आवश्यकता नही. बच्चा स्वयं ही सतुष्ट हो कर दूध पीना छोड़ देता है और प्रसन्नचित रह बढता रहता है. अत जब तक बच्चे की बढ़त ठीक है, यह चिंता करने की जरूरत नही कि उसके लिए मां का दूध पूरा पड़ता है कि नही ?



□ दूध पिलाने पर कोई खर्च नही आता. मां को कुछ अतिरिक्त खुराक अवश्य चाहिए, पर यह खर्च ऊपरी दूध के मुकाबले बहुत कम होता है. अमेरिका के एक विशेपज्ञ ने भारत की स्थिति का अध्ययन करके निष्कर्ष रूप में कहा, "यदि भारत की सभी माताएं बच्चों को अपना दूध पिलाना बंद कर दें तो उसकी पूर्ति पचास लाख अतिरिक्त गायों के दूध से ही संभव होगी". फिर भी गरीब परिवारों के लिए उसके लिए खर्च कर सकना सभव नही होगा.

□ मां का दूध आसानी से पचने वाला होता है. इसकी वसा अच्छी तरह घुल-मिल जाती है.

□ प्रसव के तुरंत बाद मां के दूध में 'कोलोस्ट्रम' या खीस में प्रकृति ने विशेप रूप से अधिक 'एंटीबाडी' (प्रति-पिंड या रोगनिरोधक तत्त्व) दी होती है, जो नवजात शिशु को रोगों से बचाती है. वैसे भी मा के दूध में ऊपरी दूध की अपेक्षा रोग-निरोधक क्षमता अधिक होती है और मा का दूध पीने वाले बच्चे कब्ज, दस्तो की बीमारी और छूत की बीमारियों से बचे रहते हैं, जबकि सफाई संबंधी विशेप सर्तकता न बरतने पर बोतल का दूध पीने वाले शिशु अक्सर बीमार पड़ते रहते है.

□ मा को अतिरिक्त काम नही करना पड़ता. दूध बनाने के लिए अतिरिक्त समय नही देना पड़ता, यात्रा आदि के समय तो विशेप ही सुविधा रहती हे, अन्यथा डिब्बे का दूध पिलाते समय अतिरिक्त सामान की व्यवस्था करनी पड़ती है.

□ दूध पिलाने से प्रसव के बाद मां के गर्भाशय को वापिस अपनी जगह आने में विशेप सुविधा मिलती है और प्रसवोपरात गर्भाशय के रोग कम होते है.

□ दूध पिलाते समय मा को सतुष्टि मिलने से उसके मानसिक स्वास्थ्य पर इसका अच्छा असर पड़ता है. शिशु भी मा की गोद में जिस सुख-सतोप का अनुभव करते हुए दूध पीता है, वह उसे बोतल द्वारा मिलना सभव नही. दूध पिलाने के बहाने मां दिन में कई बार शिशु को गोद में लेकर प्यार करेगी तो बच्चे को भावात्मक सुरक्षा अनुभव होगी. मां के दूध के अभाव में बच्चे इस आनद व सुरक्षा से वचित रह जाते हैं, जिसका उनके मानसिक-भावात्मक विकास पर अच्छा असर नही पड़ता. आगे चलकर वे कई प्रकार की कुंठाओं व ग्रंथियो के शिकार हो सकते हैं. इसी-लिए स्तन-पान करने वाले बच्चे का शारीरिक-मानसिक गठन बाहरी दूध पीने वाले बच्चे की अपेक्षा अच्छा होता है.

□ मा की गोद व मां का दूध प्राप्त करना शिशु का जन्मसिद्ध अधिकार है. जब तक कोई विशेप कारण न हो. उसे उसके इस अधिकार से वंचित करना उचित नही. अंतर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय बाल-अधिकार-घोपणाओं मे भी यह बात इसीलिए स्पष्ट की गई है.

□ बच्चे के स्वाभाविक विकास के लिए मां के दूध मे जब पाचक रूप मे प्रोटीन, वसा, कुछ एंजाइम्स, विटामिन जैसे पोपक तत्व भी मौजूद हैं और 'इंफेक्शन' से बचाव की व्यवस्था भी, इसके साथ 'स्टरलाइजेशन' की समस्या का सामना भी नही करना पड़ता तो मात्र अपनी देहयष्टि या सुंदरता की चिंता में बच्चे को उसका हक न देने मे कोई तुक नही. फिर यह धारणा भी बेबुनियाद है कि स्तनपान कराने से वक्ष-सौंदर्य नष्ट होता है. वक्ष-सौंदर्य मे कमी स्तन-पान से नही, गलत ढग से स्तनपान के कारण आती है.

इस प्रकार आपने देखा, मां का दूध बच्चे के लिए *नियामत है, ऐसी नियामत जो गरीबी, अमीरी का भेद* नही करती. हर मां इसे सहज ढंग से प्राप्त कर सकती है और इसके लिए उसे कुछ अतिरिक्त खर्च नही करना पड़ता, न बोतल के दूध की तरह कुछ अतिरिक्त झंझट ही करना पड़ता है. भारतीय घरो के लिए यही व्यवस्था सबसे उपयुक्त है, क्योंकि बोतल का दूध अतिरिक्त खर्च ही नही मांगता, अतिरिक्त सफाई,सतर्कता भी मागता है. गाय का ऊपरी दूध जुटा भी सकें तो भी आजकल शुद्ध दूध प्राप्त करना एक समस्या है. डिब्बे का दूध ही प्राय: विकल्प के रूप मे बचता है, जिसका खर्च आम आदमी के मासिक भोजन से अधिक बैठता है. जाहिर है कि हर परिवार यह खर्च वहन नहीं कर सकता. फिर अधिक खर्च करके भी यदि छोटा बच्चा यह दूध पीने से अधिक बीमार पडे तो इसका क्या लाभ ? यों सफाई-स्वच्छता का पूरा ध्यान रखा जाए तो ऊपर के दूध से भी बच्चे अच्छे पुप्ट बनते है, क्योंकि *डिब्बे का दूध अच्छी कंपनिया विशेप सावधानी से तैयार* करती है.

पर प्रश्न यह है कि क्या सभी माताए डिब्बे पर लिखी मात्रा व उसे तैयार करने की विधि का ठीक से पालन करती है या बोतल-निपल की सफाई का ध्यान रखती है ? शहरों में बडे लोगों की देखादेखी गंदी व पिछड़ी बस्तियों के कुछ समर्थ लोग भी शान या फैशन मे आ या 'अपने बच्चों पर वे भी खर्च कर सकते हैं,' इस नकल अथवा दिखावे की की प्रवृत्ति के शिकार हो बच्चों को मां का दूध न देकर डिब्बे का या गाय-भैंस का दूध पिलाने लगते है और अशिक्षा-अज्ञानता के कारण उसके लिए स्वच्छता-शुद्धता का ठीक से ध्यान नही रख पाते तो बच्चों के लिए बीमारियो का खतरा और बढ़ जाता है. मैंने नगरीय अस्पतालों में

ऐसी बहुत सी माताओं को अपने बच्चों को 'डायरिया' आदि रोगों के साथ लाते देखा है, जिसका कारण अधिकतर यही था. अत: एक ओर इन्हे मा के दूध का महत्व समझाने की जरूरत है, दूसरी ओर व्यापक रूप से स्वास्थ्य-प्रशिक्षण देने की, ताकि समस्या को सही समाधान मिल सके.

स्तन-पान की तैयारी

वैसे तो जब कोई महिला मां बनने की तैयारी करती है तो भावात्मक रूप से स्तन-पान कराने की मानसिक तैयारी भी उसके साथ शामिल रहती है. पर पश्चिमीकरण के प्रभाव से बहुत सी पढी-लिखी शहरी महिलाओ ने जब अपने बच्चो को ऊपरी दूध देना शुरू किया तो देखादेखी अन्य वर्गो व ग्रामीणो मे भी यह प्रवृत्ति किसी हद तक अपनाई जाने लगी, क्योंकि ऊपरी दूध देना शान व सामर्थ्य का प्रतीक बन गया था. पर अब जबकि पश्चिमी समाज भी ऊपरी दूध के परिणामों से अवगत हो पुन मा के दूध की वकालत करने लगा है तो आधुनिक भारतीय माताए फिर इस ओर लौटने लगी है लेकिन जो प्रभाव निचले तबकों मे ग्रहण किया जा चुका है व जहा स्वच्छता-नियमों का ज्ञान न होने के कारण ऊपरी दूध से नन्हें शिशु अधिक हानि उठा रहे हैं, वहा स्तन-पान के महत्व को अधिक जोर देकर समझाने की जरूरत है. इसलिए हर अस्पताल व मातृ-शिशु केन्द्र पर गर्भकाल में जाच व सलाह के लिए आई मा को अपने भावी शिशु को स्तन-पान कराने का शारीरिक व मानसिक प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए. ऐसा बहुत से केन्द्रो पर किया भी जा रहा है. गर्भ के अतिम दिनो मे स्तनो की देखभाल व चूचको की स्थिति ठीक रखने या सुधारने का उन्हे निर्देश दिया जाता है. माताओ को अपने स्तनों की निपलो या चूचको को उंगलियो से पकडकर ऊपर उठाते रहना चाहिए कि वे भीतर धंसे हुए न रहे और शिशु को दूध पीने में तकलीफ न हो. गर्भ के आखिरी दिनो मे यह व्यायाम रोज नियमित रूप से करना चाहिए. किसी तरह का चर्म रोग हो तो भी उसका समय पर उपचार कर लेना चाहिए.

गर्भावस्था के अतिम दिनो मे कई बार स्तनो से जो स्राव निकलता है, उसे वहीं सूखने देने से कभी-कभी निपल कट जाते हैं, अत: इसका भी ध्यान रख लेना चाहिए. अन्यथा प्रसवोपरात दूध पिलाने मे कठिनाई आ सकती है.

स्तन-पान में स्तनों की सुरक्षा

दूध पिलाते समय तो स्तनों की सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए. दूध कभी भी चढ़ने नहीं देना चाहिए, अन्यथा कसाव, दर्द, सूजन से मां को बुखार हो सकता है मितली या उल्टी की शिकायत हो सकती है और साथ, सूजन व दर्द के कारण शिशु को दूध पिलाने में कठिनाई आ सकती है. नियमित स्वच्छता के अभाव, तंग ब्रेसरी, स्तनों पर चोट या दांत वाले बच्चे द्वारा स्तन पर काट लेने से स्तन में घाव भी हो सकता है. ऐसे समय स्वस्थ स्तन से बच्चे को दूध पिलाएं और चूचक पर घाव है तो डाक्टर से सलाह लें. दूध चढ़कर स्तनों पर कसाव से कष्ट न बढ़े, इसके लिए एक तो बारी-बारी से दोनों स्तन खाली करने चाहिए, दूसरे अतिरिक्त दूध हाथ से निकाल देना चाहिए. दूध निकालने के लिए पंप का प्रयोग हानि रहित नहीं. अत: इतना दूध चढने की नौबत ही नहीं आने देनी चाहिए.

नीरोगता के लिए दूध पिलाने से पहले व बाद में स्तनों को स्वच्छ करना जरूरी है. पसीने-युक्त स्तनों मे या गदे हाथ लगाकर स्तन-पान कराने से बच्चे को 'इंफेक्शन' हो सकता है. लापरवाही से स्तनों में तकलीफ हो सकती है. बच्चा ठीक से दूध पी सके और दूध पिलाने में मां को कष्ट न हो, इसके लिए स्तनों को स्वस्थ रखना जरूरी है साथ ही यह भी जरूरी है कि स्तन-पान ठीक ढंग से कराया जाए ताकि स्तन ढलकें नहीं. इस संबंध में जो भी कठिनाई आए, उसके लिए अपनी डाक्टर से या स्वस्थ्य केंद्र से सलाह लें.

स्तन-पान कैसे कराएं ?

नवजात शिशु को पहली बार दूध कब दिया जाए, कैसे दिया जाए, यह नवजात शिशु की देखभाल में बताया गया है. यहा स्तन-पान की विधि पर चर्चा की जा रही है, क्योंकि शिशु का स्वस्थ विकास बहुत कुछ सही मात्रा मे व सही ढंग से दूध पिलाने पर भी निर्भर करता है. इस सबध मे निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए :

जब तक मा उठने लायक न हो जाए, जिस ओर शिशु लेटा हो, उस ओर करवट लेकर लेटते हुए भी स्तन-पान कराया जा सकता है. पर ऐसा करते समय शिशु को अपनी बाह पर लेकर उसका सिर थोड़ा ऊंचा उठा लेना चाहिए जिससे वह ठीक से दूध ले सके. शिशु का सिर नीचा होने पर दूध उसके फेफड़े मे चले जाने का डर रहता है, जिससे बच्चा रोगी हो सकता है.



लेट कर दूध पिलाने का गलत ढंग…



…सही ढंग

मा के बैठने लायक होते ही शिशु को बैठकर दूध पिलाने की आदत डालनी चाहिए. इससे दूध पीते शिशु की स्थिति ठीक रखने में मदद मिलती है, जबकि लेटकर दूध पिलाते समय मां के सो जाने पर दुग्ध-पान के समय स्तन का दबाव पड़ने से शिशु की सांस प्रक्रिया में बाधा पड़ सकती है. सोती हुई मा अपने चूचक को ठीक स्थिति मे रखने की ओर ध्यान नही दे पाती. फलस्वरूप बच्चा ठीक से दूध न पी पाने पर रोने लगता है. इसके अलावा दूध की धारें उसके नाक, कान में जा सकती हैं. कान मे दूध जाने पर कान बहने लग सकता है व अन्य हानियां हो सकती हैं.

दूध बैठकर पिलाया जाए या विवशता की स्थिति में लेटकर, हमेशा अपने एक हाथ से शिशु के सिर को ऊचा उठाकर उसे सहारा दें. दूसरे हाथ की मध्य व तर्जनी उंगली फैलाकर उनकी कैंची सी बना चूचक (निपल) के दोनों ओर रखें और उंगलियों के दबाव से स्तन को भीतर की ओर हटाते हुए चूचक शिशु के मुंह मे दें, ताकि स्तन के दबाव से उसकी नाक न दबे और मुंह से स्तनपान करते समय वह नाक से ठीक सास ले सके. ऐसा न करने पर न वह ठीक से सांस ले पाएगा, न पेट भरकर दूध पी पाएगा और थोड़ी देर मे फिर रोने लगेगा. यह भी आवश्यक है कि चूचक के आसपास का पूरा काला घेरा बच्चे के मुंह के भीतर रहे कि वह ठीक से दूध पी सके.

स्तनपान के समय मां की मन.स्थिति का भी शिशु पर और दुग्ध-स्राव पर बहुत प्रभाव पड़ता है. मां यदि तनाव-मुक्त, चिंता रहित स्थिति मे नही है, चिंतित है, तनाव से घिरी है, जल्दबाजी में है या अनिच्छुक है तो उसके स्तनो में शिशु के लायक पूरा दूध नही उतरेगा और दुग्ध-स्राव की मात्रा घट जाएगी, जो लगातार इन स्थितियों के कारण स्थायी रूप से कम हो सकता है. इसके अलावा स्तन-पान के समय मा द्वारा आनंदित मन से शिशु को प्यार न करने पर शिशु भावात्मक रूप से भी भूखा रहता है और स्वयं को असुरक्षित अनुभव कर शैशव से ही अनेक ग्रंथियो से घिरने लगता है.

बच्चे की भावात्मक सुरक्षा के लिए स्तनपान के समय मा को उसके सिर पर प्यार से हाथ फेरना चाहिए और स्तनपान मे रुचि लेकर शिशु को आनंदित करने के साथ इस कार्य मे स्वय भी आनंद लेना चाहिए. वैसे तो प्राकृतिक नियम से ऐसा होता ही है पर आधुनिक माताए अनिच्छुक न भी हों तो जल्दबाज व तनावग्रस्त प्रायः होती ही हैं, जिसका दूध की मात्रा पर भी दुष्प्रभाव पड़ता है, शिशु की मान सिकता पर भी. स्तनपान के लिए अनिच्छुक माताएं तो शिशु को हानि पहुंचाने के साथ स्वयं भी एक दुर्लभ आनंद से वंचित रह जाती हैं.



इस प्रकार बांह का सहारा देकर बच्चे को दूध पिलाएं

शिशु को सही आदत डालने के लिए यह भी जरूरी है कि स्तनपान सदा एक ही अवस्था में न कराया जाए. दूध पिलाते समय यदि उसे विभिन्न स्थितियों का अभ्यस्त नहीं कराएगी और हमेशा एकांत में ही दूध पिलाती रहेगी तो घर में मेहमानों के आगमन पर, किसी के घर जाने पर या यात्रा के समय वह अन्य स्थिति का सामना न कर पाएगा और ठीक से दूध नहीं पी पाएगा, दूध पीने से इंकार कर आपके लिए समस्या भी पैदा कर सकता है. तब घर पर या घर की स्थिति में ले जाने पर ही वह दूध पिएगा व तभी चुप होगा अन्यथा रोता रहेगा.

स्तनपान बारी-बारी से दोनों ओर से भी कराना चाहिए. यदि एक स्तन से ही पूरा दूध पीकर शिशु का पेट भर जाए और वह दूसरी ओर से और पीने से इंकार करे तो दूसरे स्तन का दूध निकालकर उसे खाली कर दें कि उधर दूध न चढ़े और फिर दूसरी बार दूसरी ओर से पिलाएं. यदि दूध पूरा उतरता है तो स्तन खाली करने पर भी पिलाते समय उधर से पूरा दूध उतरेगा. ध्यान रहे, मां के स्तन कोई दुग्ध-बैंक नहीं हैं कि वहां दूध जमा रहता हो. यह तो मां की ममता है, जिससे हर बार शिशु के चूसने पर स्तनों की दुग्ध-नलिकाएं दूध से भर जाती हैं. अतः पर्याप्त दूध हो तो स्तनपान से बचे दूध को खाली करते रहना चाहिए, अन्यथा दूध चढ़कर मां की तकलीफ बढ़ा सकता है.

दूध शिशु के लिए पर्याप्त है कि नहीं या उससे उसका पेट भरता है कि नहीं, इसका माप यही है कि पीने के बाद बच्चा संतुष्ट हो जाए और बार-बार दूध लेने की मांग न करे. पर सबसे अच्छा प्रमाण यह होगा कि शिशु की बढ़त ठीक हो रही है कि नहीं? वह स्वस्थ व प्रसन्न है कि नहीं? यदि मां का दूध उसके लिए काफी है तो शिशु को जन्म के बाद दो-दो घंटे से शुरू करके कुछ दिनों बाद ही तीन-तीन घंटे से व फिर धीरे-धीरे चार-चार घंटे से दूध लेने की सही आदत पड़ जाएगी. सभी जगह स्तनपान की यही परंपरागत विधि है.



इस तरह दूध पिलाने से बच्चे की नाक दब जाएगी और वह ठीक से सांस नहीं ले पाएगा

शिशु के रोने का कारण केवल उसका भूखा होना ही नही होता, रोने के अन्य कारण भी होते हैं,जैसे उसके पेट में अधिक दूध पीने से या दूध के साथ हवा निगल लेने से अफारा या दर्द हो, उसे कोई चीज चुभ रही हो, उसे गरमी या सरदी लग रही हो या स्वय को असुरक्षित अनुभव कर भयभीत हो वह रोने लगे. इसलिए मा को भूख के कारण उसके रोने व अन्य कारण से रोने मे अन्तर समझना होगा. यह समझ अनुभव से आती है. पर देखें, शिशु स्तन-पान के तुरन्त बाद रोता हो और उसकी वृद्धि भी अनुपात में न हो रही हो तो इसका अर्थ होगा कि वह भूखा रहता है. यद्यपि शिशु के ठीक से दूध न पी सकने में बाधक अन्य कारण भी हो सकते हैं, जिन्हे समझकर दूर करना चाहिए या समझ न पाने पर इस सबध म डाक्टरी परामर्श लेना चाहिए, पर स्तनों में दुग्ध-स्राव बहुत कम हो तो शिशु को बदले मे डिब्बे का दूध देना पडेगा. तीन-चार महीने की आयु से बड़े शिशु को स्तनपान के साथ पूरक आहार देना शुरू करके भी यह कमी पूरी की जा सकती है.

स्तनपान के लिए समय का अतराल कितना हो, इसके लिए निश्चित नियम नही बनाए जा सकते. शिशु की आयु व भूख के अनुसार समय मे थोड़ा हेर-फेर किया जा सकता है. अतः आरभ से ही घडी की सुई पर चलने की आदत ठीक नही. जन्म के तुरन्त बाद नवजात शिशु दिन और रात में भेद नही जानता और हर बार भूखा होने पर रोने लगता है. तब उसे कुछ दिन तक रात्रि मे दूध पिलाने मे कोई हर्ज नही, बल्कि वह भूखा व कमजोर न रह जाए, इसलिए उसकी माग पर उसे दूध मिलना चाहिए. कुछ सप्ताह के बाद वह स्वय ही अधिक देर तक या रात भर सोता रहेगा. शिशु स्वयं ऐसा न करे तो उसे रात को दस बजे के बाद फिर सुबह पाच बजे ही दूध लेने की आदत डालनी चाहिए. कुछ दिनों तक वह रात को जाग कर दूध माग सकता है और न मिलने पर रो सकता है. तब उसे थोड़ा पानी पिलाकर, थपकिया देकर सुलाने का प्रयत्न करें.

यदि उसकी बढ़त ठीक है और वह भूखा न होकर आदतन रात को दूध चाहता है तो कुछ दिन के इस प्रयत्न से वह रात को जाग कर दूध लेना बद कर देगा और अधिक गरमी न हो तो पानी के लिए जागकर नही रोएगा. अतः शिशु को उसकी भूख या माग के अनुसार दिन मे 5-6 बार दूध पिलाना चाहिए और रात के समय उसे विशेष अवस्था मे ही दूध दिया जाना चाहिए. यह सोचना गलत है कि कुछ दिन रात को दूध देने मे वह हमेशा के लिए इसे अपनी आदत बना लेगा और सदा आपकी नींद खराब करेगा. यदि आप ही उसे रात को दूध पिलाने की इच्छुक न हों और रात को दूध पिलाने के बारे मे शिशु की भूख व आदत में सामजस्य बिठा सकें तो कोई कारण नही कि कुछ सप्ताह के बाद उसकी यह आदत बनी रहे प्रकृति उसे आपसे अधिक सिखाती है. वह जल्दी ही रात भर सोने का अभ्यस्त हो जाता है और अलसुबह जागने पर ही दूध मागता है.

एक बात और, माताएं कभी-कभी यह नही जानती कि शिशु को एक बार में कितनी देर दूध पिलाया जाए. प्राय. शिशु पांच मिनट मे ही एक स्तन से सारा दूध पी लेता है पर जल्दी उस स्तन को छोडना नही चाहता क्योंकि स्तन चूसने मे उसे आनद आता है और मा की गोद एव उसके स्पर्श के सुख से सुरक्षा अनुभव करता है. इसलिए यदि बच्चा एकदम स्तन न छोड़ना चाहे तो उसे कुछ देर और स्तन चूसने देना चाहिए. इस तरह दोनों ओर मिलाकर 5-10 मिनट के बजाए 15-20 मिनट लेकर वह सतुष्ट हो जाएगा. यदि शिशु बहुत कमजोर नही है और दूध पीने मे उसे कोई कठिनाई नही है तो इतनी देर का स्तनपान उसके लिए काफी है.

यह बात भी नोट करने की है कि तेजी से बढने वाले चंचल शिशुओं की दूध की आवश्यकता सुस्त और धीरे बढने वाले शिशुओं की अपेक्षा अधिक होगी. इसी अनुसार दूध पिलाने के बीच के समय का अतराल तीन से चार घटे का किया जा सकता है.

हर बार स्तनपान कराने के बाद शिशु को उठाकर कंधे से लगाएं व उसकी पीठ थपथपा दें ताकि वह डकार ले सके और उसके पेट में स्तनपान के समय निगली हवा बाहर आ जाए. बच्चा हवा न निगले, इसीलिए चूचक को उसके काले घेरे सहित शिशु के मुह मे देने की सलाह दी गई है. दूध पीने से पहले यदि वह अधिक देर तक रोता रहे तो भी रोते समय हवा निगल लेने के कारण वह बाद मे ठीक से दूध नही पी पाएगा और भूखा रह जाने पर फिर रोने लगेगा इस तरह हवा निगलने और रोने का यह दुष्चक्र भी चल सकता है जो शिशु के विकास मे बाधक सिद्ध होगा.

मां के स्तनों मे प्रसव के बाद 12 घटों मे ले कर एक-दो दिनों तक दूध नहीं भी उतर सकता. यह विकार नही, प्राकृतिक नियम है. प्रसव की थकान व तनाव से मुक्त होने व शिशु के प्रति ममता उमड़ते ही दूध उतरने लगता है. इस-

लिए कुछ देर से दूध उतरने पर मां को घबराना नहीं चाहिए. इसके बजाए सहज होकर, शिशु को प्यार करने से यह समस्या शीघ्र ही हल की जा सकती है. कई बार तो अस्पताल के वातावरण से घर आकर एकांत में स्वच्छंदता से दूध पिलाने पर ही मा के स्तनों में दूध की ठीक मात्रा उतरती है. फिर भी दुग्ध स्राव की कमी रहने पर मा को डाक्टर से परामर्श करना चाहिए. हर बार दूध पिलाने से पहले पानी पीने तथा दिन में एक-दो बार दूध पीने से भी समस्या का समाधान मिलेगा. स्तनपान से पूर्व तनावमुक्त व आनंदित स्थिति तो इसके लिए बहुत जरूरी है. मां के भोजन में हेर-फेर से दूध की मात्रा पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता. पर दूध व पानी की मात्रा घटाने-बढ़ाने पर इससे दूध की मात्रा अवश्य प्रभावित होती है अधिक चाय न ले कर दूध, छाछ, रस वाले फल, हरी सब्जी, छिलके वाली दालें, दलिया जैसे आहार दूध बढाने में सहायक हैं. परिवार नियोजन के लिए खाने वाली गोलियों से भी कई बार दूध की मात्रा घटती है. अत स्राव कम हो तो गर्भ निरोध के लिए अन्य साधन अपनाने चाहिए.

कुछ सावधानियां

दूध पिलाने वाली मा को डाक्टर से पूछे बिना 'एंटी-बायोटिक दवाएं', 'सलफा दवाएं' व 'ब्रोमाइड' 'फेनासिटिन' जैसी दवाएं भी नहीं लेनी चाहिए, अन्यथा ये बच्चे को हानि पहुंचा सकती हैं. पर अगला गर्भ रहने पर दूध पिलाना हानिकारक है, यह धारणा गलत है. यदि इससे दुग्ध-स्राव में कमी न आ जाए तो कुछ समय तक स्तनपान कराने में कोई हानि नहीं. प्राकृतिक नियम से धीरे-धीरे स्वयं ही स्तनों में दूध की मात्रा कम होती जाएगी. तब ऊपरी दूध लगा लेना चाहिए. यदि बच्चा छः महीने से ऊपर हो गया है तो स्तनपान वैसे भी छुड़ाया जा सकता है. इसी तरह मासिक स्राव के समय भी मा स्तनपान करा सकती है. पर इस अवधि में तनाव के कारण दूध की मात्रा कम हो जाए तो ऊपरी दूध का साथ प्रयोग करना चाहिए और जब पुनः पर्याप्त दूध आने लगे तो ऊपरी दूध बंद कर देना चाहिए.

कामकाजी माताएं भी काम पर जाने के कारण दिन भर शिशुओं को स्तनपान नहीं करा सकतीं. तब भी उन्हें उस अतराल के लिए ऊपरी दूध देकर सुबह, शाम, रात को दी जाने वाली अंतिम खुराक के रूप में स्तनपान अवश्य कराना चाहिए कि शिशु मा के अलगाव को अधिक महसूस न करे.

अधिक चरबी वाले भोजन से मां को तो मोटापे की शिकायत हो ही सकती है, शिशु को भी भारी दूध के कारण कई तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है. अतः दूध पिलाने वाली मां का भोजन पौष्टिक, किंतु पाचक व संतुलित होना चाहिए, जिसमें तरल पदार्थों व हरी सब्जियों का अधिक समावेश हो.

मां के दूध के साथ शिशु को अतिरिक्त पोषण के लिए विटामिन 'ए', 'डी', 'सी' और कैल्शियम व लौह-तत्व की कितनी मात्रा देनी चाहिए, पानी क्यों व कितना पिलाना आवश्यक है, इस पर इस आहार-खंड के प्रारंभ में अलग से प्रकाश डाला गया है.

स्त्री-सौन्दर्य और स्तनपान

मां बनने के बाद हर आधुनिक युवती के मन में प्रायः यह प्रश्न उठता है कि स्तनपान कराने से उसके वक्ष-सौंदर्य में कमी तो नहीं आ जाएगी ? स्तन असमय तो नहीं ढल जाएंगे ? पर यह धारणा या भय निराधार है. यदि स्तनपान ठीक ढंग से कराया जाए तो स्तनों का आकार नहीं बिगड़ता, बल्कि उनके उठान में, सौंदर्य में वृद्धि ही होती है. कई मामलों में तो वक्ष का पूरा विकास ही मां बनने के बाद होता है. लेकिन जब स्तनपान के समय बच्चे को बाहों का सहारा दे कर ठीक स्थिति में न रखा जाए, उसे स्तन खींच कर दूध पीने दिया जाए, लेट कर गलत स्थिति में दूध पिलाया जाए तो निश्चय ही स्तनों में लगातार खिंचाव होने से वे बाद में ढीले पड सकते हैं. इसके साथ ही ब्रेजियर भी सही नाप की होनी चाहिए, जो स्तनों को ठीक सहारा दे सके और न अधिक कसी हो, न अधिक ढीली.

स्तनपान करते समय बच्चा जब निपल को चूसता है तो इस क्रिया से पिट्यूटरी ग्रंथियों से निकलने वाला एक हारमोन 'आक्सीटोसीन' जब गर्भाशय से प्रवाहित होता है तो इससे गर्भाशय को सिकुड़ कर वापिस अपनी जगह पर आने में सहायता मिलती है जो स्त्री स्वास्थ्य और सौंदर्य दोनों के लिए आवश्यक है. स्तनपान कराने का आनन्द भी मां को मानसिक रूप से जो सुख-सतोष प्रदान करता है, वह भी क्या चेहरे और वक्ष-सौंदर्य को बढ़ाने में सहायक नहीं ? तब मां-शिशु दोनों को कई दृष्टियों से लाभ पहुंचाने वाला और सही विधि के साथ वक्ष-सौंदर्य में वृद्धि भी करने वाला स्तनपान सौंदर्य में बाधक क्यों माना जाए ? उससे कतराने के बजाए क्यों न स्तनपान के सही तरीके पर ही ध्यान दिया जाए ? हां, सुगठित शरीर बनाए रखने के लिए साथ में नियमित व्यायाम पर भी ध्यान देना चाहिए.



19

ऊपरी दूध



यह तो निर्विवाद तथ्य है कि मां के दूध का स्थान कोई भी ऊपरी दूध नही ले सकता. उस पर यदि इसे देने के बारे में स्वच्छता, मात्रा आदि नियमों की आवश्यक जानकारी न हो तो ऊपरी दूध देकर शिशु-रोगों को निमंत्रण देने जैसी बात होगी.

पर प्रारंभ से ही मां का दूध कम हो या किसी कारण-वश उसमें कमी आ गई हो अथवा मां की बीमारी, अनुपस्थिति आदि कारणों से ऊपरी दूध देना अनिवार्य हो गया हो तो बहुत जरूरी है कि शिशु के स्वास्थ्य की दृष्टि से बोतल से दूध पिलाने के बारे में महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर ली जाए.

उपरी दूध के मुख्य प्रकार

ऊपरी दूध मुख्यतः तीन प्रकार का होता है :

1. जानवरों से प्राप्त तरल दूध.
2. दूध को सुखाकर बनाया गया पाउडर दूध.
3. गाढ़ा दूध या 'कंडेंस्ड मिल्क'. इनमे से प्रथम दो प्रकार के दूध ही बच्चों के लिए उपयुक्त हैं. इसलिए ये ही प्रचलित हैं.

कौन-सा दूध दें ?

भारत में बच्चो को प्रायः बकरी, गाय या भैंस का दूध पिलाया जाता है. शहरी क्षेत्रों में दुग्ध-डेयरियो से प्राप्त दूध मे वसा की एक निश्चित मात्रा होती है जो बच्चों के लिए प्रायः उपयुक्त रहती है. वसा की अधिकता के कारण भैंस का दूध शिशु के पाचन की दृष्टि से भारी पड़ता है. पर शिशु-आहार विशेषज्ञ डा. शांति घोष की राय में, शिशु के दूध मे पानी नही मिलाया जाना चाहिए. भैंस का दूध देना आवश्यक हो तो उबाल कर दूध की मलाई अलग कर लें, अन्यथा गाय, बकरी का या डिब्बे का दूध दें.

बच्चे को गाय, भैंस, बकरी का, डेयरी का या डिब्बे का कोई भी दूध दिया जा सकता है, जो भी आसानी से उपलब्ध हो सके. केवल नवजात शिशु को कुछ समय तक भैंस का दूध नही दिया जाना चाहिए. पर डिब्बे का दूध दें तो डिब्बे पर लिखे दूध के माप और उसमें मिलाए जाने वाली पानी की मात्रा का ध्यान रखें. पशुओं का दूध दें तो बिना पानी मिलाए दें, अन्यथा पानी मिले दूध से बच्चे को पूरा पोषण नही मिलेगा.

मां के दूध के साथ, जब तक विवशता न हो, ऊपरी दूध न दिया जाए और तीन-चार महीने की आयु से उसे साथ में पूरक आहार देना शुरू कर दिया जाए. मा के दूध में कमी आने पर छः महीने के शिशु को दिन में एक-दो बार गाय-भैंस का दूध, 150 से 200 मिली लिटर तक दिया जा सकता है. यदि बच्चा अर्ध-ठोस आहार ठीक से लेने लगा है तो मां के दूध के साथ यह बहुत जरूरी भी नही. एक वर्ष के बच्चे को दूध छुड़ाने के बाद अर्ध-ठोस व ठोस आहार के साथ दिन भर में 500-600 मिली लिटर से अधिक दूध की आवश्यकता नही. आहार पूरा लेने पर इससे अधिक दूध देने या बच्चे के साथ इसके लिए जबरदस्ती करने की कतई आवश्यकता नही.. उलटे जबरदस्ती के परिणाम से बच्चे को दूध से अरुचि व चिढ़ हो सकती है और वह दूध लेने से इकार कर सकता है.

दूध कैसे दें ?

चार महीने का बच्चा कटोरी से दूध पी सकता है. इसलिए कोशिश करनी चाहिए कि बच्चा, जितनी जल्दी हो सके, कटोरी या छोटे गिलास से दूध पीना शुरू कर दे, क्योंकि इन बर्तनों को बोतल की अपेक्षा साफ करना आसान होता है. नही तो बोतल, निपल की सफाई पर पूरा ध्यान देना चाहिए.

बच्चे को ताजा दूध हमेशा उबाल कर देना चाहिए. तीन-चार आउंस या सौ ग्राम दूध में एक चम्मच चीनी पर्याप्त है. दूध में पानी न मिलाए. भैंस का दूध हो तो उबाल कर मलाई अलग कर लें. कई बार पानी मिले दूध से बच्चा भूखा रह जाता है, वह भूख के मारे रोता है तो मां समझती है, उसके पेट में दर्द है और वह दूध को और पतला कर देती है. इससे बच्चा अपोषित,कमजोर रह जाता है और जल्दी-जल्दी बीमारी का शिकार होता है. अत. दूध के गाढे पतले या मात्रा के बारे मे कुछ शका हो तो स्वयं निर्णय न लें, अपने डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए.

डिब्बे का दूध : डिब्बे का दूध बाजार में कई तरह का मिलता है. जैसे : अमूल स्प्रे, ग्लेक्सो, अमूल बेबी फूड, लैक्टोजन, लैक्टोडेक्स, लीवर्स बेबी फूड आदि. ये सभी दूध किस्म मे लगभग समान होते है,पर ये कपनियां अपने एक निश्चित फार्मूले के आधार पर दूध तैयार करती है, इसलिए इसमे प्रोटीन, वसा, शर्करा, विटामिन 'ए', 'डी,' 'सी', 'बी' समूह, लौह, कैल्शियम आदि तत्वों की मात्रा मे मामूली भिन्नता पाई जाती है. अत: ये दूध कैसे दें, कितना दें, इस संबध मे डिब्बे पर लिखे निर्देशों का ही पालन करना चाहिए.

दूध को सुखा कर बनाया गया यह दूध ताजे दूध से महंगा होता है. पर इसका लाभ यह है कि यह गरमी मे खराब नही होता. अत: फ्रिज के अभाव में भी आसानी से काम चलाया जा सकता है. दूसरे इससे यात्रा के समय सुविधा रहती है. पर डाक्टर घोष की राय में, डिब्बे का दूध बच्चे को रास न आने पर एक कंपनी से दूसरी कपनी का दूध बदलने से कोई लाभ नहीं. इस संबंध में डाक्टर से राय लेनी चाहिए.

दूध कितना दें ?

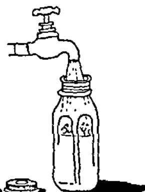
हर बच्चे को उसकी भूख के अनुसार तीन-चार घंटे के अंतर से दूध दिया जाना चाहिए. छ. सप्ताह से छोटे शिशु को भी ऊपरी दूध देना अनिवार्य हो तो यह अंतर दो से तीन घटे का हो सकता है व रात्रि में भी उसे एक-दो खुराक दी जा सकती है. वैसे आम तौर पर वजन के अनुसार दूध की मात्रा का अनुमान लगाना ठीक होगा. शिशु के प्रति किलो वजन के लिए 150 ग्राम दूध की मात्रा दिन भर के लिए पर्याप्त है. इस हिसाब से बच्चे का वजन 4 किलो है तो दिन भर में उसे 600-650 ग्राम दूध चाहिए.

आयु अनुसार दूध का अनुमान इस प्रकार लगाया जा सकता है :

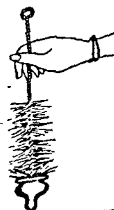
*आयु	मात्रा	दिन भर में कितनी बार
जन्म से एक मास तक	50-75 ग्राम (2-3 आउस)	6-7 बार
एक से दो मास तक	75-100 ग्राम (3-4 आउंस)	6-7 बार
दो से चार मास तक	100-125 ग्राम (4-5 आउस)	5-6 बार
चार से छह मास तक	150-175 ग्राम (6-7 आउंस)	5 बार
छह मास के बाद	175-200 ग्राम (7-8 आउंस)	4-5 बार



निपल और बोतल की सफाई







*डा० शान्ति घोष की पुस्तिका 'शिशु पालन' से साभार



फ्रिज की सुविधा होने पर शिशु की खुराक की तीन-चार बोतलें एक साथ तैयार करके रखी जा सकती हैं···

यदि तीन-चार महीने की आयु के बाद शिशु दूध-सूजी, फेरेक्स, केला आदि खा रहा हो तो उसे उसकी भूख के अनुसार ही दूध दें, चार्ट मे लिखी मात्रा अनुसार नही.

बोतल और निपल की सफाई

यदि आपके पास दूध की बोतलें एक साथ तैयार करके रखने के लिए फ्रिज है तो एक साथ छ-सात बोतलें रखना सुविधाजनक रहेगा. इन्हें सुबह एक बार ही धोने-उबालने मे आसानी रहती है, समय व ईंधन की बचत भी. पर बोतल एक-दो हों या छः-आठ, उन्हे साफ करने का तरीका समान है. हर बार बोतल व निपल को साबुन व ब्रुश से नल के नीचे खुले पानी मे धो ले, यदि निपल की चिकनाहट न जाए तो थोड़ा नमक रगड कर उसे साफ कर लें. फिर बोतलो की संख्यानुसार छोटे-बडे आकार के पतीले में ठडा पानी भर कर उबलने के लिए रख दें. दस मिनट तक उबलने के बाद पतीला उतार कर, ढक कर रख दे.

निपलो को अलग छोटी पतीली में उबालें व पांच मिनट तक ही उबालें ताकि अधिक उबलने से वे ढीली न पड़ जाएं. इसी तरह बोतलो को ठडे पानी में डुबोकर ही पतीला आग पर चढाना चाहिए, अन्यथा गरम पानी में डालने पर उनके टूटने का भय रहता है. दूध डालने से पूर्व बोतल को सुखा लेना चाहिए पर बोतल को पानी से तभी निकालना चाहिए, जबकि दूध पिलाना हो

यदि घर मे फ्रिज है तो सभी बोतलें पानी से निकाल, सुखा कर उनमें तैयार दूध भर कर सभी बोतलें फ्रिज मे रख लें. पर पिलाते समय सीधे फ्रिज से निकाल कर ठंडा दूध न मिलाए. सही तरीका है, एक कटोरे मे तीन इंच तक थोडा गरम पानी भर कर शीशी उसमें रख दें पिलाने लायक सही तापमान पर दूध गरम हो जाने पर शीशी पानी से निकाल लें व दूध शिशु को पिला दे. इस तरह सारी बोतलें एक साथ धोने, उबालने, भरने मे आसानी रहेगी. पर बिना फ्रिज वाले घर मे एक-एक बोतल ही समय पर पानी से निकाल, सुखाकर उसमे ताजा, तैयार किया दूध भरना चाहिए.

यह ध्यान रखना भी जरूरी है कि बोतलों को डिटॉल या अन्य कीटाणुनाशक दवा से साफ न किया जाए. उन्हे उबाल कर ही विसक्रमित करना चाहिए. यदि विसक्रमण के लिए बोतल उबालने के झंझट से बचना ही चाहे तो एक लिटर पानी मे एक बड़ा चम्मच भर 'मिल्टन सोडियम हाइपोक्लोराइड' का प्रयोग बेहतर होगा. यह केमिस्ट की दुकान से मिल जाएगा. इस प्रकार करें: इस दवा मिले पानी मे बोतलो को तीन-चार घटे तक डुबोए. फिर बोतल साफ, सूखी करके प्रयोग मे लाए.

डिब्बे का दूध बनाने के लिए प्रयोग मे आने वाली कटोरी-चम्मच को भी बोतलों के साथ ही उबाल लेना चाहिए.

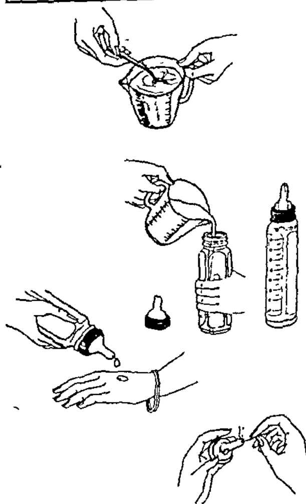
दूध पिलाने के बाद बोतलों व निपलों को एक पानी भरे बड़े ढक्कनदार पतीले मे डालते जाना चाहिए. शाम तक जितनी बोतलें खाली हो, उन्हे ब्रुश से अच्छी तरह धोकर सुबह उबालने वाले पानी के पतीले में डालकर रख





* दूध तैयार करने की विधि :





"लेकिन उसे दूध पिलाने से पहले बोतल को अच्छी तरह हिलाकर, गरम पानी में रख कर गरम अवश्य कर लें

दें. रात की एक खुराक को अलग से गरम कर साफ की गई बोतल मे भरना ठीक होगा. सुबह से शाम तक का दूध ही एक साथ बोतलों में भरकर फ्रिज मे रख दें.

डिब्बे का दूध बनाने की विधि

एक पतीली में पानी उबाल लें. अपने हाथ साबुन से धो कर पोछ लें. एक कटोरी या प्याली में डिब्बे के भीतर दिया माप का चम्मच पूरा भरिए. यह न कम भरा हो, न ऊचा भरा हुआ हो, सतह या 'लेवल' तक भराव से आपका माप सही बैठेगा. बच्चे की आयु अनुसार माप से पाउडर प्याले में निकालिए. पहले थोडे पानी (उबले हुए) मे घोल कर फैंटिए कि गुठली न पड़े. फिर माप अनुसार शेष पानी मिला कर चम्मच से हिला लीजिए. इस दूध में अलग से चीनी नहीं मिलानी पडती.

*ग्लैक्सो बेबी केयर बुक से साभार

बोतल से दूध कैसे पिलाएं ?

बच्चे की बढ़त व नीरोगता सही ढंग से दूध पिलाने पर भी निर्भर करती है. अत: इन बातों पर ध्यान दें :

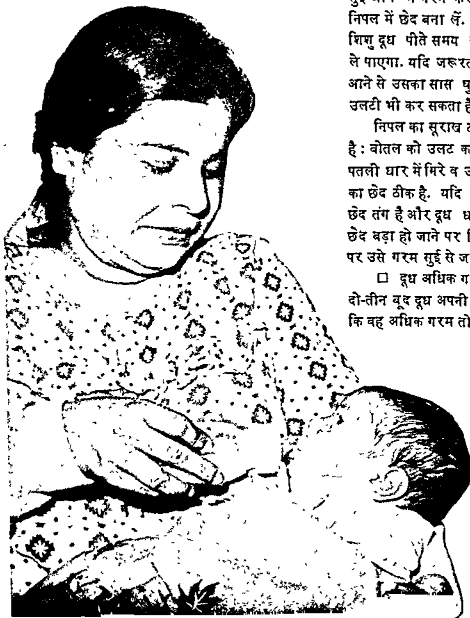
□ दूध पिलाते समय बच्चे को गोद मे लिटा, बांया हाथ उसके सिर के नीचे रखिए जिससे उसका सिर कुछ ऊंचा रहे. सीधा लेटे हुए शिशु को दूध न पिलाएं. इससे दूध के फेफड़े में जाने का भय रहता है. बिस्तर पर लेटे हुए भी उसका सिर जरा ऊंचा उठाया जा सकता है. पर दूध पिलाते समय शिशु को गोद में ही लीजिए ताकि उसे मां का प्यार मिले और वह भावात्मक सुरक्षा अनुभव करे.

□ बोतल में एक ही बार पूरी खुराक जितना दूध भरिए व उसे इस तरह पकड़ कर जरा ऊंचा उठा कर रखिए कि निपल दूध से भरा रहे. आधा निपल खाली रहने पर बच्चा दूध के साथ हवा भी निगलेगा और उसे अफारा, पेट दर्द आदि कष्ट होंगे. हवा निगल लेने मे वह पूरा दूध भी नही ले पाएगा व भूखा रह जाएगा.

□ बच्चा दूध ठीक पी सके व पूरी खुराक ले पाए, इसके लिए निपल का छेद भी सही होना चाहिए. निपल मे छेद बना होता है. वह न बना हो या तग हो तो कपड़ा सीने की सुई आग मे गरम करें. जब वह लाल हो जाए तो उससे निपल में छेद बना लें. यदि निपल का छेद छोटा होगा तो शिशु दूध पीते समय जल्दी थक जाएगा व पूरा दूध नही ले पाएगा. यदि जरूरत से बडा होगा तो ज्यादा दूध मुंह मे आने से उसका सास घुटेगा; जल्दी-जल्दी दूध पी कर वह उलटी भी कर सकता है. अत: सूराख ठीक रखें.

निपल का सूराख ठीक है कि नही, यह देखने का तरीका है : बोतल को उलट कर देखिए, यदि पहली बार दूध एक पतली धार में गिरे व उसके बाद बूंद-बूंद कर के तो निपल का छेद ठीक है. यदि शुरू मे भी एक बूंद दूध निकले तो छेद तंग है और दूध धार में निकलता रहे तो छेद बड़ा है. छेद बड़ा हो जाने पर निपल बदल दीजिए. छेद छोटा होने पर उसे गरम सुई से जरा बडा कर दीजिए.

□ दूध अधिक गरम न हो. शिशु को पिलाने से पूर्व दो-तीन बूंद दूध अपनी हथेली पर निकाल कर देख लीजिए कि वह अधिक गरम तो नही ? दूध अधिक ठंडा भी नही



निपल आधा भरा रखने से शिशु दूध के साथ हवा भी निगल लेगा...

दो बार वह कुछ अधिक या कम लेता है तो चिंतित होने की आवश्यकता नहीं.

□ हर बार बच्चे को दूध पिलाने के बाद उठा कर कंधे से लगाएं व उसकी पीठ थपथपा दें. गोद में बैठाकर भी पीठ थपथपा सकते हैं. पर उसे दूध पीने के बाद सीधे लेटे नहीं रहने देना चाहिए. उठा कर पीठ थपथपाने से वह डकार ले लेगा व दूध चूसने के साथ थोड़ी मात्रा में निगली हवा बाहर निकाल देगा. इस तरह दूध उसे आसानी से पचेगा व वह पेट खराबी व उल्टी आदि से बचा रहेगा. दूध पिलाते समय बच्चे का सिर व निपल जरा ऊंची रखने व निपल पूरी भरी रखने से बच्चा कम से कम हवा निगलता है, फिर भी उठाकर, कंधे से लगाकर उसे डकार दिलाना चाहिए.



...अतः बोतल को इस प्रकार पकड़ें कि निपल पूरा भरा रहे

होना चाहिए. वैसे गरमी के दिनों उसे फ्रिज में ठंडा किए बिना सामान्य ठंडा दूध दिया जा सकता है, यदि वह पसंद करे.

□ दूध में चीनी इतनी हो कि दूध हल्का मीठा व सुग्राह्य हो. यदि बच्चे को कब्ज हो तो चीनी की मात्रा बढ़ाई जा सकती है. पर चीनी के बदले दूध में ग्लूकोज न मिलाएं, इससे बच्चे का पेट फूलने का डर रहता है.

□ यह आवश्यक नहीं कि हर बार बच्चा उसी निश्चित मात्रा में दूध पिए. अपनी भूख अनुसार यदि एक-

इस प्रकार बोतल व निपल की शुद्धता, सफाई, अपने हाथों की सफाई, गोद में बच्चे की स्थिति और दूध पिलाते समय बोतल की स्थिति, दूध की किस्म, मात्रा, समय आदि का ध्यान रख कर चलने व ये थोड़ी सी सावधानियां बरतने से आपका लाड़ला हंसता-खेलता बढ़ता रहेगा. वह दस्तों की बीमारी, कब्ज, अफारा, पेट दर्द आदि तथा कई संक्रामक रोगों से भी बचा रहेगा.

जब भी बच्चा ले सके, उसे बोतल के बजाए कप या कटोरी या छोटे गिलास में दूध पिलाने की कोशिश करें और उन बर्तनों व बच्चों के हाथों की सफाई का ध्यान रख



लें. पर दूध अपना पिलाए या गाय, डिब्बे का बोतल द्वारा, हर बार मा को अपने हाथों की भी सफाई का पूरा ध्यान रखना चाहिए.

ध्यान रहे, भूखे रहने वाले अपोषित बच्चों पर ही बीमारियों का बार-बार आक्रमण होता है और अस्वच्छता जनित स्थितियों मे ही सक्रमण (इफेक्शन) का खतरा बढ़ता है. अनेक बार यह खतरा घातक भी सिद्ध होता है. इसीलिए चिकित्सीय राय मे या तो शिशु को मां का दूध ही पिलाए और तीन महीने बाद साथ मे पूरक आहार शुरू कर दें या ऊपरी दूध पिलाना आवश्यक हो तो बोतल, निपल, हाथों, बर्तनों की स्वच्छता का पूरा ध्यान रखें. ●

दूध पिलाने के बाद बच्चे को इस तरह कंधे से लगा कर थपथपाने से वह दूध के साथ निगली हवा निकाल देगा

*हर बार दूध तैयार करते समय अपने हाथों को साबुन से अच्छी तरह धोकर सुखा लें.

*डिब्बे के अंदर दिए गए नाप को दबाकर या सतह से अधिक न भरें. अधिक गाढा दूध बच्चे की पाचन क्रिया पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है.

*दूध तैयार करने के लिए पानी गरम अवश्य हो पर खौलता हुआ न हो, इससे दूध में विद्यमान वसा के गुण नष्ट हो जाते है.

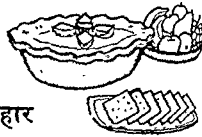
*बोतल मे बचा हुआ दूध बच्चे को दोबारा गरम करके न दें.

*जहां तक हो सके हीट प्रूफ बोतल ही खरीदें ताकि उबालने से टूटें नही.

*हर बार दूध पिलाने के बाद निपल और बोतल को ठंडे पानी से अच्छी तरह धो दें. निपल में चिकनाई रहने से वह जल्दी खराब हो जाता है.

*बोतल से दूध पिलाते समय भी बच्चे को गोद मे लेकर ही दूध पिलाएं ताकि वह स्तनपान के समय मिलने वाले स्नेह, सान्निध्य व मा के सामीप्य मे वंचित न रहे.

20



पूरक भोजन व ठोस आहार

[सुप्रसिद्ध बाल-आहार विशेषज्ञ डा० शांति घोष से साक्षात्कार पर आधारित]

दूध के अलावा बच्चे के खानपान के बारे में हमारे देश के विभिन्न भागों में विभिन्न धारणाएं व रीतियां प्रचलित हैं. और उसी अनुसार घरों में शिशु को अर्ध-ठोस व ठोस आहार शुरू कराया जाता है. प्रायः छ. से नौ महीने की आयु के बीच 'अन्नप्राशन' संस्कार द्वारा अनाज की चीजें खिलाना शुरू करते हैं.

पर यह संस्कार भी अधिकतर शहरी मध्यम वर्गों तक ही सीमित है. गरीब ग्रामीण तबकों में ऐसा कोई नियम न होने पर भी प्रायः कमजोर बच्चे मां के सूखे स्तनों से चिपटे रहते हैं. बीच-बीच में कभी उन्हें थोड़ा भात दे दिया जाता है, कंजी पिला दी जाती है या रोटी का एक टुकड़ा पकड़ा दिया जाता है, पर छोटे बच्चे को भी रोज नियम से कुछ खिलाना है, यह बात माताएं जानती ही नहीं, इसीलिए इन वर्गों में कुपोषणजन्य रोग अधिक पाए जाते हैं. 'मरास्मस' या सूखा रोग का कारण अभाव या गरीबी से अधिक अज्ञानता ही होता है, अन्यथा शिशु की खुराक पर अलग से कुछ विशेष खर्च करने की जरूरत नहीं होती. जो बड़े खाते हैं, उसी का बिना मिर्च-मसाले वाला नरम अंश बच्चे को दिया जा सकता है.

शहरी शिक्षित वर्गों में यद्यपि बच्चे की खुराक व देख-भाल के प्रति माता-पिता में अधिक चेतना देखी जाती है, पर अज्ञानता, पूर्वाग्रह व वहम यहां भी माताओं के आड़े आते हैं : जैसे केला या अमुक चीज से बच्चे का पेट खराब हो जाएगा, संतरे के रस से उसे सरदी लग जाएगी आदि. इन कारणों से भी छोटे बच्चे सुलभ होते हुए भी संतुलित खुराक से वंचित रह जाते हैं.

राजधानी के सुप्रसिद्ध सफदरजंग अस्पताल के बाल-रोग विभाग की भूतपूर्व अध्यक्ष एवं भारत की सुप्रसिद्ध बाल-आहार-विशेषज्ञ डा० शांति घोष ने संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय बाल आपातनिधि (यूनीसेफ) की ओर से भारतीय माताओं-बच्चों की स्थितियों का विशेष अध्ययन कर जो निष्कर्ष प्रस्तुत किए हैं और 'वालन्टरी हैल्थ एसोसिएशन आफ इंडिया' के प्रकाशनों द्वारा उनके जो उपयोगी सुझाव सामने आए हैं, वे ही सुझाव आज देश के बड़े अस्पतालों व स्वास्थ्य-केन्द्रों पर कार्यरत कार्यकर्त्ताओं के लिए निर्देशक सिद्धांतों के रूप में अमल में लाए जा रहे हैं.

राजधानी के विभिन्न अस्पतालों के शिशु-स्वास्थ्य केंद्रों में डा. शांति घोष द्वारा सुझाए बालाहार के चार्ट ही टंगे देखकर मैंने डा. घोष से स्वयं मिलने व इस संबंध में उठने वाली शंकाओं के निवारण का निश्चय किया.

लीजिए, बच्चों की पूरक खुराक के बारे में पहले उनके सुझाव व फिर आपके मन में प्रायः उठने वाली शंकाओं के उनके द्वारा दिए गए समाधान यहां प्रस्तुत हैं :

डा. घोष के अनुसार, शिशु की पोषण आवश्यकताओं के विषय में मां को अल्प ज्ञान होने के कारण 6 मास से 2 वर्ष की आयु के बीच का समय बच्चे के लिए अनवरत भूख का समय होता है, क्योंकि इस काल में बच्चा तेजी से बढ़ता है, मां का दूध बहुत कम हो जाता है और मां को प्रायः यह पता नहीं होता कि बच्चे को क्या, कितना, कब व कैसे दूसरा पूरक आहार दिया जाए ?

शिशु को जब तक संभव हो, मां का दूध पिलाना चाहिए. पर तीन-चार महीने बाद शिशु की खुराक केवल दूध से ही नहीं पूरी हो सकती. अतः दूध के साथ कुछ और पूरक आहार बच्चे को देना होगा. यदि मां के दूध से शिशु का वजन नहीं बढ़ता तो इसका सामान्य कारण मां के दूध में पोषक तत्त्वों की कमी ही हो सकता है. ऐसी स्थिति में वह रोएगा, निरंतर अपनी उंगलियां चूसेगा व उसे कब्ज हो जाएगी. तब मां का दूध बढ़ाने के उपाय करने होंगे और इन उपायों के बावजूद यदि स्थिति में सुधार न हो तो शिशु को मां के दूध के अतिरिक्त ऊपरी दूध भी देना होगा (ऊपरी दूध देने के नियमों पर पिछले अध्याय में विस्तार से लिखा जा चुका है.)

पर दूध मां का दिया जा रहा हो, ऊपरी या दोनों तीन-चार मास के बाद शिशु को अर्ध-ठोस आहार देना अवश्य शुरू कर देना चाहिए. इस समय तक बच्चे का वजन भी 5 किलोग्राम तक हो जाता है तो उसे उचित विकास के लिए रोज 500-600 कैलोरी की जरूरत होती है, जो केवल दूध से नहीं मिलती. इस समय दूध के साथ अर्ध-ठोस आहार भी शुरू कर देने से बच्चे को पूरी खुराक मिल सकेगी. वह ठीक गति से बढ़ सकेगा और पूरा पोषण मिलने पर अपने भीतर निरोधक क्षमता विकसित कर बार-बार बीमार नहीं पड़ेगा.

अर्ध-ठोस आहार : कैसे, कब ?

आयु तीन-चार मास

इस अवस्था में केले जैसे फल कुचले हुए या सूजी की खीर दें. सूजी भूनने में थोड़ा घी भी मिला लें तो कोई हर्ज नहीं, बल्कि इससे कैलोरी मूल्य बढ़ेगा. खीर शुरू में 1-2 चम्मच दें, फिर धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाते हुए तीन-चार सप्ताह तक 50-60 ग्राम या आधा कप तक ले आएं. खर्च कर सकने पर बाजार से खरीद कर फैरेक्स, नेस्टम, लेक्टोजन, बालामूल जैसे आहार भी बदले में दे सकते हैं और खर्च न कर सकने पर या खीर बनाने का झंझट न करने पर एक चौथाई से शुरू करके बढ़ाते हुए एक पूरा केला खिला सकते हैं.

साथ में थोड़ी मात्रा में पपीता, चीकू, आम व अन्य मौसमी फल या संतरे, मौसमी का रस भी दे सकते हैं. रस तो एक-दो महीने की आयु से ही शुरू कराया जा सकता है. पर अनार या सेब का रस न दें. यह सफाई से नहीं निकाला जा सकता और इससे बच्चे का पेट खराब होने का भी डर रहता है. संतरे या मौसमी का रस पहले एक चम्मच से शुरू करें, फिर धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाएं. तीन-चार हफ्ते बाद बच्चा एक बेबी-गिलास या एक कप रस ले सकता है. पर रस बहुत सफाई से अच्छी तरह हाथ धोकर निकालना चाहिए, नहीं तो संक्रमण से शिशु का पेट खराब होगा और आप रस को दोष देंगी.

संतरे का रस सरदी में भी बेखटके दे सकते हैं. केवल वह खट्टा और अधिक ठंडा नहीं होना चाहिए.

खीर सूजी के बदले चावल की भी (अच्छी तरह चावल गला कर) दे सकते हैं, पर स्टार्च युक्त होने से साबूदाने की खीर ठीक नही रहेगी, खुमानी व नाशपाती भी कुचल कर दे सकते है, पर सेब पका कर ही देना चाहिए. आप अपनी सुविधानुसार इनमें से कोई भी पूरक खुराक दें, उसकी मात्रा चम्मच-दो-चम्मच से शुरु करके तीन सप्ताह में लगभग 50 ग्राम तक ले आने की कोशिश करनी चाहिए.

आयु पांच-छः मास

अब तक बच्चा कुछ फल और खीर, फैरेक्स आदि खाने लगा है तो अब उसे मटर, गाजर, कद्दू, फलियां, हरे शाक उबाल कर या भाप में पका कर थोडी मात्रा में दिए जा सकते हैं. सब्जियों को काफी गलाइए, जरा सा नमक व घी मिलाइए व कुचल कर अर्ध-ठोस रूप में खिलाइए. बस उस में अधिक घी व मिर्च-मसाले नही होने चाहिए. केवल उबली सब्जियों का पानी या शोरबा देने से कोई लाभ नही, क्योंकि इसका आहार-मूल्य बहुत कम होता है. आलू भी अच्छा आहार है और उबले, कुचले आलू बच्चे पसंद भी करते हैं. इन सब्जियों की मात्रा भी उसी तरह धीरे-धीरे बढाते हुए 50 ग्राम तक लानी है यह आहार शिशु को पूर्व शुरू किए आहार फल या खीर के साथ अतिरिक्त दिया जाना चाहिए

आयु सात-आठ मास

अब शिशु को घर में पकने वाले सभी आहार नरम रूप में व थोड़ी मात्रा में दिए जा सकते हैं. बच्चे खिचड़ी बहुत पसद करते है. खिचडी, कुछ सब्जियां, दही, अडा, खीर, दलिया, दूध में भीगी डबलरोटी जैसे खाद्य पदार्थ उसे उसकी पसद व जरूरत अनुसार खिलाएं. अडा उबाल कर पहले केवल जरदी दें. बाद में साबुत अंडा खिलाएं और किसी भी तरह पका कर खिलाए. अच्छी गली दाल में मोटी नरम रोटी भिगो कर भी खिला सकते है.

इस आयु में बच्चा बैठने लगता है और दांत भी निकालने लगता है तो वह सभी चीजों को उठा कर मुह में डाल लेता है. उसे दात निकालते समय कुतरने व चबाने के लिए जरा सिकी हुई कडी रोटी का टुकड़ा, आटे में नमक व घी का जरा सा मोयन देकर बनाई गई छोटी सी मठरी, बिस्कुट, गाजर का टुकड़ा, सिकी हुई डबलरोटी जैसी चीजें भी पकड़ाइए. लेकिन खाद्य वस्तु की, कटोरी चम्मच की व बच्चे के हाथ की सफाई का ध्यान रखना होगा कि बच्चा उसे मिट्टी में, गंदगी में सान कर मुंह में न डालें, अथवा वस्तु पर मक्खी बैठने पर वह चीज उठाकर बच्चा मुंह में न डाले. उसके खाने की सभी चीजें स्वयं भी अच्छी तरह हाथ धोकर सफाई से बनाएं व ढक कर रखें, अन्यथा गंदगी से संक्रमण लगने पर बच्चा बीमार होगा और आप दोष रखेंगे उसके खाने पर दांत निकालने पर.

बच्चा ठीक खाए-पिए और खान-पान के बारे में स्वच्छता का पूरा ध्यान रखा जाए तो दांत निकालते समय बच्चा बीमार नही पड़ेगा. आंव दुखने या दस्त लगने का संबंध दांत निकालने से नही, अस्वच्छता और बच्चे के कुपोषण से है.

आयु नौ-दस मास

इस अवस्था में उपरोक्त सभी आहार दें व उनकी मात्रा धीरे-धीरे बढाएं. मासाहारी परिवार अब अच्छी तरह गला कर, कुचल कर, मांस-मछली भी दे सकते हैं.

आयु एक-डेढ़ वर्ष

अब बच्चा घर में तैयार होने वाली सभी चीजें थोड़ी-थोड़ी खा सकता है. केवल वे खाद्य पदार्थ अच्छे पके, नरम और बिना मिर्च-मसाले के होने चाहिए. इस अवस्था तक मां के स्तनों में दूध बहुत कम रह जाता है या छुडा दिया जाता है तो बच्चे की कैलोरी (लगभग 1000) की आवश्यकता अर्ध-ठोस व ठोस पदार्थों से ही पूरी करनी होती है

इस आयु के बच्चों को यों सभी माताए प्रायः कुछ न कुछ खिलाती हैं पर आहारों की मात्रा इतनी कम होती है कि बच्चे को उनसे पूरा पोषण नही मिल पाता. अतः बच्चे को उसकी पसद अनुसार बदल-बदल कर आहार देने, उसे खाने के लिए प्रोत्साहित कर, मात्रा धीरे-धीरे बढाने और उबली सब्जियों, खिचडी आदि के साथ थोड़ी मात्रा में घी मक्खन भी देने की आवश्यकता है. मीठी खीर, केला व अन्य मीठे फल अडा और थोडे घी से युक्त खिचड़ी या मक्खन युक्त टोस्ट देने से बच्चे को शक्तिवर्धक खुराक मिल सकेगी उसे दाल और खिचड़ी बहुत पतले रूप में भी नहीं दी जानी चाहिए. वह ठीक तरह गली हुई और अर्ध-ठोस हो कि उसका आहार-मूल्य कम न हो. यह इसलिए भी जरूरी है कि छोटा बच्चा एक बार में अधिक नही खा सकता.

साल भर से ऊपर के बच्चे को आधा लिटर से अधिक दूध की आवश्यकता नही. यदि वह ये सारी चीजें खा रहा है तो इससे अधिक दूध लेगा भी नही. अतः इस मामले में उसके साथ जबरदस्ती न करें. बच्चा दूध पीने से इंकार करे

तो दूध, दलिए या खीर के रूप में दे सकते हैं.

बच्चे का पेट छोटा होता है अतः उसे एक समय में अधिक खिलाने की चेष्टा भी न करें. वह एक बार में अधिक नहीं खा सकता, इसलिए यह खाना उसे दिन में पांच-छह बार थोड़ा-थोड़ा करके दिया जाना चाहिए, अन्यथा जबरदस्ती या लालच-फुसलाहट का परिणाम होगा, बच्चे की खाने के प्रति अरुचि, उसका इंकार और आपकी परेशानी.

आयु डेढ़ दो साल

अब आपका बच्चा सब कुछ खा सकता है. उसे घर में बनी सभी चीजें दें. केवल दाल, सब्जी बिना मिर्च-मसाले वाली या कम मसाले वाली दें. खाने की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ाए. खाने में हरी सब्जिया भी अवश्य दें. दूध अधिक पिलाने से निश्चय ही बच्चा कम खाएगा. अतः आधा किलो दूध इस उम्र मे पर्याप्त है.

इस तरह आपने देखा, बच्चे को खिलाने के लिए कुछ विशेष झझट करने या कुछ अतिरिक्त खर्च करने की आवश्यकता नही पडती. केवल कुछ बातो की जानकारी रखने, बच्चे पर ध्यान देने, उसे कुछ समय देने और सूझबूझ से उसे खाने के लिए प्रोत्साहित करने की ही जरूरत है. आप अपनी आमदनी व खान-पान की पारिवारिक परंपरा के अनुसार ही सस्ती-महंगी चीजों में से चुनकर अपने बच्चे



प्रोटीन के लिए अंडा भी दें

का भोजन जुटा सकते हैं. कम बजट हो तो जरूरी नहीं कि फलों का रस या अंडा दिया ही जाए. बदले में दूसरी चीजों —दाल, खिचड़ी आदि से भी काम चल सकता है, बशर्ते कि बच्चे को पूरी खुराक और बढ़ती के लिए पूरा पोषण मिले.

पहले माल में बच्चा बहुत तेजी से बढ़ता है और उसका वजन पैदायशी वजन से लगभग तिगुना हो जाता है. इसलिए इस शीघ्र गति से बढ़ने की आयु में यदि पूरी खुराक नहीं मिलेगी, तो वह कमजोर रह जाएगा. डा. शांतिघोष की राय में, 'एक साल के बच्चे को मा से आधी खुराक चाहिए'. अत: माताओं का यह सोचना गलत है कि अभी यह बहुत छोटा है तो इसे ज्यादा खाने की क्या आवश्यकता है. याद रखिए, बच्चे को बडा होने पर नहीं, बडा होने के लिए पूरा खाने की जरूरत है.



एक वर्ष की आयु के बाद यदि बच्चा पसंद करे तो उसे अपने हाथ से खाने दें

शिशु आहार संबंधी शंका-समाधान

हमारी परंपरागत धारणाओं व नए वैज्ञानिक अध्ययनों-खोजों के निष्कर्षों में कुछ विरोध हो सकता है, इसलिए घरों में प्रचलित खान-पान संबंधी रीतियों, आदतों और बड़ी-बूढ़ियों के निर्देशों पर चलने वाली नई माताओं के मन में बाल-आहार संबंधी इन डाक्टरी निर्देशों को लेकर कुछ शंकाएं उठनी स्वाभाविक हैं. इसलिए उनका समाधान भी जरूरी है. ये ही कुछ प्रश्न लेकर मैं डा० शांतिघोष के सम्मुख उपस्थित हुई और उनसे प्राप्त उत्तर आपके सामने प्रस्तुत कर रही हूं :

•"डा० घोष, बच्चों की खुराक के बारे में आपने जो चार्ट दिए हैं, हमारे अनुभव से बच्चे खुराक की इतनी मात्रा ले नहीं पाते, तो उन्हें इतना खाना खिलाएं कैसे ?"

"यदि आप उन्हें दिन मे कई बार शीशी भर-भरकर दूध पिलाती रहेंगी तो निश्चय ही वे इतना अतिरिक्त खाना नहीं खा पाएंगे. लेकिन जैसा कि मैंने पहले कहा है, छह महीने की आयु के बाद केवल दूध से ही उन्हें पूरा पोषण नहीं मिल सकता. एक साल की आयु के बाद उनके लिए दिन भर में आधा लिट्र दूध पर्याप्त है. पर उनकी बढ़त व शक्ति के लिए उन्हें कैलोरी पूरी चाहिए. तो कैलोरी की यह पूर्ति अतिरिक्त खुराक से ही संभव है, वह भी केवल दाल के पानी, सब्जी के सूप या पतली खिचडी से नहीं, पहले अर्ध-ठोस व फिर ठोस भोजन से. इसलिए तेजी से बढ़ने वाली इस उम्र मे उन्हे आहार दिया जाना चाहिए".

•"लेकिन दूध कम देने पर भी वे इतना खाना न ले पाएं तो ?"



एक वर्ष के बच्चे के लिए संपूर्ण आहार

"कैसे नहीं लेंगे, यहां हमारे अस्पताल के शिशु विभाग में आकर देखिए, हम उन्हें लगभग इतना ही खाना खिलाते हैं कि नहीं. बच्चों को थोड़ा-थोड़ा खिलाना शुरू करके धीरे-धीरे बढ़ाते जाने से उनकी भूख भी विकसित होती है, खाने में रुचि भी. बस धीरे-धीरे बढ़ाना चाहिए और उन्हें खाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए. एक ही बार में ज्यादा खिलाने के लिए जबरदस्ती नहीं करनी चाहिए और उनकी पसंद अनुसार आहार में थोड़ा अदल-बदल करते रहना चाहिए.

"याद रखिए, छोटे बच्चों को खिलाने के कोई खास नियम नहीं है, यह तो सामान्य ज्ञान की बात है. बड़ों की तरह वे भी किसी खाद्य पदार्थ को अधिक पसंद कर सकते हैं, किसी को कम. कभी उन्हें अधिक भूख हो सकती है, कभी कम. कम भूख होने या कोई चीज पसंद न होने पर उनके साथ जबरदस्ती करने से ही बहुत बार उन्हें खाने से अरुचि हो जाती है और वे इंकार करने लगते है. खाना खाने-खिलाने का समय खुशी का होना चाहिए, न कि परेशानी का.

"बच्चा चम्मच से खाना चाहे या हाथ से, आपके हाथ से खाना पसंद करे या स्वयं अपने हाथ-से, इस मामले में भी उसकी मांग का ध्यान रखें प्राय. बच्चे स्वयं खाना पसंद करते है. अत उन्हें 'फीडर' या 'एप्रिन' बांध दें व स्वयं खाने दें. शिशु ने कितना खाया है, इसका सही अनुमान भी तभी लग सकता है, जबकि उन्हें अलग कटोरी, प्लेट या थाली में परोसकर दें. सही खुराक के लिए कटोरी प्याले का माप रखना चाहिए. बर्तन की बनावट ऐसी हो कि उसे आसानी से साफ किया जा सके और उसके किनारे गोल हों, ताकि शिशु को चोट-खरोंच न लगे.

"शिशु हाथ से खाए या चम्मच से, बर्तनों व हाथों की स्वच्छता का ध्यान रखना जरूरी है. हाथों के नाखून कटे

एक वर्ष के बच्चे के लिए

गेहूं पर आधारित आहार

प्रातः	125 ग्राम दूध, 1 चम्मच चीनी		1 स्लाइस, या आधी रोटी		
			1 रोटी,	या	आधा कटोरी आटे का हलुवा
10 बजे	1 केला	या			
दोपहर	1½ रोटी		आधा कटोरी दाल		हरी सब्जियां
2 बजे साय	आधा कटोरी आटे का हलुवा	या	1 स्लाइस,		
4 बजे साय	125 ग्राम दूध, 1 चम्मच चीनी		1 स्लाइस, या आधी रोटी		
रात्रि	1 रोटी,		आधा कटोरी दाल		

एक वर्ष के बच्चे के लिए

चावल पर आधारित आहार,

प्रातः	125 ग्राम दूध 1 चम्मच चीनी		स्लाइस या ½ कटोरी चावल या सूजी खीर		
			1 कटोरी खिचड़ी	या	आधा कटोरी सूजी हलुवा
10 बजे	1 केला	या			
दोपहर	1½ कटोरी खिचड़ी	या	1 कटोरी चावल + ½ कटोरी दाल + हरी सब्जियां		
2 बजे सायं	आधा कटोरी सूजी हलुवा	या	आधा कटोरी खिचड़ी	या	1 स्लाइस,
4 बजे सायं	125 ग्राम दूध, 1 चम्मच चीना		स्लाइस 1 या ½ कटोरी चावल या ½ कटोरी सूजीहलुवा		
रात्रि	1 कटोरी खिचड़ी	या	आधा कटोरी चावल + आधा कटोरी दाल		

दो वर्ष के बच्चे के लिए

प्रातः	125 ग्राम दूध 1 चम्मच चीनी	1 स्लाइस या आधी रोटी	
10 बजे	1 केला या	1 रोटी या	आधा कटोरी खिचडी
दोपहर	1 कटोरी खिचड़ी या	1 रोटी + आधा कटोरी दाल	
2 बजे सायं	मूंगफली या	भुने हुए चने	
4 बजे सायं	125 ग्राम दूध, 1 चम्मच चीनी	2 स्लाइस या 1 रोटी	
रात्रि	1 कटोरी चावल या 2 रोटियाँ	आधा कटोरी दाल + हरी सब्जियाँ	

हों और अच्छी तरह धो-धुला लिए जाएं. मां कामकाजी है तो पीछे शिशु की देखभाल करने वाली बडी लडकी, आया आदि को भी सिखाया जाए कि वह शिशु को किस तरह समय-समय पर खाना खिलाए और खाना तैयार करने, रखने व खिलाने में किस तरह स्वच्छता के नियमों का पालन करे. शिशु की नीरोगता और बढ़ोतरी के लिए यह आवश्यक है."

*"क्या हमारे घरों में प्रचलित रीतियों के अनुसार बनाया और खाया जाने वाला सभी तरह का आहार छोटे बच्चों के लिए उपयुक्त है या उसमें कुछ सुधार की जरूरत है ?"

"सौभाग्य से हमारे यहा दाल-चावल की खिचडी, मिस्सी रोटी, साभर, दाल-भात, दूध-दलिया, दूध-रोटी (जिसका स्थान अब दूध-डबलरोटी ने ले लिया है), जैसे मिश्रित आहारो का चलन अच्छा है, जिनसे कारबोहाइड्रेट और प्रोटीन दोनों मिल जाते है. थोड़ा घी, तेल, चीनी, गुड भी इन आहारों मे मिल जाता है. जो शक्ति के लिए अच्छा है. दक्षिण मे टेपिओका, केला, केजी (चावल का माड) देने,बगाल मे चावल का मांड, भुने चावल का आहार और रसगुल्ला देने, राजस्थान व मध्यप्रदेश मे ज्वार-बाजरे से तैयार किया आहार देने, उत्तर भारत मे खिचडी, दलिया, दूध-सूजी और पजाब मे घी-शक्कर मे मसली रोटी (चूरी) देने का प्रचलन अच्छा है. अतः इन परंपरागत रीतियो के अनुसार शिशु को आहार देने मे कोई हर्ज नही घर के कामकाज मे व्यस्त माताओं की प्रवृत्ति भी यही होती है कि बच्चे के लिए अलग आहार तैयार करने की अपेक्षा परिवार के लिए तैयार किए गए आहार मे से ही थोड़ा निकालकर बच्चे को दे दिया जाए.

"देखना केवल यही है कि वह आहार शिशु को बिना मिर्च-मसाले के व नरम रूप मे मिले. जैसे रोटी, डबलरोटी दूध मे भिगो लें. चावल मथ कर उनमे खूब पकी हुई दाल मिला लें. सब्जिया उबालकर, अच्छी तरह गला कर मसल दें. खिचड़ी, दलिया बहुत पतला न हो, पर अच्छी तरह पका हो. दाल, सब्जी मे से कुछ मात्रा बच्चे के लिए निकालकर तब बडो की पसंद अनुसार उसमे मिर्च-मसाला मिलाए. बच्चे का खाना न रूखा हो, न घी-तेल से इतना अधिक तर कि पचाने मे भारी हो जाए और ये सभी आहार पौष्टिक तत्वो की रक्षा करते हुए स्वच्छता से तैयार

कर, परोसे व खिलाए जाए."

"लेकिन सबसे जरूरी बात यह है कि बच्चे के लिए खाना अलग से तैयार करें या घर में तैयार भोजन का अंश ही निकालकर उसके उपयुक्त बना लें, उसे खिलाएं अवश्य और पूरा खिलाएं."

* "बच्चे को जुकाम-खांसी हो तब भी क्या केला संतरे और मौसमी का रस दिया जा सकता है?"

"इस तथ्य में कोई सार नहीं कि केले या संतरे के रस से सरदी हो जाती है. बल्कि संतरे के रस में विटामिन 'सी' होने से यह रोग-निरोधक शक्ति के रूप में बचाव करेगा. केला भी कारबोहाइड्रेट, शर्करा और कैलशियम युक्त नरम आहार होने से बच्चे को पोषण देगा व उसे रोग से लड़ने की शक्ति प्रदान करेगा. अतः जुकाम-खांसी में यह खुराक बंद करने में कोई तुक नहीं. रस ठंडा व खट्टा नहीं होना चाहिए और केला भी अच्छा पका हुआ, मीठा हो, पर सड़ा-गला नहीं, अन्यथा बच्चे को इससे हानि होने पर आप दोष आहार को देंगी."

*"क्या बच्चे को ठंडा दूध पिलाया जा सकता है?"

"अवश्य. इसमें कोई हानि नहीं. यदि बच्चा इसे पसंद करे या उसे इसकी आदत डाली जाए. पर गरमी में भी यह केवल ठंडा, बरफ युक्त या बरफ में ठंडा किया नहीं और सरदी में उसे कुनकुना कर लिया जाए. ठंडा दूध भी उबाल कर ठंडा किया गया हो, कच्चा दूध शिशु को नहीं पिलाना चाहिए. क्योंकि उसमें कीटाणु हो सकते हैं."

*"अच्छा डाक्टर, यह जो सारी बोतलें एक साथ तैयार करके फ्रिज में रख ली जाती हैं और पिलाने के समय एक-एक बोतल को निकाल कर गरम पानी में रख दूध गरम कर लिया जाता है, यह विधि क्या ठीक है? यह दूध पीने से बच्चों को 'बाई' या पेट की गैस की शिकायत हो जाती है, इस बात में कोई सार है?"

"नहीं, इसमें कोई हानि नहीं होती, बशर्ते दूध स्वच्छता से तैयार किया गया हो. पेट में वायु की शिकायत ठीक ढंग से दूध न पिलाने पर शिशु द्वारा दूध के साथ हवा निगल लेने के कारण होती है. यदि बच्चा दूध पीने से पहले काफी रोया हो या दूध पिलाते समय निपल में पूरा दूध न भरा हो तो वह दूध के साथ हवा भी निगल लेगा. परिणाम स्वरूप पूरा दूध नहीं पी पाएगा और पेट में वायु भर जाने से बेचैन हो रोने लगेगा. ठीक ढंग से दूध पिलाने व पिलाने के बाद कंधे से लगा कर थपथपाने से वह डकार ले लेगा और उसे पेट में वायु की शिकायत नहीं रहेगी. हां, फ्रिज की सुविधा सभी को नहीं मिलती, तब हर बार दूध ताजा ही तैयार करना चाहिए."

*"बच्चों को आहार में नमक व मीठा कितना दिया जाए, इस बारे में भी कुछ सुझाव देंगी?"

"पहली व मुख्य बात तो बच्चे की रुचि, अरुचि की है. कुछ बच्चे मीठे पदार्थ पसंद करते हैं, कुछ नमकीन. उन्हें मन-भाता आहार मिलना चाहिए. लेकिन अधिक नमक के प्रति भी सावधान रहें व ज्यादा मीठा खाने के लिए भी प्रोत्साहित न करें. थोड़े से भी दांतों वाले शिशु को कुछ मीठा खिलाएं तो ऊपर से थोड़ा पानी पिला दें. बड़े बच्चों को मीठा खाने के बाद कुल्ला की आदत डालें ताकि मीठा मुंह में चिपका न रहे, अन्यथा इससे दांतों को हानि पहुंचती है."

"इस बात का भी ध्यान रखें कि बच्चों को खाना न अधिक गरम दिया जाए, न अधिक ठंडा. वह सामान्य गरम या सामान्य ठंडा होना चाहिए. संतुलित पौष्टिक भोजन के लिए नमकीन सब्जी, दाल, खिचड़ी व मीठा दलिया, खीर, केला आदि सभी चीजें अदल-बदल कर देनी चाहिए, इससे बच्चे की खाने में रुचि भी बनी रहती है." ●

*जहां तक हो सके मां बच्चे को अपना दूध पिलाए.

*बच्चा जब चार महीने का हो जाए तो उसे थोड़ा [illegible] नरम खाना देना शुरू कीजिए.

*बच्चे का पेट छोटा होता है, वह एक बार में [illegible] नहीं खा सकता, अतः उसे दिन में पांच-छह बार [illegible] खिलाइए.

*बच्चे के बीमार होने पर भी उसे खाना देते [illegible]

*जब बच्चा बीमार हो तो उसे ज्यादा पानी [illegible] खासकर जब उसे दस्त लगे हों.

*खाना पकाते समय स्वच्छता व सफाई [illegible] तरह पालन करिए. खाने को धूल व मक्खी से बचा[illegible]

*बच्चे को खाना खिलाने से पहले उसके [illegible] अच्छी प्रकार धोइए



21

दो वर्ष से ऊपर के बच्चे का आहार

पिछले आहार-चार्टों में आपने एक वर्ष के बच्चे के आहार और दो वर्ष के बच्चे के आहार की मात्रा मे मामूली अंतर को नोट किया होगा. इसका कारण है, प्रथम वर्ष मे बच्चे का विकास बहुत तेजी से होता है. यदि बच्चा जन्म के समय $2\frac{1}{2}$-3 किलोग्राम का है तो एक वर्ष का होने पर उसका वजन 8-9 किलो यानी लगभग तिगुना हो जाता है. दूसरे वर्ष के अत में यह वजन-वृद्धि औसतन 2.5 किलोग्राम होती है. इसके बाद दो से पाच वर्ष की आयु के बीच प्रतिवर्ष 2 किलोग्राम के लगभग वजन बढता है.

इसी तरह प्रथम वर्ष मे कद-वृद्धि यदि 25 सेंटीमीटर होती है तो दूसरे वर्ष मे यह कद-वृद्धि 12 सेंटीमीटर तक हो पाती है व फिर क्रमश. 9-7-6 सेंटीमीटर कद तीसरे-चौथे-पाचवें वर्ष मे बढता है

चूंकि बच्चे की खुराक की जरूरत इसी वजन-कद वृद्धि अनुपात से आकी जा सकती है, दो वर्ष से ऊपर के बच्चो के आहार की जरूरत को इसी पृष्ठभूमि में समझना होगा. बड़े बच्चो के बारे मे माताओं से अक्सर सुनने को मिलता है कि बच्चा कुछ खाता नही. इसका कारण बढत-दर व खुराक की जरूरत के इस अनुपात को न समझना ही है. दरअसल माताएं चाहती है, उनका बच्चा अब भी उतना ही दूध पिए साथ मे उतना ही खाना खाए, जैसा पहले खाता था तो यह एक गलत धारणा है.

स्कूल-पूर्व तैयारी

फिर भी दो से पांच वर्ष की आयु मे बच्चा बढ़त-प्रक्रिया मे है और काफी बढता है, उसकी खुराक पर अच्छी तरह ध्यान दिया जाना चाहिए. देखें कि वह ठीक खाए-पिए, खेले-कूदे, और उसका विकास ठीक हो. स्कूल भेजने से पूर्व उसके शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य, परिवार मे व्यक्तित्व-प्रशिक्षण, व्यवहार-प्रशिक्षण पर पूरा ध्यान दिया जाना चाहिए. यही समय है, जब उसका स्वास्थ्य बनाने के साथ उसमें अच्छी आदतों का भी विकास कर स्कूल जाने तक उसे एक स्वयनिर्भर व जिम्मेदार बालक बनाया जा सकता है.



इस तैयारी के लिए उसे चाहिए : संतुलित भोजन, खेल-कूद, व्यायाम, विश्राम, बिना किसी की मदद लिए स्वयं खाने, हाथ-मुंह-दांत साफ करने आदि की अच्छी आदतों का प्रशिक्षण. मानसिक स्वास्थ्य व भावात्मक विकास के विषय मे अलग अध्यायों मे लिखा गया है; स्कूल-पूर्व शिक्षण-प्रशिक्षण के बारे में भी. यहां केवल आहार को ही लें.

संतुलित भोजन

यदि बच्चे की आयु तीन वर्ष है और उसका वजन तीस पाउंड के लगभग हो तो उसे पंद्रह सौ कैलोरी वाला भोजन चाहिए—यानी पचास कैलोरी प्रति पाउंड वजन के हिसाब से. भोजन मे सभी पौष्टिक तत्वों का भी उचित समावेश हो. कारबोहाइड्रेट (चीनी, मीठी चीजें, चावल, गेहूं, मक्का, आलू आदि चीजें) से बच्चे को ताकत मिलेगी. प्रोटीन बढ़ने वाले बच्चे को बड़ों की अपेक्षा ज्यादा चाहिए, क्योंकि प्रोटीन (चना, मटर, दालें, दूध, दही, मांस, मछली, अंडा, पनीर, मूंगफली आदि) शरीर-निर्माण के लिए जरूरी है. यह आहार मे कैलोरी बढ़ाने के साथ उसे रुचिकर भी बनाती है. और साग-सब्जी, फल, दूध, मक्खन, खनिज-लवणों, विटामिनों की पूर्ति कर शरीर की रोगों मे रक्षा करते हैं.

इस तरह बच्चे के आहार को संतुलित, पौष्टिक रखने के लिए तीन बातें जरूरी हैं :

1. खुराक की मात्रा व उसका आहार-मूल्य बच्चे की आयु, वजन, कद अनुसार उसकी कैलोरी जरूरत के अनुकूल हो.

2. उसमें कारबोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, खनिज लवण व विटामिन—ये सभी जरूरी तत्त्व उचित अनुपात मे हों.

3. आहार परिवार की भोजन की आदतों के अनुरूप भी हो, परिवार के बजट के अनुरूप भी, ताकि बच्चों के भोजन पर अतिरिक्त व्यय या श्रम करने का भार न प्रतीत हो.

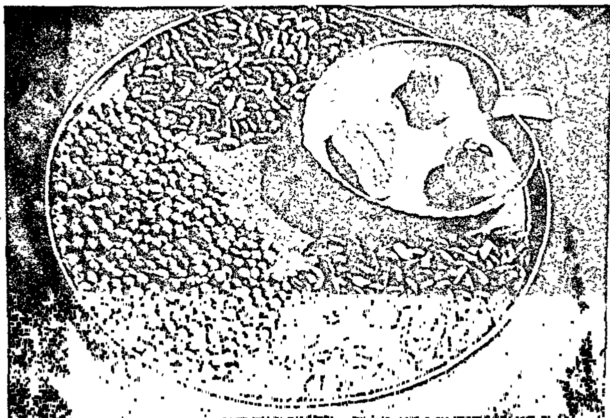
संतुलित पौष्टिक भोजन जुटाने के लिए अधिक खर्च करना आवश्यक नहीं. आप अपने घर के खानपान के नियमों, आदतों व अपनी जेब अनुसार ही यह आहार जुटाइए और बदल-बदल कर सभी चीजें बच्चों को दीजिए कि उनकी खाने मे रुचि बनी रहे और वे पूरा खाना खा सकें. इसके लिए थोड़ी सूझबूझ व जानकारी रखने की ही जरूरत है, अलग से अधिक खर्च करने की नहीं. जैसे मांस, मछली, अंडा नहीं खरीद सकते तो बदले मे बेसन मिली रोटी, सत्तू, दालें, मूंगफली जैसी सस्ती चीजों से भी प्रोटीन प्राप्त की जा सकती है. महंगे फल-सब्जी न लें सस्ते मौसमी फल, सब्जी लीजिए, पर यह बच्चे को दीजिए अवश्य.

शाकाहारी परिवार खर्च कर सकें तो अंडे, मछली की जगह पनीर, रसगुल्ला, पर्याप्त दूध बच्चे के भोजन में अवश्य शामिल करें. केला, दूध, बेसन की चीजें, दालें तो आवश्यक मात्रा मे सभी बच्चों को उपलब्ध कराई ही जानी चाहिए. पर बच्चा पूरा खाना खाता है और सस्ती-महंगी कोई भी पौष्टिक खुराक लेता है तो दिन भर मे आधा किलो दूध (दो बार में) से अधिक उसे नहीं चाहिए. यह भी न जुटा सकें तो पाव भर दूध दीजिए या सपरेटा दूध ही दीजिए. दूध में उसे अरुचि हो तो खीर, दही, दलिया आदि रूपों में दूध दिया जा सकता है.

इस तरह बच्चे को दी जाने वाली प्रोटीन, दूध, दही, अंडा, मांस, मछली, पनीर के रूप मे हो या दालें, चने, राजमा, मटर, मूंगफली बेसन की रोटी, सत्तू जैसी चीजों के रूप मे, बच्चे के आहार मे इन चीजों की बहुतायत रहनी चाहिए. साथ मे रोटी, चावल, केला, थोड़ा घी, मक्खन, एकाध मीठी चीज और साग-सब्जी-फल शामिल करने से बच्चे को ठीक विकास व नीरोगता के लिए संतुलित-पौष्टिक भोजन मिल सकेगा. हां नीरोगता के लिए भोजन पकाने, परोसने, खिलाने में स्वच्छता के नियमों का पालन भी बहुत जरूरी है. (इस पर भी पहले अलग से लिखा जा चुका है) मां स्वयं भी इन नियमों का पालन करे और बच्चे को भी शुरू से सफाई रखने, स्वच्छता से खाने की आदत डाले तो कोई कारण नहीं कि बच्चा बीमार पड़े या उसका विकास ठीक न हो.

आहार-चार्ट

परिवार की दिनचर्या, भोजन की आदतों, खाने के समय व बजट अनुसार ही बच्चे का दिन भर का आहार-चार्ट बनाना होगा. जैसे किसी परिवार मे दोपहर 12 बजे भोजन लिया जाता है तो बच्चा भी उसी समय ले सकता है. पर दो बजे तक देर से लंच लेने वाले परिवार मे बच्चे को 11-12 बजे खाना दिया जाना चाहिए. ठोस चीजें मांसाहारी व शाकाहारी चार्ट मे अलग-अलग होंगी. फिर भी आपकी सुविधा के लिए यहां एक नमूना-चार्ट दिया जा रहा है :



बढ़ते बच्चों के लिए प्रोटीन बाहुल्य आहार

आहार-चार्ट

सुबह 6-7 बजे	दोपहर 11-12 बजे	मध्याह्न 2-3 बजे	शाम 4-5 बजे	रात्रि 7-8 बजे	रात्रि 9-10 बजे
दूध के साथ दलिया और एक अंडा, डबलरोटी या बेसन की मिस्सी रोटी, मक्खन-टोस्ट, आलू, दाल वाला परांठा आदि.	परिवार के भोजन के अनुसार दोपहर का पूरा खाना.	केला, सेब, मतरा, संतरे-मौसमी का रस, बिस्कुट आदि,	भुने चने, या मूंगफली, या अन्य मेवे, या खीर, पुडिंग, आइस्क्रीम, रसगुल्ला में से कोई एक चीज (मीठी चीज व चने-मूंग-फली आदि अदल बदल कर भी दें)	परिवार के साथ पूरा खाना	दूध

लगता है. इसके विपरीत नई वस्तु एकदम पूरी मात्रा में देने पर वह उसे खाने से इंकार कर सकता है.

☐ खाना अदल-बदलकर देने, स्वादिष्ट बनाने और आकर्षक ढंग से परोसने पर भी उसमें बच्चे की रुचि व भूख बढ़ती है. आहार-संतुलन की दृष्टि से भी यह अच्छा है कि बारी-बारी से सभी पौष्टिक तत्त्व मिल सकें. इसके विपरीत अपनी पसंद व धारणानुसार एक जैसी चीजें रोज देने से भी बच्चों को उनसे ऊब व अरुचि पैदा होती है. आहार की पौष्टिकता के साथ उसे रुचिकर भी होना चाहिए, तभी उसे बच्चे पसंद करेंगे व तभी उससे उन्हें पूरा लाभ भी मिलेगा

शुरू से ही सावधानी बरतें

इस समस्या या परेशानी से बचने के लिए बच्चे को शुरू से ही खान-पान की ठीक आदतें डालने की जरूरत है. तीन महीने की आयु से ही स्तनपान के साथ (या बोतल के दूध के साथ) शिशु को नरम अर्ध-ठोस आहार देना प्रारंभ कर देना चाहिए – पौष्टिकता की दृष्टि से भी और खाने की आदत डालने की दृष्टि से भी. यह अर्ध-ठोस आहार शुरू में उसी समय दें, जब बच्चा भूखा हो. मां का दूध या ऊपरी दूध पिलाने के कुछ समय पूर्व बच्चे की भूख देखकर उसे पूरक आहार दें. यदि बच्चा दूध पीने के लिए ही रोए-मचले तो पहले दूध पिलाकर थोड़ी देर बाद खाना दिया जा सकता है इस तरह तीन-छह महीने की आयु में भी शिशु के साथ जबरदस्ती नहीं चलती, न की जानी चाहिए.

शुरू में कोई भी आहार चम्मच-दो-चम्मच से शुरू कर उसकी मात्रा धीरे-धीरे बढ़ाएं, ताकि बच्चा उसे स्वीकार कर सके, उसमें रुचि ले सके. आरंभ में यदि शिशु खाना थूक देता है तो इसका मतलब यह नहीं कि वह उसे पसंद नहीं, बल्कि यह है कि अभी तक उसने स्तन के या बोतल के दूध का स्वाद ही पहचाना है, वह अर्ध-ठोस खाना निगलना नहीं जानता. निगलने की क्षमता धीरे-धीरे विकसित कर लेने पर वह अपनी जरूरत अनुसार पूरी मात्रा में अर्ध-ठोस नरम आहार लेने लगता है.

उसे आरंभ में हर आहार नरम रूप में, अच्छी तरह पकाकर, कुचलकर, दाल या दूध में सानकर दें ताकि वह उसे आसानी से खा सके और पचा सके. अकसर माताएं इस बात पर आश्चर्य करती हैं कि दांत न रहने पर चार-छह महीने का बच्चा खाएगा कैसे? पर नरम और कुचला हुआ खाना खाने के लिए दांतों की आवश्यकता नहीं होती. बच्चा उसे निगलना व फिर धीरे-धीरे चबाना सीखकर खाने लगता है. फिर दो-तीन सप्ताह में पूरी खुराक भी लेने लगता है.

बच्चे को खाना न अधिक ठंडा दें न अधिक गरम, न मिर्च-मसाले वाला, न अधिक मीठा. उसके स्वाद, रुचि के विकास व उसके हितों के लिए शुरू से ही उसे संतुलित ढंग से चलाएं, अन्यथा पहले लाड़ में उसकी हर बात मान लेने (जैसे बच्चे चीनी फांकना चाहते हैं तो वही देते जाने) व बाद में उन चीजों से, उन आदतों से हटाने पर वे समस्या पैदा करेंगे.

बच्चे की पसंदगी-नापसंदगी को भी ध्यान में रखकर चलें. बड़ों की तरह वे भी कई चीजों को पसंद या नापसंद कर सकते हैं, समय पर भूख अनुसार कम-ज्यादा खा सकते हैं तो अपनी पसंद व निर्धारित मात्रा अनुसार ही नहीं चलना चाहिए. दर्जनों खाद्य पदार्थ हैं जो अदल-बदल कर दिए जा सकते हैं. बदले में समान आहार-मूल्य वाली दूसरी, तीसरी चीज दें. उनकी भूख के अनुसार ही खाने की मात्रा दें ताकि बच्चा जिद या चिढ़ में आकर खाने से इंकार न करे.

यदि बच्चा किसी समय नहीं खाना चाहता तो उसके साथ जबरदस्ती न करें, न ही उसे अतिरिक्त लाड़-प्यार, घूस या लालच देकर खिलाने की कोशिश करें. निर्धारित समय में यदि वह अपने साथियों के साथ खेल में मस्त है तो उसी समय जबरदस्ती वहां से उठा कर खाना देने पर भी वह खाने से इंकार कर सकता है. अतः इस मामले में कड़े नियमों, समय-सारिणी या अनुशासन में थोड़ी ढील भी चला लेनी चाहिए, अन्यथा 'मूड' या इच्छा न होने पर बच्चे के साथ जबरदस्ती का परिणाम उसकी इंकारी व आपकी परेशानी के सिवाय और क्या होगा.

बच्चा खाने में कुछ देर लगाता है तो स्वयं में धैर्य जुटा कर उसके लिए कुछ वैकल्पिक व्यवस्था कीजिए. आपकी जल्दबाजी से उसके 'मूड' का मेल न बैठने से भी बात बिगड़ती है. बच्चा स्वयं अपने हाथ से खाना चाहता है तो यह एक अच्छी बात है, उसे मना करने के बजाए आत्मनिर्भर बनाएं. इस मामले में टेबल, कपड़े खराब होने पर उसे केवल डांटने के बजाए इसकी व्यवस्था करें कि बच्चा बिना गिराए ठीक से खाना सीखे.

खाते समय उसे पुराना फ्राक या कुरता पहना दें, 'फीडर' या 'एप्रिन' बांध दें. आगे तौलिया रख कर खाना सिखाएं. नीचे न गिराने के लिए ठीक चम्मच पकड़ने या हाथ से ठीक खाने का प्रशिक्षण दें. इस तरह बच्चा संतुष्टि से



छोटे बच्चों को खीर, दलिया आदि चीजें खिलाते समय इस तरह एप्रिन, फीडर या तौलिया आदि बांध दें.

खाएगा और आपकी समय देने की समस्या भी हल होगी. वह कितना खाता है, इसका अनुमान लगाने के लिए भी उसे पूरा खाना अलग परोसना चाहिए.

खाने वाला बच्चा अधिक दूध न न पिए तो कोई हर्ज नही. उसे सुबह, रात दो बार दूध देना पर्याप्त है. वह भी न ले तो दही, खीर, दलिया, कस्टर्ड रूप में दें. पर दूध पीने के बारे मे उसके साथ जबरदस्ती न करें. पनीर, रसगुल्ला देने से उसे अच्छी प्रोटीन भी मिल सकेगी. अडा वह जिस रूप में लेना पसंद करे, उसी रूप मे दें. यह नही कि आधा उबला ही देना है. पूरा उबला, पोच अडा, आमलेट किसी भी तरह दिया जा सकता है. पहले केवल जरदी से शुरू करें व धीरे-धीरे बढ़ा कर पूरा अंडा खाने की आदत डालें. फलों मे भी सेब, अंगूर जैसे महगे फल जरूरी नही, बल्कि इनका बच्चे के लिए आहार-मूल्य मौसमी, आम, केला, पपीता,चीकू और नारगी से कम ही है. खुराक के बदले 'टॉनिक' देने की बात भी ठीक नही. बच्चे को निर्धारित समय पर (इसमे थोड़ा हेर-फेर भी कर सकते हैं) खाना खाने की आदत ही डालनी चाहिए.

बहुत से बच्चे खाने के समय न खाकर थोडी देर बाद फिर मांगने लगते हैं और बच्चा भूखा न रहे, यह सोच कर माताए उन्हे बार-बार खाने को देती रहती हैं, तो बच्चे इसे आदत ही बना लेते है. बच्चा यदि खाने के समय आहार न ले तो उसे हटा लें व फिर अगले समय से पूर्व बीच मे न दें. दो-चार बार ऐसा करने पर वे भूखे नही रहेगे और समय से खाने लगेंगे.

यदि बच्चे को समय पर न सभालने से उसने यह आदत विकसित कर ली है कि मां पीछे-पीछे फिरती रहे और वह मिन्नत कराता रहे, मा को खिझाता रहे तो उसे कुछ दिन ढीला छोड़ने से ही वह ठीक होगा. ऐसे बच्चे को कुछ समय के लिए मित्र या रिश्ते के उस परिवार मे छोड़ने से भी लाभ हो सकता है जहा कई बच्चे हो, परस्पर मिल-बांट कर या छीन-झपट कर खाते हों या खाना कम मिलने पर



बिगड़े नवाब : खाने में जोर-जबरदस्ती या अधिक लाड़-प्यार का नतीजा

उसे पाने व खाने के लिए संघर्ष करते हों. अधिक समस्या होने पर इस विषय मे बाल-आहार विशेषज्ञ व बाल-मनोवैज्ञानिक की सलाह भी ली जा सकती है.

घर मे कोई भी बच्चा स्वय को उपेक्षित, अकेला, असुरक्षित न अनुभव करे; वह पक्षपात, उपेक्षा या अन्याय का शिकार न हो; उसका बाल-सुलभ अधिकार न छीना जाए; उसकी बात अनसुनी न की जाए व उसकी जिज्ञासाओं का समाधान किया जाए. उसे अभिभावकों का विशेष रूप से मा का पूरा प्यार व ध्यान मिले, यह देखना चाहिए. अधिकतर इन्ही भावात्मक समस्याओं का शिकार हो बच्चे हठी, जिद्दी व उद्दंड हो जाते हैं और व्यवहारिक समस्याएं उत्पन्न करते हैं.

याद रखिए खाना खाने से इंकार करना बच्चे की एक मानसिक, भावात्मक या व्यवहार संबंधी समस्या ही है. समस्या के समाधान के बजाए पहली कोशिश यही होनी चाहिए कि समस्या उत्पन्न ही न हो. इसलिए बच्चे पर प्रारंभ से ही ध्यान दीजिए; समस्या उभरती दिखलाई पड़े तो विशेष रूप से, ताकि उसे आगे बढ़ने से रोका जा सके व बात अधिक बिगड़ने से पहले ही समय पर उसका समाधान किया जा सके.

बच्चे द्वारा खाने से इंकार करने की यह समस्या इधर शहरी क्षेत्रों में तेजी से उभर रही है इसीलिए इस पर यहां विस्तार से चर्चा करना जरूरी लगा. पर बच्चे को खान-पान संबंधी अच्छी आदतें सिखाने के लिए निम्न बातों पर भी ध्यान देने की जरूरत है :

—एक वर्ष का होते-होते बच्चे को सही समय पर पेट भरकर खाने की आदत पड़ जानी चाहिए. तीन-चार महीने की आयु मे ही नियमित रूप मे खिलाना शुरू कर देने से वह समय पर खाना सीख जाएगा और दिन भर अनाप-शनाप चीजें खाने या समय पर खाना न खाने की जिद नहीं करेगा.

—मीठी खीर आदि खिलाने के बाद छोटे बच्चे को थोड़ा-सा पानी पिला दें, बड़े बच्चे को हर बार खाने से पूर्व हाथ धोने, खाने के बाद व दोनों समय दांत साफ करने की आदत डालें. वह खाना खाते हुए अपने सने हाथ कपड़ों से न मले या खाना इधर-उधर गिराए नहीं,इसके लिए उसे प्यार से सिखाएं, न कि पहले बताएं नही और बाद में डांटने लगें.

—एप्रिन या फीडर बांध दें ताकि उसके कपड़े गंदे न हों, क्योंकि छोटा बच्चा थोड़ा-बहुत खाना गिराएगा ही. पर इस डर से उसे स्वयं खाने से मना न करें. प्याला, प्लेट, चम्मच गिलास ठीक पकड़ना सिखाने पर थोड़े दिनों में वह इसका अभ्यस्त हो जाएगा तथा आत्मनिर्भर भी. यह आत्मनिर्भरता जितनी जल्दी बच्चे में आए, उतना ही अच्छा अत: उसे सहयोग दें, मना न करें.

—बच्चा अपनी भूख के अनुसार खुराक की मात्रा का सही-सही अनुमान नही लगा पाता. यह ध्यान रखना मां का काम है कि उसने पहले कितना खाना खाया है व अब कितना ले सकेगा ? हर बच्चे की भूख या आवश्यकता भिन्न होती है. अत: दूसरे बच्चे के साथ तुलना करना ठीक नहीं होगा. बच्चे को सिखाएं कि वह उतनी ही चीज

ले, जितनी उसे खानी है, ताकि वह आधा आहार जूठा छोड़ने से बेकार न जाए. इसके लिए सर्वोत्तम उपाय है, पहले उसे पूरी मात्रा से थोड़ा कम दें व उसको पूछकर दोबारा परोसें.

—बच्चे को सिखाएं कि वह किसी का जूठा न खाए, न ही नीचे गिर गया भोजन या देर तक खुला पड़ा भोजन उठाकर मुंह में डाले. खाने से पूर्व उसके हाथों की स्वच्छता व बर्तनों की सफाई-शुद्धता का ध्यान भी मां को ही रखना है. प्रेमपूर्वक समझाते रहने से कुछ समय बाद वह स्वयं भी यह ध्यान रखने लगेगा. भोजन परोसकर खाने से पहले उसे जाली से ढक कर रखें. यदि कुछ भोजन बच गया है तो बच्चे को भी उसे ढक कर रखना सिखाएं, यदि वह दोबारा काम आने लायक है. वैसे कोशिश यही होनी चाहिए कि भोजन पूरा परोसा जाए, बच्चा उसे जूठा न छोड़े.

—बहुत-सी माताएं अधिक खिलाने के लालच से बच्चे को बहुत-सा खाना परोस देती हैं व बचा जूठा भोजन स्वय खाती रहती हैं. यह आदत ठीक नहीं. इससे अनुकरण द्वारा बच्चा भी गलत आदत सीखेगा और उसे भोजन को बरबादी से बचाने का गुण भी नहीं आएगा. थाली में बहुत-सा खाना जूठा छोड़ उसे बरबाद करने वाले बच्चों को गरीब बच्चों का उदाहरण देकर समझाइए कि इससे एक भूखे गरीब बच्चे का पेट भर सकता है और बताइए कि आहार का क्या महत्व है. इससे उसमें सामाजिक संवेदना व उत्तरदायित्व की भावना का भी विकास होगा और वह आहार की बरबादी वाली अपनी गलत आदत को सुधार लेगा.

—घर में कोई पालतू पशु-पक्षी है तो अक्सर बच्चे अपना आहार उसके साथ बांटकर खाने लगते हैं, जिसमें स्वच्छता का ध्यान न रख पाने से बच्चों को संक्रमण (इंफेक्शन) या 'एलर्जी' से होने वाले कई रोग लग जाने का डर रहता है. यही बात घर मे दूसरे छूत के रोगी बच्चे के सम्पर्क पर भी लागू होती है. ऐसी स्थिति में बच्चे व जानवर का और स्वस्थ बच्चे व रोगी बच्चे के खाने का स्थान, समय अलग-अलग रखना चाहिए. बच्चा पशु-पक्षी के साथ खेलने के बाद व खाने से पूर्व साबुन से हाथ अवश्य धोए, यह भी प्रशिक्षण उसे दिया जाना चाहिए.

—बच्चा दूसरे के घर जाकर कोई चीज न मांगे, स्वयं न उठाए, इसके लिए केवल उसी समय सीख देने या डाटने से काम नही चलेगा. उसे घर से खिला-पिलाकर ले जाएं व पहले ही प्यार से समझाकर ले जाएं. शिष्टाचार के तौर-तरीके शुरू से सिखाना अच्छा है. पर बहुत छोटे बच्चे के



सेहत का राज

साथ कड़े अनुशासन से काम नही लेना चाहिए, अन्यथा परिणाम उल्टा भी हो सकता है. बच्चा दूसरे के घर जाकर या यात्रा के समय घर जैसे खाने की ही जिद न करे, इसके लिए भी उसे समय-समय पर प्रशिक्षित करने की जरूरत होती है. रिश्ते मे, पड़ोस मे, स्कूल में व अन्य साथी बच्चों के साथ सभी तरह का खाना कभी-कभी मिल-बांटकर खाने से यह समस्या पैदा नही होती.

—बच्चा समय पर अपना पूरा आहार ले सके, इसके लिए यह भी जरूरी है कि उसे जरूरत से ज्यादा पैसे जेब खर्च के लिए न दिए जाएं. हर समय चाट-पकौडी, आइस्क्रीम टाफियां आदि खरीद कर न दी जाए. बाद में डाटने के बजाए प्रारभ से ही उसकी मांग, पसद व उसकी जरूरत की खुराक में तालमेल बैठा कर चलना चाहिए. दिन भर में एक बार कुछ पैसे खर्च करके खाने की उसकी इच्छा की पूर्ति भी की जा सकती है. पर इसके लिए उसके सगी-साथियों की आदतों का निरीक्षण करना होगा व वह अच्छी चीजें खरीद कर खाए, इस बात का महत्व समझाते हुए उसे समय-समय पर निर्देशित करना होगा.

—कुल मिला कर संक्षेप में बच्चों को खानपान की अच्छी आदतें लगाने के लिए :

1. उसके साथ जबरदस्ती न करें.
2. अपनी पसंद ही हर समय उस पर न थोपें.
3. अधिक दूध पर ही जोर न दें, सभी चीजें अदल-



अच्छी आदतों के विकास के लिए बच्चों को समूह में खाना सिखाएं

बदल कर खिलाएं कि उसे आहार में पूरी कैलोरी भी मिले
और पूरे पौष्टिक तत्व भी
4 खाने में बच्चे की रुचि बढ़ाने के लिए उसके भोजन
को स्वादिष्ट बनाने व आकर्षक ढंग से परोसने पर भी ध्यान
दें
5 सफाई-स्वच्छता का ध्यान रखें और बच्चे को भी
इसका प्रशिक्षण दें
6 भाई-बहनों, साथियों के साथ मिल-बांटकर खाना
भी सिखाएं
7 बच्चे को भोजन का महत्व समझाएं और प्लेट या
थाली में जूठा छोड़ अथवा भोजन बरबाद करने की आदत
को प्रोत्साहन न दें
8 [illegible] व [illegible] रवैया न अपनाएं. प्रेम
से व [illegible] ढंग से समझाएं. समय पर न सिखाने व
बाद में [illegible] का तरीका गलत है
9. बच्चा अभी छोटा है, मनमानी करने दो, बड़ा होने
पर [illegible] —यह धारणा भी गलत है. बच्चे
[illegible] हर कदम पर निर्दे-
[illegible] उन बातों
[illegible] अथवा कोई चीज उस

पर थोपने से उसके मस्तिष्क पर जोर न पड़े.
10. उसकी आयु से अधिक उससे अपेक्षा न करें
शिष्टाचार के तौर-तरीके उसकी समझ व ग्रहणशक्ति के
अनुसार ही धीरे-धीरे सिखाएं. यों भी शिष्टाचार सिखाने
के लिए कड़े अनुशासन के बजाए प्यार से समझाने और
उसके सामने व्यवहार-आदर्श रखने की ही जरूरत होती है.
11. बच्चे को विश्वास में लेते हुए आप उसे हर अच्छी
बात सिखा सकते हैं बशर्ते कि यह बात अच्छी ही हो और
प्यार से बच्चे के गले उतारी जाए.
12. पर इसके लिए यह भी जरूरी है कि बच्चे की
समझ पर विश्वास किया जाए. 'तुम्हें अभी क्या समझ' कह
कर हर समय उसे झिड़क देना या उसकी उपेक्षा करना
ठीक नहीं. बच्चा हर बात को समझ कर ही उस पर अमल
करना चाहता है. उसे उस बात का अर्थ व महत्व समझाए,
फिर मनवाइए. यानी कुछ उसकी भी सुनें-मानें, फिर
अपनी बात उससे मनवाइए. आजमा कर देखिए, अगर उस
पर ज्यादती न करें तो यह जरूर आपको सहयोग देगा
आपकी बात मानेगा.



23

बालाहार : कुछ विधियां

मां के दूध व ऊपरी दूध के अलावा बच्चों को जो चीजें दी जाती है, उनमें से मुख्य है :

अनाज

दक्षिण और पूर्वी भारत में चावल व शेष भारत मे गेहूं का ज्यादा उपयोग होता है. गावों मे बाजरा, मक्का, ज्वार जौ, चने, रागी आदि मोटे अनाज भी अकेले या मिश्रित कई रूपों में प्रचलित है. स्थानीय परंपरानुसार ये सभी अनाज आयु अनुसार बच्चो को दिए जा सकते है. केवल ये अनाज दलिए, भीगी नर्म रोटी, डबलरोटी, मिश्रित अनाजो से बनी नर्म रोटी की चूरी आदि नरम व पाचक रूप मे दिए जाने चाहिए. बड़े बच्चों को बड़ो की तरह दाल, सब्जी के साथ कोई भी रोटी दी जा सकती है. पर वह बासी या खराब नही होनी चाहिए. दाल के साथ भात या खिचड़ी के रूप मे चावलो का उपयोग अच्छा है, बजाए केवल चावल देने के. इन अनाजो से शक्ति देने वाला प्रमुख तत्त्व कारबोहाइड्रेट मिलता है.

सब्जियां

सब्जियो मे प्रोटीन की मात्रा कम होती है इसलिए इन से कैलोरी भी कम मिलती है. पर ये विटामिन 'ए', 'बी', 'सी' व लोहतत्त्व की पूर्ति के लिए जरूरी है. गहरी हरी व पीली सब्जियों में विटामिन 'ए' बहुत होता है जो नेत्र-ज्योति के लिए आवश्यक है. बच्चे प्रायः सब्जिया पसद नही करते. पर विटामिनों व खनिज तत्त्वो की अधिकता के कारण ये किसी भी रूप मे (कच्ची नही, पकाकर) खाने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित करना चाहिए. पत्ते वाली सब्जिया—मेथी, पालक, बथुआ, पत्ता गोभी, धनिया आदि एक साल से छोटे बच्चे को अलग से न दें, क्योंकि इनके रेशे पचने मे जरा भारी होते है. एक से दो साल के बच्चे को ये सब्जिया अच्छी तरह गला कर मथ कर दें और बड़े बच्चों को चाहे जिस रूप में. छोटे बच्चों को पत्तेदार भाजियों का रस दाल के साथ पका कर देना अधिक लाभकारी रहेगा.

कंद-सब्जियां

आलू, शकरकंदी, जिमीकंद, अरवी, कचालू, टेपिओका इनमे मुख्य हैं. आलू विटामिन 'सी' का अच्छा स्रोत है यह जिमीकंद, अरवी, कचालू की अपेक्षा अधिक पाचक व रुचि-कर है. इसलिए इसे भून कर, उबाल कर, स्वादिष्ट बना कर बच्चो को अवश्य दें. केवल अधिक मिर्च-मसाले न डालें. अरवी, कचालू आदि की सब्जी कुछ बडे बच्चो को ही देनी चाहिए. दक्षिण भारत में चावल की जगह टेपिओका भी इस्तेमाल किया जाता है. यह बच्चों को किस रूप मे देना है, स्थानीय लोग जानते है शकरकंदी उबाल कर सभी बच्चे खा सकते है.

फल

सब्जियों की अपेक्षा अधिक स्वादिष्ट होने से बच्चे फल ज्यादा पसद करते है मौसमी फल देश के सभी भागों में मिलते है. केला, अमरूद, आम, लगभग सभी जगह खाया जाता है. सेब, आड़ू, नाशपाती, खूबानी, आलूबुखारा आदि फल पहाडी क्षेत्रों में होने पर भी सभी शहरों में मिल जाते है छोटे बच्चों के लिए केला, सतरा, मौसमी, आम, पपीता, पका चीकू जैसे फल अधिक उपयुक्त हैं. आम-पपीता विटा-मिन 'ए' की दृष्टि से, सतरा-मौसमी विटामिन 'सी' की दृष्टि से, केला अधिक पाचक रूप मे कारबोहाइड्रेट की दृष्टि से बच्चो के लिए अधिक गुणकारी फल हैं. केला तीन-चार मास के बच्चे को भी पूरक भोजन के रूप में खिलाना चाहिए. इसी तरह संतरे का रस भी दो-तीन मास से शुरू करा सकते हैं. छ महीने से एक साल के बच्चे को केला, सतरा, आम पपीता, पका चीकू, मीठा अंगूर जैसे फल दें. बड़े बच्चों को इनके अलावा अमरूद, सेब, नाशपाती, बेर आदि सभी फल व गाजर, टमाटर भी खाने के लिए दें, नीबू भी शिकंजी के रूप में गुणकारी रहेगा.

फलियां और दालें

दालों और फलीदार सब्जियों का प्रोटीन की दृष्टि से बहुत आहार-मूल्य है. विटामिन व खनिज भी इनसे मिलते हैं. छोटे बच्चों को बिना छिलके की दालें अच्छी तरह गला कर, मसल कर दें और उम्र अनुसार मात्रा थोड़ी-थोड़ी करके बढ़ाएं. बड़े बच्चों को छिलके वाली दालें भी दी जा सकती हैं. दाल-रोटी व दाल-चावल या खिचड़ी को प्रोत्साहन दें के साथ बड़े बच्चों को भुने हुए चने व भुनी मूंगफली भी देनी चाहिए. इनसे कम बजट में भी अच्छी प्रोटीन मिलेगी. ताजे नरम मटर के दाने भी बच्चे बहुत पसंद करते हैं, उन्हें खिलाइए.

घी-मक्खन-तेल व गिरियां आदि

शक्ति व कैलोरी के उच्च स्रोत होने से इनका आहार मूल्य बहुत अधिक होता है. इसीलिए ये कम मात्रा मे भोजन मे शामिल किए जाते हैं. डबलरोटी पर लगा कर थोड़ा मक्खन, सूप मे मक्खन, दलिए, खिचड़ी, दाल रोटी में थोड़ा घी-तेल भी बच्चे को अवश्य देना चाहिए. बच्चे को केवल उबला या रूखा खाना देना है, यह धारणा गलत है. उसमें चिकनाई की मात्रा बच्चे की आयु व पाचन शक्ति के अनुसार दी जानी चाहिए व मात्रा थोड़ी-थोड़ी बढ़ानी चाहिए.



खनिज लवण व विटामिनों की पूर्ति के लिए फल भी बच्चों को पर्याप्त मात्रा में दें.

चीनी-गुड़

यद्यपि लौह-तत्त्व व कैलशियम की दृष्टि से गुड़ अधिक गुणकारी है पर शर्करा या कैलोरी-मूल्य दोनों का लगभग बराबर है. अत: घर के रिवाज व बच्चे की पसंद अनुसार उसे आहार में चीनी या गुड़ दें. इससे शक्ति मिलती है और जो छोटे बच्चे अनाज नहीं लेते, उन्हें भी खुराक की थोड़ी मात्रा में अधिक कारबोहाइड्रेट या शर्करा इससे मिल जाती है. पर कभी भी बच्चों को अधिक मात्रा में चीनी, मिठाई टॉफी आदि खाने के लिए प्रोत्साहित न करें. जिस वस्तु का आहार-मूल्य जितना ज्यादा होता है, उसकी मात्रा उतनी ही थोड़ी आवश्यक होती है. दूध में चीनी के साथ दिन भर में दो बार से अधिक मीठी चीज खाने की आदत बच्चों में न डालें. दो वर्ष से ऊपर के बच्चों को दिन में एक बार ही मीठी चीज पर्याप्त है.

मांस-मछली-अंडा

प्रोटीन, कैलोरी की दृष्टि से इनका भी आहार-मूल्य अधिक है. लौह, कैलशियम व विटामिन भी इनमें मिलते हैं. छोटे बच्चे को छ. महीने की आयु से अंडा शुरू करा सकते हैं. उबाल कर पहले केवल पीला भाग दें. फिर धीरे-धीरे बढ़ा कर पूरा अंडा किसी भी तरह पका कर खिलाएं. नरम पके कुचले मास-मछली का अंश एक साल से बड़े बच्चे को शुरू करवा सकते है. पौष्टिकता की दृष्टि से यह देना चाहिए. न खाते हों तो बदले में पनीर, रसगुल्ला, चने, मूंगफली, राजमा जैसी प्रोटीनयुक्त चीजें दें.

कुछ अर्ध-ठोस आहार

खिचड़ी-1

सामग्री :

चावल	50 ग्राम
मूंग की धुली दाल	25 ग्राम
भुने, छिले चने	50 ग्राम
सब्जियां	25 ग्राम
घी या तेल,	1 चम्मच
नमक	स्वाद अनुसार
पिसी मोटी इलायची ½ दाना	

विधि : चावल और मूंग की दाल पका कर मथ लें. नमक, छिले-भुने-पिसे चने और अलग से उबाल कर मसली सब्जी (घिया, लौकी, टिंडा, तुरई आदि) मिला लें. घी या तेल गरम करके आधी पिसी इलायची छोड़ें व खिचड़ी-मिश्रण छोंक लें. थोड़ी देर मंदी आंच पर रख कर उतार लें.

खिचड़ी-2

सामग्री :

चावल	50 ग्राम
धुली मसूर की दाल	25 ग्राम
पालक	50 ग्राम
घी या तेल	2 चाय के चम्मच
इलायची	½ दाना
नमक	स्वाद अनुसार

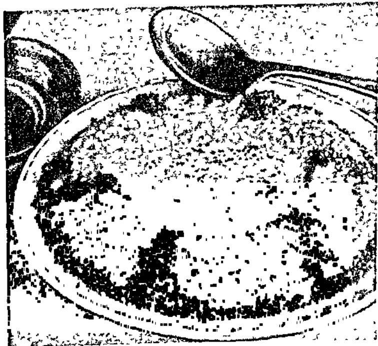
विधि : चावल-दाल साथ पका लें. पालक उबाल कर निचोड़ने से निकला पानी इसमें मिला लें. नमक व गरम घी या तेल मिला कर परोसें.

खिचड़ी-3

सामग्री :

गेहूं का दलिया	50 ग्राम
दाल मसूर	25 ग्राम
आलू	1 छोटा
कोई हरी सब्जी	25 ग्राम
प्याज	1 छोटा
बड़ी इलायची एक, नमक अंदाज से	

विधि : दलिया व दाल अलग-अलग धोकर उबाल लें. कतरा प्याज, इलायची डाल कर पकाएं. आधी पक जाने पर सब्जियां धो-कतर कर डाल दें व खूब नरम होने तक पकाएं. नमक मिलाएं व घी-तेल का छोंक दें.



सुपाच्य व स्वास्थ्यवर्धक मीठा दलिया

चावल की कांजी

सामग्री : चावल 100 ग्राम
पानी 450-500 मि० लिटर
नमक अंदाज से

विधि : चावल धोकर नर्म होने तक पकाएं, फिर उसमें नमक मिला लें. यह परंपरागत विधि है. आहार-मूल्य बढ़ाने के लिए इसमें भुने चने की दाल का आटा दो छोटी चम्मच और सब्जियों का रस दो बडी चम्मच मिला लें.

चावल का उपमा

सामग्री : चावल 25 ग्राम
धुली मूग की दाल 25 ग्राम
प्याज 1 मध्यम
कोई सब्जी 10-15 ग्राम
राई ¼ छोटी चम्मच
नारियल तेल 2 चम्मच
नमक अदाज से

विधि . चावल और दाल दरदरे पीस लें. पौन कप पानी मे पहले दाल पकाए व मथ लें. तेल गरम कर राई डालें व इसी मे प्याज के बारीक कतरे भूनें. अब पिसा चावल व कटी सब्जी मिला कर पका लें. फिर पूर्व पकाई हुई दाल मिला लें.

मीठा दलिया

सामग्री : गेहूं का दलिया 50 ग्राम
चीनी 15 ग्राम
दूध 50 ग्राम

विधि : दलिया सूखा या थोडे-से घी में भून लें. उबलता पानी व एक तेजपात डाल कर पकाएं. नरम हो जाने पर चीनी व उबला दूध डाल कर चला दें.

सूजी की खीर

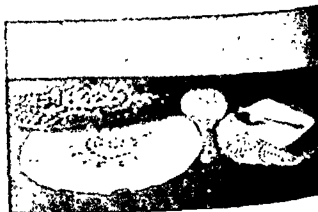
सामग्री : सूजी 25 ग्राम
चीनी 2 चम्मच
दूध 200-250 मिली लिटर

विधि : सूजी को सूखा या जरा-सा घी डाल कर मदी आच पर भून लें. उबला दूध डाल कर चलाए. गाढी होने पर कुछ देर मंदी आच पर रखें व चीनी मिला दें.

चावल की खीर

सामग्री : चावल 100 ग्राम
चीनी 2 चम्मच
दूध 250 मिली लिटर

विधि : चावल साफ कर अच्छी तरह तीन-चार बार धो लें. दूध उबाल कर चावल मिला दें. पहले तेज आंच पर उबालें व मंदी आंच पर धीरे-धीरे पकने दें. गाढ़ी होने पर चीनी व आधी पिसी इलायची डाल कर दें.



सुबह के नाश्ते के लिए उपयुक्त पोहे

पोहे

सामग्री : चिवड़ा 50 ग्राम
आलू 1 मध्यम
प्याज 1 ,,
कोई सब्जी 10 ग्राम
तेल 2 छोटी चम्मच
बड़ी इलायची एक
नमक अंदाज से

विधि : पोहे (चिवड़ा) हलके हाथों से मलकर तीन-चार पानी मे धोए व जरा-सा पानी उसमें छोड कर रख दें कि प्याज भुनने तक वह गल जाए व पानी सोख ले. तेल गरम कर प्याज भूनें, पिसी इलायची डाल दें. जरा सी हल्दी भी चाहे तो डाल सकते हैं. भीगे चिवडे मे नमक छिड़क कर मिलाएं व तेल मे छोक दें. मंदी आंच पर दो मिनट बद करके रखें. फिर उलट-पुलट कर उतार लें. बडे बच्चो को इसमे थोडा नीबू का रस व कुटी मूगफली भी मिला कर दे सकते हैं. स्वाद बढ़ाने के लिए एक चम्मच चीनी भी मिला लें.

पंजीरी

सामग्री : गेहूं का आटा 50 ग्राम
गुड़ या चीनी 10 ग्राम
घी या तेल 2 छोटे चम्मच

विधि : घी या तेल में आटा मंदी आंच पर भूरा होने तक भूनें. इसमें पिसी चीनी या भुरभुरा करके गुड़ मिला लें. आहार-मूल्य बढ़ाने के लिए थोड़ी मूंगफली भून कर, कूट कर अथवा एक चम्मच तिल भून कर मिला सकते हैं.

ठोस आहार

1. बेसन $\frac{1}{3}$ भाग + $\frac{2}{3}$ भाग आटा मिला कर, जरा सा नमक मिला कर रोटी बनाए.

2. आधी कटोरी पकी दाल में गेहूं का आटा गूंधें. जरा सा नमक मिलाए व कटा हरा धनिया मिला कर रोटी बना लें.

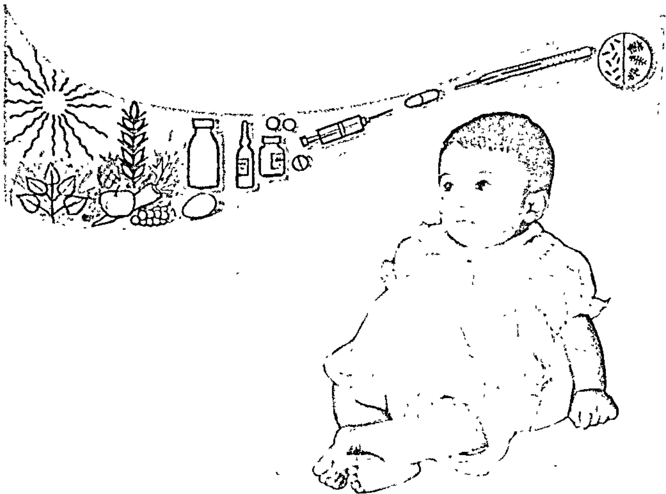
3. आटे मे पकी-मसली सब्जी और पकी दाल मिला कर आटा गूंधे. नमक मिलाए और रोटी या थोड़ा घी लगा कर नरम पराठा बना लें.

नोट : ठोस आहार में घर मे बनने वाला पूरा भोजन बड़े बच्चों को दे सकते हैं. पर इस तरह बेसन, दाल, सब्जियां मिला कर रोटी बनाने से रोटी का आहार-मूल्य बढ़ जाएगा. यदि बच्चा अलग से दाल, सब्जी नहीं खाता है तब तो यह विधि अधिक कारगर रहेगी.



खंड 3

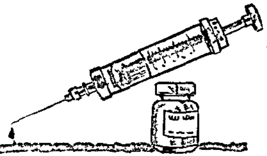
प्रमुख रोग व उनकी रोकथाम





24

समय पर प्रतिरक्षण



हम सभी प्राय. विभिन्न प्रकार के छूत के रोगों का शिकार होते रहते है जो अनेक बार गंभीर बीमारियो का रूप भी धारण कर सकते है. कुछ बीमारियो का कारण असुरक्षित जल-आपूर्ति, आवास सबधी स्वच्छ स्थितियो की कमी व दूषित पर्यावरण होता है,तो कुछ का कारण भीतरी रोग-निरोधक क्षमता कम होना. छोटे शिशुओं मे और कमजोर बच्चों में यह रोग निरोधक क्षमता कम होने से वे रोगों का मुकाबला आसानी से नहीं कर सकते. इस नाजुक उमर मे उनकी भीतरी शक्ति कम होने से बाहरी दूषित वातावरण का प्रभाव उन पर अपेक्षाकृत जल्दी व अधिक होता है पर सुरक्षात्मक कदम उठा कर हम न केवल इन नन्हे-मुन्नो की रक्षा करेंगे, आनेवाली पीढ़ी को स्वस्थ, सक्षम बनाने मे भी सहायक होंगे. बीमारियों पर नियत्रण पाने के लिए बच्चे को जन्म से ही रोग-निरोधक टीके लगाने की जरूरत होती है. इसलिए प्रत्येक माता-पिता के लिए इन प्रतिरक्षात्मक टीकों की उचित जानकारी होनी चाहिए, जिनका प्रारभ गर्भकाल से ही करना ठीक होगा.

डी. पी. टी. : काली खांसी, डिप्थीरिया व टिटेनस से सुरक्षा

गर्भवती माताओं के लिए आवश्यक टीके और प्रतिरक्षण

गर्भवती माताओं को धनुर्वात या 'टिटेनस' का इंजेक्शन लगाने से न केवल मा की,बल्कि आने वाले बच्चे की भी रक्षा होती है. इसके लिए प्रतिरक्षण-तालिका इस प्रकार होनी चाहिए :

गर्भावस्था-अवधि	खुराक
16-20 सप्ताह	पहली खुराक
20-24 सप्ताह	दूसरी खुराक
36-38 सप्ताह	तीसरी खुराक

गर्भावस्था में देर से पंजीकृत होने वाली माताएं 24-26 सप्ताह में पहली व 36-38 सप्ताह में दूसरी खुराक ले सकती है पर इस बात का ध्यान रख लेना चाहिए कि दूसरी खुराक बच्चा पैदा होने की संभावित तिथि के कम से कम 2 से 4 सप्ताह पूर्व अवश्य ले ली जाए. खुराक द्वारा प्रसव के समय मा के शरीर में पर्याप्त उच्च-स्तर पर 'एंटीबाडी प्राडक्शन' बनाए रखने के लिए इतनी अवधि आवश्यक होती है इस प्रतिरक्षण उपाय से मा, बच्चे दोनों की सुरक्षा हो जाती है और गर्भधारण के 36 सप्ताह बाद प्रसव-पूर्व,क्लीनिक में पंजीकृत माताओं को 'टिटेनस टाक्साइड' देने की आवश्यकता नही होती.

बाद की गर्भावस्था में बच्चा पैदा होने की संभावित तिथि से लगभग 4 सप्ताह पहले 'बूस्टर' खुराक दी जानी चाहिए,पर तभी जब पहली गर्भावस्था में कम से कम 'टिटेनस' के दो टीके लग चुके हों. जिन माताओं को ऐसे टीके दिए जाते है उन्हे प्रतिरक्षण का पूरा विवरण लिखकर एक कार्ड दिया जाता है. यह कार्ड अगली गर्भावस्था में तथा कोई भी दुर्घटना होने पर रोगी का इलाज करने वालों की जानकारी के लिए होता है.

गर्भवती माताओं में खून की कमी एक गंभीर स्थिति मानी जाती है खून की कमी से मा की मृत्यु भी हो सकती है नही तो गर्भ संबंधी जटिलताएं व बीमारियां बढ़ जाती हैं और गर्भस्थ बच्चे के विकास पर भी इसका दुष्प्रभाव पड़ता है. इस खतरे से बचने के लिए मा को पोषक भोजन मिलना चाहिए (देखिए 'शैशव की संभाल गर्भकाल से ही' वाला अध्याय). पर पोषण की कमी में या विशेष आवश्यकता पर गर्भवती को 'आयरन' और 'फोलिक एसिड' मिलना चाहिए. इसीलिए सभी मातृ-केंद्रों पर ये दवाएं निशुल्क बांटी जाती हैं कि जो माताएं खरीदकर न ले उनकी व उनके बच्चों की सुरक्षा का उपाय भी किया जा सके. इस सुविधा का लाभ उठाना चाहिए.

इसके अलावा प्रतिरक्षण की दृष्टि से गर्भवती 'जर्मन मीजल्स' से बचाव का टीका भी बचपन में ल होना चाहिए, क्योंकि गर्भकाल में यदि मां को यह बीमा हो जाए तो बच्चा विकृत हो सकता है. इसी प्रकार डाक में पूछे बिना किसी भी गर्भकालीन बीमारी के समय 'टे सायक्लीन' जैसी 'एंटीबायोटिक दवाएं', नींद की गोलि नशीली दवाएं कभी नहीं लेनी चाहिए, अन्यथा बच्चे शारीरिक-मानसिक हानि हो सकती है. बीमारी के स जब भी डाक्टरी दवा लेने की जरूरत पड़े, अपने डा वैद्य को अपनी गर्भावस्था के बारे में अवश्य बता दें.

शिशु-प्रतिरक्षण और आवश्यक टीके

जन्म के बाद से ही बच्चों को छूत की बीमा लगने का डर रहता है. बचाव के टीके लगाने से बच्चे शरीर में रोगों का मुकाबला करने की ताकत बढ़ जात रोगों का मुकाबला करने के लिए बच्चे का साम स्वास्थ्य ठीक रहना चाहिए और उसकी भीतरी निरो क्षमता का विकास होना चाहिए. इसके लिए दो बातें ज हैं : संतुलित पोषक खुराक और बचावी टीके. टीके श में ही लगवाए जाने चाहिए और बाद में भी नियमित से डाक्टरी निर्देश पर दुबारा लगवाने चाहिए कि संक्रा रोगों से बचा जा सके.

आजकल प्रत्येक अस्पताल और स्वास्थ्य-केंद्र प बचावी टीके निशुल्क लगाए जाने की व्यवस्था है औ टीके सर्वथा हानिरहित होते हैं. कभी-कभी किसी बच्चे टीके के स्थान पर मामूली तकलीफ हो सकती है ि लिए डाक्टर को दिखाना चाहिए, पर टीके की सा प्रतिक्रिया से डरकर टीके न लगवाना बच्चे के लिए बी को तथा अपने लिए परेशानी को निमंत्रित करना है. बच्च की जीवन-रक्षा और उसके स्वास्थ्य के लिए ये टीके बहुत आवश्यक है. अतः हर मा को इनकी जानकारी रखनी चाहिए और अपने बच्चे को समय-समय पर सभी टीके लगवाने के लिए अस्पताल के संबंधित विभाग में जाना चाहिए. ये टीके है :

बी. सी. जी. या तपेदिक से बचाव का टीका

संक्रामक रोगों में कदाचित सबसे भयकर होता है यक्ष्मा या तपेदिक. इस नामुराद रोग से हर बच्चे की रक्षा की जानी चाहिए. इसलिए बी० सी० जी० का टीका बच्चे के जन्म के बाद जितनी जल्दी ले सकें उतना अच्छा. यदि

बच्चा कुछ बड़ा हो जाता है तो फिर उसे टीका दिलाने से पहले एक जांच करवाकर इस 'ट्यूबरक्यूलिन टैस्ट' का जांच-फल नकारात्मक आने पर ही यक्ष्मा-निरोधक टीका दिलाना चाहिए. जन्म के तुरंत बाद यह टीका दिला देने से इस जांच की आवश्यकता नहीं होती. यदि टीका दिलाने के 3-6 सप्ताह के भीतर टीके वाले स्थान पर एक बड़े सरसों के दाने जितना फफोला उठ आता है तो यह इस बात का प्रमाण है कि टीका सफल हो गया. फफोले के स्थान पर फिर जो घाव बनता है यह 2-4 सप्ताह में सूख जाता है और उस जगह एक दाग हो जाता है, यह कई सालों तक इस बात के प्रमाण रूप में रहता है कि बच्चे को यक्ष्मा-निरोधी टीका लग चुका है.

सामान्यतः टीके की प्रतिक्रिया यहीं होती है, इसलिए इससे डरने की आवश्यकता नहीं. पर कभी किसी केस में विपरीत प्रतिक्रिया दिखाई दे, जैसे घाव सूखकर दाग बनने के बजाए वहां बार-बार घाव होता रहे, बगल में गिल्टी बन जाए और उसमें मवाद आ जाए या इस गिल्टी में घाव या सूराख बन जाए, टीके वाले स्थान पर चर्म-रोग दिखाई दे, उस जगह अत्यधिक उभार हो जाए तो इन सब स्थितियों में डाक्टरी जांच व तदनुसार इलाज जरूरी है.

जन्म के बाद शीघ्र लगवाने वाला यह टीका उस स्थिति में नहीं दिलाना चाहिए जब बच्चा बहुत बीमार हो. इस सबंध में डाक्टरी राय से ही चलें और चार-पांच वर्ष की आयु में इसकी अनुवर्धक मात्रा (बूस्टर खुराक) भी बच्चे को अवश्य दिलवा दें.

चेचक का टीका

यद्यपि अब हमारे देश से इस भयंकर बीमारी का नाम मिटाया जा रहा है फिर भी बच्चे की सुरक्षा के लिए उसे चेचक-निरोधी टीका भी अवश्य दिला देना चाहिए. यह टीका पहली बार जन्म से एक महीने से तीन महीने के भीतर और अधिक से अधिक छह महीने की आयु तक जरूर लग जाना चाहिए. इसके बाद तीसरे और पांचवें वर्ष यह टीका फिर दुहराना चाहिए. किंतु आसपास कहीं बीमारी फैले तो एक वर्ष के अंतर से भी यह टीका दुहराया जाना चाहिए, यद्यपि आजकल इस बात की संभावना कम है. अस्पताल में या किसी भी प्रसूति-केंद्र में आजकल यह टीका एक सप्ताह के भीतर भी लगा दिया जाता है, इसलिए इसे बी० सी० जी० टीके के साथ ही लगवा लेना ठीक रहता है, नहीं तो उसके एक महीने बाद कभी भी अवश्य लगवा लें.

यदि पहली बार टीका सफल न हो तो हर तीन महीने पर टीका तब तक दिलाते रहिए जब तक कि वह सफल न हो जाए पर ऐसा बहुत कम मामलों में ही होता है, वह भी दवा या टीके की विधि में कोई दोष होने पर. सफल टीकाकरण के बाद 6-7 दिनों में उस स्थान पर फफोला बनेगा, फिर यह फफोला फुंसी में बदलेगा और लगभग तीन सप्ताह में बिल्कुल सूख जाएगा. इसके दुष्परिणाम बहुत कम होते हैं. अधिकतर दुष्परिणाम तभी सामने आता है जबकि बड़ी उमर में पहला टीका लगवाया जाए. इसलिए निर्धारित समय पर शैशवकाल में ही टीका लगना चाहिए.

गर्भवती माताओं को, विशेष रूप से गर्भ के प्रथम तीन महीनों में, चर्म-रोग में, हाल ही में कोई संक्रामक रोग होने पर, जिन्हें 'हाईपोगामाग्लोबिनीमिया' हो, जो बहुत कमजोर हों, इन स्थितियों में चेचक-निरोधी टीका नहीं लगना चाहिए.

त्रिविध-प्रतिरक्षण : काली खांसी, डिप्थीरिया व टिटेनस से सुरक्षा

कम आयु के बच्चे ये बीमारियां जल्दी पकड़ते हैं. काली खांसी, डिप्थीरिया जैसी बीमारियां बच्चों में ही अधिक फैलती हैं. 'टिटेनस' या धर्नुवात यद्यपि हर आयु के व्यक्ति को अपनी लपेट में ले सकती है, पर बच्चों के मामले में यह अधिक खतरनाक रूप धारण कर सकती है. अतः इन तीनों भयंकर बीमारियों से रक्षा का उपाय भी शैशव में ही करना होता है. यही त्रिविध-प्रतिरक्षण कहलाता है. सौभाग्य से इन तीनों की रोकथाम के लिए एक मिलीजुली दवा हमारे पास है और हर स्वास्थ्य-केंद्र पर बच्चों के लिए उपलब्ध है. डी० पी०टी० के नाम से जानी जानेवाली इस दवा 'ट्रिपल एंटीजिन' की सुई बच्चे को तीन बार देनी होती है—पहली तीन महीने पर, दूसरी चार महीने पर, तीसरी पांच महीने पर. इस तरह तीसरे-चौथे-पांचवें में एक-एक महीने के अंतराल से यह सुई दिलाना अच्छा है. पर कारण विशेष से यह अंतराल थोड़ा बढ़ाया भी जा सकता है. फिर भी पहली और दूसरी सुई के बीच का अंतराल तीन महीने व दूसरी और तीसरी के बीच का अंतराल छः महीने से अधिक नहीं होना चाहिए. इस संबंध में कोई विशेष कठिनाई हो तो डाक्टर से परामर्श करें.

यह टीका दूसरी बार डेढ़ साल की आयु में तथा उससे अगला पांच वर्ष की आयु में दिया जाना चाहिए.



प्रतिरक्षण के लिए पोलियो वैक्सीन

'ट्रिपल एंटीजिन' देने पर बच्चे को कोई विशेष तकलीफ नही होती. केवल टीके वाले स्थान पर सूजन, लाली और मामूली दर्द हो सकता है, तथा 24 घंटे के अंदर बच्चे को थोड़ा बुखार आ सकता है इस सबके लिए कुछ भी करने की आवश्यकता नही बच्चा एक-दो दिन मे स्वय ही ठीक हो जाएगा, इसमें अधिक कोई भी तकलीफ किसी कारण हो जाए तो डाक्टर से परामर्श करें इस टीके का यह भी लाभ है कि यदि कभी बच्चे को कोई चोट लग जाए तो उसे अलग से 'टिटेनस' का इंजेक्शन देने की जरूरत नही पड़ती, केवल एक 'टटवक' देने से ही काम चल जाएगा. जिस बच्चे को 'टिटेनस' हो गया हो उसे भी 'ट्रिपल एंटीजिन' देना चाहिए, क्योंकि यह दुबारा किसी को भी हो सकता है.

पोलियो निरोधक टीका

पोलियो एक जानलेवा और जीवन भर के लिए अश कर देने वाली घातक बीमारी है और दुर्भाग्य से हमारे देश मे अब भी यह बहुत होती है. (पोलियो से बचाव सबंधी निर्देश, सबंधित रोग के अध्याय मे देखें.) यहां इतना ही कि इस भयंकर बीमारी से बच्चे का जीवन सुरक्षित बनाने के लिए पोलियो-निरोधक दवा भी 'ट्रिपल एंटीजिन' के साथ ही दिला देनी चाहिए. इससे यह भी लाभ होगा कि दोनों के लिए अलग-अलग समय पर अस्पताल नही जाना पड़ेगा और यह दवा टीके के रूप मे नही, मुह से दी जाने वाली खुराक के रूप में है तो बच्चे को दूसरे टीके की अलग से तकलीफ नही उठानी पड़ेगी. त्रिविध प्रतिरक्षण की तरह ही इसकी अनुवर्धक मात्रा या 'बूस्टर' खुराक तीसरे महीने के बाद, चौथे-पांचवें महीने मे तथा फिर डेढ व पांच साल की उमर मे दी जानी चाहिए.

कुछ सावधानिया भी अपेक्षित हैं : जिस बच्चे को पोलियो हो गया हो, उसे भी पोलियो की दवा मिलनी चाहिए, क्योकि पोलियो तीन तरह के कीटाणुओं से होता है अत: उसके फिर होने की सभावना रहती है. अगर घर मे या अगलबगल पोलियो हुआ है तो केवल पोलियो का ही



नेत्र रोगों से बचाव के लिए विटामिन 'ए' की खुराक

टीका पहले लगवाया जाए तथा 'ट्रिपल एंटीजिन' दूसरी बार मे साथ दिया जाए. सरदी में इस वैक्सीन का सेवन कराना ज्यादा अच्छा रहता है,क्योंकि गरमी में पेचिश या अतिसार के कारण इसके असर में गड़बड़ी हो सकती है. एक सावधानी यह भी कि यह दवा खिलाने के एक घंटा पूर्व और एक घंटा बाद तक बच्चे को स्तन-पान न कराया जाए, न ही ऊपरी दूध या अन्य आहार दिया जाए. टीका लेने के आधे घंटे बाद कोई भी गरम पेय, गरम जल, गरम दूध देना काफी हानिकारक सिद्ध हो सकता है. तीव्र संक्रामक रोगों मे, कैंसर-निरोधी दवा के सेवन के समय यह वैक्सीन दस्त नही दी जानी चाहिए. जिस दिन पोलियो-वैक्सीन की खुराक दीजाए, उस दिन अन्य कोई प्रतिरोधी टीका भी बच्चे को नही लगवाना चाहिए.

अन्य बचावी टीके श्रौर दवाएं

इन जरूरी प्रतिरक्षण टीकों व दवाओं के साथ टाइफाइड और हैजे से बचाव के टीके और नेत्रों की सुरक्षा के लिए विटामिन 'ए' की खुराकें भी बच्चे को नियमानुसार मिलनी चाहिए. माताओ की जानकारी के लिए नीचे एक चार्ट दिया जा रहा है कि कौन सा टीका कब लगना चाहिए और उसकी अगली किश्त कब दी जानी चाहिए. याद रखना कठिन लगने पर इस चार्ट की सहायता से समय पर टीका लगवाने मे सहायता मिलेगी

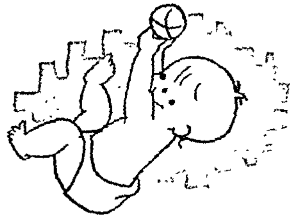
इनके अलावा, खसरे का प्रतिरोधी टीका नौ महीने या उससे अधिक उमर के बच्चों को दिया जाता है. इसकी केवल एक सुई लगने से काफी समय तक इस रोग से लडने-बचने की शक्ति कायम रहती है. पर मीजल्स,मम्पस और रूबैला इन तीनों मिलती-जुलती बीमारियों से बचने की दवाए अभी हमारे देश में नही बनती और विदेश से मगाने पर महंगी मिलती हैं इसलिए हर बच्चे को उपलब्ध नही हो सकती. पर जो खर्च कर सके,उन्हे व्यवस्था कर लेनी चाहिए. खासकर लडकियों को 'रूबैला' या 'जर्मन मीजल्स' निरोधी दवा दिलवा सकें तो अवश्य दिलवा देनी चाहिए कि बड़े होने पर गर्भधारण के समय उन्हे यह बीमारी होने पर बच्चे की जन्मजात विकृति का खतरा न रहे. ●

	बीमारी	टीका/दवा	पहली बार	दूसरी बार	ग्रगली बार
1	टिटेनस	टिटेनस टाक्साइड	मां को गर्भकाल मे		
2	तपेदिक	बी० सी० जी०	जन्म से एक मास तक	5 साल मे	
3	चेचक	चेचक का टीका	जन्म से तीन मास तक	3 साल में	5 साल मे
4	काली खांसी,टिटनस और डिप्थीरिया	ट्रिपल एंटीजिन	तीसरे-चौथे-पाचवें महीने में तीन बार	डेढ़ साल में	पांच साल मे
5	पोलियो	पोलियो-वैक्सीन	3-4-5 महीने मे	डेढ़ साल में	पांच साल मे
6	टाइफाईड	टीका	दो वर्ष की आयु में	इसके एक मास बाद	हर वर्ष गरमी से पहले
7	हैजा	टीका	दो वर्ष की आयु में	फिर हर गरमी के पूर्व	बरसात
8	नेत्र-रोग	विटामिन 'ए'	हर छः महीने बाद—लगातार पाच साल तक		



25

रोगों की रोकथाम



शिशु स्वास्थ्य को लेकर सारे विश्व में एक वैचारिक क्रांति आ चुकी है, जिसका असर भारत जैसे विकासशील देशों पर पड़ना भी स्वाभाविक है, इधर कुछ वर्षों से भारतीय पढ़ी-लिखी माताएं इस ओर काफी सचेत हो चली है, भले ही यह चेतना अभी अधूरी जानकारी पर आधारित हो व कहीं-कहीं अति-चेतना के कुप्रभावों से भी ग्रस्त हो. पर युवा-माताओं का निश्चित ही यह ध्येय होता है कि उनके बच्चे स्वस्थ और सुदृढ़ बनें.

अच्छे स्वास्थ्य का अर्थ बच्चों का मोटा होना ही नहीं होता, बल्कि उनका संतुलित शारीरिक-मानसिक विकास, समय-समय पर आने वाले रोगों से बचाव तथा रोग होने पर उनसे शीघ्र मुक्ति भी स्वास्थ्य के अर्थ में शामिल है. यदि सही पोषण की और रोगों से बचाव की पर्याप्त जानकारी हो तो कोई कारण नहीं कि आपका बच्चा भी स्वस्थ व प्रसन्न न रह सके.

इस तरह जिंदगी को स्वस्थ-सफल रूप में बनाए रखने के लिए, शारीरिक व मानसिक अशक्तता-अपंगता की रोकथाम के लिए और बीमारियों की खर्चीली चिकित्सा व परेशानी से बचने के लिए शिशु-स्वास्थ्य की विभिन्न स्तरों पर देखभाल की जानी चाहिए. ये स्तर निम्न हो सकते हैं :

☐ जब युवक-युवती परस्पर विवाह का निश्चय करते हैं, ऐसे समय अन्य बातें देखने के साथ वंशगत बीमारियों तथा दोनों पक्षों में होने वाली सामान्य बीमारियों की जांच भी कर ली जाए तो अच्छा रहता है. यह भी वैज्ञानिक खोजों से प्राप्त एक तथ्य है कि खून के निकट रिश्तों में विवाह होने पर खानदानी बीमारियों के शिशु में हस्तांतरण का अधिक खतरा रहता है.

☐ जब पति-पत्नी शिशु की कामना करते हैं तो गर्भकाल में शिशु की शारीरिक-मानसिक सुरक्षा के लिए हानिकारक दवाइयों से परहेज, समय-समय पर जांच, पोषण और वजन पर निगाह तथा आवश्यकता पड़ने पर डाक्टरी परामर्श जरूरी है. यह भी जरूरी है कि प्रसव कुशल चिकित्सक या प्रशिक्षित नर्स की देखरेख में हो और जटिल प्रसव हर हालत में अस्पताल में, ताकि मां-शिशु को बीमारी का खतरा न रहे. इन सब पहलुओं पर विभिन्न अध्यायों में अलग से प्रकाश डाला गया है.

☐ जब तक शिशु पांच-छः वर्ष की नाजुक उमर पार न कर ले, उसे सही पोषण देने, खानपान की ठीक आदतें सिखाने, प्रतिरक्षक उपायों द्वारा रोगों से बचाने, दुर्घटनाओं के प्रति सतर्क रहने और उसे सूझ-बूझ से मानसिक विकास व भावात्मक सुरक्षा देकर व्यवहार संबंधी समस्याओं, कुंठाओं से बचाने की जरूरत होती है,क्योंकि यही नींव उसके जीवन भर के स्वस्थ्य विकास का सुदृढ़ आधार बनती है.

प्रतिरक्षक उपाय

प्रतिरक्षक उपायों में रोग-निरोधक दवाओं-टीकों के अलावा शिशु की समय-समय पर जांच भी बहुत जरूरी है. सामान्यतः यह जांच तीन महीने की आयु तक हर पखवाड़े, तीसरे से छठे महीने तक प्रति मास तथा उसके बाद तीसरे वर्ष तक हर तीन महीने में एक बार होनी चाहिए. इस नियमित जांच में बच्चे का वजन, कद और पौष्टिक आहार का स्तर देखकर डाक्टर बच्चे के पालन-पोषण संबंधी उचित सलाह देंगे और इस प्रक्रिया में रोगों की भी समय पर रोकथाम की जा सकेगी.

इसका अर्थ यह नहीं कि इन नियत अवधियों के बीच जांच आवश्यक नहीं. जब भी बच्चा ज्वर, दस्त, उल्टी, पीड़ा, बेचैनी, फोड़े-फुंसी, नेत्र रोग, अपचन और गैस किसी

शारीरिक चोट या सूजन या दौरे आदि का शिकार हो जाए तो अपनी अटकलबाजी का ही सहारा न ले. बिना प्रतीक्षा किए तुरत डाक्टरी सहायता लेनी चाहिए. साथ ही टीका लगवाने व अगली जांच के बारे में अपनी स्मरण-शक्ति पर ही भरोसा न रख बच्चे की स्वास्थ्य-प्रगति का पूरा रिकार्ड संभाल कर रखना चाहिए और रिकार्ड-कार्ड पर डाक्टरी नुस्खे पर लिखे निर्देशों का पूरी तरह पालन करना चाहिए.

ये सावधानियां बरतें तो बच्चा रोगों का कम शिकार होगा. फिर भी विभिन्न कारणों से समय-समय पर जो रोग हो जाते है, उन्हें मुख्यत: तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—

□ जीवाणु-कीटाणु और कृमिजनित रोग.

□ विभिन्न दुर्घटनाओं तथा औषधियों, रसायनों के गलत प्रयोग से होने वाले रोग.

□ पौष्टिक आहार की कमी के कारण होने वाले रोग.

इन मुख्य रोगों के कारणों, लक्षणों, रोकथाम के उपायों तथा चिकित्सा संबंधी निर्देशों पर आगे संबंधित रोगों के अध्यायों में अलग-अलग प्रकाश डाला जा रहा है.

बच्चों को नीरोग व स्वस्थ रखने के लिए :

*जन्म के बाद सभी प्रतिरोधक टीके समय पर लगवा लें.

*उन्हें अन्य व्यक्तियों के जूठे गिलास आदि न प्रयोग करने दें और न ही उन्हें किसी की जूठी छोड़ी कोई वस्तु खाने दें.

*पाखाना जाने के बाद तथा खाने से पूर्व उसे अच्छी तरह साबुन से हाथ धोने की आदत डालें.

*घर को जहां तक हो सके, साफ-सुथरा रखें.

*केवल उबला हुआ दूध ही बच्चे को पिलाएं,

*खाने को ढककर एवं जानवरों या अन्य कीड़े-मकोड़ों से बचा कर रखें.

*उसे गंदे तालाब, झील या नदी में न नहाने दें.

*खांसने, थूकने वाले व्यक्ति से भी बच्चे को दूर ही रखें. बच्चे को किसी ऐसे व्यक्ति की गोद में न दें जिसे कोई त्वचा रोग या तपेदिक आदि छूत की बीमारी हो.

*खांसी-जुकाम या श्वास सम्बन्धी कोई अन्य रोग हो तो बच्चे को चूमना नहीं चाहिए.





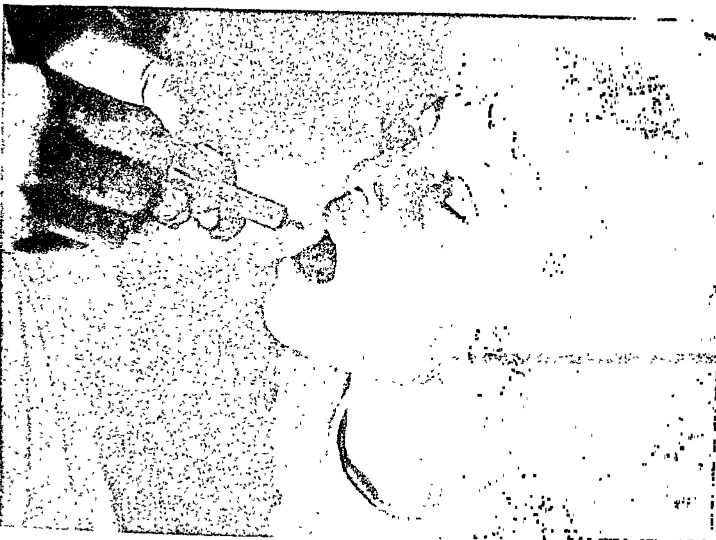
26
शिशु स्वास्थ्य केन्द्र

रोगी बच्चो के लिए क्लीनिक या स्वास्थ्य केंद्र आम प्रचलित बात है, लेकिन भारत जैसे स्वास्थ्य-शिक्षा में पिछड़े देशो के लिए संयुक्त राष्ट्र बाल आपात कोष (यूनीसेफ) की ओर से जो सर्वेक्षण हुए, उसमें निष्कर्ष रूप से यह बात सामने आई कि सभी विकासशील देशों में रोगी, कमजोर व स्वस्थ सभी बच्चो की नियमित जांच व उनकी माताओं को बाल-स्वास्थ्य व बाल-पोषण के आवश्यक निर्देश देने के लिए केंद्रों की स्थापना की जाए. हर्ष की बात है कि 'यूनीसेफ' की ओर से भारत के लिए यह कार्य डा० शांति घोष जैसी सुयोग्य व अनुभवी शिशु-चिकित्सक को सौंपा गया, परिणाम स्वरूप, आज लगभग सभी बड़े शहरो के प्रत्येक अस्पताल में शिशु-विभाग के अंतर्गत ऐसे केंद्र खोले गए हैं और इनका विस्तार अब ग्रामीण केंद्रों तक किया जा रहा है.

शिशु-स्वास्थ्य केंद्र (अंडर फाईव क्लीनिक)

चूंकि बच्चों में कुपोषण व संक्रमण की अधिक समस्या पहले पांच वर्षों में ही पाई जाती है और पूरे जीवन के लिए स्वास्थ्य की बुनियाद भी इसी आयु में बनती है, इन्हें 'अंडर फाईव क्लीनिक' या पांच वर्ष के बच्चो के लिए स्वास्थ्य-केंद्र कहा जाता है. यहां आने वाली हर मां को उसके बच्चे के स्वास्थ्य-विकास व बच्चे को लगे टीके आदि का रिकार्ड भर कर एक कार्ड दिया जाता है, जिसमें आगे दिए नमूना-कार्ड

'वैल बेबी क्लीनिक' में माताओं को बाल-पोषण का प्रशिक्षण



पोलियो वैक्सीन की बूस्टर खुराक

के दोनों पृष्ठों के खाके के अनुसार एक कैलेंडर रूप में बच्चे की प्रगति का हर विवरण होता है और कैलेंडर का पहला महीना बच्चे के जन्म-महीने से शुरू होता है.

इस रिकार्ड से माताओं को पांच प्रकार का निर्देशन मिलता है :

1. आयु के अनुसार वजन का रिकार्ड.

2. शिशु के पूर्व-पोषण का अनुमान और पोषण संबंधी आगामी परामर्श.

3. स्वस्थ बच्चों और कुपोषित बच्चों को लगे रोग-प्रतिरक्षक टीके.

4. पारिवारिक पृष्ठ-भूमि व उस पर आधारित परिवार नियोजन संबंधी सलाह.

5. शिशु को होने वाले रोग और उनका उपचार.

इस तरह इस कार्ड की सहायता से चिकित्सकों व माताओं को बच्चे के स्वास्थ्य की 'केस-हिस्ट्री' जानने और तदनुसार चलने मे काफी सुविधा रहती है. प्लास्टिक की थैली मे डाल कर माताएं इस कार्ड को संभाल कर रखें व हर बार शिशु को जांच के लिए या अगला टीका लगवाने के लिए केंद्र में ले जाते समय कार्ड अवश्य साथ ले जाएं, ऐसा निर्देश दिया जाता है. माताओं को चाहिए कि बच्चे को केवल रोग की स्थिति मे ही अस्पताल न ले जाए. रोगो की चिकित्सा से रोगों की रोकथाम बेहतर है. और ये क्लीनिक इसीलिए खोले गए है कि यहां पांच-छ. वर्ष की आयु तक के हर बच्चे की समय-समय पर जांच कर माताओं को बच्चे के ठीक पालन-पोषण संबंधी आवश्यक निर्देश दिए जा सकें.

22 किलो | 48 पौंडस
21 | 46
20 | 44
19 | 42
18 | 40
17 | 38
16 | 36
15 | 34
14 | 32
13 | 30
12 | 28
11 | 26
10 | 24
9 | 22
20

पाँचवा साल — छटा साल

माँ को चाहिये कि इस कार्ड को प्लास्टिक की थैली मे सुरक्षा पूर्वक रखे।

हस्पताल मोहर

बच्चों का स्वास्थ्य रिकार्ड

०-६ वर्ष

सेन्टर	बच्चे का नम्बर

बच्चे का नाम	लड़का	लड़की

माँ का नाम	व्यवसाय

पिता का नाम	व्यवसाय

जन्म तिथि		जाति या कबीला
मास	वर्ष	

मकान नं०	गली/गाँव

शहर डाकघर	तहसील	जिला

जन्म क्रमश	भाई/बहन के नाम	लड़का / लड़की आयु	हाँ/नही	स्वास्थ्य
1				
2				
3				
4				
5				
6				
7				
8				

दी गई तारीख लिखो	1	2	3	4	
तपेदिक का टीका					
चेचक (माता)					
अधरंग (पोलियो)					
काली खाँसी, धनुक (दन्दल)					
टाइफाइड					
दूसरे					
दूसरे					

तारीख	समस्या	इलाज

लेकिन राजधानी के सुप्रसिद्ध सुचेता कृपालानी अस्पताल के शिशु स्वास्थ्य केंद्र की इंचार्ज डा. सुदर्शन ने बताया, "अधिकतर दो वर्ष तक के बच्चे ही केंद्र में लाए जाते हैं, यद्यपि जन्म से लेकर 12 साल तक के बच्चे भी आ जाते हैं और हम बड़े बच्चों की जांच भी करते हैं. वैसे माता-पिता में बच्चों को जांच के लिए व प्रतिरोधक टीके लगवाने के लिए केंद्र में लाने की चेतना दिनों-दिन बढ़ रही है और औसतन 50 बच्चे रोज आ जाते हैं. पर अभी आने वाली अधिकांश संख्या अस्पताल के डाक्टरों द्वारा निर्देशित व प्रेरित होती है. दूसरे सभी माताएं सभी टीके समय पर लेने के बारे में पूरी तरह सचेत नहीं हो पाई हैं; विशेष रूप से अगली 'बूस्टर' खुराक दिलवाने के बारे में वे याद नहीं रख पातीं."

कलावती सरन शिशु-चिकित्सालय के बाल-स्वास्थ्य केंद्र की इंचार्ज डा० रेणुका माथुर के अनुसार, "इस मुख्य बाल-स्वास्थ्य केंद्र में लगभग सौ बच्चे रोज आते हैं, जो अधिकतर निम्न-मध्य वर्ग व निम्न वर्ग से सबधित होते हैं. इनमें से लगभग 60 प्रतिशत डाक्टरों द्वारा अभिप्रेरित होते हैं और 40 प्रतिशत जागरूक माताओं द्वारा सीधे भी लाए जाते हैं. इस तरह दिनों-दिन इस चेतना के विकास के साथ केंद्रों में भीड़ बढ़ती जाती है. इस समस्या के समाधान के लिए जहां एक ओर अधिकाधिक संख्या में माताओं को बाल-स्वास्थ्य-शिक्षण देकर उनमें संबंधित चेतना जगाने की जरूरत है, वहां इन केंद्रों का विस्तार करने की भी. इस समय आने वाली अधिकांश संख्या गरीब वर्गों से आने वाले कुपोषित बच्चों की ही होती है, जिन्हें प्रतिरक्षक-टीकों के अलावा 'लायन्स क्लब', 'रोटरी क्लब' जैसी संस्थाओ की मदद से पोषक-बालाहार, टॉनिक आदि देने का भी प्रबंध किया जाता है : जैसे फोलिक एसिड युक्त आयरन की आधी बोतल प्रति बच्चा, प्रतिमास के लिए देना, छः महीने के अंतराल से विटामिन 'ए' की एक खुराक देना.

लेकिन भारत की जनसंख्या और बच्चों में कुपोषण की व्यापक समस्या को देखते हुए हमारे राष्ट्रीय साधन बहुत सीमित हैं. ऐसे बाल-स्वास्थ्य केंद्र खोलने का सुझाव देते समय डा० शांति घोष को इस बात का ध्यान था. इसलिए उन्होंने सुझाया कि केंद्रों में कमजोर व खतरे में पड़े बच्चों पर पहले ध्यान दिया जाए और उनकी यह स्थिति रिकार्ड-कार्ड में विशेष रूप से अंकित कर दी जाए. ये विशेष स्थितियां हैं :

1. जुड़वां या कम पैदाइशी वजन वाला शिशु.
2. जहां मां का दूध न दिया गया हो या काफी न हो.
3. मां या बाप में से एक का न होना.
4. मां कामकाजी महिला हो.
5. तीन मास तक वजन कम बढ़े या बिल्कुल न बढ़े.
6. बार-बार संक्रमण होता हो.
7. पांचवां या उसके बाद का बच्चा.
8. बहुत कम वजन या अपेक्षित वजन से 60 प्रतिशत से कम वजन वाला खतरे के बिंदु तक कुपोषित बच्चा.
9. बच्चों के जन्म में 2 वर्ष से कम अंतर.
10. माता-पिता की बीमारी, मद्यपान आदि.

अधिकांश केंद्रों की कार्य-प्रणाली उपरोक्त नियमों पर आधारित होती है. इस तरह समस्या समाधान की दृष्टि से ये क्लीनिक बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं. पर राष्ट्र-व्यापी समस्या के समाधान के लिए देश-भर में इन केंद्रों का जाल बिछाने की जरूरत है.

बाल-स्वास्थ्य के लिए माताओं को प्रशिक्षण देने के लिए आवश्यक सामग्री, हर विषय की छोटी-छोटी सरल पुस्तिकाएं, चार्ट आदि की केंद्रों पर उपलब्धि इनकी उपयोगिता में और वृद्धि करती है. जैसे एक बाल-स्वास्थ्य-केंद्र पर लगे चार्ट के ये कुछ अंश देखिए : 'दूध में पानी न मिलाए···' 'बोतल व निपल की सफाई पर विशेष ध्यान दें···' बच्चे का खाना, शुद्धता, स्वच्छता से बनाएं और उसे ढक कर रखें···' 'बच्चे की आंखों में काजल न डालें···' 'कोई भी मीठी चीज खिलाने बाद के बच्चे को पानी पिलाना या कुल्ला कराना न भूलें···' 'नवंबर से मार्च तक के महीनों में पोलियो से बचाव के लिए दवा पिलाना अधिक असरदायक होगा···' आदि.

जब तक शिशुओं के साथ आई माताएं अपनी बारी की प्रतीक्षा करती है, इस बीच बाल-पोषण व रोग-निरोधी उपायों संबंधी यह मोटी-मोटी जानकारी उनके लिए बहुत उपयोगी सिद्ध होती है. इसके साथ ही यदि पढ़ी-लिखी माताओं में संबंधित विषयों की सरल पुस्तिकाएं वितरित करने और अनपढ़ माताओं को एक चिकित्सा-समाज-सेविका द्वारा इस तरह की आवश्यक जानकारी मौखिक रूप से देने की व्यवस्था की जाए तो प्रतीक्षा के इस खाली समय का दुहरा लाभ उठाया जा सकेगा.

माताओं को प्रतीक्षा के क्षण भारी नहीं लगेंगे और ये बाल-स्वास्थ्य केंद्र उन्हें बाल-स्वास्थ्य प्रशिक्षण देने में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे.

●

परिवार
नियोजन
विचार

ध्यान
योग्य
कारण

वज़न किलोग्राम

स्वास्थ्य का मार्ग

I
II
III

किलोग्राम
पौंडस

पहला साल

दूसरा साल

तीसरा साल

चौथा साल

चौथे महीने से क्रमशः यह भोजन खिलाना शुरू करदें ताकि 18 महीने की आयु तक बच्चा साधारण भोजन खा सके।

सूजी दलिया
आलू
केला
अंडा.
खिचड़ी
पालक
हरी सब्जियां
मूंगफली
फलियां
गाय का दूध



27

कुपोषण और कुपोषण जन्य रोग

[डा० के० एल० पहवाल से भेंट पर आधारित]

अल्प विकसित देशों मे जच्चा-बच्चा की बढ़ी हुई मृत्यु-दर के पीछे कुपोषण एक मुख्य कारण होता है. स्वास्थ्य-विज्ञान की इतनी प्रगति के बावजूद भारत में जन्म लेने वाले हर चौथे बच्चे की मृत्यु पाच वर्ष की आयु के भीतर हो जाती है. इसका कारण हमारे यहां बहुसख्यक माताओं व शिशुओ को पर्याप्त भोजन न मिलना और उन्हे मिलने वाले भोजन मे पर्याप्त पोषक-तत्व न होना ही है.

अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी मे विचार

निश्चय ही यह एक गभीर राष्ट्रीय समस्या है, जिसने अक्तूबर, 1977 मे दिल्ली मे होने वाली 15 वी अतर्राष्ट्रीय बाल-चिकित्सा काग्रेस का ध्यान आकर्षित किया और हमारी वर्तमान राष्ट्रीय बाल-स्वास्थ्य नीति के लिए भी आधार प्रस्तुत किया. यद्यपि उस सम्मेलन का मुख्य विषय मा का दूध था, पर निष्कर्ष रूप में यह बात सामने आई कि भारत जैसे देश मे अधिकतर माताए परंपरा और गरीबी के कारण तब तक बच्चे को अपना ही दूध पिलाती रहती है जब तक कि वह सूख नही जाता. इसलिए मा की खुराक मे पोषक तत्वो की कमी और मां के दूध के साथ बच्चे को दिए जाने वाले पूरक आहार की कमी से यहा कुपोषण की समस्या गंभीर रूप मे विद्यमान है.

इसका अर्थ है : अधिक रोग और मानव-शक्ति का अधिक ह्रास. साथ ही अज्ञानतावश माताएं जब न तो कम खर्च मे पोषक खुराक जुटाने की जानकारी रखती है, न भोजन मे प्राप्त पोषक-तत्वो को भोजन पकाते समय सुरक्षित रख पाती है और न बच्चे के पालन-पोषण मे सफाई-नियमो का ही पूरी तरह ध्यान रख पाती है तो समस्या गभीरत्तर हो जाती है और कुपोषित बच्चे संक्रामक रोगों का शिकार होते रहते हैं.

आहार विशेषज्ञों का मत

आहार-विशेषज्ञो के अनुसार मा का दूध शिशु-पोषण के लिए पहली आवश्यकता है. प्राकृतिक रोग-निरोधक शक्ति रखने के साथ यह शिशुओं को भावात्मक सुरक्षा भी प्रदान करता है. इसके लिए गर्भकाल में व स्तन-पान के समय मा को पर्याप्त पोषक आहार मिलना चाहिए. गर्भवती महिला को एक सामान्य महिला की अपेक्षा प्रतिदिन 250-300 कैलोरी अधिक चाहिए. और एक दूध पिलाने वाली मा को गर्भवती मा से 300-400 कैलोरी अधिक. यदि मा को भी रोज 2300-2500 कैलोरी के बदले 1700-1800 कैलोरी मिलती है और शिशु भी (1-4 वर्ष आयु अनुसार) 900-1300 कैलोरी के बदले 600-800 कैलोरी ले पाता है तो निश्चय ही उसकी रोग-निरोधक क्षमता कम होगी. उस पर स्वच्छता के नियमो का पालन न होने से वह सक्रमण का जल्दी शिकार होगा और बार-बार बीमार होकर अत में भयानक रोगों से घिर जाएगा.



क्वाशरकोर से पीड़ित बच्चा

कारण व निवारण

हमारे गांवों में शुद्ध पेय जल का अभाव, लोगों की सफाई नियमों के प्रति अनभिज्ञता या लापरवाही और मातृ-शिशु केंद्रों पर प्रशिक्षित कर्मचारियों की कमी आदि कई कारण इसके पीछे हैं, पर मुख्य कारण है: उचित जानकारी का अभाव. यदि कम व्यय में भी पोषण प्राप्त करने की विधियां और स्वास्थ्य के लिए स्वच्छता व रोगों की रोकथाम संबंधी आवश्यक जानकारियां वितरित की जाएं व ये सर्वसुलभ हो सकें तो कोई कारण नहीं कि गरीब व पिछड़े बच्चों को संतुलित आहार न मिले. कुपोषणजन्य रोगों, संक्रामक रोगों, अंधता, अपंगता और बुद्धिमंदता की रोकथाम के लिए यह अनिवार्य शर्त है.

कुपोषणजन्य प्रमुख रोग

बच्चों की खुराक में पर्याप्त कैलोरी के अभाव और प्रोटीन, विटामिन, खनिज जैसे आवश्यक पोषक-तत्त्वों की कमी से होने वाले कुछ प्रमुख रोग :

क्वाशर कोर

यह रोग प्रोटीन की कमी से होता है. जब शरीर को पूरी प्रोटीन नहीं मिलती तो कोशिकाओं व ग्रंथियों के ऊतकों की कार्यक्षमता में कमी आती है. अतः नए ऊतकों व खून के निर्माण और शारीरिक बढ़त की प्राकृतिक शक्ति घट जाती है. साथ ही घट जाती है संक्रामक रोगों से लड़ने की शरीर की क्षमता.

मा के दूध में पाई जाने वाली एक विशेष प्रोटीन शिशु की आरंभिक आवश्यकताएं तो पूरी करती है, लेकिन जब खुराक के रूप में बच्चे को जरूरी प्रोटीन नहीं मिल पाती, तब (सामान्यतः एक वर्ष की आयु के बाद) बच्चा इस कुपोषणजन्य रोग 'क्वाशर कोर' से पीड़ित होने लगता है.

इस रोग का आरंभ बच्चे के किसी अन्य रोग से पीड़ित होने पर होता है—जैसे खसरा, काली-खासी, पेट का रोग आदि. रोग से आई कमजोरी व पाचन-कमजोरी के कारण जब बच्चे को आसानी से पचने वाली हलकी चीजें ही दी जाने लगती हैं तो पर्याप्त प्रोटीन न मिल पाने से यह कमी रोग बढ़ाती है. इस पहली स्थिति में बच्चे की बढ़त रुकती है और उसका वजन घटने लगता है.

रोग के दूसरे चरण में बच्चे की भूख कम हो जाती है. उसे खिलाना समस्या हो जाती है और बच्चा सुस्त व उदासीन पड़ जाता है. शरीर पर हलकी सूजन भी प्रगट होने लगती है. पाचन कमजोर पड़ने पर बच्चा 'डायरिया' की चपेट में आ जाता है और दस्त कम करने के लिए हलका भोजन देने पर प्रोटीन की कमी से रोग आगे बढ़ने लगता है. बच्चे के सिर के बाल रूखे होकर झड़ने लगते हैं. पैरों, बाहों, छाती, ललाट की त्वचा पर चकत्ते जैसे निशान पड़ जाते हैं. गाल फूल कर लटकने लगते हैं. सारा शरीर फूल या सूज जाता है. बच्चा भयानक लगने लगता है.

रोग के कारण इस कमजोर हालत में पेट में कृमि, 'एनीमिया', 'डायरिया', जिगर की वृद्धि आदि अन्य रोग भी आक्रमण करते हैं. निरोधक-शक्ति कम हो जाने से बच्चा श्वास संबंधी रोगों या तपेदिक का शिकार भी हो सकता है. अन्य जटिलताएं बढ़ने पर अंतिम परिणति के रूप में मृत्यु भी संभव है. अतः 'क्वाशर कोर' एक भयंकर रोग माना जाता है. भोजन में चावल की प्रमुखता व प्रोटीनयुक्त दालों की कमी के कारण उत्तर भारत की अपेक्षा दक्षिण भारत के अल्प पोषित बच्चे इस रोग के अधिक शिकार होते हैं.

इस रोग से बचाव के लिए आहार में प्रोटीन की पूर्ति बहुत आवश्यक है. रोग का संदेह होने पर डाक्टरी जांच व परामर्श पर चलें. जरूरत पड़ने पर बच्चे को पूर्ण चिकित्सा के लिए अस्पताल में भरती करा देना चाहिए.

'मरास्मस' या सूखा रोग

जब मां का दूध काफी नहीं होता, गाय या बकरी के दूध में पानी मिला कर पतला दूध शिशु को दिया जाता है इससे उसे पूरक आहार भी नहीं मिलता तो यह रोग हो सकता है. सफाई का पूरा ध्यान न रखने पर रोग-निरोधक शक्ति की कमी वाला यह कुपोषित बच्चा बार-बार दस्तों का शिकार होने से वह गंभीर रूप में कुपोषित हो जाता है और हड्डियों का ढांचा मात्र रह जाता है.

लक्षण : इस रोग में बच्चे की चमड़ी के नीचे चरबी और मांसपेशी बहुत कम दिखाई देती है. उसका सिर बड़ा दिखाई देता है, टांगें पतली व कमजोर. उसका वजन अपेक्षित वजन से 60 प्रतिशत से भी कम रह जाता है. सिर के बाल काटने पर वे बढ़ते नहीं. कद भी छोटा रह जाता है. रंग काला पड़ने लगता है. पसलियां साफ दिखाई देने लगती हैं. पहले गाल भरे हुए रहते हैं, अंत में वे भी धसने लगते हैं और बच्चा बूढ़ा-सा दिखाई देने लगता है.

कमजोरी बढ़ने से यह बच्चा अन्य संक्रामक रोगों का भी जल्दी शिकार होने लगता है. यों भी बहुत कमजोर होने से वह या तो उदासीन-सा निढाल-सा पड़ा रहता है य



एनीमिया का शिकार बच्चा

रिरियाता रहता है. उसमे खून की कमी तो होती ही है, विटामिनों की कमी भी हो सकती है. शुरू में उसकी भूख ठीक होती है और भूखा होने पर वह उंगलियां चूसता रहता है. यही संभाल लिया जाए तो उसकी रुचि अनुसार धीरे-धीरे खुराक बढ़ाकर उसे ठीक किया जा सकता है, अन्यथा रोग बढ़ने पर उसकी भूख मर जाती है व फिर उसे खिलाना एक समस्या बन जाती है.

कई बार 'मरास्मस' के रोगी बच्चे ही बाद मे सूजन का शिकार हो 'क्वाशर कोर' के रोगी बन जाते हैं. दर-असल ये दोनों ही स्थितियां प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण के कारण पैदा होती हैं.

उपाय : इन रोगो की प्रारंभिक पहचान है—बच्चे का बार-बार बीमार पड़ना. कुछ महीने तक वजन न बढ़ना, फिर घटने लगना. इसीलिए बच्चे की समय-समय पर जांच कराते रहने की सलाह दी जाती है कि पोषण की कमी को समय पर पहचान कर गंभीर कुपोषण के दुष्परिणामों से बचा जा सके. शुरू में धीरे-धीरे खुराक बढ़ा कर स्थिति संभालना आसान होता है, जब कि बच्चे की भूख मर जाने पर रोग जटिल हो जाता है.

फिर भी, जैसे ही रोगी बच्चे की भूख मे सुधार हो, प्रोटीन-कैलोरी की मात्रा क्रमशः बढाते हुए स्थिति पर नियंत्रण पाने का प्रयत्न करना चाहिए. गंभीर रूप से कुपोषित बच्चे के शरीर का तापमान भी कम होता है अत: उसे ठंड से भी बचाना चाहिए. संक्रमण से बचाव के लिए उसके खान-पान, संभाल में सफाई-नियमों का पालन भी बहुत जरूरी है. पर रोग की स्थिति मे जब बच्चा खाना पसंद न करे या उसे तेज उल्टी, दस्त हों तो शीघ्र अस्पताल ले जाना चाहिए.

रतौंधी, जिरोसिस और अंधापन

विटामिन 'ए' की कमी से होने वाले ये कुपोषणजन्य नेत्र-रोग भी हमारे यहां आम हैं. इसीलिए अंधता के आकड़े भी भारत मे अधिक हैं. मां स्वयं कुपोषित हो, उसके दूध मे विटामिन 'ए' की कमी हो तो दूध पर निर्भर रहने वाले शिशु को नेत्र-रोग हो सकता है. ठोस आहार लेने वाले बच्चों को भी पर्याप्त पोषण न मिलने से विटामिन 'ए' की कमी का शिकार होना पड़ सकता है.



विटामिन 'ए' की कमी से नेत्र रोग



विटामिन 'ए' की कमी से विटोट स्पाट,
सफेद दाग स्वच्छ मंडल पर फैल सकता है

प्रारंभ में रतौंधी होने से बच्चे को रात के समय दिखाई नहीं देता. 'जिरोसिस' रोग में आंख की श्लेष्मा (कंजेक्टाइवा) सूखी, सिकुड़ी व गदली रहने लगती है. स्वच्छ मंडल (कार्निया) के एक या दोनों ओर भूरे या सफेद धब्बे हो सकते हैं. बच्चा प्रकाश की ओर देख नहीं सकता तो मुंह फेर कर या आंख मूंद कर लेटा, बैठा रहता है. आगे संक्रमण का शिकार होने पर नेत्र-घाव से नेत्र-ज्योति जाने का भी खतरा रहता है.

बचाव : ये सारे खतरे न हों तो भी विटामिन 'ए' की कमी से नजर की कमजोरी तो हो सकती है. अतः बचाव के लिए बच्चे के आहार में दूध, दही, घी, मक्खन, अंडा, गाजर व पीले फल तथा हरी सब्जियां शामिल करनी चाहिए. पर कमी की स्थिति में शिशु को डाक्टरी राय से विटामिन 'ए' की अतिरिक्त खुराक देनी चाहिए. यह एक खुराक हर छः महीने बाद पांच वर्ष तक दी जाती है, जिसे आजकल शिशु-स्वास्थ्य केंद्रों पर निःशुल्क दिया जा रहा है.

बेरीबेरी

विटामिन 'बी' (थायमिन) की कमी से होने वाला यह रोग भारत में केवल उन लोगों में पाया जाता है जो भोजन में अधिकतर पालिश किए चावल ही लेते हैं. इस में शरीर सूखता है, बच्चे की आवाज भारी हो जाती है. सांस तेज चलने लगती है. हृदय पर सूजन आने से हृदय गति रुकने की स्थिति भी आ सकती है.

उपाय: विटामिन 'बी' युक्त आहार देना व 'बी' (थायमिन) की गोली या इंजेक्शन देना ही इसका उपचार है और हथकुटे चावल, दालों व हरी सब्जियों को पालिशदार चावल के बदले भोजन में शामिल करना ही इसकी रोकथाम का उपाय है.

स्कर्वी

यह रोग विटामिन 'सी' की कमी से होता है. मां के दूध में विटामिन 'सी' की पर्याप्त मात्रा रहती है. अतः तीन महीने तक के शिशु को यदि वह मां का दूध पीता है, अलग से विटामिन 'सी' देने की आवश्यकता नहीं होती. गाय या भैंस का दूध उबालने पर और सब्जियों को पकाने पर दूध और सब्जी में पाया जाने वाला विटामिन 'सी' नष्ट हो जाता है. पर सौभाग्य से हमारे शरीर को इसकी थोड़ी ही जरूरत होती है. अतः शिशु को थोड़ा-सा संतरे का रस देकर तथा बड़े बच्चे को भोजन में संतरा, अमरूद, टमाटर, प्याज, नींबू आंवला, धनिए-पुदीने की चटनी आदि शामिल कर इसकी पूर्ति की जा सकती है.

विटामिन 'सी' की कमी से होने वाले 'स्कर्वी' रोग के लक्षण हैं : मसूड़े नरम पड़ना, उनसे खून बहना, हड्डियों में पीड़ा, त्वचा में नीचे खून बहना, चिड़चिड़ापन आदि. अतः कमी की स्थिति में डाक्टरी राय से गोलियों के रूप में अतिरिक्त मात्रा भी देनी चाहिए. बच्चों के लिए ये गोलियां चूसने वाली सुस्वादु भी मिलती हैं.



विटामिन 'डी' की कमी से रिकेट्स—इसमें टांगों की हड्डियां टेढ़ी हो जाती हैं

रिकेट्स (हड्डियां टेढ़ी होने का रोग)

शिशुओं व बढ़ने वाले बच्चों में यह रोग विटामिन 'डी' की कमी से होता है. इस रोग में बच्चों के हाथ-पैर की हड्डिया नरम पड़कर टेढ़ी हो जाती हैं. कूबड़ निकल आता है. कलाई व टखने की हड्डियों के नुकीले सिरे निकल आते हैं. घुटने आपस में छूने लगते हैं. मांसपेसिया कमजोर पड़ जाती हैं. बच्चा बैठ या चल नही पाता. लडकियों की त्रिकास्थि(पेलविस)का आकार बिगड़ जाता है जिससे आगे मां बनने पर प्रसव कठिन हो जाता है. शिशुओं में विटामिन 'डी' की कमी से दांत देर से निकलते है और अच्छे दात नहीं आते.

उपाय : इस रोग से बचने के लिए तथा दांतों व हड्डियों की मजबूती के लिए भोजन मे कैलशियम,फासफोरस युक्त आहार— दूध,दही,फल,सब्जी की मात्रा पर्याप्त होनी चाहिए तथा बच्चे को सर्दी में धूप-स्नान भी अवश्य करना चाहिए. यह विटामिन खाद्य पदार्थों मे बहुत कम होता है. अत: धूप ही हमारे देश में इसकी प्राप्ति का सस्ता सुलभ साधन है.

घेघा (गलगंड)

आहार में 'आयोडीन' तत्त्व की कमी सामान्यत: इस रोग का कारण होती है. पर अधिकतर यह रोग स्थानीय है, हिमाचल क्षेत्र व आंध्र प्रदेश मे पाया जाने वाला. यह प्राय: पांच साल से ऊपर की आयु में ही होता है. इसमें गले के नीचे एक लोथडा सा बढ़ जाता है. पर इससे गल-ग्रंथि की क्रिया घट-बढ़ जाने से मानसिक व व्यवहार संबधी कठिनाई पैदा हो सकती है. बंदगोभी, शलजम, कमल ककड़ी मूंगफली, सोयाबीन, जैसी आयोडीन युक्त चीजों से इसकी रोकथाम की जा सकती है.

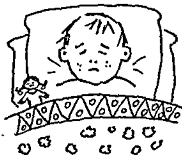
रक्ताल्पता (एनीमिया)

खुराक में लौह-तत्त्व की कमी इसका मुख्य कारण है. पर फोलिक एसिड और विटामिन बी-12 की कमी भी रक्ताल्पता में सहायक है. 'हुकवर्म' भी खून चूसने के कारण 'एनीमिया' का कारण बनते हैं. इस रोग में खून की कमी से बच्चा सुस्त व पीला पड़ जाता है. आंख, नाक, नाखून, जीभ होठ पीले दिखाई देते है. नाखून भी चपटे हो सकते हैं.

उपचार : उपचार के रूप में गर्भवती मां, दूध पिलाने वाली मा और बच्चे को फोलिक एसिड युक्त आयरन की मात्रा डाक्टर से पूछ कर देनी चाहिए. आजकल यह टानिक भी माताओ व बच्चों को बाल-स्वास्थ्य केंद्रों पर नि:शुल्क वितरित किया जा रहा है. पर खुराक में हरी सब्जियों, फलों को शामिल करने से इस तत्त्व की कमी नही रहेगी. पालक, टमाटर, प्याज, खीरा, सलाद, सेब, अंडा कलेजी में इसकी भरपूर मात्रा होती है और पालक, खीरा, सलाद व अन्य हरी सब्जी कुछ महगी भी नही.

अत: स्पष्ट है कि खाद्य-पदार्थों के पोषक-तत्व केवल महंगी चीजों मे ही नही होते. अत: दैनिक भोजन में ही थोड़ा हेर-फेर करके, भोजन की परम्परागत आदतें बदल कर, मौसमी फलों व हरी सब्जियों का प्रयोग बढ़ाकर, बच्चे को पर्याप्त खुराक दे कर इस समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है. आवश्यकता पड़ने पर डाक्टरी राय से अतिरिक्त टॉनिक भी दिए जा सकते हैं.

अत: पहली आवश्यकता है, इस संबंध में बुनियादी जानकारी प्राप्त करने व उसे आसपास वितरित करने की, क्योंकि बच्चे की कम खुराक का कारण केवल गरीबी ही नही है. इस संबंध में एक ओर कम खर्च में पौष्टिकता जुटाने के बारे मे हमारी अज्ञानता आड़े आती है तो दूसरी ओर अधिक लाड़-प्यार में बच्चे के साथ खाने के बारे में जबरदस्ती करने या उसके पीछे पड़े रहने की आधुनिक माताओं की आदत. जिससे चिढकर और मां को चिढाने की गरज से बच्चा खाना छोड़ देता है. खाते-पीते घरों के बच्चे माताओ की इस आदत के कारण ही प्राय: कुपोषित रह जाते है.





28

पेट के रोग

[कलावती सरन बाल-चिकित्सालय की एक वरिष्ठ बाल-चिकित्सक डा० दया शर्मा से भेंट पर आधारित]

छोटे बच्चों में पेट की छोटी-मोटी शिकायतों के अलावा जिस गभीर रोग से विशेष परेशानी होती है, वह है दस्तों का रोग. पाच वर्ष से कम आयु के बच्चे इससे अधिक प्रभावित होते हैं और एक वर्ष से छोटे बच्चों में कभी-कभी यह बीमारी मौत का कारण भी बनती है. पर सावधानी बरती जाए तो इसपर काबू पाना कठिन नही. कुछ बातों की जानकारी हासिल कर माताए ही इसकी रोकथाम में सहायक हो सकती है, अत. इस सबध मे माताओ के लिए आवश्यक जानकारी प्रस्तुत कर रही है राजधानी के प्रमुख बाल-चिकित्सालय कलावती सरन अस्पताल की एक वरिष्ठ बाल-चिकित्सक डा. दया शर्मा. डा. दया शर्मा के सुझाव संक्षेप में इस प्रकार हैं :

दस्तों का रोग (डायरिया)

यह रोग आंतो में रोगाणुओं (जीवाणु और वायरस) के प्रभाव से होता है. इसके अलावा कान, गले मे संक्रमण होने, निमोनिया आदि कारणो से भी हो सकता है. कुपोषण से बच्चे का हाजमा खराब हो जाता है, उसकी पाचनशक्ति और रोग-निरोधक शक्ति कमजोर हो जाती है. इस कारण दस्त लग सकते है. इस प्रकार कुपोषण और संक्रमण (इफेक्शन) दोनों ही इस बीमारी के कारण बनते हैं.

अस्वच्छता, सफाई न रखना, और गदे बर्तनों का प्रयोग आदि इंफेक्शन का कारण बनते हैं. इनसे दूध, पानी आदि पेय दूषित हो जाते है जिससे सक्रमण फैलता है और बीमारी लगती है. मक्खियां भी सक्रमण फैलाती है. वे गन्दगी में उड़कर खाने की चीजों पर बैठती हैं और उन्हे दूषित बनाती हैं. इसलिए खाने-पीने की सभी चीजें ढककर रखनी चाहिए, खाना स्वच्छता से बनाना चाहिए और रसोई की जूठन, कूड़ा-कचरा भी ढक कर रखा जाना चाहिए ताकि मक्खियां गंदगी पर बैठने के बाद खाने पर बैठ उसे दूषित न कर सकें व अन्य कीटाणुओं से भी भोजन को सुरक्षित रखा जा सके. सफाई के लिए यह भी जरूरी है कि बच्चे की टट्टी को व उस स्थान को शीघ्र साफ कर दिया जाए.

डायरिया के लक्षण : दस्तों की बीमारी मे रोग की अवधि भिन्न-भिन्न होती है. हल्के रोग-आक्रमण मे दो-तीन दिन तक दस्त आते हैं, फिर बच्चा धीरे-धीरे ठीक हो जाता है. पर पाखाना सामान्य हो जाने पर भी कभी-कभी गलत खिलाने-पिलाने से सक्रमण लग कर रोग दुबारा भी हो जाता है.

दूसरे गभीर किस्म के दस्तों में ऐसा भी हो सकता है कि बच्चे में रोग के लक्षण दिखाई देने के बाद चद घटों में उसकी मृत्यु हो जाए. अधिकतर मृत्यु का कारण निर्जलन ही होता है. दस्तों से पीडित अधिकाश बच्चे निर्जलन से





उल्टा लेटने की आदत डालने से बच्चा पेट दर्द से बचा रहता है व सोते हुए उल्टी करने पर उसके फेफड़ों में जाने का डर नहीं रहता

मरते हैं. बार-बार टट्टी द्वारा या उल्टी द्वारा बच्चे के शरीर से बहुत सा पानी तथा नमक बाहर निकल जाता है. निर्जलन की इस स्थिति मे पानी तथा नमक से कमी-पूर्ति करके रोगी बच्चे की जान बचाने का प्रयत्न करना होता है. अतः बच्चे को पेय पदार्थ देने के साथ तुरन्त डाक्टर की सहायता भी लेनी चाहिए.

निर्जलन या शरीर में पानी की कमी के लक्षण : दस्त न रुकने पर आरंभ में बच्चे में पानी की थोड़ी कमी होती है और वह देखने में सामान्य लगता है. लेकिन धीरे-धीरे अधिक पानी और नमक निकल जाने पर निर्जलन के चिह्न तेजी से बढ़ने लगते हैं. शुरू में बच्चा बेचैनी अनुभव करता है तथा उसे प्यास लगती है. उसकी जीभ व होंठ सूखने लगते हैं. बाद में आंखें धंसने लगती हैं. तालू गिरने लगता है. पेट की चमड़ी को चुटकी में पकड़कर ऊंचा उठा कर देखें तो मालूम होगा कि चमड़ी ढलक गई है. इस समय बच्चे की ठीक से देखभाल न की जाए तो पेशाब बहुत कम व गाढा हो जाता है और अंत में बच्चा सुन्न पड़ जाता है. बेहोश हो जाता है. उसका शरीर ढीला पड़ जाता है. हाथ-पांव ठंडे व चिपचिपे हो जाते हैं. निर्जलन के इन लक्षणों को पहचानने के साथ इनके साथ प्रगट होने वाले कुछ अन्य लक्षणों पर भी निगाह रखें, जैसे टट्टी में खून आना, बुखार बेहोशी, ऐंठन या तेज सांस आदि. इनका अलग से इलाज करना पड़ सकता है.

सावधानी : यदि बच्चे को दस्त लग जाएं तो इस बात का विशेष ध्यान रखें कि बच्चे में पानी की कमी न होने पाए, क्योंकि निर्जलन हो जाने पर चंद ही घंटों में यह स्थिति तेजी से बढ़ती है और फिर इलाज में देर होने पर बच्चे की जान को खतरा हो सकता है. अतः दस्तों के कारण होने वाली पानी की कमी को जल्दी पूरा करना चाहिए. इसे पुनर्जलीकरण कहते हैं, जो कि लक्षण दिखने के छह घंटे के भीतर करना चाहिए.

जब तक दस्त जारी रहें और बच्चा सामान्य रूप से फिर दूध आदि न लेने लगे, तब तक पुनर्जलीकरण जारी रखना चाहिए और तुरंत अपने क्षेत्र के स्वास्थ्य कार्यकर्ता या समीप के डाक्टर से सलाह लेनी चाहिए. दूसरे, बच्चे को संक्रमण से बचाव के लिए दवा तभी देनी चाहिए जबकि डाक्टर की ऐसी राय हो. रोगी बच्चे को नमक मिला पानी पिलाना चाहिए. यह घोल एक लिटर पानी मे आधा चम्मच या तीन ग्राम नमक तथा पांच चम्मच या पच्चीस ग्राम चीनी मिलाकर घर पर ही तैयार किया जा सकता है या दवा बेचने वालों से खरीदा जा सकता है. घोल बच्चे को चम्मच या प्याले से बार-बार तब तक पिलाना चाहिए जब तक बच्चा मना न कर दे. यदि बच्चा मा का दूध पीता है तो मां के दूध के साथ ही यह घोल भी पिलाते रहना चाहिए. फिर धीरे-धीरे दूध की मात्रा अधिक व घोल की मात्रा कम करते जाएं. चार से छः दिन मे बच्चा सामान्य खुराक लेने लगता है.

यदि बच्चे को उल्टी आ रही है और मुंह से दिया जाने वाला दूध आदि पेय पच नही पाता तो उसे अन्तः शिरा-विधि (इन्ट्रावीनसली) द्वारा दूध दिया जाना चाहिए ताकि निर्जलन से बचाव हो सके. ऐसे मामलों में क्षेत्रीय स्वास्थ्य कर्मचारी या डाक्टर से संपर्क अवश्य करें अथवा क्लीनिक या अस्पताल से इलाज करवाएं जिससे रोग को जटिल होने से रोका जा सके. तीन-चार दिन तक आराम के बाद दूध शुरू करने पर यदि फिर से दस्त आने लगें तो दूध बंद करके बदले मे लस्सी या केले का चूर्ण (बैनालोना) देना चाहिए. (देने की विधि : 'बैनालोना' के डिब्बे पर लिखी रहती है) दूध में पाया जानेवाला 'लेक्टोज' कभी-कभी रोगी



निर्जलीकरण से त्वचा इस प्रकार ढीली हो जाती है

बच्चा सहन नही कर पाता. इसलिए उसे एक सप्ताह तक दूध न दें, फिर धीरे-धीरे उसे दूध पर लाएं. उसे ठोस आहार के रूप मे दही-खिचड़ी दे सकते हैं, केला खिला सकते हैं.

तीन सप्ताह तक इलाज से बीमारी ठीक न हो तो इसे 'क्रानिक डायरिया' कहते हैं, यानी दस्तों की जीर्ण बीमारी. इसके लिए टट्टी की जांच जरूरी है कि बैक्टीरिया हैं या पेट के कीड़े, इसका पता लगाया जा सके. पेट के कीड़ो के कारण ही अक्सर बीमारी अधिक देर तक रहती है. इसलिए जाच व उसके बाद इसका जमकर इलाज जरूरी है. यदि डाक्टर की राय हो तो बच्चे को अस्पताल मे भी भरती किया जाना चाहिए. गांवो-कस्बों के डाक्टर भी प्रायः ऐसे रोगी बच्चे को समीप के बड़े अस्पताल मे चिकित्सा के लिए ले जाने की सलाह दें तो इसमें देर नही करनी चाहिए. *निर्जलन होने पर तो बच्चे की जान बचाने के लिए तुरंत* योग्य डाक्टर से संपर्क करना या उसे अस्पताल ले जाना आवश्यक है.

दस्तों से बचाव के लिए सामान्य स्वच्छता-सफाई का ध्यान रखने के साथ यह बात विशेष रूप से याद रखने की है कि यह रोग बोतल से ऊपरी दूध पीने वाले बच्चों को ही अधिक होता है, अतः संक्रमण से बचाव के लिए दूध की बोतल और निपल की सफाई का विशेष ध्यान रखना चाहिए. और जब कभी बच्चे को दस्त-रोग हो जाए तो उसे पर्याप्त मात्रा में तरल पेय पदार्थ दिए जाएं जिससे वह पानी की कमी का शिकार न होने पाए.

पेचिश

पेचिश छोटे बच्चों में कम, बड़े बच्चों में अधिक होती है. इसके कारण भी वे ही हैं: अस्वच्छता से भोजन द्वारा संक्रमण और रोगाणु. इसलिए पेचिश रोग की रोकथाम के उपाय भी यही होंगे—कूड़ेदान को ढककर रखना, भोजन की स्वच्छता, शुद्धता आदि—जोकि दस्त-रोग के बचाव के लिए बताए गए हैं.

पेचिश के लक्षण हैं: पेट में दर्द व मरोड़ के साथ असामान्य पाखाना, जिसमें आंव व कभी-कभी खून भी मिला होता है. रोग का इलाज शीघ्र न किया जाए तो पुराना होकर यह अधिक तकलीफदेह व जटिल हो सकता है, जबकि समय पर इलाज से यह शीघ्र ही काबू मे आ जाता है और तेज होने पर भी 'डायरिया' की तरह जानलेवा साबित नहीं होता.

सावधानी : जब तक पेचिश ठीक न हो जाए, बच्चे को हल्का, सुपाच्य खाना देना चाहिए. जैसे दलिया, दही, खिचड़ी आदि. दूध न दें या कम से कम दें. जोर होने पर तो पतली नरम खिचड़ी व दही ही दिया जाना चाहिए. पेट दर्द के लिए 'बरालगन' की गोली या बूंदों वाली दवा 'स्पैजमिन डान' की (बच्चे की आयु अनुसार) चार से बीस बूंदें तक दी जा सकती हैं. दवा देने का संकेत शीशी पर लिखा रहता है, उसी अनुसार दें. पर कष्ट अधिक हो या बीमारी देर तक चले तो डाक्टरी सहायता लेना ही ठीक होगा.

कब्ज

शिशु को दिन में पांच-छह बार या एक-दो दिन छोड़ कर टट्टी करना सामान्य बात है. इसके लिए चिंता की जरूरत नहीं. यदि बच्चा मां के दूध पर है तो दस्तों की बीमारी से और कब्ज से *प्रायः बचा रहता है.* अधिकतर कब्ज की शिकायत भी ऊपरी दूध पीने वाले बच्चो को ही रहती है.

सावधानी : यदि बच्चे को कब्ज रहती है तो बुद्धिमानी इसी में है कि कब्ज होने के बाद उसका इलाज करने

के बजाए कब्ज होने ही न दी जाए. ऊपरी दूध पीने वाले बच्चे के मामले में इस बात का ध्यान रखना और भी जरूरी है. सख्त टट्टी से तकलीफ है तो बच्चे को फलों का रस, सब्जियों का सूप, दालें, खिचड़ी, रोटी, दलिया आदि तरल व ठोस भोजन दें जिससे उसे कब्ज न रहे. दूध ही पीने वाले बच्चे को दूध में शहद डालकर दें या शहद चटाएं. उबला हुआ पानी काफी मात्रा में पिलाएं. कब्ज वाले बच्चे को बार-बार जुलाब देना माताओं में एक बहुत ही गलत आदत पाई जाती है. इससे बचना चाहिए. कब्ज होने पर आवश्यकतानुसार कभी-कभी एनीमा दे सकते हैं या ग्लैसरीन की बत्ती का सहारा ले सकते हैं, पर बच्चे को इसकी आदत नहीं पड़नी चाहिए. यदि कभी जुलाब देना ही पड़े तो भी 'कैस्टर आयल' जैसा तेज जुलाब न देकर रात को सोते समय आधे से एक चाय के चम्मच तक 'फ्रीमाफेन' या 'मिल्कि आफ मैग्नेशिया एमलशन' दिया जा सकता है. सामान्य जरूरत के लिए अजीर का एक टुकड़ा रात को भिगोकर रख दें व सुबह मसलकर उसका रस दो चाय के चम्मच शिशु को पिला दें. उसे कब्ज नहीं रहेगी. ये सब उपाय आजमाने पर भी बच्चे को लगातार कब्ज रहे तो विशेषज्ञ से जांच कराना जरूरी है.

पेट गैस व अफारा

मां का दूध व बोतल का दूध पीने वाले शिशुओं में यह शिकायत कभी सामान्य व कभी-कभी गंभीर रूप में भी उपस्थित होती है. जब मा का दूध पूरा न पड़े और बच्चा खाली स्तन चूसता रहे तो अपने भीतर हवा भर लेता है. इसी तरह बोतल से दूध पीने वाले बच्चे के मुह में लगी बोतल का दूध यदि निपल मे पूरा न भरा हो तो बच्चा दूध के साथ हवा भी निगल लेता है. कई बार दूध व पानी की मात्रा का उपयुक्त संतुलन न होने पर भी अपच व अफारा हो जाता है. मानसिक परेशानी से कब्ज, दस्त, अपच, अफारा, उल्टी आदि कुछ भी हो सकता है. बच्चे का पाचन ठीक न हो और वह जरूरत से ज्यादा खा ले या उसे जबरदस्ती खिला दिया जाए तो भी अफारा स्वाभाविक है. कई बार पेट में कीड़े होने से भी यह शिकायत होती है जिसके लिए जांच जरूरी है.

सावधानी : माताओं को चाहिए कि बच्चे का पेट भर जाने पर वे उसे स्तनों से अलग कर दें, उसे भूख से ज्यादा दूध न पिलाएं, न ही खाली स्तन देर तक चुसाती रहें. यदि मां का दूध पूरा न पडे तो ऊपरी दूध और साथ में पूरक आहार दें. दूध पिलाते समय बच्चे का सिर नीचा नहीं होना चाहिए, उसे हाथ का सहारा दे तनिक ऊंचा उठाकर रखें. बोतल से दूध पिलाते समय भी बोतल को कुछ ऊंचा उठाकर रखना चाहिए जिससे निपल दूध से भरा रहे. इस तरह बच्चा दूध पीते समय हवा नही निगलेगा. इसके अलावा, दूध पिलाने के शीघ्र बाद बच्चे को उठाकर कंधे से लगाएं और उसकी पीठ थपथपा दें ताकि वह डकार ले ले. इसके बाद ही उसे बिस्तर पर लिटाना चाहिए, वह भी तनिक सिर ऊंचा उठाकर.

अपच व अफारे से बचाने के लिए बच्चे को जहां तक संभव हो मां का दूध पिलाएं. बदले मे बकरी का या गाय का दूध देना चाहिए और दूध में पानी नही मिलाना चाहिए. डिब्बे का दूध देते समय बच्चे की आयु व वजन के अनुसार दूध की सही मात्रा दी जाए और डिब्बे पर लिखी विधि से दूध बनाया जाए, न अधिक गाढ़ा, न अधिक पतला. यदि बड़ा बच्चा भूख में अधिक खाता है और उसका पेट भी प्रायः खराब रहता है तो टट्टी की जांच कराएं कि कहीं उसके पेट में कीड़े तो नही? सामान्यतया बच्चा भूख से अधिक नही खाता, न ही अधिक दूध पीता है. उसे उसकी भूख के अनुसार ही खुराक मिलनी चाहिए. पर इस बारे में जोर या जबरदस्ती ठीक नही. यदि बच्चा खाने से इंकार करे तो उसे फुसलाने, लालच देने, डांटने या जबरदस्ती करने का प्रयत्न न कर उसे ढीला व अकेला छोड़ दें या समूह में बैठकर खाना सिखाएं. किसी भी हालत मे खाने को लेकर उसके मस्तिष्क में तनाव नही आना चाहिए, न ही उसमें हठधर्मी का विकास होना चाहिए.

किसी भी कारण से अफारा होने पर गरम पानी की बोतल से सेंक दें, पेट पर मालिश न करें. पेट-दर्द के लिए पेचिश-प्रकरण में बताई गई गोली या बूंदों वाली दवा देनी चाहिए. पेट के बल उल्टा लिटाने से भी पेट की गैस निकल जाती है और बच्चे को आराम मिलता है. यदि बच्चे को लगातार अपच व अफारे की शिकायत रहती हो और खान-पान मे सुधार से और इन उपायों से ठीक न हो तो बच्चे की डाक्टरी जांच कराएं कि आंतों में किसी रुकावट के कारण तो ऐसा नहीं? इसके लिए डाक्टरी इलाज जरूरी है.

उल्टी

उल्टी कोई एक ही बीमारी का नही, कई बीमारियों का लक्षण है. वैसे शिशु के लिए थोड़ा-थोड़ा दूध निकालते रहना एक सामान्य बात है. कभी एकाध बार पूरा दूध उल्ट देना भी हानिकारक नही. यदि बच्चे की बढत ठीक है, नीद

ठीक है, टट्टी ठीक है तो इस तरह की उल्टी से डरने की आवश्यकता नहीं. लेकिन उल्टी बार-बार होती हो व साथ में कब्ज रहती हो तो डाक्टरी जांच कराएं. कई बार गले में, मुंह में 'इंफेक्शन' होने से भी उल्टी हो सकती है. इन सब शिकायतों में, दस्तों के साथ उल्टी होने पर या आंतों में कोई रुकावट हो तो इसका इलाज डाक्टर पर ही छोड़ना चाहिए.

अंत में, इन मुख्य बातों पर विशेष रूप से ध्यान दें :

□ शिशु में पेट-दर्द और अफारे की पहचान है—पेट का फूला होना, सख्त होना और बच्चे का पेट की तरफ पैर सिकोड़ कर रोना. ऐसे समय उसके रोने पर उसे दूध पिलाने से उसकी तकलीफ और बढ़ेगी, तुरंत लक्षणों से पहचान कर पेट-दर्द का व अफारे को ठीक करने का उपाय करें.

□ पेट की कोई भी तकलीफ हो, खान-पान में सुधार करना और सफाई-स्वच्छता पर ठीक से ध्यान देना जरूरी है. इस नियम का बराबर पालन करने से बार-बार ऐसी तकलीफ होगी ही नहीं.

□ संक्रमण से बचाव के लिए यह भी जरूरी है कि बच्चा गीले व गंदे नेपकिन में न रहे और उसे 'नेपकिन-सोर' से बचाया जाए.



दस्तों की बीमारी में पानी या अन्य तरल पेय पदार्थ अवश्य दें

□ दस्तों की बीमारी में तरल पेय पदार्थ बराबर दिए जाएं ताकि निर्जलन न हो और निर्जलन के लक्षण दिखाई देते ही तुरंत उसका इलाज किया जाए. ●



29



पेट में कृमि

[प्राणा नर्सिंग होम की बालरोग विशेषज्ञ डा. श्यामला मेहता से भेंट पर आधारित]

पेट की बीमारियों में पेट के कीड़ों का भी काफी हाथ रहता है. ये कीड़े पाखाने में निकलते रहते हैं पर प्रायः दिखाई नहीं देते. टट्टी की जांच करने पर माइक्रोस्कोप से ही नजर आते हैं. पर समय पर इसका इलाज न किया जाय तो ये बच्चे की पाचनशक्ति पर, उसके पोषण पर उसकी बढ़त पर दुष्प्रभाव छोड़ते हैं.

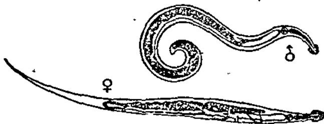
"ये किस आयु के बच्चों में अधिक होते हैं ?" यह पूछने पर डा. श्यामला मेहता ने बताया, "एक वर्ष की आयु के ऊपर का कोई भी व्यक्ति इनसे प्रभावित हो सकता है. एक वर्ष से कम उमर के बच्चे जब तक मां का दूध पीते हैं और मिट्टी के संपर्क में नहीं आते, इनसे बचे रहते हैं."

कारण

डा. मेहता के अनुसार, इनके कारण हैं :

दूषित पानी, हरी सब्जियों, विशेषतया कंद सब्जियों (जो मिट्टी के भीतर पनपती हैं) का बिना धोए प्रयोग. यदि सब्जियों को पोटाशियम परमैंगनेट मिले पानी में धो कर काम में लाएं तो यह शिकायत नहीं होगी. विशेष रूप से बरसात में तो इस बात का और भी ध्यान रखना चाहिए.

दूसरा कारण है, बच्चों का मिट्टी में खेलते हुए वही गंदे हाथ मुंह में डाल लेना और उनकी मिट्टी खाने की आदत. बच्चों को मिट्टी में खेलने से मना न करें, केवल सफाई की आदत सिखाएं. छोटे बच्चों को मिट्टी खाने की आदत छुड़वाने के लिए उन्हें कैलशियम की गोली खिलाएं. इससे उनकी मिट्टी के स्वाद की इच्छा भी पूरी हो जाएगी, उन्हें अतिरिक्त कैलशियम भी मिलेगा, जो दांत निकालते समय उनके लिए विशेष रूप से लाभदायक होगा.



थ्रैड वर्म

प्रकार

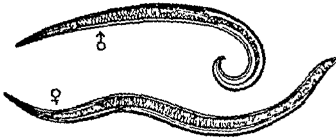
पेट के कीड़े मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं :

1. 'थ्रैड वर्म्स' (चुनचुने), 'राउंड वर्म्स' (केंचुए व बड़े कीड़े), 'टेप वर्म्स' (लंबे कीड़े).

2. अमीबा, जियार्डिया और हुक वर्म्स.

थ्रैड वर्म्स या चुनचुने

छोटे-छोटे धागे के समान पतले ये कीड़े 3 से 13 मिली मीटर तक लंबे होते हैं. मादा कीड़े गुदा के किनारे पर आकर अंडे देते हैं. बच्चा गुदा पर खुजलाए तो गुदा की चमड़ी हटा कर देखने से वहीं पर ये दिखाई दे जाएंगे, अन्यथा पाखाने में निकलने पर पहचान करें. गुदा पर खुजलाहट से ये हाथ और कपड़ों में लगकर अन्य लोगों को भी प्रभावित करते हैं. इसलिए अक्सर परिवार में किसी एक को होने पर सभी को हो सकते हैं. ये अंडे आंतों में जाकर पूरे कीड़े बन जाते हैं. पेट में ये कीड़े होने पर सामान्य लक्षण है : बच्चे का रात के समय दांत किटकिटाना, गुदा में खुजली, जो रात के समय बढ़ती है, पेट दर्द, साथ ही गुदा के मुंह पर छोटे कीड़ों का दिखाई दे जाना और दस्तों में सभी आकार के चुनचुने निकलना. कभी-कभी बच्चे को दस्त लगने का कारण भी ये बनते हैं. जब भी ये लक्षण दिखाई दें, बच्चे की टट्टी की जांच करा लें या कीड़े दिखाई दे जाने पर बच्चे को डाक्टर के पास ले जाएं. अपने आप जुलाब आदि न दें. डाक्टर बच्चे की सामान्य जांच करके ही दवा की मात्रा आदि निर्धारित करते हैं. वैसे इनका



राउंड वर्म

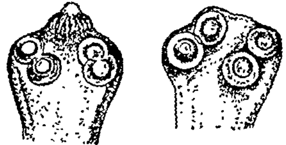
इलाज न कठिन है, न लंबा. सात दिन का एक कोर्स लेना पड़ता है. फिर पंद्रह दिन के अंतराल से दोबारा पाखाने की जांच करा लेनी चाहिए. कई बार तीन-चार महीने के बाद दोबारा यह इलाज करना पड़ सकता है. इसलिए जब तक ये बिल्कुल समाप्त न हो जाएं, बच्चे को डाक्टर के संपर्क में रखना ठीक होगा. गुदा में खुजली होने पर बच्चे के नाखून काट देने चाहिए. उसके हाथों को बार-बार साफ करना चाहिए और परिवार के दूसरे पीड़ित सदस्यों का इलाज भी साथ ही करना चाहिए.

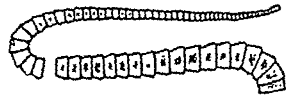
राउंड वर्म्स या केंचुए

ये कीड़े 20 से 35 सें. मी. तक लंबे और केंचुए की तरह सफेद व गोल होते हैं. कभी-कभी पाखाने या उल्टी में निकलने पर दिखाई दे जाते हैं. पाखाने में इसके अंडे तो निकलते ही रहते हैं. पेट में ये कीड़े होने के सामान्य लक्षण हैं : पेटदर्द, भूख की कमी, उल्टी भी आ सकती है. त्वचा-विकार भी हो सकता है, एनीमिया या खून की कमी भी. बच्चे की बढ़त रुक जाती है. ज्यादा हो जाएं तो दमा भी हो सकता है. आंतों में रुकावट भी आ सकती है, जिसके लिए आपरेशन कराना पड़ सकता है. इसलिए यदि बच्चे की बढ़त में बाधा दिखाई दे, उसकी भूख कम हो तो जांच कराएं. एनीमिया व अन्य विकारों का जल्दी इलाज होना चाहिए और बच्चे का विकास बिना अवरोध जारी रखने के लिए इन कीड़ों से छुटकारा पाने का उपाय भी शीघ्र करना चाहिए. जांच से पता चल जाने पर जमकर डाक्टरी इलाज करें. दवा का एक कोर्स लेने के बाद तीन-चार महीने बाद तक कोर्स फिर लेना पड़ सकता है. इलाज बहुत सरल है. यह सप्ताह में एक ही गोली दी जाती है, सप्ताह बाद दूसरी. कोर्स समाप्त होने के 15 दिन बाद मल की दोबारा जांच भी जरूरी है, ताकि कीड़े समाप्त हो जाने का पता चल जाए.

टेप वर्म्स या लम्बे कीड़े

ये कीड़े और 'हुक वर्म्स' भी मैदानी इलाकों में ज्यादा नहीं होते. पहाड़ी क्षेत्रों में ही इनकी रिपोर्ट ज्यादा मिलती है. पर सूअर के मांस से कहीं भी इनका खतरा रहता है, क्योंकि सूअर गंदगी खाता है. इसके लक्षण हैं : पेट दर्द, एनीमिया, भूख की कमी, वजन में कमी, दौरे भी पड़ सकते हैं. पाखाने में पूरा लंबा कीड़ा नहीं, उसके टुकड़े निकलते हैं. इसलिए अक्सर कीड़े का पता नहीं चल पाता. पर संदेह हो तो रोग की उपेक्षा न कर तुरंत जांच करानी चाहिए, क्योंकि बढ़ने पर ये ज्यादा खतरनाक होते हैं.







टेप वर्म

दिखाई न देने वाले कीड़े : अमीबा और जियार्डिया

इनके सामान्य लक्षण हैं : दस्त, पेचिश, भूख की कमी, अपच, खाने के बाद शौच, शौच के पहले पेट-दर्द, कभी ज्यादा बार दस्त, कभी कब्ज. दस्तों में निर्जलीकरण

का खतरा रहता है. इसलिए रोकथाम का उपाय शीघ्र करना चाहिए. 'जियार्डिया' की पहचान है, अधिक मात्रा में टट्टी. इसलिए इससे बच्चे को जल्दी कमजोरी आ जाती है, उपेक्षा किसी भी हालत में ठीक नहीं होगी. लक्षणों से संदेह होने पर डाक्टर को दिखाएं व उसके निर्देशन पर चलें. पाखाने की जांच से ही इनका पता चल सकता है, वैसे नही. चिकित्सा का कोर्स सात से दस दिन तक का होता है—'जियार्डिया' का सात दिन का, 'अमीबा' का दस दिन का. एक कोर्स लेने के बाद दोबारा जांच कराके पता लगाना चाहिए कि ये कीड़े समाप्त हो गए हैं कि नही. अगले छह महीने के दौरान ये कभी भी दोबारा हो सकते हैं. पर उबला पानी पिलाते रहें और सब्जियां आदि 'पोटाशियम परमैगनेट' के पानी से धोकर प्रयोग में लाएं तो रोग दोबारा होने का खतरा नही रहेगा.

'हुक वर्म्स' या चिमटी की तरह पकड़ लेनेवाले कीड़े

इनका पहले पता ही नही चलता. जब बच्चे में खून की कमी हो जाती है और उससे सम्बन्धित हानियां सामने आने लगती हैं तभी रोग की पहचान हो पाती है, वह भी पाखाने की जांच से. यह कीड़ा खून चूसता है, अतः बच्चे में खून की ज्यादा कमी हो जाने पर अतिरिक्त खून देने की जरूरत भी पड़ सकती है. सतोष की बात यही है कि यह बीमारी अधिक संख्या मे नही है. जाच से पता चलने पर इलाज कठिन नही. केवल एक ही खुराक लेनी होती है, फिर सात दिन बाद दवा की दूसरी खुराक और दो खुराकों से ही कीड़े समाप्त हो जाते हैं. इनमें अधिक हानि 'एनीमिया' व अपोषण से ही होने की संभावना रहती है. इसलिए संदेह होने पर शीघ्र जांच व इलाज कराएं ताकि बच्चे में खून की कमी न होने पाए. ●



हुक वर्म

* बच्चे को बहुत चुस्त व साफ जांघिया पहना कर रखें, ताकि वह खुजली न करने पाए.
* स्नान कराते समय मलाशय के मुंह को साफ करने की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए.
* बच्चे को हर बार भोजन करने से पहले उंगलियों के नाखूनों को ब्रुश और साबुन से अच्छी तरह साफ करने की आदत डालें.
* कच्चे फल या सब्जी अच्छी तरह साफ करके धोकर प्रयोग में लाएं. दूध और पानी भी उबाल कर ही पीने को दें.
* बच्चे को नगे पैर न घूमने दें, मिट्टी मे न खेलने दें.



30

श्वास रोग

[कलावती सरन अस्पताल की प्रोफेसर व वरिष्ठ बाल रोग विशेषज्ञ डा. विमला गुजराल से भेंटवार्ता पर आधारित]

"आम भाषा में बच्चों के श्वास सम्बन्धी सभी रोगों के लिए प्रायः सरदी लगना कह दिया जाता है. इसमें कुछ तथ्य भी है क्योंकि कमजोर बच्चों को जब खांसी-जुकाम की शिकायत बार-बार होने लगती है तो प्रायः यही रोग बिगड़ कर अन्य जटिलताएं पैदा करता है और निमोनिया, ब्रोंकाइटिस, दमा जैसी स्थितियां पैदा करता है. वैसे यह जरूरी नहीं कि सामान्य जुकाम-खांसी ही बिगड़ कर इन रोगों में परिवर्तित हो, इनका आक्रमण सीधा भी हो सकता है. ये रोग यद्यपि विषाणु (वायरस) या जीवाणु (बैक्टीरिया) द्वारा या किसी 'एलर्जी' के कारण ही होते हैं, पर अपरिपक्व शिशुओं, अपोषित बच्चों को या बीमारी आदि अन्य कारण से कमजोर बच्चों को ही अधिक होते हैं, क्योंकि उनके भीतर रोगाणुओं से लड़ने की निरोधक क्षमता कम होती है.

"इसीलिए ये रोग छोटे बच्चों को अधिक होते हैं और बच्चा जितना छोटा या कमजोर हो, इन रोगों से बचाने की उसे उतनी ही अधिक जरूरत होती है. क्योंकि कमजोर शारीरिक स्थिति में इनके गंभीर व जटिल हो जाने का खतरा रहता है. इस दृष्टि से साधारण जुकाम-खांसी होने पर भी छोटे बच्चों पर अधिक ध्यान देने की जरूरत है. बीमारी समझकर इनकी उपेक्षा ठीक नहीं."—इन शब्दों के साथ सुप्रसिद्ध बाल रोग विशेषज्ञ डा. विमला गुजराल माताओं की जानकारी के लिए बच्चों के श्वास-रोगों पर प्रकाश डालते हुए पहले जुकाम-खांसी के बारे में ही बताती हैं.

सामान्य जुकाम-खांसी

इस आम रोग में नाक से पानी बहता है, छींकें आती हैं, या नाक बन्द हो जाती है और मुंह से सांस लेने के कारण शिशु को दूध पीने में कठिनाई होती है. वह चिड़चिड़ा हो जाता है और रोता रहता है. आंखों से पानी आना, सिर दर्द, बदन-दर्द और मामूली बुखार भी हो सकता है. कुछ दिनों बाद नाक से पानी की जगह गाढ़ा बलगम भी निकल सकता है. जीवाणु-संक्रमण (बैक्टीरिया इंफेक्शन) से नाक से आने वाला यह गाढ़ा मवाद काफी दिनों तक भी चल सकता है. कमजोर बच्चों को लगने वाला जुकाम ठीक होकर बार-बार भी लग सकता है. जुकाम के साथ गले में खराश या खांसी की शिकायत भी आम है. पर बदलते मौसम और सर्दियों में इसका प्रकोप ज्यादा होता है और कम रोग-निरोधक क्षमता रखने वाले अपरिपक्व या अपोषित बच्चों



श्वास के रोगी बच्चे की परीक्षा

को इससे ज्यादा खतरा रहता है धूल-कणों से या छींक-सास द्वारा फैलने वाला यह रोग प्राय: बड़ों से ही बच्चों को लगता है, इसलिए बहुत छोटे व कमजोर बच्चों को बड़ी उमर के इन जीर्ण रोगियों से (जुकाम-खांसी के हर रोगी से भी) व भीड़भाड़ वाली जगहों से बचाना चाहिए. साथ ही नवजात शिशुओं को जन्मोपरांत लगने वाले सभी रोग-प्रतिरक्षक टीके समय पर अवश्य लगवा लेने चाहिए.

उपाय : इन बचावी-उपायों के अलावा, छोटे बच्चों को सफाई के समय धूल-मिट्टी से बचाने का भी प्रयत्न करें. उन्हें मौसम अनुसार जरूरी कपड़े अवश्य पहनाएं, पर सरदी से बचाव के नाम पर अत्यधिक कपड़ों से लादकर न रखें. इस तरह अधिक कपड़ों की आदत लग जाने पर उसका शरीर जरा-सी सरदी सहन नहीं करेगा और नहाते, कपड़े बदलते समय हवा लग जाने पर बच्चा बीमार पड़ जाएगा. एकदम बंद कमरे में रखने, तंग कपड़े पहनाने, अधिक गरम कपड़ों में सिर से पैर तक लपेट कर रखने; विशेष रूप से मुंह, नाक तक लपेट देने से बच्चे को अधिक हानि हो सकती है. ताजी हवा या आक्सीजन के अभाव मे उसे घुटन होगी, सांस लेने में कठिनाई होगी. वह श्वास संबंधी बीमारियों का अधिक शिकार होगा. अत: माताओं को निम्न बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए :

—नाक बंद होने से बच्चा मुंह खोलकर सांस लेगा, जिससे रोग के कीटाणु आसानी से उस पर हमला कर सकेंगे व इस तरह वह ठीक से दूध भी नहीं पी पाएगा. तकलीफ बढ़ने पर वह दूध पीना छोड़ देगा तो कमजोरी बढ़ने पर उसकी रोग से लड़ने की क्षमता और भी कम हो जाएगी. इसलिए उसकी नाक अच्छी तरह साफ करके दिन में दो-तीन बार बूंदों वाली दवा (नोजल ड्राप्स) नाक में डालें. दूध पिलाने से 15-20 मिनट पहले इस तरह नाक खोलने से वह ठीक से दूध पी सकेगा. पर कभी भी नाक मे तेल या कोई तैलीय दवा नहीं डालनी चाहिए, क्योंकि यदि वह सांस की नली से अंदर चली जाए तो निमोनिया होने का डर रहता है.

—बच्चे को रोगों से लड़ने की शक्ति बनाए रखने के लिए कारबोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन 'ए', 'डी' व 'सी' युक्त अच्छी पौष्टिक खुराक दें. उसे मौसम अनुसार उबाल कर ठंडा किया हुआ या गुनगुना पानी खूब पिलाएं. गुनगुने पानी मे शहद डाल कर देने से गले की खराश में काफी लाभ होगा. गरम दूध दें. नरम व गरम खाना खिलाएं. थोड़ी चाय भी देने में हर्ज नहीं. पर छोटे बच्चों को ब्रांडी नहीं देनी चाहिए. बच्चे को सरदी लगी है इसलिए उसे संतरे का रस, केला या दही नहीं देना है, इस तरह के वहम को मन से निकाल दें. यह ध्यान रखें कि संतरे का रस या दिया जाने वाला कोई भी रस ज्यादा ठंडा और खट्टा न हो. वह कुनकुना और मीठा होना चाहिए. दही खट्टा न हो और केला अच्छा पका हो, पर गला हुआ न हो.

दूध, दलिया, दूधसूजी, खीर, खिचड़ी, नरम व गरम रोटी, सब्जी, दाल आदि सभी चीजें बच्चे की आयु अनुसार व भूख अनुसार दी जा सकती हैं. प्रोटीन के लिए अंडा या दाल और विटामिन के लिए पकाई हुई हरी सब्जी जरूर देनी चाहिए. बच्चा पसंद करे तो मीट-सूप या हरी सब्जियों का सूप भी जो अधिक टमाटर डाल कर खट्टा न बनाया गया हो, देना चाहिए, पर पूरक रूप में ही दें, खुराक के बदले नहीं. बच्चा खुराक पूरी न ले रहा हो तो डाक्टर से पूछ कर उसे दवा के रूप मे भी टॉनिक दिया जा सकता है. गरज यह कि बच्चा भूखा न रहे, अन्यथा वह अधिक कमजोर हो जाएगा, जिससे रोग के बढ़ जाने का खतरा रहता है.

—बच्चे को सांस लेने मे कठिनाई हो तो नाक साफ करने व बूंदों वाली दवा डालने के अलावा गरम पानी का बर्तन सामने रख भाप देने से भी उसे लाभ होगा. साथ ही यह भी देखें कि बच्चे को घुटन न महसूस हो. कमरे में ताजी हवा आने दें, बच्चे को केवल खिड़की दरवाजे की सीधी हवा से ही बचाने की जरूरत है, हवा से नहीं. सर्दियों में धूप भी अच्छी है. सरदी से बचाने के लिए बच्चे को कभी भी नाक, मुंह पर लपेट कर न रखें. न ही अधिक कपड़ों से लादें या तंग कपड़े पहनाए. बच्चा ठीक से सास न ले पा रहा हो तब तो इन बातों का ध्यान रखना और भी जरूरी है.

—अपरिपक्व शिशुओं, बहुत छोटे शिशुओं और कमजोर बच्चों को सरदी से, ठंडी हवा से व जुकाम के रोगियों से बचाने की अधिक जरूरत है. यदि मां को या घर में किसी को खासी-जुकाम है तो बच्चे के मुंह पर न खासे, बलगम इधर-उधर न थूके या सिनके, रूमाल या कपड़े पर खांसे या छींके व उसे बच्चे के स्पर्श से बचाएं. इसलिए उन्हें जरूरत के गरम कपड़े अवश्य पहनाएं, लपेट कर न रखें, केवल यह देखें कि कमरा बिलकुल बंद न हो, बच्चा कपड़ों के भार से या तंग कपड़ो से घुटन में न रहे और उसे बंद कमरे मे नहलाया जाय.

—पर बच्चे को जुकाम है, इसलिए उसे नहलाना

नहीं है, इस बात में कोई सार नहीं. केवल पानी का तापमान मौसम अनुसार होना चाहिए और उसे खुली जगह मे नहीं नहलाना चाहिए. बच्चे की तबियत ज्यादा खराब हो तो भी स्पंज करके भीतरी कपड़े अवश्य बदले जाने चाहिए. जुकाम-खांसी के साथ बुखार ज्यादा है तो स्पंज और भी जरूरी है. तेज बुखार में भी केवल सिर पर ठंडी पट्टी रखना काफी नहीं है. नल के पानी (गरम नहीं) से सारे शरीर पर केवल छाती बचाकर स्पंज करें, इससे बुखार को नीचे लाने में सहायता मिलेगी और तेज बुखार से दिमाग पर असर होने या अन्य जटिलताओं का डर नहीं रहेगा.

इस प्रकार सरदी-जुकाम में कुछ सावधानियां बरतने और बच्चे को पूरी खुराक देने से यह बिना किसी चिकित्सा के स्वयं ही चार-पांच दिन मे ठीक हो जाएगा. पर बच्चा खाना बंद कर दे, अधिक चिड़चिड़ा हो जाए, उसे साथ में उल्टी, दस्त, बुखार की शिकायत हो, उसके गले से घर्र-घर्र की आवाज आए, मुंह से झाग आए या सांस लेने में कठिनाई लगे तो जरा भी देर किए बिना डाक्टर को दिखाएं, उसे निमोनिया हो सकता है.

निमोनिया

यह रोग किसी भी उम्र के व्यक्ति को हो सकता है, पर छोटे बच्चों को होने पर उन्हें ज्यादा कष्ट होता है. खतरा भी छोटे, कमजोर व बीमार बच्चों को ज्यादा होता है. रोग की जटिलता बढने पर दिमाग पर असर हो सकता है. बच्चे की मृत्यु भी हो सकती है. इस रोग का कारण भी विषाणुओं या जीवाणुओं का आक्रमण ही होता है. इसलिए यह जुकाम-खांसी बिगड़ने पर भी हो सकता है, सीधे आक्रमण द्वारा भी. इसके अलावा गलत ढंग से दूध पिलाए जाने पर जब दूध फेफड़ों में चला जाता है तो भी बच्चे को यह बीमारी हो सकती है. तपेदिक में भी इसका खतरा रहता है.

लक्षण : सांस का तेज चलना, बुखार व टट्टी, उल्टी होना, फिर खांसी और घर्र-घर्र की आवाज, पसलियां चलना, सांस में दिक्कत और बच्चे का खाने-पीने से इंकार आदि इसके मुख्य लक्षण हैं.

उपाय : बच्चा खाने-पीने के बाद उल्टी कर दे तो इस भय से उसका खाना बंद न करें. उल्टी होने के बाद फिर थोड़ा खाना दें व इस प्रकार थोड़ा-थोड़ा खिलाना जारी रखें पर जबरदस्ती न करें, अन्यथा खाना फेफड़ों में जाकर खराबी कर सकता है. गरम व तरल पेय अवश्य दें, नरम व गरम पतला भोजन देना चाहिए. कस्टर्ड, सूजी की खीर, दलिया, खिचड़ी आदि. दूध में थोड़ी चाय और अंडा भी दे सकते हैं. पानी उबाल कर ठंडा करके गुनगुना रहते पिलाएं और खूब पिलाएं. गरम पानी में शहद मिला कर पिलाने से भी लाभ होगा. छोटे शिशु को बीमारी में मां अपना ही दूध पिलाए तो अच्छा होगा. कमरा बंद करके गरम पानी से स्पंज करें. भाप देना भी ठीक रहेगा. बच्चा बीमारी के कारण ही ठीक से सांस नहीं ले रहा, उस पर उसे तंग कपड़े पहनाना, कमरे में घुटन रखना या उसका नाक, मुंह, लपेट कर उसकी सांस में बाधा डालना घातक होगा. बच्चे को अच्छी तरह गरम कपड़े से लपेट कर डाक्टर के पास या अस्पताल ले जाए, पर ले जाते समय न तो उसका नाक, मुंह कपड़े में लिपटा हो, न कोई बड़ा व्यक्ति उसके ऊपर खांसे. ऐसी गंभीर स्थिति में बच्चे को जितनी जल्दी डाक्टरी चिकित्सा दिला सकें, उतना अच्छा होगा.

ब्रोंकाइटिस

वायरस या विषाणुजन्य संक्रमण से अथवा एलर्जी से होने वाले इस रोग में सांस का कष्ट बढ़ता है. बच्चा हांफता है और उसे सांस लेने में कठिनाई होती है. कभी खांसी, कभी बुखार और बच्चा बीमार दिखता है. कमजोर बच्चों को बार-बार इसका आक्रमण होने पर आगे चलकर वीजिंग या आवाज के साथ हंफनी बढ़ती है और बच्चा दमे का शिकार हो सकता है.

उपाय : ऐसे बच्चे को सरदी और संक्रमण से बचाना चाहिए और उसे अच्छी खुराक देकर उसकी रोग-निरोधक क्षमता बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए. सांस की तकलीफ में भाप देने से लाभ होगा. उसी तरह गरम पानी में शहद पिलाने व गरम-गरम खाना देने से भी. इसका आक्रमण अचानक होता है और प्राय: पांच-छ: दिन में ठीक हो जाता है. पर सांस का कष्ट हो या बार-बार आक्रमण हो तो डाक्टरी सहायता अवश्य लेनी चाहिए. सांस की तकलीफ अचानक हो जाए तो यह भी हो सकता है कि बच्चे ने मुंह में या नाक में कुछ डाल लिया हो और वह सांस की नली में फंस गया हो, ऐसी स्थिति में भी तुरत डाक्टरी मदद लेनी चाहिए.

दमा

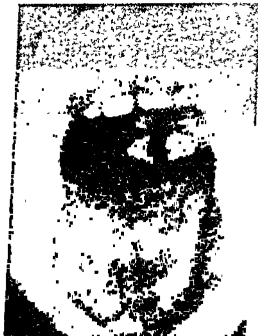
दमा फेफड़े की सांस की नलियों का रोग है और प्रायः अचानक दमे के दौरे आने लगते हैं. इसमें सांस लेने में कठिनाई हो जाती है व सांस लेने के साथ एक सीटी की सी आवाज फेफड़ों से निकलती है. इसका दौरा धीरे-धीरे व एकदम तेजी से भी पड़ सकता है. शुरूआत खांसी, जुकाम, छींकें व अन्य फेफड़े के संक्रमण (इंफेक्शन) से ही होती है. दौरा कुछ घंटों से लेकर कुछ दिनों तक रह सकता है और अक्सर रात के समय जोर पकड़ता है. यह संक्रमण व एलर्जी दोनों कारणों से होता है, पर कभी-कभी मानसिक कारण से भी.

उपाय : उपाय के रूप में बच्चे को सरदी से बचाने, एकदम तापमान परिवर्तन में विशेष ध्यान रखने, अच्छी खुराक देने के साथ उसे आराम देने व दिमागी परेशानी से बचाने का भी प्रयत्न करें. किसी चीज या गंध से बार-बार ऐसी परेशानी का सामना करना पड़े तो उस चीज से 'एलर्जी' की पहचान हो सकती है. उसे 'एलर्जी' देने वाली धूल-गर्द, पराग, खाने की विशेष चीज, सुगंध आदि से बचाना चाहिए. यदि अन्य कारण न मिले और 'एलर्जी' की पहचान न हो पाए तो 'एलर्जी टैस्ट' कराएं. बच्चा डरता-सहमता हो, तनाव-ग्रस्त हो, असुरक्षा अनुभव करता हो या उसे अतिरिक्त सुरक्षा मिलती हो. इन मनोवैज्ञानिक कारणों की पहचान, उसकी समस्या का समाधान खोज कर भी बच्चे को रोग-मुक्त किया जा सकता है. खुली हवा में सास लेने, छोड़ने से भी बच्चे को आराम मिलेगा. संक्रमण से साथ में बुखार हो. और सांस की कठिनाई ज्यादा हो तो शीघ्र डाक्टरी सहायता लेनी चाहिए और बार-बार आक्रमण होता हो तो बच्चे को निरंतर डाक्टरी निर्देशन में रख कर उसकी चिकित्सा चलानी चाहिए.

काली खांसी

नवजात शिशु को नियत समय पर टिटेनस, काली खांसी, डिप्थीरिया का सम्मिलित टीका 'ट्रिपल एंटीजन' लग जाने पर बच्चों को ये रोग होते ही नहीं हैं या कभी हो भी जाएं तो उनसे खतरा नही रहता, इसलिए काली खांसी से बचने का सर्वोत्तम उपाय यह टीका ही है. यह जन्म के बाद तीसरे, चौथे, पाचवें महीने में तीन बार के एक कोर्स के रूप में लगता है और फिर डेढ़-दो वर्ष मे तथा पाचवें वर्ष में इसकी एक 'बूस्टर' खुराक लेनी पड़ती है. इस मामले में लापरवाही न कर बच्चे को यह टीका अवश्य दिलवाना चाहिए. काली खांसी होने पर इसके लक्षण हैं : बच्चे का खांसते-खांसते बेदम हो जाना, आखें लाल हो जाना, आखें बाहर आना, खांसी में हुंफनी की आवाज होना, खांसी के साथ उल्टी हो जाना आदि. इसके जीवाणु दूसरे रोगी बच्चों की सांस से निकली हवा द्वारा या रोगी के रूमाल आदि के स्पर्श से फैलते हैं. यह छूत का रोग है और जब फैलता है तो केवल घर के ही बच्चों को नही बल्कि पड़ोस, मुहल्ले के अन्य बच्चों को भी रोगी बना देता है. पर बच्चों को टीका लगा होने से इसका खतरा नही रहता.

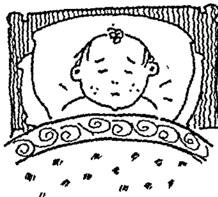
उपाय : बच्चा काली खांसी से काफी कमजोर हो जाता है, क्योंकि उल्टी हो जाने से उसका खाना-पीना बहुत कम हो जाता है. अतः ध्यान रखें, बच्चे को रोग से लड़ने के लिए पूरी खुराक मिले. उल्टी हो जाने पर खाना बंद न करें. उल्टी के थोड़ी देर बाद फिर थोड़ा खिलाएं और थोड़ी-थोड़ी देर बाद थोड़ा-थोड़ा भोजन देती रहें ताकि बच्चे को कमजोरी न आए और खांसी के अगले दौरे तक वह फिर ताकत जुटा सके. कमजोरी बढ़ने पर खासी भी लंबी चलेगी और रोग बढ़ सकता है : तपेदिक भी हो सकता है. बच्चे के दिमाग पर भी असर हो सकता है. इसलिए एक ओर बच्चे को ठीक खुराक देने की व दूसरी ओर उसे डाक्टरी निर्देशन मे रख कर चिकित्सा देने की सावधानी जरूरी है. खुराक मे वे सारी चीजें दी जा सकती हैं जो जुकाम-खासी में बताई गई हैं.

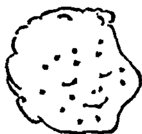


डिप्थीरिया आक्रमण के चौथे दिन

डिप्थीरिया

जैसा कि पहले काली खांसी प्रकरण में बताया गया है, इससे बचाव का भी मात्र वही उपाय है, 'ट्रिपल एंटीजन का नियत समय पर टीका, जो अवश्य लगवाया जाना चाहिए, अन्यथा यह भयानक रोग जानलेवा भी सिद्ध हो सकता है. इसके लक्षण हैं: गले मे दर्द, निगलने में कठिनाई और बुखार, गला पक जाने और गल-ग्रंथियां बढ़ जाने से इसमें गले की तकलीफ इतनी होती है कि इसे गलघोंटू रोग या कंठमाला का रोग कहते हैं. गले की तकलीफ बढ़ने से बच्चा बोल नहीं पाता या बहुत कम बोलता है. निगलने में दिक्कत से खाना नाक से निकल सकता है. सांस में घुटन बढ़ती है और फिर सांस नली पर झिल्ली आ जाने से मृत्यु तक संभव है, इस हालत में उसे बचाने के लिए गले में छेद करना पड़ता है. इस लिए बच्चे को बुखार कम है या तेज, इसकी परवाह न कर उसे तुरंत अस्पताल पहुंचाना चाहिए ताकि रोग के दुष्प्रभाव से बचाव हो सके, अन्यथा मृत्यु से बच जाने पर भी रोग के तीव्र आक्रमण के बाद बचे शेष प्रभाव में बच्चे को सांस के कष्ट, हृदय-रोग या लकवे आदि के दुष्परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं. गले में नुक्स रह जाने से उसका खाना-पीना नाक से निकल सकता है या आवाज में फर्क आ सकता है. इसलिए इस रोग की शुरूआत में ही डाक्टर से सलाह लें व पहचान होने पर फिर बच्चे को शीघ्र अस्पताल में भरती करा दें. सबसे अच्छा तो यही है कि इसके बचाव का टीका वक्त पर लगवाएं व रोग होने ही न दें.





31
चेचक, खसरा, छोटी माता व गलसुए

[विलिगडन (राम मनोहर लोहिया) अस्पताल के बाल-रोग विभाग के प्रध्यक्ष डा० ज्ञान प्रकाश वर्मा से भेंट पर आधारित]

हजारों वर्षों से मानव जाति के लिए अभिशाप रहने वाली चेचक की बीमारी पर तो अब लगभग विजय प्राप्त कर ली गई है, पर इससे मिलती-जुलती कुछ अन्य हल्की बीमारियां अभी भी हमारे यहा बहुतायत से हैं, जो वैसे तो बहुत हानिकर नहीं, पर समय पर सावधानी न बरती जाए तो उनसे अन्य अनेक रोगों व शारीरिक-मानसिक हानियों का भय रहता है. इसलिए राजधानी के विलिगडन (राम मनोहर लोहिया) अस्पताल के बाल-रोग विभाग के अध्यक्ष व वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ डा० ज्ञान प्रकाश वर्मा के सहयोग से यहां माताओं को इनसे संबधित मुख्य जानकारी दी जा रही है :



डा० ज्ञान प्रकाश वर्मा से भेंट करते हुए लेखिका

चेचक (स्माल पाक्स)

बचावी-टीके वाले अध्याय में चेचक के टीके के बारे मे भी बताया जा चुका है कि यह जन्म के शीघ्र बाद और फिर हर तीन साल बाद लगना चाहिए. प्रश्न उठ सकता है कि जब हमारे देश में भी अब चेचक पर विजय पा ली गई है तो फिर बचावी-टीका क्यों ? इस संबंध में डा. वर्मा का कहना है कि कई बार कुछ रोग समाप्त होकर भी कुछ अवधि बाद फिर लौट आते हैं;. विशेष रूप से जब तक सारे विश्व से रोग को समाप्त नहीं किया जाता, रोग के रोगाणु कहीं से भी संक्रमित होकर आ सकते हैं. इसलिए अभी कुछ सालों तक, जब तक कि सरकार द्वारा यह घोषणा न कर दी जाए कि अब चेचक का टीका लगवाने की कोई आवश्यकता नही रही, सावधानी के तौर पर टीका लगवा लिया जाना चाहिए. अभी तो यह कहा जा सकता है कि चेचक-उन्मूलन अभियान की सफलता चेचक-निरोधी टीके के प्रभाव की सफलता है.

कारण और लक्षण : चेचक का कारण एक 'वायरस इंफेक्शन' है और इसमें छूत, रोगी की नाक, मुंह से निकलने वाली सांस द्वारा, चेचक के सूखे छिलकों या खुरंड द्वारा और संपर्क से एक दूसरे को लगती है. छूत लगने के सामान्यतः 12 दिन बाद लक्षण प्रगट होते है—पहले तेज बुखार, ठंड या कंप, उल्टी, सिर दर्द, कमर दर्द, व अत्यधिक थकान अनुभव होती है. इसके तीन-चार दिन बाद बुखार की तीव्रता, बेचैनी व घबराहट में कमी आने लगती है और शरीर के खुले अंगों पर दाने निकल आते हैं, चेहरे, बाहों टांगों व कमर पर दाने अधिक होते है. ये दाने पहले लाल और फूले हुए होते हैं, फिर इनमें पस भर जाती है. पस भरते ही बुखार फिर तेज हो जाता है. साथ ही कुछ और जटिलताएं, भी सामने आ सकती हैं, जैसे गले की गिल्टियां सूज जाना, जोड़ों मे गिल्टिया हो जाना, फेफड़ों में न्यूमोनिया हो जाना, पहले से तपेदिक रोग है तो उसका उभर आना, दिमाग पर असर से शरीर का संतुलन बिगड़ना, आंखों पर कुप्रभाव से दृष्टिहीनता तक घातक स्थितियों का सामना भी करना पड़ सकता है. इसलिए रोग के आरंभ से ही रोगी को डाक्टर के निर्देशन में रखा जाना चाहिए ताकि रोगी को अधिक हानि से बचाया जा सके.

बचावी उपाय : चेचक छूत का एक बहुत ही भयानक रोग है जिससे दूसरे लोगों को छूत लगने से बचाया जाना

चाहिए. विशेष रूप से छिलके छूत फैलाने में बहुत सहायक होते हैं. दाने 20-21 दिन बाद सूखते हैं और चार सप्ताह बाद पूरी तरह साफ होते हैं. तब तक दूसरे लोगों को संपर्क से बचा कर रखना चाहिए. रोगी की सेवा करने वाली स्त्री भी रोग फैलाती है,अतः उसे अपने हाथ व वस्त्र कीटाणुनाशक दवा से साफ करने चाहिए. रोगी का मल-मूत्र व छिलके मिट्टी में गहरे दबा देने चाहिए या जला देने चाहिए रोगी के कपड़े भी कीटाणुनाशक दवा मिले पानी से उबाल कर धोने चाहिए व उसके बर्तन, प्रयोग की सभी चीजें अलग रखी जानी चाहिए. यदि घर के आसपास चेचक



स्माल पाक्स



चिकन पाक्स

की बीमारी आई हो तो सभी लोगों को बचावी-टीका लगाया जाना चाहिए. (घर में बीमारी होने पर रोगी के संपर्क में आने वाले सभी लोगों को टीका लगवा लेना चाहिए, रोगी को नहीं) बाद में रोगी के कमरे को भी विसंक्रमित किया जाना चाहिए.

पर पहला और प्रभावकारी उपाय तो शैशव में बचावी टीका लगवाना ही है. यह टीका जन्म के तीस दिन के भीतर व फिर हर तीसरे वर्ष लगना चाहिए. किसी कारण न लगवा सकें तो दो महीने के भीतर जरूर लगवा लें. यदि बच्चा कम दिनों का है या बीमार अथवा बहुत कमजोर है तो कुछ दिन तक प्रतीक्षा की जा सकती है, पर इस दौरान बच्चे को बाहरी संपर्क से बचाना चाहिए. यदि मां बच्चे को टीका लगवाए बिना दूसरे गांव ले जाए तो उसे निर्देश दें, कि बच्चे को संपर्क से बचाए और वहां के डाक्टर को स्थिति बता दे.

टीका लगने पर फूलना भी चाहिए. यदि 7-10 दिन में नहीं फूलता है तो वह सफल टीकाकरण नहीं माना जाता. ऐसी स्थिति में डाक्टर को बताएं. वह दूसरे बच्चों पर जांच से देख सकेगा कि कहीं दवा में कमी तो नहीं ? और तब दूसरा टीका लगा देगा. यदि दुबारा भी टीका न फूले तो फिर डाक्टर को बताएं, शायद उस बच्चे को और टीका देने की जरूरत नहीं होगी. पर इस बारे में अपने आप निर्णय न लें, डाक्टर पर ही छोड़ें. रोग की तीव्रता में रोगी को कई तरह की हानियां हो सकती हैं, जिनमें आंखों की हानि भी शामिल है. रोग के साथ कई जटिलताएं भी पैदा हो सकती हैं इसलिए आवश्यक है कि केवल पूजा-पाठ व झाड़-फूंक पर ही निर्भर न रह डाक्टर को दिखाते रहें व उसकी राय से ही चलें.

छोटी माता (चिकन पाक्स)

इसका कारण भी 'वायरस इंफेक्शन' ही है. छूत लगने के दो-तीन सप्ताह बाद रोग प्रगट होता है.

लक्षण : डा. वर्मा के अनुसार 'स्माल पाक्स' और 'चिकन पाक्स' के बीच पहचान करने के लिए इन बातों पर ध्यान दें.

—'स्माल पाक्स' या चेचक के दाने निकलने से पहले तेज बुखार व बेचैनी होती है, 'चिकन पाक्स' में हलका बुखार भी आवश्यक नहीं. प्रायः हंसते-खेलते भी छोटी माता निकल आती है.

—चेचक के दाने एक समय में एक प्रकार के ही कुछ दिनों में भर कर निकल आते हैं फिर अपना आकार बदल देते हैं. छोटी माता के दाने पूरे शरीर पर एक जैसे एक साथ नही निकलते, पहले पीठ और छाती पर कुछ दाने दिखाई देते हैं, फिर ये दाने ऊपर से नीचे की ओर चलते हुए निकलते हैं. दानों का स्वरूप भी तीन स्तरों पर भिन्न होता है—पहले लाल चकत्ते मे निकलते हैं, कुछ ही घंटों में ये बड़े हो जाते हैं, इसके बाद इन पर छाला-सा बनेगा और फिर उनका रूप मसली हुई फुंसी जैसा होगा. ये तीनों स्थितियां तीन स्तरो पर अलग-अलग दिखाई देंगी.

छोटी माता के अन्य लक्षण हैं: पहले एक-दो दिन कुछ अधिक या हलका बुखार, सिर दर्द, कमर दर्द, भूख की कमी, इसके साथ ही दानों का प्रगट होना. दाने बिना बुखार भी निकल सकते है और बाद में हलका बुखार हो सकता है. दो दिन बाद लाल दाने पीले पड जाते हैं, कई पीले पड़े दाने साथ-साथ खत्म होते जाते हैं. और पांच से पन्द्रह दिन तक खुरंड साफ हो जाते हैं. दानों की संख्या बीमारी के हलके या तीव्र आक्रमण पर निर्भर करती है. पर तीव्र आक्रमण या अधिक खतरा विरले मामलों में ही होता है. यदि छीलें नही तो दानों का शरीर पर दाग नहीं छूटता. पर बच्चों के साथ छीलने की समस्या आड़े आती है क्योंकि इसमें खुजली बहुत होती है. छोटी माता में भी कई बार दिमाग पर असर होने का डर रहता है जो तीन-पांच सप्ताह बाद भी प्रगट हो सकता है. यह भी जरूरी नहीं कि उस रोगी बच्चे पर ही यह असर हो, संपर्क से अन्य बच्चे पर भी हो सकता है. बच्चा चलने, हाथ से कुछ पकड़ने मे लड़खड़ा सकता है पर यह असर स्थायी नही, अस्थायी होता है और सामान्यत: बच्चा 1-3 सप्ताह में नार्मल हो जाता है. अतः इस स्थिति में घबराएं नही, डाक्टर से सलाह लें.

बचावी उपाय : रोग की स्थिति मे बच्चे को पूरे आराम से व अलग रखें. वह खुजाए नही, इसके लिए उसके नाखून काट दें और हाथ 'पोटाशियम परमैंगनेट' मिले पानी से साफ कराते रहे. फिर भी ध्यान रखना होगा कि बच्चा दानो को छीलें नहीं. उसे भोजन में नमक कम दें. मुंह मे छाले हों तो गरारे करवाएं व नरम, तरल भोजन दें. खुजली की समस्या से निबटने के लिए दानों पर नीम की पत्तियों से बुहारें. अधिकतर छोटी माता आक्रमण के बाद शरीर पर कोई हानिकारक प्रभाव नही छोड़ती. पर रोग की तीव्रता और बुखार के साथ कुछ अन्य विकार भी पैदा हो सकते हैं. इसलिए बच्चे को डाक्टरी निर्देशन में रखना ही ठीक होगा.

इस बीमारी में छूत का डर पहले ही होता है, छिलके छूत नही फैलाते.

खसरा (मीजल्स)

'वायरस इंफेक्शन' के एक-दो सप्ताह बाद यह रोग प्रगट होता है. डा. वर्मा के अनुसार, गरीबी, नासमझी के कारण अपोषित व कुपोषित बच्चों को खसरा निकलने पर जटिलताओं का ज्यादा खतरा रहता है, अन्यथा कोई जटिलताएं न पैदा हों तो इससे बच्चे के स्वास्थ्य को विशेष हानि नही होती.

लक्षण : तीन दिन तेज बुखार, नजला, गले की खराबी, आंखों में लाली या आंखों से पानी बहने की शिकायत के बाद शरीर पर मच्छर काटने जैसे लाल-लाल दाने निकलते हैं, पर इनमें पानी नही भरता. दाने निकलने के एक-दो दिन बाद बुखार कम हो जाता है. पर इस दौरान गले, कान मे सक्रमण (इंफेक्शन) 'ब्रोंको-निमोनियो,' 'डायरिया' आदि के लक्षण उभरने से जटिलताएं पैदा हो सकती है. दिमाग पर असर, तपेदिक जैसी भारी हानियां भी होने का डर रहता है. इसलिए बच्चे को डाक्टरी निर्देशन में ही रखना चाहिए, भले ही सामान्य स्थिति रहने पर चिकित्सा की जरूरत न पड़े. दाने पहले गर्दन के पीछे निकलते हैं. फिर मुंह, बांहों, पेट पर. दानों की स्थिति इसमे भी ऊपर से नीचे की ओर रहेगी, यानी पहले चेहरे, बांहों, पेट के बाद निचले हिस्सों पर दाने निकलेंगे. दाने निकल आने के एक-दो दिन बाद बुखार कम हो जाता है. न हो तो डाक्टर को बताना चाहिए. बच्चा बहकी-बहकी बातें करे, उसे बेहोशी हो, दौरा पड़े, तेज बुखार हो, इन सभी स्थितियों में तुरत डाक्टरी सहायता आवश्यक है. पर बच्चे को इस हालत में खुले रूप मे बाहर ले जाना ठीक नही होगा. घर पर योग्य डाक्टर बुला सकें तो ठीक है, अन्यथा, बच्चे को अच्छी तरह लपेट कर तुरन्त अस्पताल ले जाएं.

बचावी उपाय : खसरे का बचावी-टीका अभी हमारे देश मे उपलब्ध नही है, विदेश से मंगाकर लगवाने की सामर्थ्य होने पर कुछ लोग लगवा लेते हैं. ऐसा संभव होने पर इसे नौ से बारह महीने की आयु में लगवा लेना चाहिए. इसके अभाव मे खसरा फैला हो, उन दिनो बच्चों को 'पोजेटिव इम्यूनाइजेशन' के लिए 'गामा ग्लोबूलिन' का टीका लगवा देने से सक्रमण से बचाव हो सकता है. खसरे के रोगी को दूसरे बच्चों से अलग रखें व पूरा आराम

दें. खसरे का रोगी बच्चा तेज रोशनी में ठीक से नहीं देख सकता. उसे इस कष्ट से बचाने के लिए उसके कमरे में थोड़ा अंधेरा ही रखना ठीक होगा. पर कमरे में ताजी हवा आने के मार्ग में बाधा नहीं डालनी चाहिए. उसे सीधी तेज हवा से बचाएं, ताजी हवा से नहीं.

यदि बच्चे को तेज बुखार है तो उसके ऊपर कंबल ओढ़ा कर उसे और गरमी न पहुचाएं. बुखार कम करने के लिए सिर पर गीली पट्टी देना भी काफी नहीं है. बच्चे को स्पंज भी करें. बुखार में स्पंज करने से उसे 'न्यूमोनिया' हो सकता है, यह वहम गलत है. सिर पर गीली पट्टी दे कर, शरीर पर स्पंज करके पहले तेज बुखार को कम करना जरूरी है ताकि उसके दिमाग पर असर न हो. बुखार कम हो जाने के बाद बच्चे को चादर के साथ हलका गरम कंबल भी दिया जा सकता है. अक्सर यह बीमारी गरमी के दिनों में ही होती है इसलिए इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए.

छोटा खसरा (जर्मन मीजल्स)

इसमें विशेष खतरा यह है कि यदि गर्भवती मा को प्रथम तीन महीनों में निकल आए तो गर्भस्थ शिशु के विकृत हो जाने का भय रहता है. इसलिए जहा आसपास यह बीमारी आई हो वहां गर्भवती मा को नहीं जाना चाहिए और उसे रोगी के संपर्क से हर तरह बचना चाहिए. इस दृष्टि से इसकी पहचान कर लेना अच्छा है और लड़की के भावी जीवन की सुरक्षा के लिए उसे छोटी उमर में इसका हलका आक्रमण हो जाना भी अच्छा समझा जाता है.

जर्मन मीजल्स के लक्षण : गले में, कान के पीछे गिल्टियां व सूजन, हलका जुकाम आंखों में लाली, साथ ही हलके दाने निकलना. पहले चेहरे पर, सिर पर, फिर छाती, बाहों व निचले शरीर पर. दानों का स्वरूप खसरे की तरह ही होता है पर ये दाने खसरे के दानों से हलके होते हैं और दूर-दूर निकलते हैं. दानों के साथ बुखार होना इसमें जरूरी नहीं.

उपाय : सर्वप्रथम तो दानों की पहचान करना जरूरी है. स्वयं पहचान न कर पाएं तो डाक्टर को दिखा कर परामर्श कर लें. वैसे गर्भवती मां को ही इससे खतरा है, बच्चों को निकलने पर न तो उन्हें अधिक तकलीफ होती है, न विशेष हानि. खसरे के रोगी की तरह इसमें बच्चे को अंधेरे कमरे में रखना भी जरूरी नहीं. पर उसे आराम देना चाहिए. अन्य बच्चों से अलग भी रखें. यों छूत संपर्क से नहीं लगती, पर नाक से, छींक से लग सकती है. दाने दो-तीन दिन बाद ही सूख जाते हैं व जल्दी ठीक हो जाते हैं. कोई जटिलता न पैदा हो तो किसी विशेष चिकित्सा की भी जरूरत नहीं पड़ती. पर पहचान व सावधानी के लिए डाक्टरी निर्देशन में ही चलना ठीक होगा.

नोट — डॉ० वर्मा की राय में, चेचक जीवन में एक ही बार निकलती है. छोटी माता (चिकन पाक्स) दूसरी-तीसरी बार भी निकल सकती है. पर चेचक का टीका समय-समय पर लगता रहे तो यह भी दूसरी-तीसरी बार नहीं निकलती. 'जर्मन मीजल्स' या छोटा खसरा भी जिंदगी में एक ही बार निकलता है. 'मीजल्स' या खसरा भी हर साल नहीं निकलता. अधिक से अधिक दो-तीन बार ही निकल सकता है यदि किन्हीं बच्चों को बार-बार खसरा निकलता है तो संभव है, ठीक पहचान न हो पाई हो क्योंकि 'मीजल्स' व 'जर्मन मीजल्स' के अलावा भी इसकी दो-तीन हल्की किस्में और हैं. जैसे :

एग्जेन्थीमा स्वीटम : इसमें तीन दिन बुखार होता है. फिर बुखार एकदम उतरता है और शरीर पर खसरे जैसे कुछ दाने निकल आते हैं. इस बीमारी में बच्चा एकदम चिड़चिड़ा हो जाता है.

एडीनो वायरस तथा काक्सेको वायरस के प्रभाव से भी जुकाम, खांसी के साथ शरीर पर दाने निकल आते हैं जो खसरे जैसा भ्रम देते हैं.

किसी औषधि की 'एलर्जी' या प्रतिक्रिया से भी कई बार शरीर पर दाने निकल आते हैं, जिससे खसरे का भ्रम हो जाता है. अत: ऐसी किसी भी स्थिति में डाक्टर से पहचान करा लेनी चाहिए.

गलसुए (मम्पस)

यह भी वायरसजन्य संक्रमण से होने वाला लार की ग्रन्थियों का एक रोग है जो खसरे, छोटी माता से भिन्न है, पर अपने मिलते-जुलते लक्षणों द्वारा बच्चों की एक भयानक बीमारी 'डिप्थीरिया' का भ्रम दे सकता है. छूत लगने के दो सप्ताह बाद इस रोग के लक्षण प्रगट होते हैं—तेज बुखार, कान में दर्द, कान के पीछे व नीचे (एक तरफ या दोनों तरफ) सूजन या गिल्टी, कोई भी चीज खाने में तकलीफ, लड़कियों के पेड़ू में दर्द, लड़कों के अंडकोष में दर्द आदि. यह भी हो सकता है कि तकलीफ पहले एक ही तरफ हो व फिर आठ-दस दिन बाद दूसरी तरफ हो जाए. पेड़ू का दर्द या 'पैंक्रिया' पर असर भी अक्सर पांच-सात

दिन बाद होता है. ऐसी स्थिति में दर्द ज्यादा हो या अन्य कोई जटिलता सामने आए तो डाक्टर को अवश्य दिखाए. बच्चे के स्नायुमंडल पर असर होने पर तो तुरंत ही डाक्टरी सहायता लेनी चाहिए.

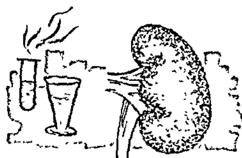
उपाय : उपरोक्त सावधानियों के अलावा, तकलीफ वाली जगह पर पट्टी या मफलर लपेट कर रखें और गरम सेंक दें. 'बैलोडोना प्लास्टर' भी लगा सकते है. इस रोग मे लार अधिक बनती है अत. तेज मिर्च-मसाले वाला भोजन नही देना चाहिए, न ही एसिडयुक्त संतरे का रस ही. खाने मे नरम पदार्थ दें व तरल पेय. दिन में कई बार कीटाणु-नाशक दवा मिले पानी से मुंह की सफाई करवाए. यह भी छूत का रोग है, जो 5 से 15 साल के बीच ही प्राय: होता है और अधिकतर छींक, नजले से ही फैलता है. यदि बुखार न हो तो बच्चे प्राय: आराम नहीं कर पाते. यह रोग सपर्क से नही फैलता, इसलिए घर में बच्चे को एकदम अलग रखना जरूरी नही. पर जब तक सूजन व दर्द ठीक न हो जाए, बच्चे को स्कूल नही भेजना चाहिए. बीमारी की तीव्रता मे दूसरे बच्चो, विशेषतया किशोरो को रोगी बच्चे से अलग रखना ही ठीक होगा. हलका आक्रमण सामान्यतया आठ-दस दिन में ठीक हो जाता है और किसी विशेष चिकित्सा की आवश्यकता नही पड़ती. पर बच्चे को आरभ में ही डाक्टर को दिखाकर डाक्टरी निर्देशन में चलें तो अच्छा रहेगा.



गलसुए से पीड़ित बच्चा

उल्टी, सिरदर्द, बुखार, चक्कर आदि लक्षण हों तो डाक्टरी सहायता अवश्य लेनी चाहिए. दिमाग पर असर की स्थिति में तो तुरत ही. वैसे एक आक्रमण के बाद इससे भी जीवन भर बचाव रहता है. ●





32
गुरदे की बीमारियां

[सफदरजंग अस्पताल की संबंधित विषय की वरिष्ठ बाल-रोग विशेषज्ञ डा० वैष्णव से साक्षात्कार पर आधारित]

बच्चों में गुरदे की बीमारियों का प्रतिशत अधिक नहीं है. अत: इस विषय को लेकर माताओं को डरने की आवश्यकता नहीं. लेकिन बड़ी उमर में गुरदे के रोगों की रोकथाम के लिए यह जानकारी बहुत सहायक सिद्ध होगी. कारण, इन रोगों की जड़ें शैशव में भी हो सकती हैं. यदि समय पर बीमारी की पहचान, कर ली जाए और अपेक्षित सावधानी बरती जाए तो बहुत-सी तकलीफों व परेशानियों से बचाव हो सकता है.

"दुर्भाग्य से हमारे देश में माता-पिता तो इस ओर से अनभिज्ञ हैं ही, अधिकांश डाक्टर भी इस विषय में लापरवाही दिखाते हैं और नतीजा होता है समय पर बीमारी को न पहचान उसे बढ़ने देना तथा फिर गुरदे खराब हो जाने पर उसे ला-इलाज घोषित कर देना. कोई एक गुरदा खराब हो जाने पर उसे आपरेशन द्वारा निकाल देने के बाद बचे एक गुरदे से बाखूबी जीवन जी सकते है. पर दोनों गुरदे खराब हो जाने पर किसी दूसरे व्यक्ति का दान किया हुआ गुरदा लगा कर ही रोगी का जीवन बचाया जा सकता है.

"लेकिन प्रश्न यह है इस तरह गुरदा-प्रतिरोपण की व्यवस्था हमारे यहां कितने लोगों को सुलभ हो सकती है? प्रतिरोपण की सफलता भी शत-प्रतिशत नहीं होती, फिर इतना दुर्लभ व महंगा इलाज हर एक के वश की बात नहीं. और 'डायलीसिस' पद्धति से खून साफ करने की प्रक्रिया जारी रख कर जीवन चलाना तो बहुत ही खर्चीली व्यवस्था है, जिसे एक अति सीमित वर्ग के लिए विशेष व्यवस्था कहा जा सकता है. इसलिए भारत जैसे देश में यह और भी जरूरी है कि गुरदे की बीमारी की पहचान बचपन में ही कर, समय पर उसका इलाज किया जाए"—इन शब्दों के साथ राजधानी के सफदरजंग अस्पताल के बाल-चिकित्सा विभाग की अध्यक्ष व गुरदा रोगों में भारत की पहली बाल-विशेषज्ञ डा० सरला वैष्णव ने विषय को तकनीकी जटिलता से बचाते हुए आम माताओं के लिए जो जानकारी प्रस्तुत की है, वह सार रूप में नीचे दी जा रही है :

शैशव में पहचान

—जन्म के बाद 12-24 घंटे तक शिशु को ध्यान से देखें, यदि लड़के (शिशु) में पेशाब की धार बहुत पतली हो व उसके लिंग में कुछ असामान्यता दिखाई दे तो तुरंत डाक्टर को दिखाएं.

—लड़के-लड़की दोनों में पेशाब की मात्रा बहुत कम या सामान्य से काफी ज्यादा हो, पेशाब बूंद-बूंद कर टपके, पेशाब करते समय शिशु जलन के कारण जोर से रोए, पेशाब के साथ खून आए तो शीघ्र डाक्टर से सम्पर्क करें. इस समय बीमारी पहचान ली जाए तो गुरदे बचाए जा सकते है.

—यदि बच्चे को बार-बार उल्टी हो या बार-बार टट्टी, उल्टी लगती हों तो पेशाब-नली में, गुरदे में 'इंफेक्शन' हो सकता है. यदि पेशाब में यूरिया बढ़ जाता है तो भी गुरदे खराब होते हैं.

—उच्च रक्तचाप (हाईपरटेंशन) के कारण रक्त धमनियों के सिकुड़ने पर रक्त-प्रवाह में बाधा पड़ती है तो इस कारण से भी गुरदे खराब होते हैं. पर होता यह है कि अक्सर छोटे बच्चों में न तो पेशाब की जांच कराई जाती है, न रक्तचाप की और पेशाब में यूरिया या रक्तचाप बढ़ने की पहचान न हो पाने से गुरदे का रोग आगे बढ़ने लगता है. माताओं को चाहिए कि उपरोक्त लक्षण दिखाई दें तो बच्चे को शीघ्र अस्पताल ले जाएं. आजकल छोटे शिशु के पेशाब की जाच की तकनीक विकसित कर ली गई है.

—पेशाब जमा करने के लिए उन्हें लंगोट के रूप में एक थैली दी जाती है या सुई डाल कर पेशाब निकाल लिया जाता है. जांच होने के बाद कोई भी खराबी पाए जाने पर डाक्टरी सलाह से चलना चाहिए और जम का इलाज

करना चाहिए.

—बच्चे की बढ़त में रुकावट हो, उसका पेट बढ़ गया हो, उसके सारे शरीर पर सूजन आ गई हो, पेट प्रायः फूल जाता हो और इन सब लक्षणों के दूसरे कारण न मिलते हों तो ये लक्षण गुरदे की बीमारी के हो सकते है. इसलिए जांच जरूरी है. जब बच्चे का सामान्य विकास नहीं होगा, गुरदों में कोई रुकावट या संक्रमण होगा या गुरदों की कोई छिपी बीमारी होगी तो गुरदों का भी ठीक विकास नहीं होगा. वे छोटे रह जाएंगे और आगे चल कर रोगग्रस्त हो जाएंगे.

—गुरदे की पेशाब-नली में रुकावट होने से शिशु के पेट मे लोथड़े से दिखाई दे सकते है या पेशाब जमा होने से उसका पेट फूल सकता है तो एक आपरेशन द्वारा पेशाब की यह रुकावट दूर की जा सकती है. लेकिन अक्सर ऐसा होता है कि यह खराबी दोनों गुरदों में होती है और पेशाब बंद हो जाने की आशंका रहती है. कुछ देर पेशाब बंद रहने के बाद शरीर पर सूजन आ जाती है. ऐसी अवस्था में यदि पेशाब देर तक बंद रहे तो 'डायलिसिस' की जरूरत पड़ सकती है. इससे पहले यदि ये चिह्न पहचान लिए जाएं तो पेशाब की रुकावट का कारण आपरेशन द्वारा हटाया जा सकता है और समय पर आपरेशन से दोनों गुरदे बचाए जा सकते हैं. इसलिए यदि डाक्टर कहे तो बच्चे का जीवन बचाने के लिए ऐसे आपरेशन से हिचकिचाना नही चाहिए.

—बार-बार बुखार आने का एक कारण गुरदे भी हो सकते हैं परंतु बच्चों को बुखार आने पर अक्सर अन्य परीक्षण ही किए जाते हैं, पेशाब की जांच नहीं की जाती. अतः बार-बार बुखार होने पर अन्य कारणों की जांच करते समय शिशु का पेशाब भी देखा जाना चाहिए.

माताएं क्या करें ?

गुरदे-रोगों की इन सभी स्थितियों से बचने के लिए डा. वैष्णव की राय में माताओं को चाहिए कि वे कुछ सावधानियां बरतने के लिए निम्न बातों पर ध्यान दें :

□ बच्चे को टट्टी-उल्टी लगें तो उसमें पानी की कमी न होने दें. बच्चा पानी न ले, उल्टी कर दे तो उसे तुरंत अस्पताल ले जाए, अन्यथा पानी सूखने से गुरदे फेल हो सकते है.

□ जब भी बच्चे का पाखाना धोएं, धोने के इस तरीके पर ध्यान दें : हमेशा पहले सामने से धुला कर फिर हाथ पीछे ले जाना चाहिए, क्योंकि पहले पाखाना धोकर फिर वही हाथ सामने लाने से (जैसा कि माताएं प्रायः करती हैं) संक्रमण या 'इंफेक्शन' होने का डर रहता है.

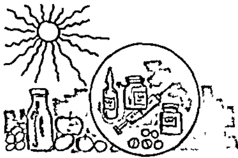
□ टट्टी-पेशाब वाला गीला लंगोट देर तक बंधा नहीं रहने देना चाहिए, अन्यथा संक्रमण हो सकता है.

□ बच्चे को कभी सख्त कब्ज न होने दें. इससे पेशाब की थैली पर जोर पड़ता है और पेशाब में रुकावट आ सकती है.

□ बच्चों मे प्रायः उच्च रक्तचाप की पहचान आसानी से नही होती, क्योंकि बच्चों मे इसके बड़ों जैसे बाहरी लक्षण नही दिखाई देते. इसलिए जब कभी बच्चे का सामान्य परीक्षण कराएं, तब पेशाब की जांच, रक्तचाप की जांच भी करने के लिए अपने डाक्टर से कहें, क्योंकि छोटे बच्चों में यह शिकायत कम होने पर भी जब होती है तो उसका रूप गंभीर होता है. इसलिए डा. वैष्णव डाक्टरों के लिए भी यह सुझाव देती हैं कि वे रक्तचाप जांचने के यंत्र का प्रयोग बच्चों पर भी समान रूप से करें. बचपन मे रोग की जड़ पहचान लेने से आगे बड़े होने पर रोग-निवारण की सफलता की संभावनाएं बढ़ जाती है.

□ यदि बच्चे का विकास सामान्य नही है, पेशाब की मात्रा असामान्य है या उसका रंग कोकाकोला जैसा है, कभी अचानक सूजन आ जाती है या सूजन की अवधि लंबी चलती है, रात को बार-बार पेशाब होता है, सिर दर्द रहता है, 'एनीमिया' है, भूख कम है, साथ मे 'रिकेट्स' या हड्डियां टेढ़ी हो जाने का रोग है, बच्चा पेशाब करते समय जलन के कारण तड़पता है या पेशाब में छोटे-छोटे पत्थर-कण निकलते हैं तो इन सभी शिकायतों में गुरदों की जांच जरूरी है और जांच के बाद खराबी का जम कर इलाज कराना भी बहुत जरूरी है. इस तरह शैशव मे, कुछ सावधानियां बरत कर हम आने वाली गुरदे की बीमारियों, तकलीफों, परेशानियों से निजात पा सकते हैं. ●





33

बच्चों में तपेदिक

[कलावती सरन बाल-चिकित्सालय के एक वरिष्ठ बाल चिकित्सक डॉ० सुभाषचन्द्र खांडपुर से भेंट वार्ता पर आधारित]

आज बीसवी सदी के अंत मे तपेदिक अब असाध्य रोग नही रह गया है. पश्चिमी देशों से इसकी लगभग समाप्ति हो चुकी है परंतु दुर्भाग्य से भारत मे गरीबी व कुपोषण के कारण अभी भी काफी बच्चे इस रोग की चपेट मे आ जाते हैं. यहां तक कि कुपोषण के बाद कुपोषण पर आधारित संक्रमण रोगों में सर्वाधिक शिशु मृत्यु-दर इसी कारण से होती है.

कारण

डा० खाडपुर के अनुसार, बच्चों को टी० बी० बड़ों से ही लगती और फैलती है. छाती की टी० बी० वाले रोगी के कफ के छींटों या थूक-कणो मे इस रोग के कीटाणु रहते है और सामान्यत. हवा के माध्यम से सास द्वारा फेफड़ों में प्रवेश कर दूसरे व्यक्तियों, विशेषरूप से कोमल बच्चों को प्रभावित कर जाते है. यदि बच्चा किसी टी० बी० रोगी के थूक या बलगम के सपर्क मे आता है तब भी उस थूक मे छिपे जीवाणु सास द्वारा फेफड़ो मे चले जाते हैं.

कम उमर के बच्चो मे टी० बी० के ये जीवाणु अधिक तेजी से फैलते हैं, क्योकि उनके शरीर मे प्रतिरोधक क्षमता कम होती है. स्वस्थ तरीके से विकसित होता हुआ बच्चा जैसे-जैसे बड़ा होता है, उसके भीतर रोग-निरोधक क्षमता बढती जाती है, वैसे-वैसे टी० बी० के जीवाणु उस पर कम प्रभावकारी होते जाते हैं. परंतु दुर्भाग्य से हमारे देश के अधिकतर बच्चे गभीर रूप से कुपोषण के शिकार हैं. यह रोग भी गावो मे, विशेषरूप से शहरो की गदी व पिछड़ी बस्तियों मे अधिक होता है. अस्वच्छता, सीलनभरी अंधेरी कोठरिया, भीड़-भाड़ वाली स्थितिया इसे बढाने में सहायक होती है. निरोधक-क्षमता की कमी से अपोषित बच्चे टी० बी० के अधिक शिकार होते हैं. फिर इस रोग के कारण भूख की कमी और वजन मे गिरावट मे कुपोषित बच्चा गभीर कुपोषण का शिकार हो जाता है और समय पर सही इलाज न मिलने मे यह रोग जानलेवा भी सिद्ध होता है, अन्यथा समय पर चिकित्सा व साथ-साथ पोषण की पूर्ति से अब यह रोग असाध्य नहीं है.

समृद्ध वर्गों मे यह रोग नौकरों से, आया से, रोगी के कफ या सांस के संपर्क से (जिसकी सभावना शहरों की भीड़-भाड वाली जगहों मे काफी होती है) और फैक्टरी-क्षेत्रों की अस्वच्छता व धूल-गंदगी भरे पर्यावरण मे रहने से हो सकता है.

पेट की टी० बी० रोगी गाय-भैंस के दूध से होती है. पर दूध को उबाल कर पीने से इससे बचाव हो जाता है.



छाती की टी० बी० की जांच

गांवों में भी अब दूध को उबाल कर पीने की आदत विकसित होने से इस रोग की संख्या कम है. पर छाती की टी० बी० जब फेफड़ों पर असर करने के बाद या फेफड़ों को कम प्रभावित करते हुए भी शरीर के अन्य हिस्सों में फैलती है तो दिमाग की, पेट की, हड्डियों की, गले की, कोई भी टी० बी० हो सकती है.

मक्खियां भी इस रोग को फैलाने में सहायक हैं. रोगी के बलगम पर बैठने के बाद खाने-पीने की चीजों पर बैठकर यह रोग फैलाती हैं,पर यह कारण अस्वच्छताजनित अन्य कारणों का ही एक अंग है.

बच्चों में खसरा, काली खासी और बार-बार दस्तों का रोग (डायरिया) आदि रोगों के बाद निरोधक-शक्ति कम हो जाने से उपेक्षित बच्चों की तरह ही इन बच्चों पर भी रोग का संक्रमण जल्दी होता है. इस प्रकार रोग के कीटाणु दो तरह से रोग फैलाने मे सहायक होते हैं : एक, रोग-निरोधक शक्ति कम हो, दूसरे इस क्षमता के बावजूद कीटाणुओं का हमला अधिक संख्या में हो.

लक्षण

छूत लगने के चार से आठ सप्ताह बाद अपने लक्षणों के साथ प्रगट होने वाला यह रोग बच्चों मे बड़ों से कुछ अलग किस्म का होता है, जिसे 'चाइल्ड हुड टाइप आफ ट्यूबरक्लोसिस' कहते हैं. इसमें भी नन्हे शिशुओं को होने वाला रोग कई बार आसानी से पहचान मे नही आता और प्राय: रोग आगे बढ जाने पर ही पकड़ में आता है. कीटाणुओं द्वारा आक्रमण के बाद रोग की स्थिति 'प्राइमरी काम्पलैक्स' कहलाती है. डा० खांडपुर के अनुसार, शिशु को यदि पैदा होते ही किसी से संक्रमण लग जाए तो रोग दो-तीन महीने की आयु से भी प्रारंभ हो सकता है. वैसे प्रारंभिक जटिलता या 'प्राइमरी काम्पलैक्स' मे रोग के ये आंकड़े छ. महीने की आयु से दो साल तक ज्यादा पाए गए है.

शिशु वर्ग में इस टी० बी० के लक्षण हैं : कम भूख, कम खुराक लेना, हलका बुखार रहना, चिड़चिडापन और इसके साथ वजन मे स्थिरता और कमी, खांसी इसमें नही होती. इसलिए पहचान भी नही रहती, ये तीनो मुख्य लक्षण मौजूद हों तो डाक्टर से जांच करानी चाहिए. 'मैन्टू टेस्ट' लेकर और एक्सरे द्वारा रोग का निदान किया जा सकता है. जैसे ही अभिभावकों को सदेह हो, यह जाच जल्दी करानी चाहिए, क्योंकि शिशु मे रोग-निरोधक क्षमता कम होने से रोग तेजी से आगे बढ़ता है. रोग वृद्धि के साथ इसमें कई गंभीर जटिलताएं भी पैदा हो सकती हैं. जैसे टी० बी० न्यूमोनिया या छाती के अंदर गिल्टियां हो जाना अथवा गले की गिल्टिया बढ़ जाना. फेफड़ो से शुरू होकर खून के जरिए से फिर पेट की, दिमाग की, हड्डियों और जोड़ों की, विशेष रूप से रीढ़ की हड्डी की टी० बी० हो सकती है.

जैसा कि पहले बताया गया है, रोग का आक्रमण पहले फेफड़ों पर ही होता है. पर यह जरूरी नही कि उसकी वृद्धि छाती मे ही हो. वह छाती को कम प्रभावित किए बिना शरीर के दूसरे हिस्सो मे भी बढ़ सकता है. इसलिए बच्चे को खांसी तभी होगी, जबकि रोग छाती मे ही बढ़ रहा हो.

इस तरह बच्चों की टी० बी० के मुख्य प्रकार होंगे :

1. फेफड़ों की टी. बी.
2. दिमाग की टी. बी.
3. गर्दन की गिल्टिया.
4. पेट की टी. बी.
5. हड्डियो व जोडो की टी. बी. आदि.

छाती या फेफड़ों की टी० बी०

रोग छाती मे बढ़ रहा हो तो छाती की गिल्टियों के दबाव से बच्चे को खासी शुरू हो जाएगी. इस खांसी का रूप काली खासी की तरह होगा. पर काली खासी और इस खांसी मे पहचान करना जरूरी है. काली खासी मे पहले एक सप्ताह तक जुकाम व बुखार होगा दूसरे हफ्ते काली खासी के लक्षण प्रगट होंगे. टी. बी. में पहले वे तीनों मुख्य लक्षण—हल्का बुखार, भूख की कमी और वजन में गिरावट प्रगट होंगे. फिर कुछ समय बाद ऐसी खासी शुरू होगी. फेफड़ों की टी. बी. के दूसरे गंभीर रूप है : टी. बी. की न्यूमोनिया, फेफड़ों में पानी भरना, फेफड़े गल जाने से उनमें गड्ढे पड़ जाना और खून से दोनों ओर के पूरे फेफड़ों मे रोग फैलने से टी. बी. का एक भयानक रूप अख्तियार कर लेना, जिसे 'मिलियरी ट्यूबरक्लोसिस' कहते है. इन सभी के मुख्य लक्षण हैं : बुखार, खासी, सास का तेज चलना और बच्चे का बहुत कमजोर व 'टाक्सिक' हो जाना.

दिमाग की टी० बी०

इसमे रोग तेजी से बढता है और सप्ताह-दस दिन बाद ही खतरनाक सिद्ध होता है. खून के जरिए रोग दिमाग मे फैलता है. पहले छोटा सा घाव बनता है. यह घाव या तो वही बढता है या फोड़ा बन जाता है, फिर फूट कर दिमाग की झिल्ली मे उतर आता है. इसके लक्षण है : रात को व सुबह सिर में तेज दर्द, उल्टी, विशेष रूप से, सुबह उठते ही उल्टी, चिड़चिड़ापन, बुखार और वजन मे गिरावट, मिर्गी जैसे

दौरे भी पड़ सकते हैं. समय पर न संभालें तो बेहोशी में मृत्यु तक संभव है या बच जाने पर आंखों की ज्योति जा सकती है, फालिज गिर सकता है.

दौरे पड़ने से पूर्व सिर दर्द, उल्टी के समय ही जांच करा लें तो इस स्तर पर रोग साध्य है.

दूसरे स्तर पर व्यवहार में थोड़ा परिवर्तन आ सकता है. पर तीसरी स्थिति घातक है. इस स्थिति में जिसे गर्दन-तोड़ बुखार कहते हैं, बुखार व दौरे पड़ने से हाथों, पांवों पर फालिज गिर जाता है. मानसिक बाधता (मेंटल रिटार्डेशन) हो सकती है. अंधापन आ सकता है या बेहोशी में मृत्यु हो सकती है. इसलिए पहली स्थिति में व दूसरी स्थिति के प्रारंभ में ही इसकी सफल चिकित्सा की संभावना अधिक होती है, फिर यह संभावना क्रमशः कम होती जाती है. यदि चिकित्सा न की जाय तो बच्चे की मृत्यु एक महीने के भीतर ही हो सकती है.



दिमाग की टी० बी० का परीक्षण

गर्दन की गिल्टियां

कान के पीछे व नीचे गर्दन पर धीरे-धीरे गिल्टियां बढ़ रही हों तो इसका एक कारण एक प्रकार की टी. बी. हो सकता है. रोग बढ़ने पर गिल्टियां बढ़ कर गुच्छों में बदल जाती हैं. ये गुच्छे फिर फोड़े बनते हैं व फिर फूटने पर इनसे पस बाहर निकल सकती है. एक या दोनों तरफ कई जगह ये गिल्टियां हों तो जांच कराएं, क्योंकि इस टी. बी. में भी खांसी जरूरी नहीं. बुखार भी जरूरी नहीं या गिल्टियों की तकलीफ से हलका बुखार हो सकता है. पर वजन में कमी का लक्षण समान होगा. गिल्टियों के साथ भूख की कमी और वजन की कमी ही इसकी मुख्य पहचान है.

पेट की टी० बी०

बिना उबाले रोगी गाय-भैंस के दूध के अलावा खून के जरिए बीमारी फेफड़ों से पेट तक पहुंचने या बच्चे द्वारा बलगम निगलने पर भी यह टी. बी. हो सकती है. यह भी बच्चों में बड़ों से अलग तरह की होती है. बड़ों में टी. बी. का असर आंतों पर होता है. बच्चों में पेट की गिल्टियों व पेट के भीतर आंतों को ढंकने वाली झिल्ली पर. अतः इसके लक्षण भी बड़ों की टी. बी. से भिन्न होंगे. बड़ों को आंतों की टी. बी. में दस्त या पेचिश होगी, बच्चों को इस बीमारी में पेट में गिल्टियां बढ़ने से पेट में गोला सा अनुभव होगा. आंतों का एक दूसरे में फंस कर गुच्छा बन जाने से आंतों के काम में रुकावट भी पैदा हो सकती है, जिससे पेट में दर्द मरोड़, उल्टी होगी. पेट में हवा रुक सकती है. पाखाना रुक कर सख्त कब्ज हो सकती है. कई बार पेट की टी. बी. में पेट में पानी भर जाता है तो वह फूला सा लगता है. इस तरह इसमें भी अपच, पेट की तकलीफ, हलका बुखार और वजन की कमी के लक्षण होंगे, खांसी नहीं.

हड्डियों और जोड़ों की टी० बी०

फेफड़ों पर प्रथम आक्रमण के बाद खून के जरिए रोग का असर किसी हड्डी पर, नितंब-जोड़ पर, टखने पर, उंगलियों के जोड़ों पर और ज्यादातर रीढ़ पर देखा गया है. एक समय में एक साथ कई जगह भी असर दिखाई दे सकता है. आरंभ में हड्डी के जोड़ में दर्द व सूजन होगी. साथ ही हलका बुखार भी हो सकता है. रीढ़ पर असर होने से वहां भी पहले दर्द होगा. फिर मेरुदंड पर बीच का अंतर तंग होने लगता है व हड्डी पर सूजन दिखाई देती है. एक के ऊपर एक हड्डी का प्रक्षेप (प्रोजेक्शन) होने से ऐसा होता है. बीमारी बढ़ने पर इसका असर मेरु-रज्जु (स्पाइनल कॉर्ड) पर भी हो सकता है, जिससे दोनों पांवों में कमजोरी आने लगती है और पेशाब पर नियंत्रण कम होते-होते समाप्त हो जाता है. इसलिए रोग जितनी जल्दी पकड़ में आए, अच्छा है. दर्द व सूजन दिखाई देने पर शीघ्र ही जांच कराएं ताकि 'स्पाइनल कार्ड' पर असर आने से पैरों में होने वाली विकृति को बचाया जा सके.

रोकथाम

टी. बी. की रोकथाम के लिए शैशव में ही बी. सी. जी. का टीका लगवाना बहुत जरूरी है. यह टीका शिशुओं को आजकल मा के प्रसवोपरांत अस्पताल से छुट्टी देने से पूर्व ही लगा दिया जाता है, अधिकतर पहले दिन ही. बहुत कमजोर या बीमार शिशु को प्रारंभिक दिनों में टीका न लग पाए तो जैसे ही वह ठीक हो, यथासंभव जल्दी लगवा लेना चाहिए. किसी बच्चे को शैशव में टीका न लगा हो तो बड़े बच्चे को 'मोन्टू टैस्ट' करवा के उसके 'निगेटिव' होने पर ही टीका लगना चाहिए. अतः बड़े बच्चों को यह टैस्ट करवा के टीका लगवा देना चाहिए.

टीका लगने तक तो बच्चों को संक्रमण से या रोगी-रोगिणी की छूत से बचाना जरूरी है ही, टीका लगा होने पर भी बच्चों को संक्रमण से बचाया जाना चाहिए, क्योंकि अधिक संख्या में कीटाणुओं का आक्रमण कभी भी, किसी को भी रोगी बना सकता है. टीका रोग के तीव्र आक्रमण को रोकने में सहायक नहीं होगा तो भी उसकी गंभीरता कम करने या उसे जटिल बनने से रोकने में अवश्य सहायक होगा.

टी. बी. के रोगी बच्चे के लिए समृद्ध (हाई) प्रोटीन वाली पौष्टिक व संतुलित खुराक बहुत जरूरी है. जिसमें विटामिन 'ए', 'डी', 'सी', 'बी', काम्पलैक्स और कैलशियम प्रचुर मात्रा में हों. सामान्यतः नार्मल मे तीन-चार गुना ज्यादा विटामिन 'ए' और 'डी' देना पड़ता है. पर बहुत देर तक इस अतिरिक्त खुराक से साईड इफैक्टस हो सकते हैं. अतः अतिरिक्त मात्रा और अवधि के बारे में डाक्टरी राय से ही चलें.

प्रोटीन की अतिरिक्त पूर्ति के लिए यह पैमाना नोट कर लें :

आयु	वजन
एक साल तक	$2\frac{1}{2}$-$3\frac{1}{2}$ ग्राम, प्रति किलो वजन के हिसाब से
9 साल तक	2-$2\frac{1}{2}$ ग्राम, प्रति किलो वजन के हिसाब से
9-12 साल तक	2 ग्राम, प्रति किलो वजन के हिसाब से

प्रोटीन की यह मात्रा अंडा, मीट-सूप, दाल का पानी, दालें, मटर-पनीर जैसी चीजों से दी जा सकती है.

दूध पूरा मिले तो अतिरिक्त कैलशियम जरूरी नहीं, अन्यथा इसकी भी अतिरिक्त मात्रा देनी होगी. धूप, रोशनी में कीटाणु जल्दी नहीं बढ़ते और धूप से बच्चे को विटामिन 'डी' मिलता है. अत. इस ओर भी ध्यान दें व रोगी बच्चे को सीलनभरी अंधेरी जगह से बचाकर हवा, धूप, रोशनी वाले कमरे में रखें. उसे धूल-गंदगी, भीड़-भाड़ व शोर से बचाना चाहिए.

टी० बी० की रोकथाम के लिए किसी भी रोगी के थूक, बलगम आदि को जलाना एक सामाजिक जिम्मेदारी होनी चाहिए. क्योंकि बच्चों को छूत बड़ों से ही लगती है. छोटे बच्चे थूकते नहीं, इसलिए उनसे संक्रमण फैलने का खतरा भी नहीं होता. शिशु के खाने-पीने के बर्तन भी अलग रखने की जरूरत नहीं. केवल उसकी सांस से दूसरे बच्चों को बचाया जाना चाहिए.

गर्भावस्था में टी० बी०

प्रश्न उठता है, यदि मा को टी० बी० है तो शिशु को उससे कैसे बचाएं ? गर्भवती को इसीलिए अस्पतालों या मातृ-शिशु केन्द्रों मे अपना नाम रजिस्टर्ड करवा कर समय-समय पर जांच कराते रहने की सलाह दी जाती है, ताकि कोई रोग होने पर समय पर उसकी चिकित्सा की जा सके. गर्भकाल में टी. बी. की रोगिणी मां की चिकित्सा कुशल डाक्टरी निर्देशन मे चलनी चाहिए. क्योंकि तीव्र 'एन्टी बायोटिक' दवाओं से गर्भस्थ-शिशु को हानि पहुंच सकती है. ऐसी मा के शिशु को पैदा होने के दिन ही बी. सी. जी. का टीका देकर 8 सप्ताह तक अलग रखा जाना चाहिए या उतनी देर तक, जब तक कि चिकित्सा द्वारा मा की थूक व सास विसंक्रमित न हो जाए. रोगी मां टीके के 8 सप्ताह बाद शिशु को अपना दूध पिला सकती है. केवल दूध पिलाते समय उसे अपना मुंह ढांप कर रखना चाहिए ताकि उसकी सास शिशु के भीतर न जाए. बच्चे को इस बीच अलग रखना संभव न हो तो उसे टी. बी. निरोधक दवा (आई. एन. एच.) की नियमित खुराक दी जानी चाहिए, जब तक कि मा की थूक व सांस विसंक्रमित न हो जाए, इसके बाद दवा बद करके बी. सी. जी. का टीका बच्चे को लगवा देना चाहिए.

कुछ शिशुओं को पैदाइशी टी. बी. भी होती है, जिसका सबसे अधिक असर जिगर पर होता है. अतः जिगर-वृद्धि सामान्य से ज्यादा दिखाई दे तो शिशु को अस्पताल में ले जाकर दिखाएं.

इस प्रकार बच्चों के बारे में टी. बी. की रोकथाम के लिए जरूरत है, रोगिणी मां की चिकित्सा और बच्चों को अस्वच्छता व कुपोषण की स्थितियों से बचाना. अपने बच्चों को टी. बी. से बचाने के लिए माताओं को चिकित्सा की बजाए रोकथाम के उपायों पर विशेष ध्यान देना चाहिए.



34

जिगर के रोग

[डा. रिषिराम अग्रवाल से भेंट पर आधारित]

जिगर या यकृत हमारे शरीर का एक महत्वपूर्ण रासायनिक संयत्र है, जिसका एक अश भी ठीक कार्य न करे तो शरीर के सभी तत्रो पर उसका कुप्रभाव पड़ता है. लेकिन प्रकृति ने इसके भीतर नष्ट ऊतकों के पुर्ननिर्माण की अद्‌भुत स्वचालित क्षमता दी है. इसलिए नवजात शिशु के प्रति लापरवाही न बरती जाए और बच्चों की खुराक पर ठीक से ध्यान दिया जाए तो शरीर का यह अंग शरीर के प्रति प्रायः वफादार ही रहता है.

फिर भी कारणवश जिगर में कोई खराबी आए तो उससे कौन-कौन से रोग हो सकते हैं, उनकी रोकथाम के उपाय क्या हैं, खुराक व चिकित्सा संबंधी मेडिकल राय क्या है, इस बारे में माताओं की सहायतार्थ एक वरिष्ठ अनुभवी चिकित्सक डा. रिषि राम अग्रवाल के सुझाव यहा प्रस्तुत है :

नवजात शिशु में पीलिया

पीलिया की सामान्य पहचान त्वचा और आंखों में आए पीलेपन को देखकर की जाती है. इसमे पेशाव का रग भी गाढा पीला हो जाता है. पर नवजात शिशु का पेशाब का रग वैसे भी गाढ़ा हो सकता है और वह आखें नही खोलता तो आंखो का रग दिखाई नही देता. बहुधा नवजात शिशु अंधेरे कमरे मे रखे जाते हैं अत: चेहरे का रग भी प्राय: अनदेखा कर दिया जाता है और पीलिया की समय पर पहचान न हो पाने से कई बार यह बच्चे के लिए घातक सिद्ध होता है.

अस्पताल में पैदा होने वाले नवजात शिशु को पीलिया हो जाए तो डाक्टर समय पर संभाल लेते हैं. पर घर पर प्रसव हो तो शिशु को रोशनी में ले जाकर देखना चाहिए. यह निरीक्षण पहले कुछ दिनों तक प्रति दिन करें और संदेह हो तो तुरंत डाक्टर से जांच कराएं.

पहले यहां सामान्य पीलिया व हानिकारक पीलिया के अंतर को भी समझ लें.

सामान्य पीलिया

सामान्यत: पैदा होने वाले 60 प्रतिशत शिशुओं में जन्म के दूसरे-तीसरे दिन से लेकर एक सप्ताह तक पीलिया का हलका प्रभाव देखने में आता है. इसका कारण होता है जन्मोपरांत शिशु के यकृत का एकदम कार्य करने में सक्षम न हो पाना. यह सामान्य पीलिया धीरे-धीरे यकृत की क्षमता बढ़ने पर चार-पांच दिन से एक सप्ताह तक स्वयं ही ठीक हो जाता है. अत: इस से घबराने जैसी कोई बात नही. केवल बच्चे को चीनी मिला पानी पिलाना चाहिए.



कमजोर बच्चे का बढ़ा हुआ जिगर

गंभीर पीलिया

लेकिन कुछ मामलों में जब यह पीलिया एक सप्ताह मे स्वयं ठीक न हो, उसका रंग भी क्रमशः गहरा होता जाए तो सतर्क हो जाना चाहिए व तुरंत डाक्टर से संपर्क करना चाहिए, क्योंकि यकृत के ठीक काम न करने से खून में हानिकारक विष 'बिलिरूबिन' पीतारुण की मात्रा बढ़ने लगती है, जो शिशु के मस्तिष्क व हृदय के ऊतकों पर हानिकारक प्रभाव छोड़ सकता है.

घातक पीलिया

नवजात शिशु में एक अन्य प्रकार का घातक पीलिया भी होता है, जिसका कारण माता-पिता का 'ब्लड-ग्रुप' न मिलने से मां-शिशु में भी 'ब्लड-ग्रुप' का मिलान न हो पाना होता है. इसकी जांच माता के गर्भवती होते ही करवानी चाहिए ताकि समय आने पर और जरूरत पड़ने पर इलाज और बचाव का प्रबन्ध पूरा हो सके. अतः नवजात शिशु में यदि पीलिया दूसरे-तीसरे दिन के बजाए पहले दिन ही दिखाई दे और उसका रंग भी गहरा होता जाए तो यह आर०एच० नेगेटिव के कारण ही होता है. ऐसी स्थिति में तुरंत डाक्टर से परामर्श करना चाहिए. ऐसे शिशु को खास किस्म की रोशनी मे रखने और जरूरत पर उसका पूरा खून बदलने की आवश्यकता होती है. अगले बच्चों की सुरक्षा के लिए प्रसवोपरांत मां को एक इंजेक्शन देने की भी. यह इन्जेक्शन (एन्टी डी गामा ग्लूबिन) उस माता को जिसका ब्लडग्रुप 'आर. एच. फैक्टर नेगेटिव'( ) हो और पिता का 'आर० एच० फैक्टर पॉजेटिव' (+) हो. पहले बच्चे के पैदा होने के 24 घंटे के अन्दर लगना जरूरी होता है.

अन्य घातक स्थितियां: पीलिया एक सप्ताह बाद प्रगट हो या दूसरे-तीसरे दिन उतरा सामान्य पीलिया देर तक बना रहे तो ये दोनों स्थितियां भी घातक हो सकती हैं ऐसे मामलों मे शीघ्र डाक्टरी परामर्श व चिकित्सा जरूरी है. (इस संबध मे 'नवजात शिशु की देखभाल' वाला अध्याय भी देखें).

बच्चों में विषाणुजन्य पीलिया

तीसरे प्रकार का विषाणुजन्य पीलिया अस्वच्छता व दूषित पानी, हवा के कारण तीन से पाच वर्ष की आयु के उन सभी बच्चों को हो सकता है, जो प्रायः कुपोषित होते हैं और कमजोरी के कारण संक्रमणजन्य स्थितियो के शीघ्र शिकार होते हैं. यकृत में विषाणु के संक्रमण से जैसे-जैसे यकृत की कोशिकाएं नष्ट होती जाती हैं, इसके बाह्य लक्षण दिखाई देने लगते हैं. बच्चे को शुरू में भूख नही लगती. वह खाने में अनिच्छा प्रगट करता है, उसका जी मिचलाता है, उल्टी होती है और पेट मे दर्द व दस्तों की शिकायत भी हो सकती है. पहले पेशाब का रंग पीला होता है, फिर शरीर व आंखों का रंग भी पीड़ा पड़ने लगता है साथ में हल्का बुखार भी रहने लगता है.

ऐसी स्थिति में इलाज न किया जाए तो रोग गंभीर हो सकता है. शरीर का पीलापन बढ़ेगा, खुजली होगी, तापक्रम अधिक हो जाएगा, बच्चा बेहद चिड़चिड़ा हो जाएगा, अंत में बेहोशी के दौरे आने लगेंगे और फिर बच्चे के बचने की संभावना क्षीण होने लगेगी. अत. रोग के गंभीर स्थिति तक बढ़ने से पूर्व ही चिकित्सा आरंभ करनी चाहिए.

बच्चे को बीमारी के दौरान पूरी तरह आराम से रखें. उसकी खुराक में से घी-मक्खन, तेल व अन्य चिकनाई को निकाल दें व गन्ने का रस, चावल, गुड़ और चीनी की मात्रा बढ़ा दें.

नवजात में पित्त-नली का अवरुद्ध होना

अपवाद रूप कुछ मामलो मे शिशु के भीतर पित्त-नली बंद हो तो भी यह रोग हो सकता है. इस स्थिति में शल्य-चिकित्सा से यह दोष दूर किया जा सकता है. (देखें 'बच्चो मे शल्य-चिकित्सा' वाला अध्याय)

जिगर-वृद्धि और रोकथाम के उपाय

जिगर-वृद्धि या 'सिरोसिस आफ लिवर' का रोग उपरोक्त विषाणुजन्य पीलिया के शीघ्र ठीक न होने पर भी हो सकता है. पर अधिकतर इसका कारण कुपोषण ही है. कारबोहाइड्रेट व प्रोटीन की कमी से होने वाले कुपोषणजन्य रोगों—'क्वाशरकोर' और 'मरास्मस' में जिगर-वृद्धि आम बात है. इसलिए इसका इलाज भी वही है जो कुपोषण-जन्य रोगों मे बताया गया है (देखें संबंधित अध्याय). कई बार अन्य रोगों (टी. बी. मा-बाप के यौन रोग, गंभीर पेचिश आदि) के दौरान भी जिगर-वृद्धि हो जाती है. अत उन रोगों की चिकित्सा ही इसकी चिकित्सा होगी. ऐसे सभी मामलों में डाक्टरी परामर्श से चलना चाहिए और कुपोषणजन्य व संक्रामक रोगों से बचाव के लिए स्वच्छता के नियमों के पालन, शुद्ध पेय जल की व्यवस्था तथा बच्चों को संतुलित पौष्टिक आहार देने पर ध्यान देना चाहिए. साथ ही यह भी कि रोग की पहचान न हो; शंका हो तो समय रहते शीघ्र डाक्टर से परामर्श करें. और रोग की पहचान हो जाए तो पूरी तरह डाक्टरी निर्देशन में चलें.

35

त्वचा के रोग





[डा० जयदेव गुप्ता से भेंट पर आधारित]



त्वचा हमारे शरीर की एक प्राकृतिक सुरक्षा परत है. जाहिर है कि यह सुरक्षा-दीवार जितनी मजबूत होगी, आंतरिक अंग उतने ही स्वस्थ व सुरक्षित रहेंगे. इसी तरह आंतरिक स्वास्थ्य जितना अच्छा होगा, त्वचा रूपी दर्पण में उसका उतना ही अच्छा प्रतिबिंब दिखाई देगा. दूसरे शब्दों में त्वचा का स्वास्थ्य व सामान्य स्वास्थ्य परस्पर एक दूसरे पर आश्रित हैं. त्वचा की समस्याएं बीमारी-कमजोरी में या संतुलित पौष्टिक भोजन के अभाव में ही पैदा होती हैं—जैसे विटामिन 'ए' की कमी से त्वचा खुरदरी हो कर फटने लगती है विटामिन 'सी' की कमी से 'स्कर्वी' रोग हो जाता है. पर त्वचा की रक्षा के लिए संतुलित आहार जितना जरूरी है, उतना ही जरूरी है स्वच्छता के सामान्य नियमों का पालन, क्योंकि त्वचा की बीमारियां अधिकतर अस्वच्छता व गंदगी से ही पैदा होती है.

शिशु की कोमल त्वचा की सार-संभाल

सामान्य स्वास्थ्य व स्वच्छता का उपरोक्त नियम प्रत्येक व्यक्ति की त्वचा पर समान रूप से लागू होता है पर नवजात शिशु व छोटे बच्चे की कोमल त्वचा पर विशेष रूप से इसलिए उसकी सार-संभाल भी विशेष सावधानी से करनी होगी.इस सम्बन्ध में माताओं की जानकारी के लिए चिकित्सा क्षेत्र मे अनुभवी डा० जयदेव गुप्ता से साक्षात्कार पर आधारित कुछ उपयोगी सुझाव यहां प्रस्तुत किए जा रहे हैं:

□ शिशु को हर रोज नहलाएं. नहलाने के लिए कपड़े धोने वाला साबुन छोड़ कर कोई भी अच्छा साबुन व्यवहार में लाया जा सकता है पर वह ग्लीसरीनयुक्त या 'बेबी सोप' हो तो अधिक अच्छा रहेगा.

□ प्रतिदिन नहलाने के बाद तो बच्चे के सभी कपड़े बदलने आवश्यक हैं ही. पर इसके अलावा दिन में या रात मे जब भी उसके कपड़े पेशाब, टट्टी, उल्टी से खराब हों, उसी समय बदल दें. गरमी के दिनों पसीने पर धूल-कण जम कर त्वचा के छिद्र बंद कर लेते हैं तो गरमी विशेष रूप से पसीने वाली उमसभरी गरमी, के दिनों सफाई-स्वच्छता का विशेष ध्यान रखने की जरूरत होती है. अतः गरमी, बरसात में (यदि ठंडी व बरसाती हवा न चल रही हो तो) बच्चे को दिन भर में दो-तीन बार नहलाना चाहिए और हर बार पसीने वाला भीतरी कपड़ा बदल देना चाहिए. बहुत बार माताएं ऊपरी झबला, फ्राक आदि तो बदल देती हैं, पर भीतर वही बनियान रहने देती है, जबकि ऊपरी फ्राक बदलना उतना जरूरी नहीं, जितनी कि भीतरी बनियान.

□ इसी तरह लंगोट, जांघिया आदि भी गीला होते ही बदला जाना चाहिए और पेशाब वाला लंगोट पानी में से निकाल कर, सुखा कर तब इस्तेमाल करना चाहिए, अन्यथा पेशाब के रसायन से शिशु की त्वचा को हानि हो सकती है. यदि लंगोट धोने में सस्ता साबुन इस्तेमाल किया जाए और

साबुन कपडे से अच्छी तरह न निकाला जाए तो भी उस लंगोट से कोमल त्वचा को हानि पहुंच सकती है और शिशु के गुदा-जोड में लाली, जलन व घाव की शिकायत हो सकती है. लंगोट धोने के बाद उन्हे धूप मे सुखाएं. जिन दिनो धूप न मिले, उन्हें पोटाशियम परमागनेट मिले पानी मे धो लें. इससे अधिक सुरक्षा रहेगी.

□ त्वचा को स्वस्थ-स्निग्ध बनाने के लिए तेल मालिश अच्छी है पर यह सरदी के दिनो मे ही करनी चाहिए ताकि मालिश के बाद धूप-स्नान मे शिशु को विटामिन 'डी' मिल सके और उसका शरीर पुष्ट हो. गरमी व बरसात के दिनों मालिश से लाभ के बजाए हानि ही हो सकती है, क्योकि तेल, पसीना व धूल मिलकर त्वचा-छिद्रों को मैल से भर देंगे और त्वचा जल्दी ही संक्रमण का शिकार हो फोड़े-फुंसी जैसे त्वचा-रोगों को आमन्त्रण देगी. बदलते मौसम मे, जब खुश्क हवाए चलती हैं, त्वचा की हलकी मालिश से लाभ होगा, पर अधिक गरमी व बरसात की उमस मे शिशु को तेल मालिश नहीं करनी चाहिए. सरदी मे मालिश के लिए जैतून का तेल सर्वोत्तम है पर यह सभी के लिए सुलभ नही होता, इसके बदले तिल का या नारियल का तेल व्यवहार में लाया जा सकता है. मालिश के बाद एक घंटे तक शिशु को अवश्य नहला देना चाहिए. बिना नहलाए तेल शरीर पर लगा रहने देना ठीक नहीं. मालिश के बाद मौसम अनुसार हलके या सहते गरम पानी से स्नान कराए.



जोड़ों की जलन से बचाने के लिए यहां क्रीम लगाए

□ शिशु को सुलाते समय मच्छरदानी का प्रयोग करने से वह मच्छर, मक्खी, पतगे आदि से बचा रहेगा, कोई मीठी चीज भी बच्चे के कपडों या बिस्तर से चिपकी न रहे, अन्यथा उसे चीटियां भी काट सकती है. यदि मच्छर आदि काटने से शिशु के शरीर पर लाल-लाल चकत्ते से या फुंसियां सी बन जाए तो उन पर 'एंटीसेप्टिक क्रीम' रगड़ दें और ध्यान रखें कि बच्चा उन स्थानो पर खुजाए नही. यदि खुजाने से खरोचें या घाव न कर लिया जाये तो इसके लिए किसी इलाज की जरूरत नही. कुछ समय बाद ये निशान स्वय ही ठीक हो जाएगे. पर मच्छरदानी से व मच्छर-नाशक क्रीम मलकर बच्चे को इस परेशानी से बचाए अवश्य.

□ गरमी के दिनों मे बच्चे के शरीर पर महीरिया निकलने का कारण भी पसीने भरी गदगी को उसके शरीर पर देर तक रहने देना ही है. महौरियो से बचने के लिए शिशु को दिन में दो बार अवश्य नहलाए व उसके भीतरी कपडे जरूर बदलें. उसे साफ रखने व हवा मे रखने पर वह महौरियो से बचा रहेगा. यदि असावधानीवश महौरिया निकल आई हो तो उसे दिन मे दो-तीन बार ठडे पानी से नहलाकर बेबी पाउडर या प्रीक़ली हीट पाउडर अच्छी तरह छिडक दें. ध्यान रहे, शिशु के शरीर पर टॅलकम डिब्बे से छिडक कर नही लगाना चाहिए. अपनी हथेली मे निकाल कर तब शिशु के शरीर पर मलना चाहिए. हर बार नहला कर कपडे बदलने व बच्चे को हवा मे रखने से महौरिया जल्दी ही ठीक हो जाएंगी.

□ सरदी के दिनों माताएं अक्सर छोटे बच्चो को कई-कई दिन नहलाती नही और बहुत से कपडो से लाद कर रखती है जिससे त्वचा को पर्याप्त हवा नही मिल पाती और चुभन व जलन से शिशु को तकलीफ होती है. सरदी में गरम कपडे पहनाना जरूरी है पर वे तग व चुभने वाले न हों और सख्या में दो से ज्यादा व भारी न हों, इसका ध्यान रख लेना चाहिए.

□ बहुत छोटे बच्चों को 'नैपकिन-रैश' से बचाने के लिए शिशु के लंगोट गीला होते ही उसे तुरत बदलें. उपरोक्त बताई विधि से साफ रखें, उनमे धोने के बाद साबुन न रहने दें. न ही बिना धोए पेशाब वाला नेपकिन सुखा कर दोबारा पहनाएं. लगोट का कपडा खुरदरा न हो, और वह तंग न हो बच्चे को हर बार नहलाने से पूर्व गुदा-जोड़ पर रुई के फाहे से साफ करें, फिर नहलाने के बाद पोंछकर वहा क्रीम मल दें, तब पाउडर लगाए. 'रैश' से बचाने के लिए इस जगह को सूखा व साफ रखना जरूरी है, जब बच्चे को बार-बार टट्टी व दस्त हों तो इस बात का ध्यान रखना और भी जरूरी है क्योंकि अक्सर बार-बार पोंछने से भी 'रैश' हो जाता है. यदि 'रैश' हो जाए तो भी उसे सूखा व साफ रखें व बेबी-क्रीम या कोई भी 'मैडीकेटेड क्रीम' लगाएं. इसके बढ जाने पर घाव हो जाने का डर रहता है. घाव या 'सोर' हो जाने

पर डाक्टर की सलाह लेना चाहिए.

त्वचा की मुख्य बीमारियां

बच्चों मे त्वचा की मुख्य बीमारियां हैं : फोड़े-फुंसी, खाज और किसी दवा आदि की प्रतिक्रिया स्वरूप होने वाली एलर्जी.

फोड़े-फुंसियां

छोटी-बड़ी फुंसियां व फोड़े निकलने का कारण भी अस्वच्छता ही होती है—गंदे पानी में नहाना, त्वचा के रोम-छिद्र गंदगी से बंद होना या जरा सी खरोंच आदि पर, फोड़े-फुंसी पर बैठी मक्खी का आकर बैठना आदि. गर्मी के दिनों मे चूंकि पसीने पर धूल जल्दी जमती है, ठीक सफाई न रखने पर फुंसियां निकल आती है, इसीलिए इस ऋतु में यह रोग ज्यादा होता है उस पर यदि बच्चा अपोषित है, कमजोर है तो किसी भी बीमारी की तरह त्वचा-रोग भी उस पर जल्दी असर करता है अत: फोड़े-फुंसियो से बचाने के लिए सामान्य स्वास्थ्य भी ठीक रखना होगा, स्वच्छता के सामान्य नियमों का पालन भी करना होगा

यदि ये छोटी-मोटी फुंसियां है और विरली ही हैं तो विशेष चिकित्सा की जरूरत नही. सफाई का ध्यान रखें. फुंसियो पर कोई भी अच्छी 'एंटीबायोटिक क्रीम' मल दें और बच्चे का पेट साफ रखें. वे जल्दी ठीक हो जाएगी. उन्हे खुजलाने या छीलने न दें क्रीम लगाते समय पहले फुंसी के आसपास वाली जगह पर हाथ लगाएं, फिर फुंसी पर जिससे कि ये फैलें नही. उन पर लगाया हाथ शरीर के दूसरे हिस्सो पर न लगाए, तुरंत हाथ साबुन से धो लें. बिना हाथ धोए भी फुंसियों पर क्रीम न लगाए. इस तरह थोडी सावधानी बरतने पर शीघ्र ही इनसे छुटकारा मिल जाएगा और वे अधिक नही फैलेंगी. लेकिन फुंसियां अधिक संख्या मे निकल आई है या वे बड़े फोड़ों में परिवर्तित हो गई है तो डाक्टर को दिखाकर बताई गई चिकित्सा लेनी चाहिए. फोड़े-फुंसिया निकली है तो बच्चे को 'मेडीकेटेड सोप' से या नीम की पत्तिया पानी मे उबाल कर उससे नहलाए. डाक्टर से पूछे बिना 'पेनसिलिन क्रीम' इस्तेमाल न करें, बोरिक एसिड या डेटाल आदि दवाए भी अपने आप इस्तेमाल न करें कई बार इन चीजों से भी बच्चे की कोमल त्वचा को हानि पहुंचती है अत: इस बारे में डाक्टरी राय से ही चलें.

एलर्जी

किसी दवा की प्रतिक्रिया से या अन्य किसी वस्तु के स्पर्श से 'एलर्जी' हो जाने पर भी शरीर पर लाल-लाल दाने व खुजली आदि की शिकायतें हो सकती हैं. ऐसी स्थिति में एग्जीमा भी हो सकता है. तब जिस दवा, वस्तु की प्रतिक्रिया हो उस दवा को तुरत बंद कर दें व उस वस्तु के स्पर्श से बच्चे को बचाएं और डाक्टर की सलाह लें. स्वयं अपने आप कोई चिकित्सा न करें.

खाज (स्केबीज)

इसका कारण भी अस्वच्छता ही है पर यह छूत का रोग है. किसी रोगी के सम्पर्क मे आने पर स्वच्छ रहने वाले बच्चे को भी लग सकता है. उंगलियों के जोड़ों में, बगलो में, टांगो के जोड़ व जननेन्द्रियों में इसका ज्यादा असर होता है और खुजली मचने से इससे बेहद परेशानी होती है; विशेष रूप से रात को तो इसका प्रकोप बढ़ने से बहुत बेचैनी बढ जाती है. अतः उपाय शीघ्र करना चाहिए. यदि मां को खुजली है तो नन्हे शिशु को भी लग सकती है. तब मां-शिशु का साथ ही इलाज करना चाहिए. यों भी छूत का रोग होने से घर में किसी एक को होने पर भी इसकी चिकित्सा परिवार के सभी सदस्यों को करनी चाहिए.

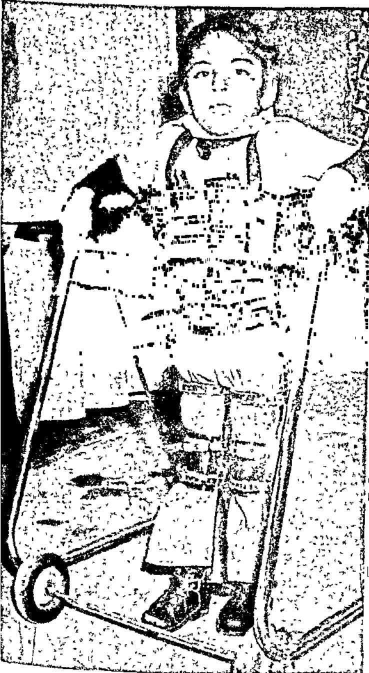
बचावी उपाय तो स्वच्छता के नियमों का पालन और रोगी की छूत से बचाव ही है. घर भर में किसी को भी हो जाने पर यह उपाय करें : 'बेंजाइल बेंजुएट 25 प्रतिशत' या कोई भी खाज-नाशक दवा सारे शरीर पर सुबह स्नान के बाद लगाएं. दूसरे दिन बिना नहाए कपड़े बदल लें, फिर वही दवा लगाए. तीसरे दिन फिर कपडे बदल कर दवा लगाए. फिर चौथे दिन नहाएं. नहाते समय सारे शरीर को तौलिए से खूब रगड़-रगड़ कर लाल करें, फिर नहा कर पोछते समय भी कि त्वचा-छिद्रों मे कोई कीटाणु रह गए हों तो वे भी निकल जाएं. साथ ही घर भर के कपड़े उबाल कर धोएं. इस प्रकार सारे परिवार की यह चिकित्सा करने पर खाज का यह रोग दूर हो जाएगा और एक से दूसरे को लगने का डर नही रहेगा. फिर भी यदि कुछ खुजली हो तो एक सप्ताह के बाद एक बार फिर यह चिकित्सा दुहरा दें. खुजली के दौरान बहुत बेचैनी हो तो डाक्टर की सलाह लेनी चाहिए.

36

बच्चों को पोलियो से बचाइये



[कलावती सरन बाल-चिकित्सालय के पोलियो विभाग की अध्यक्षा डा० कमला धमीजा से भेंट पर आधारित]



अपंगता के अभिशाप को लेकर जीना कितना कठिन है यह कहना आवश्यक नही. हाथ-पैर से लाचार व्यक्ति जीवन के संघर्ष मे जूझते हुए कितना कष्ट पाता है, उस पर भी वह कितना हसी व उपेक्षा का पात्र बनता है, समाज मे कट कर कितनी मानसिक यातना झेलता है, इस करुण गाथा से हम, आप सभी परिचित हैं. न हों तो उन माताओं की व्यथा देखिए-सुनिए, जिन्हें अपने लाड़ले को पोलियो-ग्रस्त देखकर अपने व उसके भविष्य के सारे सपने चकनाचूर लगते हैं और जिसे वे अपने पिछले जन्मो का पाप कह कर झेलती हैं.

पर आज वह समय नही कि इस तरह की विपत्तियो को दैवी अभिशाप कहकर संतोष कर लिया जाए. बच्चो को इस भयंकर बीमारी से बचाने और यदि कही ऐसी विपत्ति आ ही जाए तो सभव इलाज द्वारा उन्हे आत्म-निर्भर व जीने लायक बनाने के उपाय सोचने होंगे. और इसके लिए आवश्यक है इस बारे मे आवश्यक जानकारी प्राप्त करना. लीजिए, राजधानी के सुप्रसिद्ध बाल चिकित्सालय कलावती सरन अस्पताल की पोलियो विभाग की अध्यक्ष डा० कमला धमीजा आपकी सहायता के लिए यहा अपने सुझाव प्रस्तुत कर रही हैं :

विषाणुजन्य बीमारी

पोलियो या बाल-पक्षाघात एक तेज संक्रामक रोग है. इस रोग का कारण एक विषाणु (सूक्ष्म जीवाणु) है. जिसे 'पोलियो वायरस' कहते हैं. ये विषाणु नाक और मुंह द्वारा शरीर में प्रवेश कर आंतों में पहुंचते हैं और वहां रहकर पनपते हैं. फिर खून के साथ मिल कर केंद्रीय स्नायु-मडल में पहुंच रीढ की स्नायु-कोशिकाओं को हानि पहुंचाते है,

जिससे रोग उत्पन्न होता है. फिर यह रोग स्नायु-पक्षाघात के रूप में प्रगट होता है. यह रोग मुख्यत: तीन महीने से पांच वर्ष के आयु के बच्चों को ही अधिक होता है, अत: बच्चों की जीवन-रक्षा के लिए माताओं को इसकी जानकारी रखनी बहुत आवश्यक है 'पोलियो-वैक्सीन' के आविष्कार और अस्पतालों में इसके प्रयोग के बाद भी यह रोग अधिक संख्या मे क्यों फैल रहा है? मेरे इस प्रश्न पर डॉ० धमीजा का उत्तर था, "यह कहना कठिन है कि रोग बढ़ रहा है या कि लोगों में इसके बचाव की चेतना! दरअसल पहले लोग इस रोग से प्राप्त अपंगता को पिछले जन्मों का पाप या दैवी कोप समझ कर सतोष कर लेते थे और बच्चे को आत्म-निर्भर व्यक्ति बनाने के स्थान पर उससे सहानुभूति जता उसे उसके भाग्य पर छोड़ देते थे. अब कुछ तो शिक्षा से आई जागृति के कारण व कुछ स्वास्थ्य-शिक्षा के सार्वजनिक प्रचार के कारण लोगों मे यह चेतना आ गई है *कि रोग आया है तो उसका इलाज किया जाए और यदि* बच्चा पंगु हो गया है तो उसे इलाज द्वारा आत्मनिर्भर बनाने का प्रयत्न किया जाए. इसीलिए आज बडे अस्पतालों मे पोलियो-ग्रस्त बच्चों की इतनी भीड़ नजर आती है यद्यपि यह सच है कि अभी हमे इस बीमारी पर पूर्णतया काबू पाने मे तो क्या समय से पहले इसकी अच्छी तरह पहचान करने में पूरी सफलता नही मिली है. इस सम्बन्ध मे खोज जारी है. पर यह भी सच है कि रोकथाम के उपाय करके व कुछ सावधानिया बरत कर हम इसे फैलने-बढ़ने से रोकने मे सफल हो सकते हैं.

"आप दिल्ली की ही मिसाल लीजिए, पुरानी दिल्ली से व पिछडी गंदी बस्तियों से केस अधिक आते है, नई दिल्ली की आधुनिक स्वच्छ कालोनियों से कम. इसी से स्पष्ट है कि अस्वच्छता की स्थितियो पर नियंत्रण करके ही हम इस पर काफी हद तक नियन्त्रण पा सकते हैं. बीमारी की समय से पूर्व पहचान न हो पाने और इस सम्बंध मे सही आकड़े न उपलब्ध होने का मुख्य कारण भी यही है कि अस्पताल में बच्चा प्राय: तभी लाया जाता है जबकि बीमारी फालिज गिरने तक आ चुकी होती है या फालिज गिर चुका होता है. उसके बाद तो फिर एक ही उपाय रह जाता है, बिजली, मालिश, सेंक द्वारा, व्यायाम द्वारा और सहायक साधन देकर बच्चे को चलने-फिरने लायक और अपने आवश्यक काम करने लायक बनाया जाए. अस्पतालों मे अधिकतर यही कार्य हो रहा है. अत. जरूरी है कि बीमारी की रोकथाम संबंधी लक्षणों व उपायों पर भी ध्यान दिया जाए.



पोलियो ग्रस्त बच्चे का निरीक्षण

रोग के लक्षण

इस रोग की छूत लग जाने के बाद रोग के लक्षण प्रकट होने में औसतन 7-14 दिन लग जाते हैं. इसकी छूत अधिकतर रोगी के मल-मूत्र से स्वस्थ व्यक्ति के मुंह तक उड़कर पहुंचने वाले रोगाणु से लगती है. इस तरह छूत फैलाने का माध्यम मनुष्य ही होता है. रोग की आरंभिक अवस्था मे बच्चे को हलका या तेज बुखार आ सकता है. इसके साथ ही ही सिरदर्द, जुकाम, पेट में गड़बड़ी, सुस्ती, उल्टी गर्दन या पीठ मे अकड़न तथा उसके साथ शरीर पर खसरे जैसे दाने हो सकते हैं. रोग बढ़ने पर सख्त कब्ज, बेचैनी, साथ में कुछ अंगों की मासपेशियों मे कमजोरी, हिलाने-डुलाने मे कठिनाई या लकवे जैसी असमर्थता आ जाती है. यदि मस्तिष्क से आने वाली नाडिया प्रभावित हो जाए तो बच्चे को निगलने, सास लेने मे कठिनाई आ सकती है. मस्तिष्क व रीढ़ दोनों प्रभावित होने पर बचाव कठिन ही होता है. इसलिए आवश्यक है कि लकवा लगने से पूर्व ही कुछ लक्षणों से पहचान कर बच्चे को योग्य डाक्टर के पास या अस्पताल ले जाएं. क्योंकि ऐसे लक्षण अन्य बीमारियों में भी होते हैं, इसलिए स्वय पहचान कठिन होती है. अस्पताल मे जाच करके इस बात का पता लग जाएगा कि पोलियो का बुखार है या अन्य बीमारी का लक्षण है. यदि पोलियो-पूर्व बुखार है तो बच्चे के बचाव की संभावना काफी बढ जाती है किन्ही अंगों

मे मामूली असमर्थता, बच्चे को बैठने में कठिनाई या उसकी थकान, सुस्ती को देखकर तो उसे तुरत अस्पताल पहुचाए ताकि बीमारी को आगे बढ़ने से रोका जा सके.

वैसे तो यह रोग किसी भी मौसम में हो सकता है पर ग्रीष्म और वर्षा के बाद यह अधिक होता है. अतः गरमी, बरसात के बाद आसपास रोग फैला हो तो विशेष सावधानी बरतें और देखें कि बुखार, जुकाम, शरीर मे दर्द के साथ बच्चा सुस्त *या शिथिल तो नही ? और तब जरा भी संदेह* होने पर जांच अवश्य करा लेनी चाहिए. रोग अगली स्थिति में होने पर वैसे तो पोलियो का खास इलाज नही, फिर भी तेज संक्रमण से रोकथाम की सामान्य विधियों का पालन करते हुए रोग से प्रभावित अंगों की कार्य-चिकित्सा तुरत आरंभ कर देनी चाहिए.

इस रोग में सर्वाधिक *कठिनाई* यह है कि रोग की पहली तीन स्थितियां आसानी से पहचानी नही जाती और चौथी में आने पर वह असाध्य हो जाता है. फिर भी निम्न जानकारी तीसरी अवस्था में रोग की पहचान मे सहायक हो सकती है :

—पहली स्थिति में जब बच्चे पर वायरस का आक्रमण होता है तो उसके शरीर के रक्षक-तत्त्व उसे नष्ट कर देते हैं और बच्चा पोलियो से प्राकृतिक ढंग से प्रतिरक्षित हो जाता है. आसपास रोग फैलने पर भी जब अनेक बच्चे इससे बच जाते हैं तो इसका कारण यह प्राकृतिक प्रतिरक्षण ही होता है, इसीलिए तो यह कुपोषित बच्चों में अधिक होता है. स्वस्थ बच्चों मे जब होता है तो इसका कारण मुख्यतः ऐसे बच्चे का समय पर आराम न करना हो सकता है, क्योंकि थकान इसमें घातक सिद्ध होती है. इस तरह पहली स्थिति में हम रोग की पहचान संभव नहीं है.

—दूसरी स्थिति 'पोलियो-सीजन' की कही जा सकती है. जब आसपास रोग फैला हो तो भी हलके बुखार, सिर दर्द, पेट दर्द, *शरीर में दर्द से विशेष पहचान तो नहीं बनती* पर मौसम व आसपास के संक्रमण को देखते हुए रोगी बच्चे का परीक्षण करवा लेना ठीक रहता है ताकि रोग आ रहा हो तो समय पर उसका बचाव किया जा सके और जरा-सा संदेह होने पर भी बच्चे को तुरंत अस्पताल ले जाना चाहिए.

—तीसरी अवस्था को 'प्री-पैरालाइटिक' कहा जा सकता है. इससे गले, जांघ, पिंडली और पीठ की मांसपेशियां कठोर हो जाती हैं. छूने भर से बच्चा दर्द से चिल्लाने लगता है. ऐसी स्थिति में कुछ और भी पहचान स्पष्ट करने के लिए देखें, बच्चा बैठाने पर सीधा बैठ सकता है कि नही ? उसकी रीढ़ तनी हुई तो नही ? वह अपने घुटने होंठों से छू सकता है कि नही ?

इससे मिलती-जुलती स्थितियां कुछ अन्य रोगों—टांसिलाइटिस, गैस्ट्रो-इन्ट्राइटिस आदि में भी दिखाई देती हैं. पर बुखार, शरीर-दर्द आदि के पूर्व लक्षणों के साथ किसी भी अंग मे शिथिलता या सामान्य से अधिक थकान, निढालता दिखाई दे तो तुरत परीक्षण कराए ताकि रोग का



आघात के बाद केलिपर पहनकर चलने का प्राथमिक अभ्यास

निदान कर समय पर उसे चिकित्सा उपलब्ध कराई जा सके.

चौथी स्थिति में तो फिर फालिज गिर जाता है. इस स्थिति में यह रोग असाध्य है. फिर भी उसका प्रकोप कितना है, इलाज की अवधि व सुधार की सफलता इसी बात पर निर्भर करती है. समय पर इलाज से रोगी बच्चे को भयकर हानि से बचाने का प्रयत्न तो किया ही जा सकता है. इस अवस्था पर रोग की मुख्य स्थितियां है :

स्पाइनल : इसमें बच्चे के हाथ-पैर प्रभावित होते हैं. उसके लिए अपना हाथ उठा कर सिर के पीछे ले जाना या किसी चीज पर मजबूत पकड़ रखना संभव नहीं रहता. खड़ा होने पर उसका पैर झूल सकता है. ये स्थितियां अधिक खतरनाक नहीं हैं. समय पर उचित चिकित्सा से इन अंगों को ठीक किया जा सकता है. पर छाती की मांसपेशियां भी प्रभावित हो जाएं और बच्चे को सास लेने में कठिनाई हो तो स्थिति गंभीर होगी.

बल्बर : इसमें मस्तिष्क से निकलने वाली नाड़ियों पर दुष्प्रभाव पड़ता है तो रोगी बच्चे की स्थिति गंभीर व निराशाजनक हो जाती है. इस हालत में सांस लेने में कठिनाई आती है और बच्चा कुछ भी निगल नहीं पाता.

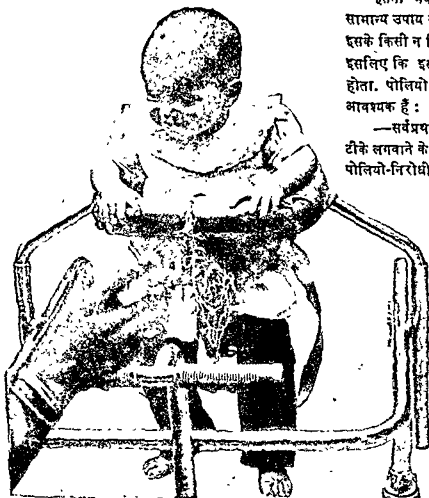
बल्बो-स्पाइनल : उपरोक्त दोनों स्थितियों के मिले-जुले लक्षणों में बचने की संभावना कम होती है, पर प्रयत्न से बच जाने पर बल्बर के लक्षण ठीक हो जाते हैं और केवल 'स्पाइनल' का असर शेष रह जाता है.

पोलियो-इनसिफलाइटिस : बीमारी के हलके आक्रमण के बाद की यह स्थिति है, जिसमे बच्चा कापता है, उसे दौरे पड़ते हैं, वह एकदम घबरा जाता है. तेज बुखार के साथ मांसपेशियों में तनाव का शिकार हो सकता है. इन लक्षणों के कारण इसकी पहचान अन्य ऐसे विषाणुजन्य 'इनसिफलिटिक' रोगों से अलग कर सकना कठिन ही होता है.

बचावी उपाय

इतनी भयंकर व हानिकारक बीमारी से बचाव के सामान्य उपाय करना ही ठीक होगा, क्योंकि प्रकोप होने पर इसके किसी न किसी दुष्प्रभाव से बचना कठिन ही होता है, इसलिए कि इस वायरस पर किसी दवा का असर नहीं होता. पोलियो से बचाव के लिए ये सावधानियां बरतनी आवश्यक हैं :

—सर्वप्रथम तो जन्मोपरांत शिशु को अन्य बचावी टीके लगवाने के साथ डाक्टरी निर्देशानुसार समय-समय पर पोलियो-निरोधी 'वैक्सीन' की खुराकें भी अवश्य दिलाई



छोटे विकलांग बच्चे को वाकर से चलाने का प्रयत्न

जाएं जिससे बच्चे में इसकी भीतरी प्रतिरोधक शक्ति का विकास हो सके.

—जब यह रोग कहीं महामारी बन गया हो तो उस इलाके के लोगों को सामूहिक रूप से पोलियो-निरोधी दवा दी जाए और उन दिनों सामान्य सुरक्षा व स्वच्छता के नियमों का पालन विशेष सावधानी से किया जाए.

—शिशु को पोलियो-वैक्सीन देने के एक घंटा पूर्व व एक घंटा बाद तक स्तनपान न कराएं. किसी भी व्यक्ति को वैक्सीन लेने के आध घंटे बाद तक गरम जल, चाय, गरम दूध काफी आदि का सेवन भी नहीं करना चाहिए.

—तीव्र संक्रामक रोगों, तेज बुखार, पेचिश, ल्यूकोमिया में तथा अन्य औषधियां लेते समय या कैंसर-निरोधी दवा का सेवन करते समय यह वैक्सीन नहीं देना चाहिए.

विशेष नोट : पोलियो-निरोधी वैक्सीन के बारे में एक बात ध्यान से नोट कर लें कि यह वैक्सीन किसी बच्चे को रोग हो जाने पर उसके निवारण के लिए कारगर नहीं है. उस समय डाक्टर की राय से दूसरे बच्चों को बचावी वैक्सीन दी जा सकती है, उस रोगी बच्चे को नहीं. वैसे यह वैक्सीन तीन माह की आयु से लेकर बड़ी उमर तक के सभी व्यक्ति ले सकते हैं. सरदी के दिनों यह वैक्सीन लेना अधिक लाभदायक होगा क्योंकि गरमी में अतिसार या पेचिश के कारण इसके असर में गड़बड़ी हो सकती है. पोलियो-वैक्सीन को बहुत निम्न तापक्रम पर रेफ्रिजरेटर में रखना होता है और यह सुविधा अधिकतर बड़े अस्पतालों में ही होती है. इसलिए पोलियो-वैक्सीन वहीं से लेनी चाहिए. पोलियो की रोकथाम के लिए कुछ अन्य सामान्य उपाय हैं :

—खाने-पीने की वस्तुओं को धूल से, मक्खियों से बचा कर रखें. कच्चे खाए जाने वाले फल साफ पानी में अच्छी तरह धो लें. पहले से काट कर रखे गए फलों व दूषित खाद्य-पदार्थों का सेवन न करें.

—बच्चों को ऐसे पानी में न खेलने दें, जिसमें कूड़ा-करकट या गंदे नाले का पानी मिला हो.

—पीने के लिए नल का सुरक्षित पानी प्रयोग में लाएं या हैंडपंप, कुएं-तालाब का पानी उबाल कर पिएं. दूध को भी उबाल कर ही पीना चाहिए.

—स्वच्छ व सुरक्षित शौचालय का प्रयोग करें. बच्चों को खुले में न बैठाएं या बैठाएं तो मल को जल्दी मिट्टी से ढक दें. घरों में व गली में शौच कराते समय मल की तुरत सफाई पर ध्यान देना चाहिए.

—आसपास पोलियो होने पर बच्चों को पोलियो रोगी बच्चों से और भीड़भाड़ से दूर रखें. इलाके में पोलियो फैला है तो अपने बच्चों को अधिक सरदी से और थकान-परेशानी से बचाएं.



आक्यूपेशनल थेरापी : टांगों का व्यायाम साइकिल द्वारा.

. —गरमी और बरसात के बाद जब पोलियो अधिक होता है, बच्चे को बुखार, दर्द आदि के मामूली लक्षणो में भी बिस्तर पर लिटा कर पूरा आराम दें. अन्यथा थकान से रोग बढ़ सकता है. रोगी बच्चे को भीड़भाड़ से अलग एकान्त मे रखें और उसके बर्तन, कपडे, तौलिए, नेपकिन आदि किसी और को इस्तेमाल न करने दें. घर के पड़ोस के शेप बच्चों को तुरत बचावी वैक्सीन दिलवा दें और दूसरे बच्चो को रोगी बच्चे के साथ कम से कम दो सप्ताह तक न मिलने दें.

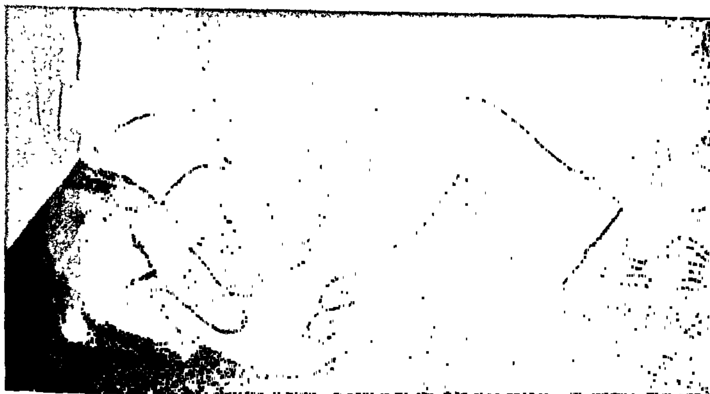
—पोलियो का जरा भी सदेह होने पर तुरंत डाक्टरी सहायता लें और जाच के बाद आवश्यकता होने पर बच्चे को अस्पताल मे भरती कराए.

—रोगी बच्चे का मल-मूत्र, थूक आदि सुरक्षित ढंग से गहरे दबाकर या जलाकर नष्ट करना भी जरूरी है कि आस-पास रोग न फैले.

—रोग की सदिग्ध स्थिति मे बच्चे को आराम से रखते हुए यह भी आवश्यक है कि उसे इस समय न तो किसी किस्म का टीका दिया जाए, न ही उसका टांसिल्स का आपरेशन कराया जाए. रोग की तृतीय स्थिति में पहचान होने पर तो पूर्ण आराम देना व बच्चे को किसी भी प्रकार की मानसिक उत्तेजना से बचाना बहुत जरूरी है. जब तक मासपेशियों की कठोरता कम न हो जाए, दर्द और कठोरता को कम करने के लिए गरम पानी का सेंक देते रहने से लाभ होगा. यदि भयकर कब्ज हो तो एनीमा देकर पेट साफ किया जाना चाहिए. खाने मे संतुलित आहार देना चाहिए और यदि खाने में कठिनाई हो तो तरल रूप मे ग्लूकोज दिया जाना चाहिए. रोगी का बिस्तर एकदम सीधा व सपाट हो. पैरों को झूलने मे बचाने के लिए सीधा रख कर खपच्चियां बाधी जा सकती हैं. गीला, गरम सेंक दिन मे तीन-चार बार, दस मिनट तक देने के बाद हर बार बच्चे के हाथ-पैर के जोड़ों को हल्के हाथ से हिला कर सीधी स्थिति में लाने का प्रयत्न करें. इस तरह अंगों की हानि कम से कम होगी और बाद के इलाज से वे जल्दी ठीक होंगे.



बिजली द्वारा इलाज



पैरों की मालिश व व्यायाम(फिजियो थेरापी)

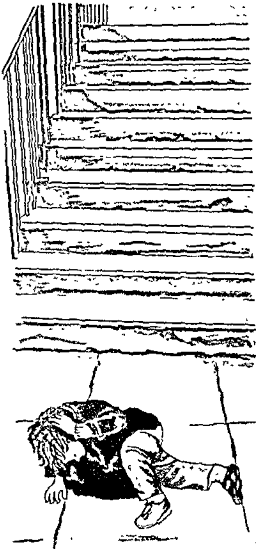
फालिज के बाद चिकित्सा

यदि दुर्भाग्य से बच्चा इस रोग का शिकार हो गया है तो भी उसे भाग्य के भरोसे न छोड़ बाद में डाक्टरी निर्देशन में रखें. रोग की स्थिति अनुसार बिजली के सेंक, मालिश, यांत्रिक व अन्य चिकित्सा व्यायाम द्वारा तथा विशेष जूते आदि देकर उसे यथासंभव आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है. शुरू में जल्दी-जल्दी व फिर तीन-छः महीने, साल में एक बार ले जाकर डाक्टर को दिखाते रहना चाहिए व डाक्टरी निर्देशन में घर पर इलाज चलाते रहना चाहिए क्योंकि केस के अनुसार इसके इलाज की अवधि कुछ लंबी भी हो सकती है.

अगों मे सुधार लाने के लिए यदि डाक्टर किसी आपरेशन की सलाह दे तो बच्चे के हित में उसे कराने से हिचकिचाना ठीक नही होगा. आजकल 'फिजियोथेरापी' और 'आक्यूपेशनल थेरापी' द्वारा बच्चे को चिकित्सीय व्यायाम देकर उसे अपना काम चलाने लायक बनाना दुःसाध्य नही रहा. ऐसे बच्चो का जीवन सुरक्षित बनाने के लिए उन्हें सहानुभूति देने से अधिक आत्मनिर्भर बनाने की आवश्यकता होती है. जिसके लिए डाक्टर, भौतिक चिकित्सक अभिभावक और स्वयं बालक को मिल कर एक टीम के रूप में काम करना होता है. अतः मा-बाप को धैर्य से काम लेकर इस ओर ध्यान देना चाहिए.

37

दुर्घटनाएं

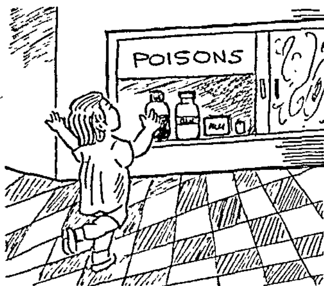


बच्चों की बीमारियों और उनसे बचाव के उपायों के बारे में आप पीछे पढ़ चुके हैं. बीमारियों के कारण और लक्षणों की पहचान होने से उनसे पूर्व बचाव किया जा सकता है. लेकिन बिना कोई पूर्व सूचना दिए अचानक आपके बच्चे को अपनी चपेट में ले लेने वाली ये आकस्मिक दुर्घटनाए कई बार बीमारियों से भी अधिक कष्टदायक सिद्ध होती हैं. (यद्यपि ऐसा बहुत कम होता है और अधिकतर दुर्घटनाएं मामूली ही होती हैं) और बच्चे अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति,चंचल स्वभाव व अनभिज्ञता, के कारण जल्दी ही इनकी चपेट में आ जाते हैं. ऐसी दुर्घटनाए प्रायः घर में और असावधानीवश ही होती हैं. अतः जरूरत इस बात की है कि घर को यथासंभव सुरक्षित रखा जाय और थोड़े बड़े बच्चों को सुरक्षा के लिए प्रशिक्षित किया जाय. दुर्घटना हो जाने पर तो फिर प्राथमिक चिकित्सा व डाक्टरी सहायता का काम ही रह जाता है.

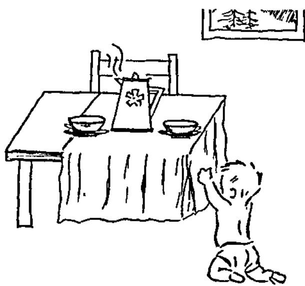
यहां इन तीनों स्थितियों पर विचार किया जा रहा है. 1 दुर्घटनाओं की रोकथाम के उपाय 2. छोटी-मोटी दुर्घटना होने पर प्राथमिक चिकित्सा देना और 3. गंभीर स्थिति में डाक्टरी सहायता प्राप्त करना.

दुर्घटनाओं की रोकथाम

बच्चे घर में रखी कैंची, चाकू, ब्लेड जैसी तेज चीजों, बिजली के यंत्रों आदि से किसी भी समय दुर्घटनाग्रस्त हो सकते हैं. आंगन में खेलते हुए सड़क पर चलते हुए गिरकर दुर्घटना के शिकार हो सकते है. जहरीली दवाएं तेज मसाले भी उनकी पहुंच मे होने पर उन्हे हानि पहुचा सकते हैं. मां का ध्यान चूकने पर वे आग, पानी की चपेट में आ सकते हैं. शिशुओं को इनसे बचाने व बड़े बच्चों को इनसे बचाव के लिए प्रशिक्षित करने के लिए माताओं को निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए :



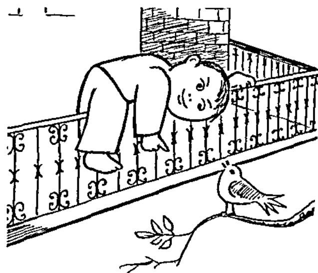
जहरीली तथा अन्य दवाइयां बच्चे की पहुच से दूर रखें



मेजपोश की बजाय टेबल मैट्स का प्रयोग करें



बच्चे के पास जलती सिगरेट छोड़कर
दुर्घटना को निमंत्रण न दें



छत की रेलिंग यथासंभव ऊंची रखें.

कीटनाशक दवाओं से बचाव

घरो में नालियां आदि साफ करने के लिए फिनायल के डिब्बे, स्पिरिट, डिटाल,पेड,पौधों पर छिड़की जाने वाली दवाए तथा अन्य विषैले रसायन रखने की जगह उनके नियत स्थल पर ऊंची बन्द अलमारी मे बनाएं, ताकि ये दवाएं बच्चों की पहुंच से दूर रहें. सावधानी के लिए अलमारी में ताला भी लगा दें. इसके अलावा ये चीजें बच्चो की पहुच से दूर रखें : कपडो मे डालने वाली फिनायल की गोलियां, मिट्टी के तेल, चूहे मारने की दवा, स्याही, डिटरजेंट पाउडर, रग-रोगन फरनीचर की पालिश आदि. आपकी ड्रसिंग टेबल पर रखे, हेयरस्प्रे, नेलपालिश हेयर रिमूवर आदि भी उन्हे नुकसान पहुचा सकते हैं. अतः इन्हें बच्चों से बचाकर ही रखें.



गैस सिलिंडर के पास जलता हीटर, ऊपर से बच्चे को अकेला छोड़ देना बहुत खतरनाक साबित हो सकता है

अन्य दवाएं : हर घर में खाने व लगाने के काम आने वाली दवाएं होती ही हैं. बच्चे क्या माताएं भी इनके इस्तेमाल में गलती कर सकती हैं. इसलिए इन्हें खुले रैक में, मेज पर या अन्य जगह खुला नहीं रखना चाहिए. दवा की जगह हमेशा बन्द या ऊंची अलमारी में बच्चे की पहुंच से दूर बनाएं. लगाने व खाने वाली दवाएं, अलग-अलग खानों में लेबल लगाकर रखें, ताकि समय पर दवा देने में गलती न हो.

इस सम्बन्ध में इन बातों का विशेष रूप से ध्यान रखें :

☐ बची हुई दवा को नष्ट कर दें. ऐसी जगह पर न फेंकें, जहां से बच्चे उसे उठा लें.

☐ सभी विषैली दवाओं को उनके अपने डिब्बे या शीशी में ही रखें. यदि किसी कारणवश उसे दूसरे डिब्बे या शीशी में रखना भी पड़े तो उस पर लेबल लगाना न भूलें.

☐ दवा या अन्य विषैले रसायन ऐसी जगह के आसपास न रखें, जहां खाने की वस्तुएं रखी जाती हैं.

☐ बच्चों को यदि कोई मीठी दवा, टेबलेट आदि दे रहे हैं तो उन्हें इस भ्रम में न रखें कि यह कोई मीठी गोली, टाफी या शरबत आदि है (जैसा अक्सर माताएं) करती हैं. अन्यथा आपकी अनुपस्थिति में वे उनका उपयोग कर सकते हैं.

☐ अंधेरे में दवा न खुद लें, न बच्चे को दें.

आग और बिजली से बचाव

छोटे बच्चे माचिस के साथ खेलना पसंद करते हैं. मां की देखादेखी या स्वयं भी माचिस जलाकर देखना चाहते हैं. दूर से आग की लौ भी उन्हें आकर्षित करती है, तो वे उसे छूकर देखना-समझना चाहते हैं. साथ ही रसोई में काम करती हुई मां के पीछे-पीछे घूमना शिशु की आम प्रवृत्ति होती है. खाने-पीने की गरम-ठंडी चीज की समझ भी उन्हें तभी आता है, जब वे उन्हें स्पर्श करके पहचानते हैं.

इसी प्रकार बिजली का हीटर, इमलशन राड, गैस आदि उपकरणों को चलाने का तरीका जानने की उत्सुकता में वे मां की अनुपस्थिति में स्वयं इन्हें छेड़कर, चलाकर देखना चाहते हैं. इन्हीं सब प्रयत्नों में गरम पानी या दूध से जल या झुलस जाते हैं. माचिस, पटाखे या गैस से जल दुर्घटना का शिकार हो जाते हैं. चूंकि ये सारी चीजें दैनिक प्रयोग की होती हैं और अपने स्थान से हटाकर ऊंचाई पर नहीं रखी जा सकतीं, इसलिए ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि बच्चा इनके संपर्क में ही न आने पाए.

इसके लिए—

☐ जलती मोमबत्ती, सिगरेट, माचिस, स्टोव, लैंप आदि बच्चों की पहुंच से दूर रखें.

☐ छोटे शिशु को रसोईघर में अकेला छोड़कर बाहर न जाएं.

☐ त्योहार आदि के अवसर पर बच्चों को उनकी

आयु के हिसाब से ही पटाखे दें. खतरनाक पटाखे छोटे बच्चों को न दें. फुलझड़ी आदि अन्य छोटे पटाखे भी पास बैठकर ही चलवाएं.

☐ कम से कम घर में बच्चों को सिंथेटिक या नायलोन के कपड़े न पहनाएं. ऐसे वस्त्र आग जल्दी पकडते हैं.

☐ छोटे बच्चे को गोद में लेकर गरम चाय, काफी आदि न पिएं.

☐ मेज पर चाय आदि रखी है तो इस बात का ध्यान रखें कि बच्चा मेजपोश खींचकर चाय अपने ऊपर न गिरा ले.

ब्लेड, चाकू व कैंची से सुरक्षा

बच्चे उपयोग मे आने वाली हर चीज को व्यवहार मे लाकर उसकी कार्य-प्रणाली समझना चाहते हैं. कैंची, ब्लेड आदि से कागज, कपड़े आदि काटने का शौक भी उन्हें होता है. और इसी में वे अक्सर अपनी हथेली, उंगली काट बैठते हैं. इससे बचाव के लिए घर मे चाकू, कैंची, ब्लेड तेज पिन, शीशे के टुकड़े लापरवाही से इधर-उधर नही फेंकने चाहिए. उन्हें कागज आदि काटने के लिए बिना तेज धार की कैंची दें. फल आदि काटते समय भी अधिक तेज चाकू उन्हें न दें. पास बैठकर चाकू पकड़ने व फल काटने का सही ढंग सिखाएं.

गिर पड़ने पर

बैठना और चलना सीखने के साथ-साथ बच्चे गिरने का अनुभव भी प्राप्त करते हैं. पलग, कुरसी आदि से गिर पड़ना या बैठे-बैठे लुढ़क जाना, उनके लिए आम बात है. चूंकि उनकी हड्डियां नरम व लचकीली होती हैं, अतः अधिक हानि का डर नही रहता.

फिर भी सावधानी के लिए, उसका छोटा पलंग मा के पलग के साथ सटाकर रखें. शिशु को अकेला सुलाते समय रेलिंग वाले पलंग का प्रयोग करें या उस पर निगरानी रखें कि वह जागने पर गिर न जाए. उसे लिटाते, बिठाते समय भी अपनी दृष्टि की परिधि में ही रखना चाहिए. आठ-नौ महीने से एक डेढ़ वर्ष की आयु के बच्चे को यदि अकेला छोड़ना पड़े तो उसे उसके खिलौनों के साथ रेलिंग वाले पलंग मे छोड़ सकते है. लेकिन इससे बड़ी आयु के बच्चे शायद इसमें बैठना पसंद न करें. जब बच्चा चलने-फिरने लायक हो जाए तो इस बात की तसल्ली करें कि सीढ़ियों की ओर जाने वाले रास्ते पर दरवाजा लगा दिया गया है. यह सभव न हो तो उस पर किसी और तरीके से रोक लगा दें, ताकि बच्चा



इतने छोटे बच्चे के हाथ में पटाखे देना खतरे को आमंत्रित करना और नहीं तो क्या है

सीढ़िया न चढ़ पाए, क्योकि सीढ़ियो से लुढ़कना कई बार घातक सिद्ध हो सकता है. बच्चे कुर्सी-मेज पर चढ़कर ऊचाई पर रखी चीज को उतारने से स्वय को नही रोक पाते. उन्हे डाट कर मना करने की बजाय यह देखें कि जिस मेज या कुर्सी पर चढ़ रहे है वह टूटी-फूटी या लढ़कने वाली तो नही है.

बड़े बच्चे पेड़ दीवार आदि पर चढने और छत पर चढ कर पतग उड़ाने के शौकीन होते है. गिरने-पडने या चोट लगने के भय से उसके खेल-कूद पर रोक लगाना उचित नही. उनमें इतना सामर्थ्य और साहस होता है कि ये काम वे कुशलता पूर्वक कर सकते है. कभी गिरने या मामूली चोट आने पर थोडी सहानुभूति दिखा कर चोट की चिकित्सा कर दें. लेकिन भूलकर भी उसके दिल मे यह डर न बिठाए कि गिरना या पेड पर चढना बहुत भयावह चीज है. इसमें या तो वह बहुत दब्बू या डरपोक बन जाएगा या फिर आपको चिढ़ाने के लिए बार-बार ऐसी हरकतें करने लगेगा. यदि

बच्चा छत पर पतंग उड़ाने का शौकीन है तो छत की रेलिंग या मुंडेर ऊंची रखिए. गिरना, पड़ना या थोडी बहुत चोट खाना बच्चे की बढ़त प्रक्रिया का ही एक अंग है. इसमे घबरा कर उसकी चंचल प्रवृत्ति या खेलकूद पर रोक लगाना उसकी सहज शारीरिक व मानसिक बढ़त में बाधा डाल सकता है.

सड़क दुर्घटनाएं

थोडे बड़े बच्चे ही इन की चपेट मे आते हैं. अत: सडक पर सुरक्षा के लिए छोटी उम्र से ही बच्चे को ट्रैफिक के नियमों का पालन करना सिखाएं. जहां तक हो सके छोटे बच्चे को अकेला बाहर न भेजें. यदि आपके मकान से कोई रास्ता बाहर गली या सड़क पर जाता है तो गेट बद करके रखे.

यदि बच्चा अकेला पैदल स्कूल जाता है तो इस बात की तसल्ली कर लें कि रास्ता पूरी तरह सुरक्षित है, उस पर न अधिक ट्रैफिक है, न ही एकदम सुनसान. थोड़े दिनों तक स्वय उसके साथ जाएं और सड़क पार करना और सडक के नियमो से भिज्ञ कराएं.



हाथ काटने के डर से चाकू न छीनिए, बल्कि उसे फल काटने का तरीका सिखलाएं.



इसे नन्हें शैतान को डांटने के बजाए सही ढंग से सीढ़ियां चढ़ना सिखाएं

कुछ अन्य सावधानियां

प्रमुख सावधानियों के अतिरिक्त कुछ अन्य सावधानिया भी अपेक्षित हैं. कई बार छोटे बच्चे मुंह, नाक और कान में पैसे, मटर के दाने, कागज की गोलियां, बटन, पिन माचिस की तीली ठूस लेते है. जिससे गम्भीर स्थिति पैदा हो जाती है. अत: ये चीजें बच्चों को खेलने के लिए न दें और उनकी पहुच के बाहर रखें. बच्चे को पोलिथीन की थैली से न खेलने दें. कई बार खेल खेल में वे उसमें सिर फसा लेते हैं जिससे उनकी सास घुटने का डर रहता है. ●



38

प्राथमिक चिकित्सा

[डा. अनिल कुमार बत्रा के सुझावों पर आधारित]

लेकिन लाख सावधानी बरतने पर भी बच्चे घरों में उठा-पटक करते हुए तथा बाहर खेलते हुए छोटी-मोटी चोटें लगा ही लेते है. इसलिए बच्चों वाले हर घर मे एक डब्बे या छोटे बक्से मे प्राथमिक चिकित्सा का जरूरी सामान रखना चाहिए और हर मां को प्राथमिक चिकित्सा की छोटी-मोटी जानकारी अवश्य होनी चाहिए. आजकल बहुत सी संस्थाएं गृहिणियों के लिए प्राथमिक चिकित्सा के अल्प-अवधि प्रशिक्षण की व्यवस्था करती हैं. आपातकाल स्थितियो में तो यह प्रशिक्षण व्यवस्था बड़े पैमाने पर सुलभ होती है. फिर भी बुनियादी जानकारी के लिए डा. अनिल कुमार बत्रा से भेंट पर आधारित कुछ सुझाव यहा प्रस्तुत किए जा रहे है :

फर्स्ट एड बाक्स : प्राथमिक चिकित्सा के लिए आप 'फर्स्ट एड-बाक्स' में हमेशा अपने घर मे निम्न सामान तैयार रखिए :

□ थोड़ी साफ रुई (सीनेटरी काटन) और थोड़ी साफ गाज.

□ चिपकाने वाले टेप (बैंड एड).

□ कुछ लबी व तिकोनी पट्टिया.

□ फाड़ी बनाने के लिए कुछ सीकें.

□ थोडी ब्राडी.

□ अरडी का तेल.

□ ग्लीसरीन व वैसलीन.

□ बोरिक एसिड, बोरिक आइंटमेंट, डिटाल या सेवलान, पोटेशियम परमैंगनेट, टिंक्चर आयोडीन, बरनोल आदि लगाने की दवाए और पुलटिस के लिए अलसी.

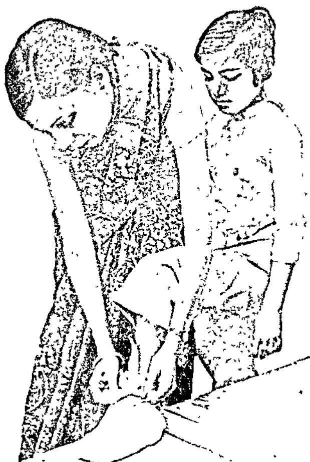
□ एक छोटी कैंची, एक चाकू व कुछ सेफ्टीपिन.

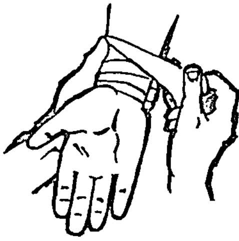
□ पानी व दवा पिलाने के लिए छोटा गिलास एक चम्मच.

यह आवश्यक है कि खाने वाली दवाएं व लगाने वाली दवाएं अलग-अलग रखी जाए और हर शीशी, डिबिया या पुड़िया के ऊपर दवा का नाम लिखा जाए ताकि दवा देने मे भूल न हो.

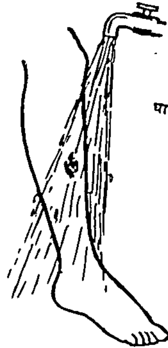
छोटी चोटें

पहले खरोंच वाले स्थान को डिटाल या सेवलान से साफ करें. फिर क्यूरोमिन, सैफामाइसिन या बरनौल लगा दें. गहरी खरोंच पर यही दवा गाज के टुकड़े पर रख कर लगाए, फिर ऊपर रुई रख कर पट्टी बाध दें. पट्टी, रुई व गाज साफ व कीटाणु रहित की गई होनी चाहिए. और पट्टी करते समय पट्टी को साफ प्लेट मे रखें, जमीन पर नही. पट्टी करने से पहले अपने हाथ भी अच्छी तरह धो लें





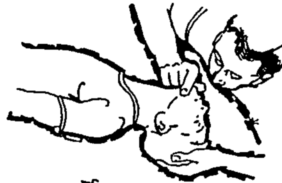
घाव पर दवा लगाकर पट्टी बांध दें



घाव को खुले पानी से धोएं



नाक, गले मे अटकी वस्तु निकालने के लिए पीठ पर इस प्रकार मारें



कृत्रिम श्वसन प्रक्रिया ...



... बच्चे के मुंह मे इस प्रकार फूंक मारें

यदि जख्म कुछ गहरा है, या जमीन पर गिरने से धूल-मिट्टी के संपर्क में आया है, तो उपरोक्त विधि से प्राथमिक चिकित्सा देने के बाद बच्चे को डाक्टर के पास ले जाएं जख्म को टांके लगाने, उसे भरने तथा उसे मिट्टी के स्पर्श, से लगने वाले संभावित संक्रमण से बचाने के लिए बच्चे को टिटेनस का इंजेक्शन देने की जरूरत हो सकती है.

बच्चा जब करवट लेना या खाट पर सरकना सीख जाता है तो नीचे गिर पड़ने की दुर्घटनाएं प्रायः होती ही रहती हैं. चूंकि बच्चे की हड्डियां नरम व लचकीली होती हैं, अतः विशेष चिंता की बात नहीं. किंतु यदि चोट लगने के बाद उल्टी आए, भूख बंद हो जाए, रंग पीला पड़ जाए सिर में दर्द हो जाय, या गिरने के तुरंत बाद बच्चा बेहोश हो जाए तो डाक्टरी परामर्श अवश्य लें.

जलने पर

गरम पानी, चाय आदि से मामूली जलने पर उस स्थान पर बरनोल लगा कर पट्टी कर दें. यदि जलने पर उस स्थान की ऊपरी त्वचा हट गई हो तो बच्चे को टिटेनस का इंजेक्शन लगवाना चाहिए. और गंभीर रूप से जलने पर तुरंत अस्पताल ले जाना चाहिए. इस बात का ध्यान रखें कि बच्चा फफोलों को खुजाने या फोड़ने न पाए. यदि बच्चे का फफोला फूट जाए, लाली या सूजन हो तो डाक्टरी सहायता अवश्य लें.

कुत्ते-बिल्ली के काटने पर

यदि बच्चे को कुत्ता काट ले तो इस बात की तसल्ली कर लें कि कुत्ता पागल तो नहीं था. यदि पागल कुत्ता इस दौरान मर जाए, तब बच्चे को 14 इंजेक्शन का पूरा कोर्स दिलाना पड़ेगा. यदि कुत्ते की पहचान न हो पाए तो भी सावधानी के लिए सात इंजेक्शन देने चाहिए. यदि कुत्ता आस-पास के घरों का है और आपको यह मालूम है कि कुत्ता वैक्सीनेटिड है तो सामान्य जख्म की तरह ही उसकी प्राथमिक चिकित्सा की जानी चाहिए. यदि कुत्ते की पहचान संभव न हो पाए तो तुरंत डाक्टरी चिकित्सा लें. वैसे भी यदि काटने का घाव सिर, गरदन, हाथ या पैर पर है तो भी रैबीज के लिए तुरंत इलाज किया जाना चाहिए.(रैबीज कुत्ते या जानवरों की लार में स्थित कीटाणुओं के कारण होती है.)क्योंकि यदि पागल कुत्ते के काटने के तुरंत बाद इलाज न शुरू किया जाए, तो 'हाइड्रोफोबिया' नाम की बीमारी हो जाती है जो रोगी की जान लेकर ही छोड़ती है. फिर भी डाक्टर के आने तक प्राथमिक उपचार के तौर पर :

- अधिक से अधिक रक्तस्राव होने दें. यदि घाव उंगली पर है तो उसे जोर से दबा दें ताकि खून निकल आए.
- घाव को खूब खुले पानी में धोए.
- कीटाणुरहित की गई पट्टी घाव पर रखें, लेकिन पट्टी न बांधें और न ही एंटीसेप्टिक क्रीम लगाएं.

कीड़ों द्वारा काटने पर

मधुमक्खी, ततैया या कोई अन्य अनपहचाना कीड़ा काट ले तो उस जगह पर दबाव डाल कर छोटी चिमटी से डंक निकाल दें. मधुमक्खी के काटे स्थान पर खाने वाला सोडा मल दें, क्योंकि मधुमक्खी का जहर एसिड युक्त होता है. ततैया के काटे स्थान पर सिरका या नीबू का रस लगाए. ततैया का जहर क्षार युक्त होता है. उस स्थान पर खुजली हो तो एन्कीमा क्रीम लगाई जा सकती है. दर्द से राहत देने के लिए बर्फ की पट्टी भी रखी जा सकती है. लेकिन यदि सूजन हो तो उस स्थान को सेकना नहीं चाहिए. यदि बच्चा बेहोश हो जाए या उल्टी करे या सांस में कठिनाई हो अथवा बहुत तेज खुजली हो, या डंक किसी हानिकारक जगह पर है, अथवा डंक काफी मात्रा में हैं तो स्वयं इलाज न कर डाक्टरी चिकित्सा लें.

जहरीली वस्तु पी लेने पर

पिछले अध्याय में जहरीली वस्तुओं से शिशुओं के बचाव पर विस्तार से लिखा जा चुका है. फिर भी यदि असावधानीवश बच्चा कोई जहरीली चीज खा ले या पी ले तो बिना विलंब किए डाक्टर से संपर्क करना चाहिए. यदि समय पर डाक्टरी सहायता उपलब्ध नहीं है तो प्राथमिक चिकित्सा के तौर पर बच्चे को उल्टी कराना ही सर्वोत्तम उपाय है. यदि संभव हो तो जो वस्तु बच्चे ने खाई है वह और उल्टी का अंश डाक्टर को दिखाने के लिए रख लें. किंतु कुछ वस्तुएं ऐसी हैं जिनके खा-पी लेने से उल्टी कराना हानिकारक होता है. ये हैं : मिट्टी का तेल, फरनीचर पालिश, पैट्रोल, कारबोलिक एसिड, डिटरजेंट पाउडर, बेंजीन, चूना, तेजाब आदि. इन वस्तुओं के फेफड़े में चले जाने से अधिक हानि का डर रहता है और उल्टी कराते समय सांस द्वारा इनके फेफड़े में चले जाने की संभावना रहती है, एसिड सोडा क्षार युक्त होने की वजह से गले में जलन उत्पन्न करता है, अतः इन स्थितियों में उल्टी न करवाए.

लेकिन नीद की गोलियां, बोरिक एसिड, सिगरेट का टुकडा, बूटपालिश, आयोडीन, फिनायल की गोलिया आदि खाने पर बच्चे को उल्टी करवा दें. उल्टी कराने के लिए बच्चे को चारपाई पर पेट के बल इस प्रकार लिटा दें कि उसका सिर चारपाई से बाहर लटका रहे. अब उसके मुह मे उगली डालकर उबकाई लेने दें और उल्टी करा दें. यदि उसे खाना खाए थोडी देर हो चुकी है, तो एक गिलास पानी या दूध पिलाने से उल्टी जल्दी हो जाएगी.

यदि फिर भी उल्टी न हो तो गिलास भर पानी मे एक चम्मच नमक और थोड़ा सरसो का तेल या फिर थोड़ा साबुन मिला दें. साबुन के बुल्बुले से उल्टी जल्दी हो जाती है. कोई जहरीली वस्तु लेने के बाद यदि कोई लक्षण प्रगट न हो तो भी लापरवाही नही बरतनी चाहिए. क्योंकि कई जहर (विशेषकर एस्पिरिन आदि) का असर कुछ देर बाद होता है. अतः जहरीली वस्तु लेने के बाद कम से कम बारह घटे तक निरीक्षण अवश्य किया जाना चाहिए.

भीतरी रक्तस्राव

कई बार गिरने पर ऊपर से कोई चोट दिखाई नही देती, पर उपरी चोट न होने या हल्की होने पर भी भीतरी चोट से शरीर के भीतर रक्तस्राव हो सकता है. ऐसे मे बच्चे को बेचैनी होगी, उसके हाथ पैर ठडे होगे, थोड़ी देर बाद चेहरे पर नीलापन या पीलापन आ सकता है. सामने चोट का कोई निशान या दर्द भी संभव है. ऐसे मे तुरन्त डाक्टरी सहायता लेनी चाहिए.

चोट के बाद बेहोशी, तेज सिर दर्द, उल्टी, नाक-मुह से खून और विस्मृति या असामान्य व्यवहार के लक्षण प्रकट हों तो यह दिमागी चोट हो सकती है. ऐसी हालत में बच्चे को तुरत अस्पताल पहुंचाना चाहिए.

गले, नाक-मुंह में कुछ फंस जाने पर

बच्चे खेल-खेल में सिक्के, बटन, सेफ्टीपिन आदि खा जाते है. ऐसी चीजें अक्सर मल के साथ बाहर आ जाती हैं. अत विशेष चिन्ता की बात नही. लेकिन तेज चुभने वाली पिने खा लेने पर तुरन्त डाक्टर के पास ले जाए. पेट मे तेज दर्द या उल्टी की शिकायत हो तो भी डाक्टर से अवश्य परामर्श करें. कभी सास लेते हुए या खासी आ जाने पर कोई चीज उसकी श्वास नली में फस जाए, तो बच्चे को उल्टा लिटाकर उसकी पीठ पर हाथ मारें, ताकि गले मे फंसी वस्तु तुरत बाहर आ जाए. लेकिन यदि बच्चे का रग पीला पडने लगे या गला अवरुद्ध रहे तो बिना विलब किए डाक्टर से परामर्श करें.

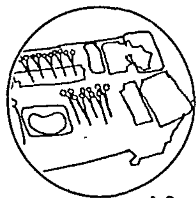
लू लगना

लू भरी गर्मी के दिनों पूरे कपड़े न पहनाने पर कई बार उसे लू लग जाती है. इससे 105°-106° तक तेज बुखार चढ़ जाता है. त्वचा शुष्क हो जाती है. आखों की पुतलियां फैल जाती हैं. बच्चा बेचैन और चिड़चिड़ा हो जाता है. ऐसे मे तुरंत उपचार मिलना चाहिए. बच्चे को गीले कपड़े से ढक दें. सिर और माथे पर बरफ या ठडे पानी की पट्टी रखें या पंखा चला दें, ताकि उसका बुखार जल्दी उतरे. बच्चा होश मे है तो उसे नमक मिला पानी खूब पिलाएं. यदि बच्चा बेहोश हो गया है तो उसे तुरंत पास के अस्पताल या डाक्टर के पास ले जायें वहा यह पानी नस द्वारा देने की व्यवस्था की जा सकेगी.

सांस रुकना

पानी में डूबने, गला घुटने या बिजली का झटका लग जाने से बच्चे की सांस रुक जाती है. इस स्थिति में तुरंत कृत्रिम श्वास दिया जाना चाहिए. इसके लिए बच्चे की गरदन ऊची करके सिर हिलाना चाहिए ताकि श्वास की नली खुली रहे. इसके बाद बच्चे के मुंह मे छोटी-छोटी फूंको द्वारा सास दें. इस प्रकार तब तक फूंक मारते रहे जब तक बच्चे की श्वास क्रिया चालू न हो जाए. यह क्रिया एक मिनट मे लगभग 18-20 बार करनी चाहिए.





39

बच्चों में शल्य चिकित्सा

[वरिष्ठ बाल शल्य-चिकित्सक डा० तृप्ता दत्ता से भेंट पर आधारित]

बच्चे और आपरेशन ! फूल से कोमल बच्चों के आपरेशन को लेकर माताओं के मन में एक अजीब डर, बल्कि दहशत-सी बैठी होती है लेकिन जब आपरेशन ही उन्हे रोग मुक्त करने, किसी विकृति मे बचाकर स्वस्थ जीवन प्रदान करने और बहुत बार मौत के मुंह मे खींच लाने में सहायक सिद्ध होता है तो उसे भयकारक हौवा नहीं, जीवनदाता वरदान कहना चाहिए.

इस लेख का उद्देश्य भी जन्मजात कमियों, विकृतियों व आपरेशन योग्य कुछ मुख्य बीमारियों का उल्लेख कर माताओं को भयभीत करना नही, बल्कि उन्हे छोटे बच्चो के संभावित आपरेशनों की मोटी जानकारी देकर समय पर चिन्ता-परेशानी से बचाना और इस प्रकार भयमुक्त करना है. इस विषय में पहली बात तो यही समझने की है कि नीचे जिन जन्मजात व अन्य स्थितियों का वर्णन किया जा रहा है, वह विरले मामलो में ही सामने आती हैं, आम नहीं. इसलिए इनसे डरने की आवश्यकता नही, जरूरत आ पड़े तो इस जानकारी का उपयोग करने अथवा जरूरतमद माता-पिता तक पहुंचाने की आवश्यकता है, ताकि बच्चे का जीवन बचाया जा सके.

लीजिए, राजधानी के सफदरजंग अस्पताल के बाल-सर्जरी विभाग की अध्यक्ष और वरिष्ठ बाल शल्य-चिकित्सक (सर्जन) डा. तृप्ता दत्ता से भेंट पर आधारित जानकारी यहा प्रस्तुत है :

दो प्रकार की पैदाइशी कमियां

जिन पैदाइशी कमियों मे आपरेशन की जरूरत पडती है, उन्हें मुख्यत: दो भागों मे विभाजित किया जा सकता है. एक वे, जिनमे जन्म के कुछ मिनटों से लेकर कुछ घंटों के भीतर ही आपरेशन करके बच्चे का जीवन बचाना होता है. दूसरे वे, जिनमे सुधार के लिए कुछ समय तक प्रतीक्षा की जा सकती है. पहले प्रकार की संभावित कमियो और विकृतियों से बचाव का सर्वोत्तम उपाय है कि जहा तक सभव हो, प्रसव किसी साधन संपन्न अस्पताल मे कराया जाए या कुशल, प्रशिक्षित डाक्टर, नर्स से, ताकि ऐसी किसी स्थिति के उत्पन्न होने पर बच्चे को तुरत संभाला जा सके या कम से कम उसे जल्दी से जल्दी बड़े अस्पताल में ले जाने का निर्देश दिया जा सके. दूसरे, घर पर या गांव, कस्बे मे प्रसव के समय यदि कोई ऐसा मामला सामने आए तो माता-पिता को चाहिए कि वे शीघ्र से शीघ्र बच्चे को समीप के किसी बडे अस्पताल मे पहुचाने का प्रबध करें, क्योंकि घर पर या कस्बों के छोटे अस्पतालों मे इनका इलाज सभव नही है.

प्रथम प्रकार की जन्मजात कमियां

प्रथम प्रकार की ये कमिया हैं :

□ आतो का कुछ भाग न बना होना.

□ खाने की नली का निर्माण न होना या अधूरा होना.

□ छाती और पेट के मध्य मे स्थित एक झिल्ली का अभाव, जिससे आमाशय, आत, जिगर, तिल्ली आदि हिस्से ऊपर छाती तक चले जाते हैं.

□ उदर की दीवार ही ठीक नही होती, जिससे आतें बाहर आ जाती है.

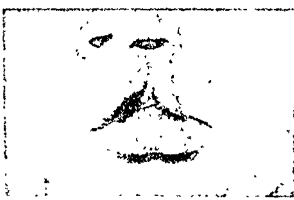
□ गुदा-मार्ग का बद होना या न बना होना.

□ रीढ की हड्डी पर एक फोड़ा होना, जिससे टांगें नही चलती.

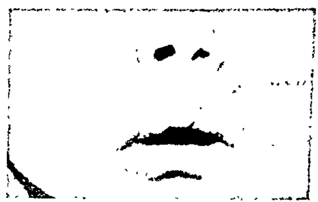
इनमें से टट्टी का मार्ग बंद है या रीढ पर फोडा है तो ये लक्षण तुरत दिखाई दे जाते है. शेष स्थितियो के लिए पहचान इन लक्षणो से करें.

—जन्म के बाद जब गला साफ कर लिया जाए, फिर भी शिशु ठीक से सास न ले सके.

—वह ठीक से खुराक न ले पाए. खुराक देते समय उसके मुंह से झाग निकले और उसकी सास रुकने लगे.



कटा होंठ···



···प्लास्टिक सर्जरी के बाद

—उसे टट्टी न हो और बार-बार उल्टी हो.

ऐसे लक्षण दिखाई देते ही शिशु को तुरत बड़े अस्पताल में पहुंचाने का प्रयत्न करें. अस्पताल दूर है तो सावधानी के लिए शिशु को तब तक खुराक (फीड) देना बंद कर दें और जितना जल्दी संभव हो, उसे अस्पताल ले जाए ताकि आपरेशन करके उन हिस्सों को सुधार कर बच्चे का जीवन बचाया जा सके. ऐसे समय घबराने की नहीं, जल्दी व्यवस्था करने की ही जरूरत है.

दूसरे प्रकार की जन्मजात कमियां

दूसरे प्रकार की जन्मजात कमियां कई प्रकार की हो सकती हैं. जैसे पैर टेढ़ा होना, तालू का न बना होना या अधूरा निर्माण. प्रायः 'ग्रहण' के नाम से पुकारी जाने वाली विभिन्न प्रकार की रसौलियां, लड़के (शिशु) के पेशाब के रास्ते में नुक्स, जीभ के नीचे तंदुआ, आख का भेंगापन, हाथ में कोई खराबी, दिल में छेद, बोलने, सुनने में कमी, जन्मजात नजर की कमजोरी आदि. इनमें से कुछ की पहचान तो जल्दी हो जाती है, कुछ की आयु बढ़ने के साथ देर से. पर ये कमियां, विकृतियां या बीमारियां ऐसी नहीं कि पैदाइश के तुरंत बाद अस्पताल भागना पड़े. इनमें जो लक्षण तुरत दिखाई दें, जैसे पैर का टेढ़ा होना, तुरत डाक्टर को दिखा दें. एक सप्ताह के भीतर टेढ़े पैर का इलाज शुरू कर देने से एवं प्लास्टर बांधने से ही बहुत बार पैर सीधा हो जाता है और आपरेशन नहीं करना पडता, जबकि देर तक पैर को इसी हालत में रहने दिया जाए तो फिर आपरेशन आवश्यक हो जाता है.

शेष मामलों में भी जब उस कमी का पता चले, डाक्टर से परामर्श अवश्य कर लें. मामले की किस्म के अनुसार डाक्टर ही यह बताएगे कि आपरेशन कब करना चाहिए. जैसे तालू न बना हो या होंठ कटा हो तो मरम्मत का यह काम तीन-चार साल के भीतर ठीक रहेगा. कई बार ऐसे मरम्मत के काम में एक से अधिक आपरेशन भी करने पड़ते हैं. इसलिए अस्पताल का अपना एक सेंटर चुन कर वहां डाक्टर को जितनी जल्दी हो सके, ऐसा केस दिखा कर सलाह ले लें. फिर समय-समय पर वहां दिखाते रहकर आवश्यक निर्देश लिए जा सकते हैं और जब डाक्टर की राय हो, आपरेशन करवाया जा सकता है. अतः कौन-सा आपरेशन किस आयु में या किस आयु-अवधि तक होना चाहिए, इसके लिए डाक्टरी सलाह पर ही निर्भर रहना ठीक होगा. ऐसे मामलों में डाक्टर की व अपनी सुविधानुसार समय के थोड़े हेर-फेर की गुंजाइश रहती है. कटे होंठ, कटे कान जैसे मामलों में प्लास्टिक सर्जरी की जरूरत होगी तो वह भी अपने डाक्टर की सलाह से कराने का प्रबंध किया जा सकता है.

जीभ के नीचे का तंदुआ : बहुत छोटे बच्चों में यह जो अक्सर दिखाई देता है, उसके लिए आपरेशन जरूरी नहीं होता. अक्सर जब बच्चे खाने-पीने लगते हैं तो यह तार अपने आप ही टूट जाता है और जबान में कोई रुकावट नहीं आती. यह वहम भी निराधार है कि तंदुए वाले बच्चे बोलते नहीं. यदि बच्चा नहीं बोलता या देर तक नहीं बोलता और उसकी बढ़त भी सामान्य नहीं होती तो हो सकता है, उसे सुनाई भी न देता हो, क्योंकि अक्सर ये दोनों बातें साथ होती हैं. तंदुए के साथ बच्चे को तालू से उच्चारण वाले कुछ शब्द ही बोलने में कठिनाई आ सकती है, पूरी बोली में नहीं. इसकी पहचान करने के लिए बच्चे को अपनी जुबान नुकीले रूप में बाहर लाने को कहें. यदि इसमें कठिनाई हो तो डाक्टर को दिखा दें और एक साल की आयु के आसपास तंदुआ कटवा दें. बच्चा सुन सकता है कि नहीं, छोटी आयु

में इसकी पहचान करने के लिए बच्चे के पास ताली बजाकर या हाथ से थपकी देकर देखिए कि वह यह आवाज सुनता है कि नहीं. यहां यह भी ध्यान रखना होगा कि बच्चे ने अपनी प्रतिक्रिया थपकी पर बिस्तर हिलने से या ताली पर आपके हाथ का एक्शन देखकरतो नही प्रगट की? यदि ऐसा है तो विशेषज्ञ को दिखा दें व उसकी सलाह से चलें.

आंख में नुक्स : यदि छह महीने की आयु के बाद भी बच्चे की आंख मे कुछ भेंगापन या नजर का टेढापन दिखाई दे तो डाक्टर को दिखाएं. कई बार तो मामूली नुक्स आख का व्यायाम कराने और विशेष चश्मा लगवाने से ही ठीक हो जाता है और आपरेशन की जरूरत ही नही पड़ती, अन्यथा आख का भेंगापन आजकल आपरेशन से सुधारा जा सकता है. पर यह व्यायाम कब शुरू कराना है, चश्मा कब लगवाना है, आपरेशन कब करवा लेना चाहिए, इस सबंध मे नेत्र-विशेषज्ञ की राय से ही चलना होगा.

(पैदाइशी या बाद की नजर की कमजोरी के लिए आंखो की सुरक्षा वाले अध्याय मे नेत्र-विशेषज्ञ की राय पढ़ें.)

हाथ में कोई खराबी : हाथ मे खराबी किमी विरले केस मे ही होती है. अधिकतर पैर टेढ़ा होने की शिकायत ही सामने आती है, जिसका उपाय पूर्व बताया गया है. हाथ में पाई जाने वाली खराबी ठीक करने के लिए हाथ की सुंदरता पर ध्यान बाद में दिया जाना चाहिए, हाथ को यथासभव काम लायक बनाने पर पहले. इस संबंध में भी डाक्टर से परामर्श करें.

दिल मे छेद : दिल मे छेद का जब भी पता चले, हृदय-विशेषज्ञ को दिखा दें. केस की किस्म के अनुसार ही उसका इलाज होगा. आपरेशन की जरूरत होगी कि नही, होगी तो किस उम्र में, यह विशेषज्ञ ही बताएगा.

खतना : कुछ शिशु-लड़कों में लिंग की नोक पर चमडी की एक परत से पेशाब में कठिनाई हो सकती है तो मामूली से आपरेशन द्वारा उस चमड़ी को काट दिया जाता है. इस सवध मे भी अपने डाक्टर से राय लें.

प्रमुख रोग

गुर्दे और आत की कुछ बीमारियो में, हर्निया मे, पथरी में, पेट की रसौली मे, कभी-कभी बढ़ी हुई तिल्ली मे भी आपरेशन करने की जरूरत पड़ती है. अतः पेटमे गोला हो, पेट अतिरिक्त रूप से बढ़ा हुआ हो (तिल्ली



पैदायशी भेंगापन भी आपरेशन द्वारा ठीक हो सकता है

बढना ही पेट बढ़ने का कारण नही होता, और भी कारण हो सकते हैं) पेट मे दर्द उठता हो तो डाक्टर को दिखाए. पेट मे अचानक दर्द उठे तो वह दर्द 'एपेंडेसाइटिस' का हो सकता है, उस स्थिति में बच्चे को तुरत किसी बड़े अस्पताल या अच्छे नर्सिंग होम में ले जाएं, जल्दी ही आपरेशन करना पड़ सकता है. इसी तरह गुरदो के काम मे रुकावट होने पर एक गुरदा भी कभी-कभी निकालना पड़ सकता है. बच्चे की जान बचाने के लिए ऐसे आपरेशनों से घबराना नही चाहिए, न ही ऐसे मामलों मे लापरवाही करके रोग को बढाना चाहिए. बच्चे को ऐसे किसी भी रोग में डाक्टरी परीक्षण व निर्देशन मे रखें और जब डाक्टर जरूरी समझे व राय दे तो आपरेशन कराने मे अनावश्यक विलब न करें. बढ़े हुए 'टासिल्स'

मे भी बच्चा बार-बार बीमार पडता है और उसकी बढ़त रुकती है. अतः जब डाक्टर कहे, आपरेशन करवा कर टांसिल्स निकलवा देने चाहिए.

टेढ़े-मेढ़े दांत भी आजकल छोटे आपरेशनों द्वारा दंत शल्य-चिकित्सक सुधार देते हैं. पर कभी भी यह आपरेशन दूध के दातो मे नही कराना चाहिए. दूसरे दात आ जाने पर जिस आयु मे डाक्टर कहे, तभी कराना ठीक होगा.

दुर्घटना, चोट आदि

सर्वप्रथम तो छोटे बच्चो को (बाहर खेलने, पढ़ने जाने वाले बच्चों को भी) दुर्घटनाओं से बचाने का हर संभव प्रयत्न किया जाना चाहिए कि वे गंभीर चोटों से बच सकें. शिशुओं की सभाल स्वय करें और बडे बच्चो को दुघर्टनाओ, चोटो से बचने के लिए आवश्यक निर्देश व प्रशिक्षण दें. फिर भी खेल मे, पतगबाजी मे, आपसी लड़ाई में कभी-कभी बच्चे गभीर चोट खा जाते हैं या वाहनों आदि की चपेट मे आकर आकस्मिक रूप मे दुर्घटनाओं के शिकार हो सकते हैं. मामूली खरोचो, हल्की चोटो आदि की प्राथमिक चिकित्सा तो घर पर की जा सकती है, यदि उसके लिए ठीक जानकारी प्राप्त कर ली गई हो. पर गभीर चोटों में बच्चे को तुरंत डाक्टर के पास ही पहुचाने का प्रयत्न करना चाहिए. हड्डी की टूट, चोट के बाद बेहोशी आदि हालतों मे तो बच्चे को तुरंत किसी बडे अस्पताल मे ले जाने की व्यवस्था करें. ऐसे मामलों मे तुरंत एक्सरे व आपरेशन की जरूरत पड़ सकती है.

बच्चा बेहोश हो जाए, उसे दौरे पड़ने लगें, उसके नाक, मुंह, कान से खून आए या उल्टी मे खून निकले तो दिमाग मे चोट हो सकती है. ऐसे समय बच्चे को कुछ भी खाने-पीने के लिए नही देना चाहिए और जल्दी से जल्दी अस्पताल पहुचाना चाहिए. उसका बिना आपरेशन भी इलाज संभव है और जरूरत पडने पर आपरेशन भी करना पड़ सकता है.

हड्डी की चोट में या अन्य कोई चोट लगने पर जख्म से खून अधिक बह रहा हो तो बेहतर होगा, पहले बहते खून को रोकने और हड्डी को अस्थायी रूप से पट्टी व खपच्चियों द्वारा सहारा देने का प्रयत्न किया जाए. इसके लिए बच्चे को अस्पताल ले जाने से पूर्व समीप के किसी डाक्टर या प्राथमिक चिकित्सक की तुरत सहायता ली जानी चाहिए. इसके बाद उसे धीरज देकर आराम से अस्पताल ले जाना चाहिए.

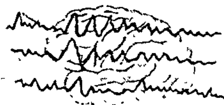
बाद की सावधानी

आपरेशन छोटा है या बड़ा, रोग की स्थिति अनुसार ही आपरेशन के बाद बच्चे की सार-संभाल मे भी डाक्टरी निर्देशो का ठीक से पालन करना जरूरी है, अन्यथा कई प्रकार की जटिलताए पैदा हो सकती हैं. बच्चे के आराम, दवा, खुराक, बाद में अंग-विशेष के व्यायाम आदि सभी बातों मे डाक्टरी सलाह से चलना आपके व बच्चे के हित मे होगा. केस की सफलता भी बहुत कुछ इसी बात पर निर्भर करती है कि बच्चा व बच्चे के अभिभावक डाक्टर को कितना सहयोग देते हैं. बच्चा इतनी समझ रखने लायक हो जाए कि अपने इलाज मे अपने डाक्टर को सहयोग दे सके, इसीलिए तो इमरजेंसी मामलो के आपरेशनों को छोडकर शेष सभी आपरेशन बच्चे की आयु-विशेष की सही अवधि में ही किए जाते है. ●



खण्ड 4
मानसिक स्वास्थ्य





40

मानसिक बाधता और मानसिक समस्याएं

[कलावती सरन बाल-चिकित्सालय की बाल-मनोवैज्ञानिक श्रीमती वीना रानी निगम से भेंट पर आधारित]

बुद्धि-मंदता, व्यवहार-विकृति, मानसिक विकास में पिछड़ेपन के मुख्य लक्षण हैं. बच्चों की मानसिक बाधता (रिटार्डेशन) और मानसिक समस्याओं के अंतर्गत तनाव, हीन-भाव, भय व असुरक्षा की भावना और अति सुरक्षा के उत्पन्न व्यवहार संबंधी समस्याएं प्रमुख है. यद्यपि यह विषय इतना विस्तृत है कि इसे एक लेख की सीमा में समेट पाना कठिन है, पर एक बड़े बाल-अस्पताल में बच्चों की इन समस्याओं से जूझने वाली वरिष्ठ मनोवैज्ञानिक के अनुभव व सुझाव माताओं के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकते है, इस दृष्टि से यहां संक्षेप में इस विषय की विशेषज्ञ श्रीमती वीना रानी निगम के से भेंट का विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है :

"बच्चा मानसिक दृष्टि से कुछ पिछड़ा हुआ या विकृत है, इसका पता कितनी आयु से लग जाता है और अस्पताल में चिकित्सा या परामर्श के लिए किस आयु-अवधि से बच्चे आने लगते है ?" मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्रीमती निगम बताती है, "हमारे पास छोटे बच्चे अधिकतर अस्पताल के बहिरंग विभाग से भेजे जाते है और लगभग छ: महीने की आयु के बाद ही इन्हें लाया जाता है. हां, कई बार किसी बच्चे को गोद लेने का प्रश्न हो तो तीन-चार महीने के शिशु भी परीक्षण के लिए आ जाते हैं. छ: महीने से एक वर्ष के बीच ही ठीक से पता चल पाता है कि बच्चा मानसिक विकार-ग्रस्त या मानसिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है. वैसे जन्म के समय कठिन व लंबे चलने वाले प्रसव के कारण कई बार आक्सीजन की कमी से शिशु मानसिक रूप से विकृत हो जाता है. वंशानुगत व अन्य कारणों से जिनमें यौन-रोग व अपोषण भी शामिल है, गर्भकाल में भी शिशु मानसिक रूप से विकृत हो सकता है. पर कुछ मामलों में स्पष्ट लक्षणों वाले शिशुओं को छोड़ कर उनकी मानसिक बाधता का पता



छः महीने के बाद ही लग पाता है. अतः इन समस्याओं को छः महीने से एक वर्ष की आयु-अवधि, एक वर्ष से तीन वर्ष की आयु में तथा तीन से छः वर्ष की आयु-अवधि में विभाजित करके समझें तो अच्छा होगा."

आयु-अवधि छः महीने से एक वर्ष

बच्चे की दृष्टि केन्द्रित करने की क्षमता, गर्दन ठहराना, उंगली की पकड़, बैठने, खड़े होने, दांत निकालने, बोली के प्रारंभिक स्वर निकालने, बुलाने-बातचीत करने पर उसकी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की शैली आदि विकास-गतियों में पिछड़ने से बुद्धि-मंदता का अनुमान तो होने लगता है, पर इस बारे में दो बातों का ध्यान रखना चाहिए : एक यह कि विकास-गति में थोड़ा हेरफेर सामान्य बात है, यह पिछड़ापन सामान्य से अधिक हो तो जांच करानी चाहिए. दूसरी यह कि शारीरिक अपोषण के कारण या किसी रोग के कारण शारीरिक कमजोरी से भी विकास की गति धीमी हो सकती है, उसे मानसिक रोग या बुद्धि-मंदता नहीं मान लेना चाहिए. बच्चे का जम कर इलाज कराएं, उसे पूरी खुराक दें, फिर उसके सामान्य स्वास्थ्य की स्थिति में आने पर भी यदि वह मानसिक रूप से असामान्य रहता है तो मनोरोग विशेषज्ञ को दिखाना चाहिए. तब भी बुद्धि-मंदता और मानसिक बाधता में भेद करना होगा. मंद-बुद्धि के साथ बच्चे का क्रियात्मक विकास पिछड़ेगा, मानसिक बाधता के साथ वह व्यवहार की विकृतियों के भी संकेत देगा.

• अलग से पहचान न हो तो विशेषज्ञ की सलाह लें. पर बच्चा मिट्टी खाने का अधिक शौकीन हो, दूध पीने से इंकार करे, अंगूठा या चूसनी हरदम चूसना चाहे और वह छुडाने पर रो-चिल्ला कर अपना विद्रोह प्रकट करे, उसके दूध पीने का ढंग सामान्य न हो, वह देर तक न बैठे, रोने पर प्रायः सांस रोक ले, टट्टी-पेशाब सही जगह, सही ढंग से करना देर तक न सीख पाए, बहुत क्रोधी या जिद्दी हो, हर समय रोता रहे या गोद में ही रहने की जिद करे, वह बिलकुल न बोले या भाषा सीखने की उम्र में न होने पर भी वह बोली के प्रारंभिक स्वर असामान्य ध्वनियों में निकाले, उसकी दृष्टि में अंतर मालूम पड़े, उसकी पकड़ व प्रतिक्रिया आयु-अवधि से अधिक पिछड़ी हो, व बेमतलब हंसता या रोता रहे तो इन असामान्य लगने वाले लक्षणों की जांच करानी चाहिए.

कारण : वंशगत के अलावा इसका कारण गर्भकाल में या शैशव में पर्याप्त पोषण की कमी भी हो सकता है, जन्म के समय के आघात का असर भी और रोगजनित भी. किसी औषधि के हानिकारक प्रभाव से, तेज बुखार के बाद, किसी संक्रमण (इंफेक्शन) से कई बार बच्चे के दिमाग पर असर हो सकता है जिससे बोली भी विकृत हो सकती है या बीमारी के कारण सोचने की क्षमता व अन्य गतियों के विकास में देर हो सकती है. कारण के अनुसार ही इलाज की संभावनाएं भी होती हैं. इसलिए जितनी जल्दी विशेषज्ञ की राय ले सकें, उतना अच्छा. जैसे ही संदेह हो, डाक्टर से परामर्श करना चाहिए.

पर यह जरूरी नहीं कि बच्चे में व्यवहार-विकृतियां उपरोक्त कारणों से ही आएं, जन्मजात व रोगजनित मामलों को छोड़ अधिकतर मामलों में ये विकृतियां अभिभावकों, विशेष रूप से मां के व्यवहार व गलत पालन-पोषण के ढंग से ही पैदा होती हैं. जैसे :

—संतोष व सुरक्षा का अभाव अनुभव करते हुए ही शिशु प्रायः अंगूठा या चूसनी चूसने का सहारा खोजते हैं. दूसरे बच्चे की उम्मीदवारी में, अपनी व्यस्तता में, कामकाजी स्थिति की विवशता में, अपने निजी तनाव में प्रायः माताएं बच्चे की उपेक्षा कर जाती हैं और जाने-अनजाने में हुई उनकी इस गलती से बच्चा भावात्मक असुरक्षा का शिकार हो जाता है. बच्चे को समय देना, उस पर ध्यान देना, उसकी जरूरतें पूरी करना और उसे मां के प्यार का आश्वासन देना ही इस समस्या का हल है.

—बच्चे के साथ खाने-पीने, नहलाने के बारे में जबरदस्ती करना, उसे अनावश्यक रूप से डांटना-मारना, घर के हर सदस्य द्वारा उसे बार-बार टोकना, उसकी मांग न मान उसे हर समय जबरदस्ती चुप कराने का प्रयत्न करना आदि कारणों से बच्चा मनोरोगी हो सकता है. वह या तो सहम कर गुमसुम रहने लगेगा या रो-चिल्ला कर, तोड़-फोड़ कर अपना विरोध प्रगट करेगा.

—रोते-रोते सांस रोक लेने वाले शिशु भी अक्सर मनोरोगी होते हैं. या तो मां शिशु को अपना पूरा प्यार व समय नहीं दे पाती है और बच्चा सुरक्षा अनुभव नहीं कर पाता या फिर उसे अत्यधिक लाड़-प्यार मिलता है और उसकी हर मांग की पूर्ति कर दी जाती है. संयुक्त परिवार में यद्यपि बच्चा अकेला नहीं रहता और उसे सबका प्यार मिलता है पर ऐसे परिवार में बच्चा प्रायः मां के पास अधिक नहीं रहता. मां उसे समय नहीं दे पाती और दूसरे लोग अधिक लाड में उसे बिगाड देते हैं.

—ऐसे बच्चे अपनी हर मांग मनवाने के आदी हो जाते हैं और न मानी जाने पर हाथ-पैर पटक कर रोने लगते हैं. मां के छोडने पर, खिलौना न देने पर, किसी बात

से मना करने पर, नहलाने पर वे रोने लगते है और खाना खाने में सौ-सौ नखरे करने लगते हैं. संयुक्त परिवार न हो तो भी आजकल छोटे परिवारों मे जब एक-दो बच्चे होते हैं तो उन पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है. बच्चे को लेकर अति-चिन्तित रहने वाली आधुनिक माताएं उनके लिए हर सुविधा जुटाने, उनकी हर मांग पूरी करने के लिए जब हर समय सचेष्ट रहने लगती हैं तो उनकी बच्चे पर ही केंद्रित रहने वाली यह दृष्टि बच्चे में उग्र रूप से अहम जगा जाती है और उसे जिद्दी बना देती है.

—कई बार मां कई कारणों से जब शिशु पर पूरा ध्यान नहीं दे पाती तो मां की गोद से, प्यार से वंचित बच्चा भी रोट्टू और जिद्दी हो जाता है क्योंकि उसे मां का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का यही एकमात्र उपाय लगता है. इस तरह के शिशु की अनावश्यक जिद पर, रोने पर नियंत्रण न किया जाए तो आगे चल कर वह व्यावहारिक समस्या पैदा कर सकता है. अहवादी, स्वार्थी व जिद्दी बन सकता है. तीन वर्ष की आयु तक हानि नही, पर समय पर शिशु का व्यवहार नियमित न किया गया तो आगे चल कर मां-बाप को उसे संभालना मुश्किल हो जाएगा और स्वयं बच्चे का तो बहुत ही अहित होगा.

—इसलिए ऐसे बच्चे को सुधारने का उपाय है, उसके रोने पर, उसकी जिदो पर कम ध्यान दें. उसकी हर जिद हर माग पूरी न करें. उसके आराम का, उसकी सुरक्षा का ध्यान तो रखे पर उसे अतिरिक्त सुरक्षा, अतिरिक्त सुविधा न दें. उसे समय दें, पर हर समय गोद में न उठाए, हर समय उसी पर ध्यान केंद्रित न रखें, उसे कुछ आत्मनिर्भर भी बनने दें. अनुचित माग पर किसी समय रोने भी दें, कुछ संघर्ष का सामना भी करने दे. इस तरह अपना व्यवहार बदल कर आप उसका व्यवहार सुधार सकेंगी.

—टट्टी-पेशाब की सही आदत सही समय पर डालना अच्छी बात है. पर इस मामले में अधिक ढील देना जितना बुरा है, अधिक सख्ती से भी उसी तरह बच्चे को मानसिक हानि हो सकती है. सुरक्षा के अभाव में तथा इस मामले में सख्ती या अतिरिक्त ढील से शिशु मानसिक रूप से समस्या-ग्रस्त हो सकता है और देर तक बिस्तर भिगोता रह सकता है. कभी-कभी तो केवल इसी कारण से बच्चे 'न्यूरोटिक' होते देखे गए है.

आयु-अवधि एक से तीन वर्ष तक

इस आयु में उपरोक्त सभी समस्याओं के अलावा कुछ अन्य मानसिक समस्याएं भी सामने आती हैं जिनमें से मुख्य हैं :



मानसिक रूप से बाधित बच्चा

तुतलाना . बच्चे की तुतलाहट के कई कारण होते हैं. जैसे— उसकी जीभ के नीचे तंदुआ होना, बच्चे का ठीक से न सुन पाना, मां-बाप द्वारा बच्चे के साथ देर तक लाड़ मे उसकी ही तोतली भाषा मे बोलना, उसे अत्यधिक सुरक्षा देकर बिगाड़ना अथवा उपेक्षा या पक्षपात से उसके भीतर हीन-भावना पैदा करना आदि.

तदुआ के बारे में एक बात याद रखें, बच्चा देर से बोलता है तो इसका कारण तदुआ नही होता. तंदुवे से बच्चे की बोली नही रुकती, परंतु तालू से जीभ लगाकर बोले जाने वाले शब्द वह तदुवे के कारण ठीक से नही बोल पाएगा, इसलिए तोतला बोलने लगेगा या बीच मे से वे शब्द वह छोड़ ही जाएगा. इसलिए तुतलाना यदि प्रारंभ से ही है और वह कुछ देर तक चलता है तो तदुआ की जाच करा लेनी चाहिए व इसे कटवाने के बारे में डाक्टरी सलाह पर चलना चाहिए. बच्चा ठीक से सुनता न हो तो वह अनुकरण द्वारा शब्दों को ठीक से सीख नही पाता, इसलिए कान-विशेषज्ञ से इसकी जाच करा लें व तदनुसार इसका उपाय करें पर अक्सर ये दोनों कारण ही नही होते और बच्चा देर तक तुतला कर बोलता रहता है. यह मानसिक कारण से ही होता है. माता-पिता बहुत बार लाड़ में आकर बच्चे के साथ उसकी ही तोतली भाषा मे बोलते रहते हैं

और बच्चा अपनी बोली सुधार नही पाता. माता-पिता को इस ओर ध्यान देना चाहिए.

बच्चे को अतिरिक्त सुरक्षा व सुविधा देकर उस पर ही दृष्टि केंद्रित किए रहे, उसकी हर उचित-अनुचित बात को बढ़ावा मिलता रहे तो यह अधिक सुरक्षा भी बच्चे को बिगाड़ देती है और वह अपनी गलती सुधारने की ओर ध्यान नही देता. चूंकि गलती का परिणाम सोचने की बुद्धि अभी उसकी विकसित नही होती, माता-पिता को ही कोशिश करके उसकी यह गलती सुधरवानी चाहिए, अन्यथा बड़ा होने पर यह आदत रह जाने से वह दोस्तों मे शर्मिदा होगा और हीन भाव से घिर, हकलाने लगेगा. यदि बच्चा किसी कारण उपेक्षित है तो वह माता-पिता का ध्यान आकर्षित करने के लिए भी ऐसी हरकतें जारी रख सकता है. इसलिए मा को उसके प्रति भेदभाव या लापरवाही का अपना रवैया बदलना चाहिए.

दो वर्ष की आयु के बाद इस बात की उपेक्षा ठीक नही होगी. बच्चे को पास बैठाकर शब्दो का ठीक उच्चारण सिखाए. गलत बोलने पर उसी समय बुलाकर सहानुभूति-पूर्ण ढग से समझाएं, बाद मे बताने या डाटने-डपटने से असर नही होगा या उलटा भी हो सकता है. बच्चे की बोली सुधरवाने के लिए सबसे पहले उसे तनाव-मुक्त करना जरूरी है जब वह सहज हो जाए तो उसे अकेले मे शीशे के सामने बैठकर बोलने, समूह में बोलने, कहानी कहने के लिए प्रोत्साहित करें. अकेले मे दोष सुधार लेने पर वह आत्मविश्वास के साथ समूह मे बोलने लगेगा, पर ध्यान रखना होगा कि शुरू मे वह समूह में कुछ गलत भी बोल जाए तो उस पर हसना नही है. धीरे-धीरे उसे ठीक शब्दों का उच्चारण करना आ जाएगा. बच्चे प्राय. उन्ही व्यक्तियो के सामने हकलाते हैं, जिनसे वे डरते है. मानसिक अशाति परिवार मे कलह या कठोर अनुशासन से भी बच्चा हकलाने लगता है. इस बारे मे शिक्षक-शिक्षिका की भूमिका भी बहुत महत्त्व रखती है, पर वह बाद की बात है, पहले सुधार की शुरुआत घर से ही करनी होगी कि तीन साल के बाद बच्चा तोतला रहे ही नही. इस तरह प्रयत्न से समय पर सुधार के बाद आगे समस्या नही रहेगी, अन्यथा बार-बार टोकने या शर्मिदा करने से एक ओर आदत पक्की होगी, दूसरी ओर बच्चा हीनभाव से घिर, 'नर्वस' होगा. फिर भी बच्चा देर तक तुतला कर बोलता रहे तो उसे मनोवैज्ञानिक से 'साइकोथेरापी' दिलवाएं. जरूरत पडने पर 'स्पीच-थेरापिस्ट' की मदद भी ली जा सकती है.

मंद-बुद्धि बच्चे

पोलियो आदि कारण से या दिमागी चोट से इस तरह की समस्या सामने आई हो तो जांच जल्दी भी कराई जा सकती है, अन्यथा तीन साल की आयु के बाद ही जांच से बुद्धि-मंदता का ठीक पता चल पाता है. यद्यपि बच्चे की विकास-गतिया इस बात का सकेत देती रहती हैं. जैसे सिर का सतुलन साधने, हाथ की पकड़ में, आवाजों पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने में, कप या गिलास से स्वयं पानी पीने में, एक साल की उम्र मे हाथ का सहारा ले खड़ा होने मे या बात समझने में बच्चा सामान्य बच्चों से ज्यादा पिछड़ा हो. यदि अपोषण या रोग आदि कारण से, कमजोरी से बच्चा विकास में पिछड़े तो वह पोषण की पूर्ति व चिकित्सा से ठीक हो जाएगा. वैसे सामान्य विकास-गति में तीन-चार महीने की अवधि का हेर-फेर ज्यादा नही समझा जाना चाहिए, इससे अधिक बच्चा पिछडा है तो उसके मद-बुद्धि होने का सदेह किया जा सकता है. इस सबध में सदेह होने पर डाक्टर की राय लेनी चाहिए और तीन वर्ष की आयु तक विशेषज्ञ से उसकी बुद्धि-परीक्षा करवा लेनी चाहिए.

एक परीक्षण द्वारा विशेषज्ञ बच्चे से कई बातें पूछकर, क्रियात्मक विधियों व खेलो द्वारा उसकी जाच कर उसकी 'बुद्धि-लब्धि' के अक बता देंगे, जिसका अर्थ होता है कि बच्चा किस स्तर तक बुद्धि-विकास मे पिछड़ा है और उसकी आगे प्रगति की क्या संभावनाएं हो सकती हैं ? उसी अनुसार उसके विशेष शिक्षण-प्रशिक्षण के तरीके भी सुझाए जाते हैं.

इन मद-बुद्धि बच्चों को सभावनाओं की दृष्टि से सामान्यतया चार वर्गों मे बाटा जाता है :

सीमान्त-रेखा या बार्डर-लाइन वाले बच्चे. ऐसे बच्चे बात या विषय को बार-बार दुहराने और प्रोत्साहित करते रहने से काफी कुछ सीख जाते है. बस पढाई मे वे ज्यादा आगे नही निकल सकते. इनके साथ समस्या तभी पैदा होती है, जबकि उनकी क्षमता से अधिक उनसे आशाए लगाई जाती है या उन्हे बार-बार टोका जाता है, दूसरे बच्चों के साथ तुलना करके उन्हें शर्मिदा किया जाता है या उनकी सार्वजनिक रूप से आलोचना की जाती है. तब वे निराश होकर पढ़ाई मे और पिछड़ने लगते हैं या गलत राह पर चल देते है. अत. इन्हें बार-बार प्रोत्साहित करना तो ठीक है पर इनसे इनकी क्षमता से अधिक अपेक्षा करना इन्हे समस्याग्रस्त बना देगा.

सामान्य मंद-बुद्धि बच्चे : इन्हें थोडा-बहुत ही पढ़ाया जा सकता है, अधिक नही. कोशिश करके जरूरत भर पढाई-लिखाई के बाद इन्हे हाथ का काम सिखाया जाना चाहिए. दिमाग के काम में असफल रहकर भी बहुत बार ये उद्योग, दस्तकारी में अच्छे कुशल साबित होते हैं, अन्यथा सामान्य कारीगर तो बन ही सकते हैं. विशेष-रूप से हाथ के उन कामों में, जहा सोच की कम व यंत्रवत दुहराव की अधिक आवश्यकता होती है, इन्हें सफलता से खपाया जा सकता है. इसीलिए इन बच्चों को विशेष स्कूलो में भरती करने की सलाह दी जाती है. यदि तीन साल की आयु के बाद इन्हें ठीक से संभालने व विशेष स्कूलों में पढ़ाने-सिखाने का प्रबंध कर लिया जाए तो इन्हें समस्याग्रस्त होने से बचाया जा सकता है और आत्मनिर्भर बनाया जा सकता है, अन्यथा घर से डाट खाकर व पढ़ाई से उखड़कर ये गलत सगति में पड आवारा, उद्दण्ड व अपराधी भी बन सकते हैं, भीरु और झेंपू भी. अनियमित, असंयमित व्यवहार और फूहड़ता की समस्या इनके साथ अधिक सामने जा सकती है. इसलिए पता चलते ही इन पर ध्यान देना चाहिए.

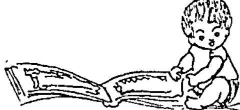
गंभीर मंदबुद्धि बच्चे : गभीर रूप से मंद-बुद्धि बच्चों को न तो थोड़ा बहुत पढाया जा सकता है, न कोई दस्तकारी ही सिखाई जा सकती है. उन्हें केवल अपने निजी काम के लिए प्रशिक्षित करने की आवश्यकता है ताकि घर में तोड़-फोड़ करने या घर पर निर्भर रहने पर वे अभिभावको के लिए समस्या न बनें. ऐसे बच्चो को उनके प्रत्येक काम के लिए दुहराव और सकेत के सिद्धान्त पर बार-बार निर्देशन की आवश्यकता होती है. बहुत बार सिखाने के बाद भी वे गलत चल सकते हैं अत: दैनिक कार्यों के लिए नित्यप्रति निर्देशन भी देना पड़ सकता है, तो अभिभावकों को पर्याप्त धैर्य से काम लेना होता है. स्वयं खीझने या उन्हें बार-बार कोसने से कोई लाभ न होगा, उल्टे इससे उनके भीतर आत्महीनता बढ़ जाने से वे सीखने की कोशिश छोड़ सकते हैं. इन बच्चों को दैनिक कार्यों में भी न तो टूटने वाली चीजें उठवानी चाहिए, न कोई जिम्मेदारी का या घर की, छोटे बच्चे आदि की रखवाली का काम सौंपना चाहिए. बस उन्हे अपने काम के लिए आत्मनिर्भर बना दें, यही पर्याप्त होगा.

पूरी तरह पर-निर्भर मानसिक बाधित बच्चे : इन बच्चों को स्वयं के कार्यों के लिए भी आत्मनिर्भर नही बनाया जा सकता. बस घर वालो को उन्हें संभालना भर होता है कि वे स्वयं को होश न रखने से किसी दुर्घटना का शिकार न हो जाएं या किसी अन्य के लिए नाहक परेशानी का कारण न बनें. फिर भी प्रयत्न करना चाहिए कि वे मल-मूत्र यथास्थान करने और अपने हाथ से खाने के लिए तो आत्मनिर्भर हो सकें. यह भी संभव न हो तो उनके लिए विशेष सेवा का प्रबंध करना होगा या उन्हें सम्बन्धित सस्थाओं में भरती करना होगा. इस संबंध में मन:चिकित्सक की राय से ही चलना चाहिए.

नबर तीन व चार मद-बुद्धि बच्चों के मामले मे माताओं को उनके दातों की सफाई, स्नान, स्वच्छता, खान-पान की स्वच्छता आदि का भी पूरा ध्यान रखना होगा अन्यथा वे बार-बार सक्रमण का शिकार हो बीमार पड़ सकते हैं तथा परेशानी बढ़ा सकते हैं.

प्रथम तीन प्रकार के मद-बुद्धि बच्चो को व्यावहारिक समस्याओ से बचाने के लिए इन पर अतिरिक्त ध्यान देने व इन्हें विशेष विधि से प्रशिक्षित करने की आवश्यकता होती है. इस सबंध में मनोवैज्ञानिक या मन:चिकित्सक की राय लेनी चाहिए व उनके सुझावों के अनुसार चलना चाहिए.

सामान्य शिशुओं पर भी पांच वर्ष की आयु तक इस तरह ध्यान देने की जरूरत है कि वे अधिक सुरक्षा या अधिक उपेक्षा के शिकार हो व्यावहारिक-समस्याएं न पैदा करें. (इस पर आगे अलग से भी लिखा जा रहा है.)



41

भावात्मक सुरक्षा और व्यक्तित्व निर्माण

बच्चे के स्वस्थ मानसिक विकास मे शैशव के प्रारंभ से ही उसे मिली भावात्मक सुरक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है. लेकिन पिछले कुछ वर्षो मे पढ़ी-लिखी माताओं ने मनोविज्ञान को अतिरंजित अर्थ देकर और उसका अध-कचरा प्रयोग करके बच्चे की स्वतन्त्रता के नाम पर अनु-शासन और सुरक्षा के बीच सन्तुलन को इतना गड़बड़ा दिया है कि भावात्मक सुरक्षा के अर्थ को नए सिरे से समझने-समझाने की जरूरत महसूस होती है

भावात्मक सुरक्षा क्या है ?

सुरक्षा के अर्थ मे जो बुनियादी बात जुड़ी है, वह है भौतिक सुरक्षा—यानी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति, बाहरी खतरो से मुक्ति और अभावों से मुक्ति अर्थात् आर्थिक सुरक्षा. इसमे संदेह नही कि जिंदगी की गाड़ी को एक सीधी पटरी पर चलाने के लिए ये बातें भी बहुत जरूरी है और भावात्मक सुरक्षा मे इस भौतिक सुरक्षा का भी लगभग बराबरी का अंशदान है, किंतु भावात्मक सुरक्षा का सही अर्थ है आतरिक सुरक्षा और आत्मविश्वास की वह भावना जिससे व्यक्ति आज के जटिल समाज मे से अपनी राह निकालने और जीवन को संतोषपूर्ण ढंग से बिताने के लिए तैयार हो सके. इस तरह भावात्मक सुरक्षा पाने का अर्थ होगा : अपनी शक्तियो मे विश्वास की भावना को विकास की राह देना.

···और विकास की यह राह शैशव से ही खुलती है.

अनुशासन और सुरक्षा

जहा एक ओर बच्चो पर पुराने ढंग का कठोर नियंत्रण उनके व्यक्तित्व-विकास के लिए घातक है, दूसरी ओर अनु-शासन मे बिना सोचे-समझे अधिक ढील देने से भी व्यक्तित्व का समुचित प्रशिक्षण नही हो पाता. इसीलिए अभि-भावक व समाज-नेता फिर से सोच मे पड़ गए हैं कि घरों व स्कूलों मे बच्चो को उचित ढंग से अनुशासन मे न रखने पर नई पीढी के व्यक्तित्व-निर्माण को सही दिशा नही मिल पाई है और इसका दुष्परिणाम पूरे समाज व राष्ट्र को



भुगतना पड़ रहा है. अतः विभिन्न व्यवहारो व अनुभवों को देखकर निष्कर्ष रूप मे हम कह सकते है कि उचित प्यार व देखभाल के अभाव से यदि व्यक्तित्व में गिरावट आती है, तो जरूरत से ज्यादा छूट देने से भी इस गिरावट का पलड़ा उतना ही नीचे रहता है.

अभिभावकों का बच्चों के प्रति व्यवहार कोमल व स्नेहयुक्त तो हो, पर इस स्नेह में उनके भविष्य की चिंता से प्रेरित सतर्कता भी अवश्य रहे. यदि यह होगा तो बच्चे गलती करने पर कभी-कभी डाट खाने या सजा पाने से परेशान नही होंगे, बल्कि भीतर कही गहरे मे उन्हे सुरक्षा अनुभव होगी कि माता-पिता उन्हे प्यार करते हैं इसीलिए तो उनका इतना ख्याल रखते हैं.

व्यक्तित्व निर्माण के मूल तत्त्व

बच्चों के व्यक्तित्व-विकास और चरित्र-निर्माण मे यह प्रश्न सर्वाधिक महत्त्व रखता है, इसलिए हमे अनुशासन के अर्थ को अच्छी तरह समझने की जरूरत है. 'माता-पिता व शिक्षक बालक के सामने अपना आदर्श चरित्र प्रस्तुत करें ?' आज यह कहने से काम नही चलेगा —ऐसा होना सभव भी नहीं है क्योंकि बाहरी प्रभावो को रोका नहीं जा सकता. लेकिन शुरू से ही बच्चे के विकास पर दृष्टि केंद्रित की जाए और संस्कारों की नीव सुदृढ हो तो बाहरी स्थितिया कैसी भी हो, बच्चा बड़ा होने पर इन्ही स्थितियों मे से अपनी राह निकालने में समर्थ हो सकेगा.

सुरक्षा व स्वतंत्रता में समन्वय

बच्चे के व्यक्तित्व के विकास को सही राह देने के लिए यह जरूरी है कि आप बच्चे को स्वतन्त्रता और सुरक्षा एक साथ प्रदान करें. उसे आजादी जरूर दें, पर उसे एकदम ढीला या उपेक्षित न छोड़ें कि वह महसूस करे कि आप उसमे रुचि ही नही लेते. आप उसे स्वतंत्र रूप मे भी कुछ करने, सोचने, खेलने, खिलौने व मित्र चुनने का मौका दें. इसके साथ ही उस पर एक निगाह भी रखें कि वह कुछ गलत तो नहीं कर रहा ? खिलौनों से या छोटे भाई-बहन से क्रूरता से पेश तो नही आ रहा ? अपने स्वार्थ की ही बात तो नही करता ? या आजादी दिए जाने पर उसमें बेचैनी और उलझन तो नही पैदा हुई ? क्योंकि आजादी देने के नाम पर बच्चे को स्वयं निर्णय लेने के लिए अकेला छोड़ दिया जाए तो क्षमता के अभाव मे वह मानसिक तनाव से घिर सकता है और निश्चितता के अभाव मे भीतर से उलझ कर स्वयं को अरक्षित अनुभव कर सकता है.

अधिक अपेक्षाएं न रखें

विकास का हर चरण बच्चे में नई शक्तियां जगाता है. वह अनुसरण द्वारा सीखकर हर काम को स्वयं देखने, समझने, करने का प्रयत्न करता है. लेकिन सीमित क्षमताओं के कारण माता-पिता द्वारा दी गई पूरी आजादी व उससे की गई अधिक अपेक्षाएं उसके लिए भारी पड़ जाती हैं. नतीजा होता है, बच्चा जिस गति से आगे बढ़ सकता है, उससे अधिक तेजी से बढ़ने के प्रयत्न मे उसका तनाव-ग्रस्त हो जाना और इस तनाव का फिर अगला नतीजा होता है : व्यवहार संबंधी समस्याए.

बुनियादी गलती यही होती है. माता-पिता चाहते हैं, जो उन्हें अपने जीवन में नहीं मिल पाया, उस की पूर्ति वे अपने बच्चे से करें और जिस तरह शैशव में उन्हे कड़े अनुशासन का सामना करना पड़ा है, उसमे वे अपने बच्चे को सर्वथा मुक्त रख सकें, ताकि उसमें कुंठाए न पनपें. पर वे भूल जाते है कि बच्चे को इस उमर में जितनी स्वतंत्रता चाहिए, उतनी ही (बल्कि उससे कुछ अधिक) सुरक्षा भी. इसलिए जरूरी है कि बच्चे को उसके क्रिया-कलाप मे आजादी दें; उसकी हर बात मे अनावश्यक दखल न दें, लेकिन यह भी उतना ही जरूरी है कि इस आजादी से बच्चे के कोमल मस्तिष्क पर अनावश्यक बोझ न पड़े और वह स्वय को भावात्मक रूप से अरक्षित व उपेक्षित न समझे. बच्चे की स्वतन्त्रता और सुरक्षा मे तालमेल बिठा कर, निषेधात्मक उपदेशों के बजाय सकेतात्मक सुझाव व निर्देश देकर तथा हर काम में, हर कठिनाई मे, हर कदम पर उसे अनिवार्य सहयोग देकर ही आप उसके स्वस्थ मानसिक विकास मे सहायक हो सकते है.

भावात्मक सुरक्षा के लिए जरूरी शर्तें

अत. बच्चे को भावात्मक सुरक्षा देकर उसकी आतरिक शक्तियों का विकास करने के लिए निम्न बात आवश्यक है :

मां का दूध और मां की स्निग्ध गोद शिशु के भीतर सुरक्षा की भावना बनाए रखने के लिए मा और बच्चे के बीच शारीरिक निकटता जरूरी है. इसीलिए शिशु को पहला भोजन प्रकृति ने मा के स्तनों मे दूध के रूप मे प्रदान किया है. अनेक वैज्ञानिक परीक्षणों से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि मां का दूध रोग-निरोधक शक्ति के लिए नवजात शिशु का प्रथम पूर्ण व निरापद भोजन है और स्तनपान के समय शिशु की मा से निकटता उसे भावात्मक संतुष्टि व सुरक्षा प्रदान करती है.

आज के अनुभव में ही नही, शताब्दियों पूर्व बनी मा-शिशु की मूर्तियों मे भी मा की बाहों में शिशु की अवस्थिति बाईं ओर दिखाई गई है. इसका अर्थ केवल इतना ही नही कि काम-काज के लिए दायां हाथ खाली रहे, बल्कि यह शिशु की अचेतन माग है. वह बाईं ओर रह कर मा के दिल की धड़कन सुनते हुए अधिक सुरक्षा अनुभव करता है व आराम पाकर शाति से सोता है.

वैज्ञानिको ने इस बात को सिद्ध करने के लिए अनेक परीक्षण किए है. एक बार एक जैसे कुछ नवजात शिशुओं को, जिन्हें एक सी खुराक भी दी गई थी, चार समूहों में बांट, चार अलग कमरों मे रखा गया. एक कमरे में पूर्णतया शांति रखी गई. दूसरे में लोरी का टेप बजाया गया, तीसरे मे मा के दिल की धडकन को टेप करके शिशुओं के



मां का स्नेहिल स्पर्श ही भावात्मक सुरक्षा की अनिवार्य शर्त है

पास बजाया गया. चौथे में मा के दिल की धड़कन की हूबहू नकल करने वाले यंत्र की 'टिक टिक' ध्वनि बजाई गई. परिणाम था : मा के दिल की धड़कन का टेप सुनने वाले बच्चे अपेक्षाकृत जल्दी शांत हो कर सो गए.

वैज्ञानिको का विचार है कि जन्म के दो महीने पूर्व से मां के पेट में बच्चे का मस्तिष्क सक्रिय हो जाता है और आसपास के वातावरण को अनुभव करने के लिए उसकी श्रवणेंद्रिय जागृत हो जाती है. तब से जन्म के दिन तक दिन-रात लगातार मां के दिल की धड़कन सुनते हुए वह उसका अभ्यस्त हो जाता है. बाद मे बाहर के वातावरण मे जब वह अपने को अजनबी सा अनुभव कर बेचैन होता है तो मां द्वारा अपने बाईं ओर उठा लेने पर वह अपनी पूर्व परिचित ध्वनि सुनकर सुरक्षा अनुभव करता है, इसी लिए प्रसन्न हो, चुप हो शात होकर सो जाता है.

मां की मन:स्थिति का संतान पर असर

यह भी सामान्य अनुभव की बात है कि शांत व प्रसन्न रहने वाली गर्भवती मा का शिशु अधिक स्वस्थ व प्रसन्न रहता है और शीघ्र उत्तेजित हो जाने वाली, चिड़चिड़े स्वभाव की या मानसिक रूप से अस्त व्यस्त मां की संतान भी यही प्रभाव ग्रहण करके आती है. यह भी एक ज्ञात तथ्य है कि चिंता, क्रोध, भय की स्थिति मे दिल की धड़कन असामान्य हो जाती है, तो गर्भवती मां के दिल की धड़कन के ये सामान्य व असामान्य अनुभव गर्भस्थ शिशु की मानसिकता पर बुनियादी प्रभाव डालते ही है. उस पर जन्म के बाद भी यदि शिशु को मा की ऐसी लगातार बदलती मन.स्थितियों का सामना करना पड़े और उसे मां के दूध से व स्तनपान के समय की गोद की स्निग्धता से वंचित होना पड़े तो उसका पाचन कमजोर हो सकता है और वह मानसिक रूप से अशांत रह सकता है.

पारम्परिक सामाजिक अनुभव और ये वैज्ञानिक परीक्षण कही भी परस्पर विरोधी नहीं. सदियों से माताए इस तथ्य से परिचित रही हैं कि दूध पिलाते समय शिशु के सिर पर प्यार से हाथ फेरने, उसे अपने निकट रखने, कंधे से लगाकर थपथपाने और सरदी-गरमी व अन्य बाहरी खतरों के समय उनकी सहायता करने से बच्चे आराम, शांति व सुरक्षा अनुभव करते हैं.

बड़े होने पर स्कूल जाने लायक उम्र मे जब बच्चे की मां से शारीरिक निकटता संभव नही रह पाती, इस अवधि में भी यदि माता-पिता उसके हाथ सहलाकर, कंधे थपथपा कर उसे प्यार देने व उसकी कठिनाई हल करने में सहायता के लिए तत्पर रहते हैं तो यह भावात्मक सुरक्षा उसे

सफलता पूर्वक आगे बढ़ने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है. बच्चे में यह भावना पनपने लगती है कि उसे भी मां-बाप के प्यार व प्रशंसा के योग्य बनना है. दोनों ओर की अपेक्षाओं का यह आदान-प्रदान तो बच्चे के वयस्क हो जाने तक भी चलता है.

इस तरह मा-बाप की स्नेहिल छत्र-छाया में रह कर जो बच्चे अपना स्वतंत्र विकास करते हैं वे ही आगे चलकर सूझ-बूझ व आत्मविश्वास की निजी शक्तियों से लैस हो, अपने जीवन की गाड़ी पेचीदा स्थितियों में भी सफलता से खींच ले जाते हैं.

आजादी और नियंत्रण में तालमेल

'बच्चा आजादी देने से बिगड़ जाएगा इसलिए उस पर पूरा अंकुश रखना चाहिए...' 'बच्चे की आजादी पर रोक लगाने और उसकी इच्छाओं का दमन करने से उसका विकास कुंठित हो जाएगा...'—ये दोनों धारणाएं अतिवादी और भ्रामक हैं. हमें दमन और अनुशासन में भेद करना होगा. बच्चे को सही-गलत का निर्देश देकर आत्म-अनुशासन सिखाना होगा. संतुलित विकास के लिए स्वतंत्रता और सुरक्षा में तालमेल बैठाना होगा. बच्चे की गतिविधियों पर निगाह रख एवं आवश्यकता पड़ने पर उसे सहारा व उचित निर्देशन देना ही सही दृष्टिकोण है. मां-बाप को चाहिए कि वे कितने ही व्यस्त हों, बच्चे के लिए कुछ समय अवश्य निकालें.

बच्चे को दिया गया समय

महत्व इस बात का नहीं कि आप बच्चे को कितना समय देते हैं, बल्कि इसका है कि कैसे देते है ? कामकाजी माताएं भी थोड़ा समय निकालकर अपने बच्चे को गोद में लेकर प्यार करें, थोड़ी देर उसके साथ खेलें, उसकी बात को ध्यान से सुनें, उसके प्रश्नों का सही उत्तर दें, तो बच्चे को दिया गया कम समय भी उसके लिए उपयोगी सिद्ध होगा.

आपका काम भले-बुरे, ऊंच-नीच का निर्णय लेने में बच्चे की सहायता करना ही है. उसे हर निर्णय स्वयं लेने के लिए अकेला छोड़ देना या हर बात में अपना सही-गलत निर्णय उस पर थोपना—इन दोनों ही स्थितियों में उसके प्रति अन्याय होगा. इससे उत्पन्न दुविधा, भ्रम व भय से उसका विकास कुंठित होगा. समय पर सही निर्देशन व आवश्यक सहायता पाकर ही उसकी निजी कल्पना, कार्य-क्षमता, अनुभूति और आत्मगरिमा स्वस्थ विकास के लिए राह पा सकती है.

बच्चे को अंतर्मुखी व आत्मकेंद्रित न बनने दें

आजादी के नाम पर हर कदम पर स्वयं निर्णय के लिए अकेले छोड़ दिए जाने वाले बच्चे आजादी के बजाए उपेक्षा व असुरक्षा अनुभव करते है. वे अन्तर्मुखी व आत्म-केंद्रित होकर या तो गुम-सुम रहते हुए विकास में पिछड़ जाते है, या फिर उद्दण्ड हो मनमाना विस्फोटक व्यवहार प्रदर्शित कर पहले परिवार के लिए व फिर समाज के लिए समस्या उत्पन्न करते हैं. इसके बाद सबका कोप-भाजन बनने से उनकी समस्या और उलझ सकती है और वे आवारा या अपराधी भी बन सकते है, मानसिक रोगी भी.

बेशक ऐसा सभी के साथ नहीं होगा, पर ऐसी संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता कि बचपन में भावात्मक सुरक्षा का अभाव मानसिक व्याधि या व्यक्तित्व-प्रशिक्षण का एक दोष बनकर उनके पूरे भविष्य को अंधकारमय बना सकता है. अतः बच्चों को अनावश्यक रोक-टोक से बचाइए, पर उपेक्षित बिल्कुल न छोड़ें, उन्हें समय दीजिए, उनके साथ बातचीत करिए उनकी हर बात में दिलचस्पी लीजिए एवं इस तरह आवश्यकता पड़ने पर सही-गलत का भान कराते हुए स्वतंत्र निर्णय लेने में उनकी सहायता कीजिए.

प्रेरणा-प्रोत्साहन, पुरस्कार और दंड

आज के बच्चे पिछली पीढ़ी से कहीं अधिक सचेत हैं. वे परंपरागत लीक पर चलने की बजाए हर बात को तर्क से तौलकर उस पर अमल करना चाहते है. पर नासमझ उमर में उनकी वैज्ञानिक बुद्धि व तर्कशीलता का पूरा विकास न होने से यह प्रवृत्ति किसी हद तक हठ और उच्छृंखलता का पर्याय भी बन जाती है. उस पर मनोविज्ञान के गलत अर्थ व प्रयोग से जब घरों और स्कूलों से दंड को निष्कासित ही कर दिया जाता है तो विकास की दिशा गलत भी हो जाती है, कहीं-कहीं ध्वंसात्मक भी.

आज भी, जबकि व्यक्ति की मूलभूत प्रवृत्तियों में विशेष अंतर नहीं आ पाया है, दंड व पुरस्कार का अपनी जगह उतना ही महत्व है. केवल युग के अनुरूप उनका स्वरूप बदलना चाहिए. बच्चों को हर अच्छे काम के बाद शाबाशी या किसी तरह का पुरस्कार देने से उन्हें आगे और कुशलता व योग्यता ग्रहण करने के लिए प्रोत्साहन मिलता है. इसी तरह गलत बात पर उन्हें रोकने तथा जरूरत पड़ने पर किसी रूप में सजा या ताड़ना देने से उन्हें स्वयं को सुधारने का प्रशिक्षण मिलता है.

प्रयोग सावधानी से : लेकिन व्यक्तित्व-प्रशिक्षण के इन दोनो हथियारों का प्रयोग करने में बहुत सूझ-बूझ व सावधानी से काम लेना होगा. प्रशंसा एक अर्थ मे लाभदायक व दूसरे अर्थ मे हानिकारक भी हो सकती है. यदि प्रशसा के साथ प्रोत्साहन नही जुड़ा है तो संभव है बच्चा अपनी प्रशसा सुनकर फूल जाए, सोचने लगे कि वह बहुत होशियार है और जो कुछ करता है वह बिल्कुल ठीक है. इस स्थिति मे झूठा आत्मसतोप या अहम् आगे उसकी श्रमशीलता व प्रगति को अवरुद्ध कर सकता है.

लड़के-लड़की में भेदभाव न रखें

इसी तरह घरो मे लडकियों को बात-बात पर सीख देकर मात्र आत्मसयम सिखाने और लडको को जरूरत से ज्यादा छूट देकर मनमानी करने के लिए अप्रत्यक्ष रूप मे बढावा देने का परिणाम होगा लड़कियों मे हीनता-ग्रंथि या छिपे विद्रोह की चिनगारी भरना तथा लड़कों म अहम् के बीज बोना. इससे समाज मे एक असतुलन पैदा होता है और आगे चलकर स्त्री-पुरुषों के बीच सहज संबधों मे बाधा आती है. उनमे सहयोग के बजाए प्रतिद्वंद्विता, दमन और ईर्ष्या की भावनाएं पनपने लगती है.

पुरस्कार दें, रिश्वत नहीं

प्रशंसा या पुरस्कार का अर्थ रिश्वत देना भी नही होना चाहिए. नई विचारधारा की आधुनिक माताए प्रायः मनोविज्ञान की दुहाई देकर बच्चे को मनमानी करने की छूट दे देती है, उनका विकास अवरुद्ध न हो, इस धारणा से उन्हे किसी भी बात से रोकना या कुछ अनुचित करने पर भी दड देना ठीक नही समझती और पुरस्कार के नाम पर वे उन्हे सोने, नहाने, दूध पीने, खाना खाने, शोर न करने, स्कूल जाने, घर आए मेहमानो के सामने शरारत न करने या 'पोइम्स' सुनाने जैसे कामो के लिए भी उन्हे पैसो, टाफियों, चीजो, खिलौनों का लालच देकर रिश्वत से काम करने की आदत डालती रहती है.

पुरस्कार तो आगे प्रोत्साहन के लिए अच्छा काम करने के बाद दिया जाना चाहिए, किसी भी काम के लिए फुसलाने हेतु काम से पहले दिया जाने वाला लालच पुरस्कार नही, रिश्वत ही कहलाएगा और यह पैसे, टाफी आदि की रिश्वत देकर बच्चे से अपनी बात मनवाना किसी भी तरह उचित नही. यह आदत बच्चे का अहित ही करेगी.



बाहर या दफ्तर जाने से पूर्व बच्चे को प्यार देकर जाने से बच्चा मां के बिलगाव को अधिक महसूस नहीं करेगा

प्रोत्साहन के लिए प्रशंसा या पुरस्कार

प्रशंसा या पुरस्कार का लाभ बच्चे को कुछ नया प्रयोग करने, साहसी बनने, कुछ बनने, कुछ करके दिखाने के रूप में मिलना चाहिए. कोई भी अच्छा काम करने पर घर पर माता-पिता व स्कूल मे शिक्षक यदि उसकी प्रशसा करें तो वह उत्साहित होकर अगली बार उससे अधिक श्रम करने के लिए प्रेरित होगा. कुछ नया करने के लिए उसकी हिचक व दुविधा दूर होगी और वह अधिक योग्य व आत्म-विश्वासी बनेगा. प्रशंसा या पुरस्कार से उसे लालची न बनाएं, बल्कि उसके भीतर-की छिपी-संभावनाओ को उजगार करने में सहयोग दें, उसे कला-कौशल के प्रति प्रेरित करें, हमारा यही उद्देश्य होना चाहिए.



आवश्यकता पड़ने पर दंड भी दें पर शारीरिक दंड न दें

उचित समय पर दंड भी

इसी तरह गलत काम करने पर बच्चे को उसी समय न रोक, बाद में अपनी फुरसत के समय उसे पास बिठाकर डांटने, समझाने या शाम को पिता के आने पर शिकायत लगाकर बच्चे को असमय डांट, शारीरिक दंड दिलाने का परिणाम होगा, बच्चे के कोमल मन को भ्रम व दुविधा मे डालना तथा उसे दब्बू या विद्रोही बनाना, क्योंकि बच्चा तब तक भूल चुका होता है कि उसने क्या किया था और यह समझ नही पाता कि उसे अब किस बात पर दंड दिया जा रहा है ?

बच्चे के सफल समाजीकरण और व्यक्तित्व-प्रशिक्षण के लिए दंड का भी अपनी जगह महत्त्व है. लेकिन इसके लिए उचित-अनुचित और संदर्भ का ध्यान कर लेना होगा. गलती करने के समय-संदर्भ से जोड़कर डांट व सजा दी जाएगी, तो न केवल बच्चा उसे सह लेगा बल्कि उससे उसे आगे गलती सुधारने का निर्देशन भी मिलेगा. पर अक्सर होता यह है कि माता-पिता अपनी फुरसत व मनःस्थिति (मूड) के अनुसार चलते हुए कभी तो बच्चे को जरा सी बात पर कठोर दड दे देते हैं और कभी अपने अच्छे मूड में उसकी गंभीर गलतियों को भी नजरअंदाज कर देते है और इस तरह न चाहते हुए भी अनजाने में बच्चे को गलत राह पर ढकेल देते है.

अभिभावकों की भूल से बिना उचित-अनुचित का भेद किए, बिना समय-संदर्भ के दंड दिए जाने पर बच्चे के मन में घृणा व विद्रोह का बीज पनपने लगता है जो कभी भी विस्फोटक रूप धारण कर सकता है.

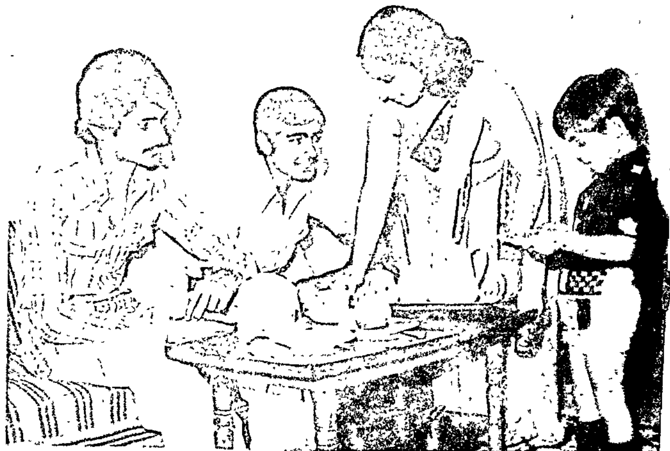
शारीरिक दंड न दें

दंड के स्वरूप का निर्धारण करते समय भी देखना होगा कि वह शारीरिक प्रताड़ना या मारपीट के रूप में न हो. यह सजा उसकी किसी इच्छा या माग-पूर्ति पर तब तक रोक लगाने के रूप में होनी चाहिए, जब तक वह उस गलती को सुधार न ले. इस तरह उसमें भूल-सुधार के साथ आत्म-संयम की भावना भी पैदा होगी, जो आगे चलकर लाभ-दायक सिद्ध होगी. हठधर्मी और उद्दण्डता पर कभी-कभी कड़ा दंड देने की भी जरूरत पड सकती है. तब भी देखना होगा कि उसमे आपकी न्याय-भावना और बच्चे के आत्म-सम्मान को चोट न पहुंचे.

'अमुक का व्यक्तित्व बहुत अच्छा है···' 'फला का व्यक्तित्व बहुत प्रभावशाली है···' ये उक्तिया बोलने-सुनने मे अच्छी लगती है. इसमे भी दो राय नही कि सभी माता-पिता अपने बच्चे का व्यक्तित्व निर्माण इसी रूप मे देखना भी चाहते हैं. केवल यही निर्णय नही कर पाते कि वह कैसे हो ?

आज यह प्रश्न मां-बाप के सामने और भी चुनौती बन कर खड़ा हो गया है, क्योंकि व्यक्तित्व-निर्माण का अर्थ प्रतिस्पर्द्धा में टिकने व प्रतियोगी रूप में आगे बढ़ने का भी है. इसीलिए आज का मुहावरा है, 'मां-बाप बनना मुश्किल नही, मुश्किल है अपने को इस योग्य सिद्ध करना, बच्चे का व्यक्तित्व मां-बाप की परीक्षा है, जिसमें सफलता के लिए उन्हे पहले स्वयं प्रशिक्षित होना है.

यह प्रश्न इतना सामयिक और व्यापक है कि व्यक्तित्व-निर्माण के एक-एक पहलू पर *अलग-अलग* लेखों, बल्कि पुस्तकों की आवश्यकता है. स्थान की सीमा देखते हुए संबंधित विषय पर प्रस्तुत पुस्तक में इस प्रक्रिया को संक्षेप



बच्चे के सफल समाजीकरण के लिए उसे घर आए मेहमानों की आव भगत करना भी सिखाएं

मे कुछ मुद्दो पर ही टिकाने का प्रयत्न किया गया है. इस दृष्टि से उपरोक्त वर्णित मा की निकटता, प्यार, आत्म-अनुशासन एवं प्रगति के लिए प्रोत्साहन आदि बातो के अलावा भावात्मक-सुरक्षा व सतुंलित-विकास के लिए बच्चे मे निम्न गुणो के विकास पर भी ध्यान देना होगा :

स्वयं निर्भरता और कर्मठता

बच्चो मे शुरू से ही आत्म-निर्भरता के बीज बोएं और उन्हे जीवन का साझीदार बनाए, श्रमशील व कर्मठ बनाने का भी प्रयत्न करें.

डेढ-दो साल का बच्चा अपने खिलौने उठाकर सही जगह रख सकता है. तीन साल का बच्चा अपनी हर चीज यथास्थान रखने व मा को छोटे-मोटे कामो मे मदद करने मे समर्थ हो सकता है. पाच-छः साल का होने पर वह मेज पर प्लेटें लगाने, घर की बिखरी चीजें सभालने जैसे कामो मे मा की मदद करने के साथ अपने छोटे-मोटे काम स्वय करने के लिए आत्म निर्भर हो सकता है. यदि माताए तोड़-फोड़ करने या चोट लगने का भय दिखा कर उन्हे काम से न रोकें अथवा उन्हे अधिक से अधिक आराम से रहने की आदत न डालें तो वे सहज रूप से विकसित हो आत्मनिर्भर और आत्मविश्वासी बन सकेंगे.

नन्हीं सलाह और साझेदारी : इसी तरह यदि उनकी उमर के अनुसार दैनिक जीवन की छोटी-मोटी बातों मे उनकी भी नन्ही सलाह या साझेदारी प्राप्त की जाए, उनकी हर बात काट कर उनके आत्म-सम्मान व अहम् को चोट न पहुचाई जाए और छोट-मोटी जिम्मेदारी सभालने का प्रयत्न करने पर उन्हें झटक कर अलग न कर दिया जाए तो वे न केवल शीघ्र आत्मनिर्भर बनेंगे, एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में भी विकसित होगे. शुरू से ही श्रमशीलता की आदत होने से आगे चलकर वे जीवन मे आने वाली कठिनाइयो का सामना करने मे समर्थ होगे, इसलिए सफल भी.

साहस और आत्मविश्वास

यदि आपका बच्चा किसी बाहरी व्यक्ति से बोलचाल से कतराता है, 'यह काम बिगड़ न जाए,···' 'यह चीज टूट न जाए,' आदि भय पाल कर आगे बढ़ने से हिचकिचाता है या वह व्यर्थ के दिखावे में अथवा साथियों पर झूठा रोब गालिब करने में रुचि रखता है तो जाहिर है कि वह भीतर से कहीं हीनता-ग्रंथि या असुरक्षा की भावना का शिकार होता जा रहा है. इस बच्चे पर अतिरिक्त ध्यान देने की जरूरत है. उसका आत्मविश्वास जगाने और उसके आत्म-सम्मान की रक्षा करने की जरूरत है. हर बात में की जाने वाली रोक-टोक छोड़ उसे जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए.

यदि वह अंधेरे में जाने से डरता है तो उसका भय दूर करने के लिए उसे अंधेरे में बार-बार ले जाइए. यदि दूसरे उद्दण्ड लड़कों से भय खाता है तो उसे निजी सुरक्षा के तरीके सिखाइए. साहसी कारनामों से भरी वीरतापूर्ण कहानियां (भूतों, राक्षसों की नहीं) सुनाइए. देखिए कि वह लड़ाकू किस्म के बच्चों के अकारण पिटता तो नहीं? डांटने पर सहम कर गुमसुम तो नहीं हो जाता? जोखिम के डर से किसी काम को करने से कतराता तो नहीं? सही उम्र में होने पर भी घर में अकेला रहने या बाहर अकेले जाने से भय तो नहीं खाता? देर तक चुप व शांत रहने के बाद अचानक क्रोध भरा विस्फोटक व्यवहार तो नहीं प्रकट करता?

इन ग्रंथियों को समय पर यही संभालने की जरूरत है कि वे आगे विकसित होकर उसके पूरे जीवन को कुंठित या पंगु न बना दें. उसके कुंठा रहित विकास के लिए उसके भीतर आत्मविश्वास जगाने का प्रयत्न करें. उसकी छिपी प्रतिभा को उभार कर उसकी शक्तियों को आगे बढ़ने का ऐसा हर प्रयत्न उसके विकास में मील का एक पत्थर सिद्ध होगा.

व्यक्तित्व का विकास एक दिन, एक महीने या एक वर्ष में नहीं होता. धीरे-धीरे पूरे बचपन में यह प्रक्रिया चलती है और भावी जीवन को राह देती है. इस व्यस्त युग में अपनी समस्याओं में उलझे हुए मां-बाप बच्चे को इतना समय व ध्यान नहीं दे पाते इसलिए निश्चय ही यह काम सरल नहीं.

बच्चे के स्वस्थ विकास का भागीदार बनने के लिए माता-पिता को अधिक कुशलता व सूझबूझ से काम लेना होगा. समयाभाव व थकावट के बावजूद अपने को नियंत्रण में रख, धीरज से बच्चों की समस्याओं को सुलझाना होगा



जानवरों से प्रेम व्यवहार भी व्यक्तित्व विकास के लिए आवश्यक है

फिर वही बात उठती है कि उन्हें कितना समय दिया जाता है, महत्त्व इसका नहीं, बल्कि इसका है कि वह कैसे दिया जाता है?

एक तटस्थ, किंतु सतर्क निगाह

आवश्यकता है बच्चों को स्वतंत्र विकास का अवसर देते हुए भी उन पर एक तटस्थ, किंतु सतर्क निगाह रखने की. आप बच्चे को स्वय-निर्भर बनने में सहयोग दें. पर यह

भी देखें कि वह क्या खाता-पीता है? कैसे पढता-लिखता है? उसका काम करने का ढग क्या है? उसकी कोई अपनी पसद या राय भी है कि नही? अपने कपड़ों, खिलौनों की सभाल वह कैसे करता है? दूसरों की नकल किस ढग से करता है? मित्रो को अपने पीछे चलाता है, उनका पिछलग्गू है या उनसे बराबरी का बर्ताव करता है? किसी बात में स्वय निर्णय ले सकता है कि नही! प्रतियोगिता मे खड़े होने मे कतराता तो नही? उसमें हीनता या अहम् भावना असामान्य रूप से तो विकसित नहीं हो रही? दिखाई दे तो आपके बच्चे को अतिरिक्त प्यार, प्रोत्साहन, सुरक्षा व आश्वासन की आवश्यकता है.

सहानुभूतिपूर्ण पथ-प्रदर्शन

इन बातो पर एक छिपी निगाह रख समय-समय पर आप बच्चे का सहानुभूतिपूर्ण पथ-प्रदर्शन करें—बस फिर इस भरे-पूरे संसार मे वह अपनी राह आप बना लेगा.

अंत में एक चेतावनी भी, यदि बच्चो को प्यार, आराम व स्वतन्त्रता देने के नाम पर हम उनके लिए अधिक से अधिक सुविधाए-जुटाकर ही अपने कर्त्तव्य की इतिश्री मान लेंगे, उन्हे न समय देंगे, न उन पर कोई जिम्मेदारी डालेंगे तो वे आराम पसद, सुविधाजीवी, आत्म-केंद्रित व स्वार्थी तो बनेंगे ही, इस स्वतंत्रता के उपभोग मे अकेले पड़ कर धीरे-धीरे परिवार से विमुख हो अपनी अलग दुनिया भी बसाने लगेंगे—ऐसी दुनिया, जिसमे बड़ों के सम्मान की बात तो दूर, उनके लिए कोई जगह ही नही होगी.

* बच्चे के स्वास्थ्य व संतुलित मानसिक विकास में माता-पिता के प्यार, सान्निध्य सहयोग, उचित मार्गदर्शन का महत्व सर्वोपरि है.

* बच्चे स्वयं भी अपने माता-पिता की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए उत्सुक रहते है बशर्ते उन्हें माता-पिता का पूर्ण सहयोग व विश्वास प्राप्त हो. उनसे उनकी सामर्थ्य से अधिक आशाएं न लगाई जाएं

* अपने भाई-बहनों के प्रति कभी-कभी ईर्ष्या द्वेष, क्रोध आदि भावनाओं का प्रदर्शन बच्चों की प्रकृति के अनुरूप होता है. जिसके लिए उन्हें डांटना या शर्मिंदा करना अनुचित है.

* प्रत्येक बच्चे का अपना अलग अस्तित्व होता है. उसके विकास को उसी दिशा में प्रोत्साहन मिलना चाहिए.

* महज भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति ही प्यार व स्नेह का माप दंड नही है, मां-बाप का सान्निध्य, स्नेह उसके अस्तित्व की पहचान, बच्चे के मानसिक विकास को अधिक प्रभावित करते हैं.

42



स्कूल पूर्व प्रशिक्षण व संस्कार

यह सोचना गलत है कि स्कूल-पूर्व शिक्षण ढाई-तीन वर्ष की आयु से ही प्रारम्भ होता है. एक किवदंती है, एक मां एक वर्ष का शिशु गोद मे लिए एक विद्वान के पास पहुंची और पूछा, "कृपया बताइए, मैं अपने बच्चे को कब से शिक्षा देना प्रारम्भ करूं ?" उनका उत्तर था, "आप एक वर्ष तो गंवा चुकी है. अब और देर करना ठीक न होगा."

सो यही है शिशु-शिक्षण के प्रति सही दृष्टिकोण. शिक्षण से तात्पर्य अक्षर-ज्ञान ही नहीं होता, बल्कि आस-पास के संसार का ज्ञान व उससे सपर्क स्थापित करने का प्रशिक्षण भी इसमें शामिल होता है और निश्चय ही यह प्रशिक्षण शिशु जन्म से ही नही, बल्कि गर्भकाल से ही प्रारभ हो जाता है. हमारे यहां ऋषि-मुनियों ने गर्भ शिशु के संस्कार के लिए कुछ अनुष्ठानों की रचना इसीि की थी और इसीलिए माता के विचारो या सोचने के ढग गर्भस्थ शिशु पर प्रभाव को व्याख्यायित किया था. आ निक विज्ञान इस मत की पुष्टि करता है कि बच्चा गर्भ ही अपने आसपास के ससार का कुछ ज्ञान लेकर आ है. इसका प्रमाण है, अशिक्षित व आधुनिक रहन-सहन पिछड़े परिवारो के नवजात शिशुओ और आधुनिक त नीकी वैज्ञानिक ज्ञान से मडित व इसी रहन-सहन मे रचे-ब परिवारों के नवजात शिशुओं की प्रतिक्रियाओ मे अन्त निश्चय ही इस अंतर मे प्रोटीनयुक्त अच्छी खुराक का हाथ है. पर माता-पिता के ज्ञान के असर से भी इका नही किया जा सकता



वर्तमान की तैयारी से जुड़े भविष्य के सपने

जन्मजात व अर्जित प्रवृत्तियां

जन्म के साथ मनुष्य मे जो प्रवृत्तिया दिखाई देती और जो उसमे बाद मे विकसित होती हैं, उन्हे ही दो रू मे विभाजित कर मनोवैज्ञानिको ने जन्मजात व अजि प्रवृत्तियो का नाम दिया है. यही प्रभाव बच्चे को परिवर्त

की दिशा देते हैं और उसमें सामान्य ज्ञान व आदतों का विकास करते हैं. उदाहरण के तौर पर बच्चे को जब निश्चित अंतराल से दूध पिलाया जाता है तो समय संबंधी नियम का ज्ञान उसे स्वयं हो जाता है और दूध पिलाने में देरी होने पर वह किसी न किसी रूप में अपनी नाराजगी प्रगट कर देता है.

आप कहेंगे, नन्हा बच्चा क्या समझता है? बच्चे का व्यवहार चेतन या सजग न हो, वह निश्चित आदतों के रूप में प्रगट होता ही है. ये आदतें ही शिशु का प्रारंभिक प्रशिक्षण हैं और उसके भावी चरित्र की बुनियाद भी. बच्चे का समस्त पालन-पोषण इसी प्रशिक्षण की प्रक्रिया में चलता है, जिस में बच्चे की जन्म-जात प्रवृत्ति उसकी ग्रहण शक्ति के रूप में काम करती है और अभिभावकों के प्रशिक्षण के तौर-तरीके पर उसकी अर्जित प्रवृत्ति बनती और विकसित होती रहती है. यही कारण है कि शैशव में मां-बाप या शिक्षकों द्वारा की गई गलतियां बच्चे के जीवन में ऐसे संस्कार के बीज छोड़ जाती हैं कि समय के साथ वे कटीली झाड़ियों का रूप ले लेते हैं और फिर उनमें प्रयत्न से थोड़ा सुधार ही संभव होता है, उन्हें जड़ से उखाड़ना आसान नहीं होता.

शिशु के मानसिक विकास के प्रारम्भिक चरण

एक महीने की आयु में ही विभिन्न चीजों पर बच्चे की दृष्टि केंद्रित होने लगती है. उनमें से जिनकी उसे याद रहने लगती है उन्हें देखकर वह मुसकराने लगता है, जैसे पहचानने का संकेत दे रहा हो. वाद्ययंत्र हो या गाना, या मां की लोरी अथवा प्यार भरी पुचकार, शिशु इन आवाजों को ध्यान से सुनने व पहचानने लगता है और धीरे-धीरे पसंद की आवाजों को दुहराए जाने की मांग भी करने लगता है. आगे चल कर बच्चे की बोलने की क्षमता का विकास भी इन्हीं ध्वनियों की पहचान पर ही होता है. इसलिए प्रारंभ से ही उसके साथ तोतली भाषा या अटपटी आवाजों में बात न करके सामान्य ढंग से बात-चीत करनी चाहिए.

जब बच्चा बोलने लगता है तो उसके मानसिक विकास की गति में तीव्रता आ जाती है. 'क्या' 'क्यों' जैसे सवालों की झड़ी के साथ वह अभिभावकों के सम्मुख उपस्थित होता है. ऐसे समय उसकी जिज्ञासाओं का समाधान न कर 'सिर मत खाओ' 'बड़े हो कर समझ जाओगे…' जैसे वाक्यों से उसे हतोत्साहित करना भारी भूल है. इससे उसके आत्म-सम्मान को ठेस लगती है व उसकी जानने-समझने की इच्छा दब जाती है.

चार साल का होते-होते बच्चे की जिज्ञासा-प्रवृत्ति तीव्र हो जाती है. वह चीजों को उलट-पुलट कर खिलौनों को तोड़ उनके भीतर झांक कर स्वयं भी जानने की कोशिश करने



बच्चे के सहज स्वस्थ मानसिक विकास के लिए उसकी जिज्ञासाओं का निदान बहुत जरूरी है

लगता है. इन जिज्ञासाओं के समाधान में बड़ों का सहयोग न मिलने से ही उस में तोड़-फोड़ व विद्रोह की प्रवृत्ति जागती है, जिस पर डांट-डपट से उलटा असर होता है. अतः इस उम्र में उसे नर्सरी स्कूल या बालवाड़ी में भेजना लाभप्रद है ताकि उस की जिज्ञासाओं को विकास की राह मिल सके. खिलौनों व अन्य शैक्षणिक खेलों व शिक्षिकाओं के सहयोग से उसकी जिज्ञासाओं का समाधान हो सके और उसे सामूहिक जीवन के दायित्वों से परिचित कराया जा सके. जो माताएं यह शिकायत करती हैं कि बच्चा नर्सरी स्कूल से कुछ पढ कर तो आता नही, बस खा, खेल कर आ जाता है, यह उन की भूल है. बच्चे को भाषा-ज्ञान व गणित से पूर्व दैनदिन, जीवन के व्यावहारिक शिक्षण की बुनियाद पर डालना होता है. उसका प्रारंभिक शिक्षण खेल व मनोरंजन के माध्यम से ही होना चाहिए.

बच्चे दूसरो की नकल या अनुकरण से ही बहुत कुछ सीखते हैं. चाल-ढाल, अंदाज, आवाज और व्यवहार की नकल करना उनकी सहज प्रवृत्ति होती है. यदि पिता उससे कोई वायदा करके भी उसे पूरा नहीं करता तो बच्चा भी झूठ बोलना या बात से मुकरना सीख जाता है. यदि मां शीशे के सामने देर तक बैठ कर अपना शृंगार करती है तो उसे अपनी नन्ही बिटिया के बनने-सवरने पर नाराज नही होना चाहिए. यदि आप चाहते हैं कि बच्चा अच्छी आदतें सीखे, सही भाषा व मधुरवाणी में बोले तो उसके सामने वैसे व्यवहार- आदर्श रखने होगे और उन का उल्लंघन होने पर इस का औचित्य उसकी नन्ही समझ के अनुसार उसे समझाना होगा.

घर के वातावरण का प्रभाव ऐसा हो कि बच्चा बहुत सी चीजो में से अच्छी चीजो और बहुत सी बातों में से अच्छी बातों का चुनाव स्वतंत्र रूप से कर सके, अन्यथा केवल उपदेश या डांट-डपट का असर उस के मानसिक विकास पर अच्छा नही होगा. उसकी इच्छाओं की पूर्ति मे औचित्य व संयम का ज्ञान उसे सही ढग से निर्देशित कर, उस में अपनी समझ-बूझ का विकास करके कराना चाहिए. अधिक खाने पर जोर देने से जैसे बच्चे की खाने के प्रति अनिच्छा हो जाती है. उसी तरह लगातार नए खिलौने मिलते रहने से उसे खिलौने पा कर विशेष प्रसन्नता नही होती. अतः बच्चे की इच्छाओं की अनियंत्रित पूर्ति भी नही की जानी चाहिए. इससे वह स्वार्थी बन सकता है. कही सयम से काम लेने, उचित न होने पर उस इच्छा को दबाने की प्रेरणा भी उसे मिलनी चाहिए. उसकी आत्मनिर्भरता व कर्मठता की तथा दूसरो की सहायता करने की प्रवृत्तियों



बड़ों की नकल भी बचपन में सीखने का एक माध्यम है

को प्रोत्साहन भी देना चाहिए. भविष्य में कठिनाइयो का सामना करने की क्षमता का विकास इसी प्रारंभिक प्रशिक्षण पर निर्भर है.

घर में प्यार व परस्पर विश्वास और सम्मान का वातावरण बच्चे के स्वस्थ मानसिक प्रशिक्षण के लिए बहुत आवश्यक है. यह उसे मिल सके, इसके लिए भरसक प्रयत्न किया जाना चाहिए. इससे उसकी सर्वतोमुखी प्रतिभा का विकास होगा. प्यार से उसे गलत बातों से मोडा जा सकता है और सहानुभूति से उसकी बात सुनते हुए उसे सम्मान देते हुए उसके मन को टटोला जा सकता है और उसी अनुसार उसे निर्देशित करते हुए उससे अपनी बात मनवाई जा सकती है.

हर बच्चा आरभ में आज्ञाकारी होता है, मां-बाप के निकट सपर्क में वह सुरक्षा अनुभव करता है, इसलिए उन की बात मानता है, उन्हें आदर्श समझ उन की नकल भी करता है. पर जब वह अपने आस-पास की दुनिया को अपने तर्क व ज्ञान की कसौटी पर कसने लगता है तब मां-



घर में परस्पर प्यार व सहयोग का वातावरण बच्चे के स्वस्थ मानसिक प्रशिक्षण की अनिवार्य शर्त है

बाप के आदेश ही उसके लिए पर्याप्त नहीं होते. कोई बात क्यों ठीक या गलत है, इसे अच्छी तरह समझाना ही काफी नहीं है, बच्चे को उस का यकीन भी दिलाना होगा यहां दंड व पुरस्कार, रोक व प्रोत्साहन की विधियों का सोच-समझ कर चुनाव करने और कुछ लोचपूर्ण ढंग से उन्हें व्यवहार में लाने की आवश्यकता होती है. बच्चे के व्यक्तित्व का सम्मान करते हुए उसे अनुशासन सिखाइए, आपको निराश नहीं होना पड़ेगा.

बच्चे के प्रारंभिक शिक्षण में खिलौने, गीत, कहानी, बच्चे के अपने निजी संग्रह (बेशक आपकी नजर में वे कंचे, लकड़ी या पत्थर के टुकड़े आदि वस्तुएं बेकार समझ कर फेंकी जाने वाली हों), उसके संगी-साथियों सभी का महत्व है. अत: उसे मनोरंजक ढंग से खेल-खिलौनों के माध्यम से, गीत-संगीत, कहानी, नृत्य, चित्रकला द्वारा सिखाइए. उसकी अपनी चीजों को, उसकी अपनी जगह को उससे बिना पूछे न छीनिए.

उसकी इच्छाओं की यथासंभव पूर्ति करिए. उस के साथियों का भी सम्मान करिए. गलत बात के लिए उसे उसके साथियों के या बाहर के व्यक्तियों के सामने डांटकर उसका अपमान मत कीजिए. उसकी जिज्ञासाओं का समाधान करिए व हर बात में उसकी नन्ही सम्मति, उसके नन्हे सहयोग को आमंत्रित कर उसे सम्मान दीजिए. वह आपसे हर बात सीखेगा, आपकी हर बात मानेगा.

याद रखिए, बेतरतीब झाड़-झंखाड़ व सुघड़ माली के हाथ से तराशे गए पौधे में जो अंतर होता है, वही अंतर पाया जाता है एक नासमझ मां व समझदार सुघड़ मां द्वारा पाले-पोसे गए बाल- व्यक्तित्व में.

अच्छी आदतों का विकास

आदतों का पुंज ही व्यक्ति का चरित्र कहलाता है. चरित्र-निर्माण, शिक्षा का प्राथमिक महत्वपूर्ण कार्य होना चाहिए. शिक्षण में आदतों का पहला स्थान है, क्योंकि स्कूल



स्कूल भेजने से पहले बच्चे को तस्वीरों वाली आकर्षक पुस्तकों और···

पूर्व शिक्षा आदतों से ही शुरू होती है. अतः बच्चा बुरी आदतों का गुलाम न बने, यह प्रारंभिक वर्षों से ही देखना होगा. स्वतंत्र व्यक्तित्व की सुदृढ़ नींव भी, ये प्रारंभिक आदतें ही होती हैं, सफल जीवन की भी. दो से पांच वर्ष के बीच ही उसे संकल्प, कार्यशीलता, लगन और अभ्यास की ओर प्रेरित करना चाहिए, तब स्कूल के विधिवत् शिक्षण के लिए वह पूरी तरह तैयार हो सकेगा. स्कूल-पूर्व शिक्षण से प्रारंभ से ढाई-तीन वर्ष तक माता द्वारा प्रशिक्षण व तीन से पांच वर्ष में नर्सरी या बालवाड़ी प्रशिक्षण का इसीलिए महत्त्व है.

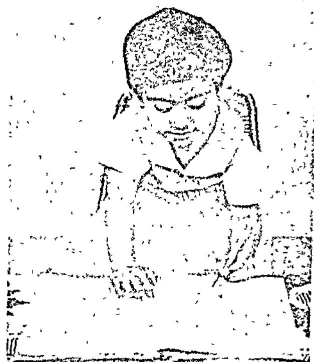
स्कूल भेजने की तैयारी

कई बच्चे पहले दिन ही स्कूल में जाकर प्रसन्न होते हैं. वहां के कार्य-कलाप में रुचि लेने लगते हैं. कइयों को स्कूल भेजना या स्कूल में छोड़कर आना माता-पिता के लिए एक समस्या बन जाती है. बच्चे स्कूल जाने से पूर्व रोते हैं, वहां बैठने से मना करते हैं और मौका पाकर घर भाग आते हैं. क्यों? इसलिए कि उन्हें इसके लिए पहले मानसिक रूप से तैयार नहीं किया जाता.

यदि घर में बड़ा बच्चा पढ़ता है तो अक्सर छोटा भाई-बहन भी उसे देख पढ़ाई में, स्कूल जाने में रुचि लेने लगता है, यद्यपि यह जरूरी नहीं. लेकिन अकेला बच्चा, जब देर तक केवल मां के ही संपर्क में रहता है, तब तो उसके साथ प्रायः ही इस समस्या का सामना करना पड़ता है. क्योंकि मां पहले से इस ओर ध्यान नहीं देती.

बच्चे को स्कूल भेजने से पहले घर में उसे तसवीरों वाली आर्कपक पुस्तकें, गैक्षणिक खिलौने देकर साथियों के बीच बिठाकर, कभी-कभी उस स्कूल की तरफ ले जाते हुए स्कूल दिखाकर उसे इसके लिए मानसिक रूप से तैयार करना चाहिए. यह तैयारी होने पर बच्चा स्वयं ही स्कूल जाने की जिज्ञासा रखेगा और मांग उठाएगा.

बहुत बार माताएं शिशु को नर्सरी स्कूल में भेजने का मतलब अपनी जान छुड़ाना ही समझती हैं. अक्सर उनके मुंह से ऐसा सुना भी जाता है, "दिन भर इसके मारे नाक में दम है, स्कूल जाएगा तो मेरी जान छूटेगी" या "कर लो खूब शरारतें, स्कूल में टीचर ही तुम्हें सीधा करेगी." ये बातें सुनकर शिशु के कोमल मन में स्कूल का डर बैठ जाना स्वाभाविक है. वह स्कूल जाने में कतराने व भय खाने लगता है कि न जाने वहां उसके साथ क्या हो? अतः अभिभावकों को इस बारे में बहुत सावधानी बरतने की जरूरत है. कभी भूलकर भी स्कूल या टीचर के नाम को हौआ बना कर बच्चे के सामने न रखें, बल्कि उस के मन में स्कूल और शिक्षिका में आकर्षण पैदा करने के लिए अच्छी-अच्छी



···प्रारंभिक अक्षर ज्ञान द्वारा उसकी स्कूल के प्रति रुचि जागृत कीजिए

बातें बताए. उसे कभी भी डरा-धमका कर या पैसों, टाफियों का लालच देकर स्कूल न भेजें. इससे उसकी आदत खराब हो सकती है.

बालवाड़ी, नर्सरी, मांटेसरी स्कूलों में एकदम पुस्तकों से नहीं पढाया जाता. इसलिए उसके पूर्व बच्चे को घर में अक्षरज्ञान देना जरूरी नहीं. पर पांच वर्ष की आयु के बाद सीधे पहली कक्षा में भेजना हो तो तीन से पांच वर्ष की आयु में उसे घर पर मामूली अक्षर ज्ञान, गिनती के साथ दैनिक जीवन का सामान्य ज्ञान देना चाहिए. खिलौनों से, रंगीन माडलों व तसवीरों से रंगों की, गिनती की, नामों की यह जानकारी करानी चाहिए. इस तरह पूर्व तैयारी से स्कूल जाना या स्कूल का काम उसे बुरा नहीं लगेगा.

स्कूली पढ़ाई शुरू हो जाने पर भी 'होम वर्क' करने में उसकी पूरी सहायता करना, उसकी शिक्षण विकास-गति की देख-रेख करना, कभी-कभी स्कूल जाकर शिक्षिका से मिलकर उसकी व्यवहार-समस्याओं (यदि कोई हो तो) को सुलझाना भी अभिभावकों की जिम्मेदारी है. इस तरह स्कूल जाने की पूर्व तैयारी, सहयोग, संरक्षण मिलने से बच्चा न तो स्कूल जाने से कतराएगा, न अकारण पढाई में पिछड़ेगा, न व्यवहार समस्या उत्पन्न करेगा.

घर पर कहानियों, गीतों, खिलौनों और तसवीरों के माध्यम से अच्छी सामान्य बातों की शिक्षा देकर भी पढ़ने-सीखने में उस की रुचि बढ़ाई जा सकती है. सामान्य ज्ञान-वर्धन के लिए कभी-कभी बाहर ले जाकर उसे प्राकृतिक वस्तुओं और बाहरी व्यवहारों की जानकारी दीजिए. हर रोज सैर के समय भी उसकी जिज्ञासाओं की पूर्ति करते हुए छोटी-मोटी जानकारियां दी जा सकती है.

मुख्य बात है, बच्चे के मानसिक विकास और उसके व्यक्तित्व-निर्माण में रुचि लेने की, उसे नियमित रूप से थोड़ा समय व ध्यान देने की, उसे प्यार से विश्वास में ले कर ही सिखाने की; उसके स्वतन्त्र कार्य-व्यवहार में सहायता-सहयोग देकर उसे विवेकशील, कर्मठ और आत्मनिर्भर व्यक्ति की बुनियाद देने की.

यह बुनियाद नैतिकता, मानवता और भारतीयता पर भी टिकी हो. बच्चे में अपने परिवार, समाज, राष्ट्र, धर्म, मानवता के प्रति गौरव व सम्मान की भावना जागे और विकसित हो, इसके लिए प्रारंभ से ही उसे बड़ों का सम्मान



करना, भाई-बहनों से पड़ोसी व सहपाठी बच्चो से प्रेम करना, उनके साथ मिल-बैठकर चलना, गरीबों से सहानुभूति पूर्ण रुख अपना कर अपना बचा अतिरिक्त खाना, फालतू चीजें जरूरतमंद बच्चों को देना, जानवरों, पक्षियों के प्रति निर्दयता पूर्ण व्यवहार न करना आदि बातें सिखाई जानी चाहिए. ये उदात्त भावनाएं उसके स्वस्थ मानसिक विकास में सहायक होंगी और जीवन में महानता के प्रति उसका आकर्षण बढाएंगी.

इस के लिए बच्चे की उद्दण्डता, अशिष्टता, क्रूरता और स्वार्थपरता की उभरती प्रवृत्तियों को आरम्भ से ही नियंत्रित करें. और दिशा परिवर्तन या आदर्श-प्रेरणा के लिए उन्हे सरल, मनोरंजक रूप में महापुरुषों के बचपन एव जीवन की प्रेरक घटनाएं सुनाएं. बच्चे की कल्पना के विकास के लिए उसे कल्पना की उड़ान वाली राजा-रानियों, परियों, उड़नखटोलों, राकेटों आदि की अच्छी चुनी हुए कहानिया सुनाना भी आवश्यक है. पर आज के वैज्ञानिक युग मे बच्चो को भूतो-प्रेतों, राक्षसों, डायनों की कपोल-कल्पित व भयभीत करने



छोटे भाई-बहन के प्रति प्यार व...



...जानवरों से सहृदयता का व्यवहार करना भी इसी आयु में सिखलाइए

वाली कहानियों से दूर ही रखना ठीक होगा. इससे उन के मन में भय-ग्रंथि बन सकती है और वे सोते-सोते चीख सकते हैं. अंधेरे में या अकेले बाहर जाने से भय खा सकते हैं. भयभीत न हों, तो भी आज के बच्चे उन पर सहज ही विश्वास नही कर सकते, इसलिए दुविधाग्रस्त रहकर स्वय में उलझ सकते हैं. अत. बच्चे को कहानियां ऐसी सुनाए, जो उसकी कल्पनाशक्ति का विकास भी करें और उसके चरित्र-निर्माण मे भी सहायक हों.

ध्यान रहे व्यक्तित्व, चरित्र और संस्कारिता की बुनियाद इस स्कूल-पूर्व शिक्षणकाल मे ही बनती है. अत: 'अभी यह बहुत छोटा है, अभी क्या सीखेगा ?' वाली गलत धारणा को मन से निकालिए और बच्चे को उसकी आयु, क्षमता, रुझान के अनुसार ही प्यार से, खेल-मनोरजन के माध्यम से प्रशिक्षित करने का यह अवसर न चूकिए. ●

43

व्यवहार समस्याएं

"कमल बड़ा मुहफट है, एक बात कहो तो आगे से चार सुनाता है. ऐसा उद्दण्ड, अशिष्ट बच्चा हमारे घर में न जाने कैसे पैदा हो गया ? हर बात में 'ना' तो उस का तकिया कलाम है. ऐसा विद्रोही बालक हम ने कभी नही देखा, हम तो तंग आ गए हैं इससे···"

"भगवान् बेटा दे तो नरेश जैसा. कैसे मां-बाप के कहने पर चलता है, पढाई में कितना अच्छा रिजल्ट लाता है. एक ये हमारे साहबजादे है, न काम के, न धाम के; पढ़ने में फिद्दी और ऊधम बाजी में सबसे आगे. बस सिनेमा या सड़कों पर मटरगश्ती. जरा-सा कुछ कह दिया तो घर से भाग जाने की धमकी. एक बार तो परीक्षा के दिनों में ही घर से भाग कर बबई जा निकला. कुछ दिनों बाद स्वय ही धक्के खाकर लौट आया. कान पकड़े, 'आगे ऐसा नही करूगा.' पर फिर वही लच्छन. समझ मे नहीं आता यह लड़का कैसे सुधरेगा?"

"इस दुबली-पतली नन्ही गुड्डी को तो देखो, जरा सी जान और मिजाज आसमान पर. है तो तीन साल की पर गुस्सा आने पर पूरा घर सिर पर उठा लेती है. चीखेगी, चिल्लाएगी, चीजें उठा-उठा कर फेंकेगी, नीचे जमीन पर लोट-पोट हो हाथ-पैर पटकेगी, दीवार से अपना सिर फोड़ लेगी. रोते-रोते सांस रोक लेगी, हार कर उसकी बात माननी ही पड़ती है. क्या करें, कुछ समझ मे नही आता."

"रश्मि नाम तो बड़ा सुदर है, पर कारनामे कालिख पोतने वाले. इसने तो हमारे खानदान का नाम मिट्टी में मिला दिया है." आज घर से पैसे चुरा रही है, कल स्कूल से किताबें, कापियां, पेंसिलें. वहा मारपीट भी करने लगी है. अच्छा खाने-पहनने को मिलता है, घर से सब चीजें मिलती हैं. जेब-खर्च भी हम कम नहीं देते, फिर भी न जाने यह बुरी आदत इसे कैसे लग गई ?··· अजी बहुत समझाया, कई बार मारा भी, पर कोई असर नही. पढ़ाई छुड़ा देंगे तो इसकी जिंदगी खराब हो जाएगी. छोटी बहन की तो यह दुश्मन है, दुश्मन. उसे तो इससे बचाना पड़ता है, नही तो मौका पाते ही उसे पीट देती है. उसकी चीजें छीनकर तोड़-फोड़ देती है. उधर टीचर द्वारा रोज-रोज इस की शिकायतें. हे भगवान्, क्या करें···"

"डाक्टर, यह बारह साल की हो गई, अभी भी किसी दिन बिस्तर भिगो देती है. इसी कारण इसे किसी रिश्तेदार के घर भी नही भेजते कल को इसे ससुराल भी जाना होगा इसकी यह आदत न सुधरी तो ? अब तो इसे इसका इतना डर बैठ गया है कि किसी से खुल कर बोलती भी नही. हर समय गुमसुम बनी रहती है. पता नही इसी ग्लानि के मारे या और कोई कारण है ? अब आप ही इसे देखिए···"



शैशव-मन की ये गांठें : घर-घर की बातें

ऐसे मामले आए दिन मनोवैज्ञानिकों के पास आते रहते हैं. ऐसे बच्चे अनेक घरो मे माता-पिता के लिए समस्या बने हुए हैं. बच्चो की ये व्यवहार-समस्याएं अनगिनत हैं. शैशव मे उनका एक रूप है, बचपन में दूसरा, किशोरावस्था मे तीसरा,पर प्रकारांतर से शैशव में पड़ी गांठें ही आगे चलकर अनेक पारिवारिक-सामाजिक समस्याओ को जन्म देती हैं. कुछ ग्रंथियां तो इस तरह जड़ जमा लेती हैं कि फिर जीवन भर साथ नही छोड़ती. इसलिए बच्चे के पहले पाच वर्ष ही इन्हें सुलझाने का उपयुक्त समय है. अपने बच्चे को यहीं समझिए और संभालिए.

अभिभावकों का सहयोग

आपकी अपनी निजी समस्याए है, बच्चों की अपनी भ्रातियां और परेशानियां है. अपनी समस्याओ और व्यस्तताओं मे घिरे आप इन्हें समय नही दे पाते, समझ नही पाते. उनकी छोटी-छोटी मानसिक उलझनों को सुलझा नही पाते तो वे अपनी भ्रातियों मे अकेले ही भटकते हुए अपनी अभिव्यक्तियों के लिए गलत रास्ते चुन लेते हैं.

कोई तुनकमिजाज हो जाता है, कोई 'नर्वस'. कोई गुस्से में तोड़-फोड़ करने लगता है, कोई दब्बू और चुप्पा बन जाता है. कोई घर से भागता है, तो कोई अपने मे ही इतना मग्न हो जाता है कि बाहर खेलने तक नही जाता,कोई छीन-झपट कर खाने लगता है, तो किसी को खाने से ही घृणा हो जाती है. चोरी, झूठ के पीछे भी दमन, जोर-जबर्दस्ती, पक्षपात,ईर्ष्या, उपेक्षा, हीनभावना, असुरक्षा आदि न जाने कौन-कौन सी अनुभूतियां होती है. उन्हें अभिभावकों के व्यवहार से उत्पन्न प्रतिक्रियाए ही कहना ठीक होगा.

बच्चा अवज्ञाकारी है, अपने मे छोटे भाई-बहन की खुशी नही देख सकता. मां-बाप को उसकी यह ईर्ष्या व उससे उत्पन्न अवज्ञा, तोड़-फोड़ या मारपीट की आदत प्राय: समझ में नही आती. वे उसे ताड़ना देते है और समस्या सुलझने के बजाए उग्र होती जाती है.

बच्चा नाखून काटता है. बिस्तर भिगो देता है; पढ़ाई मे एकाएक पिछड़ने लगता है; अंगो को निरर्थक चलाने या जननेन्द्रियो से खेलने लगता है, गुम-सुम रहने लगता है या हकलाने लगता है, अति संकोची या शर्मीला हो जाता है. तब भी माता-पिता उसकी आतरिक परेशानियों को पढ़ने का प्रयत्न नही करते. उसकी मानसिक उलझनों को सुलझाने की ओर ध्यान नही देते. और आगे चलकर बच्चा हीन व्यक्तित्व का अभिशाप झेलने के लिए विवश हो जाता है, जबकि शैशव में उसे केवल सुनने की ही जरूरत है और जरूरत है उसे खोलने-बोलने के लिए प्रेरित करने, अच्छे कामों व स्वयनिर्भरता के लिए उत्साहित करने की. उसके व्यक्तित्व की कमियों को दूर करने व उसके गुणों को विकास की सही राह देने की. उसकी ओर थोड़ा ध्यान देने से ही उसे व्यक्तित्व-विकास में पिछड़ने से बचाया जा सकता है.

बाल-निर्देशन केंद्रों में आने वाली प्रमुख समस्याएं

फिर भी स्थिति हाथ से निकलती दिखलाई पड़े और समस्या उग्र रूप धारण करने लगे, उसके पूर्व ही बाल-मनो-वैज्ञानिक या मनोचिकित्सक की, (चाइल्ड गाइडेंस क्लीनिक) बाल-निर्देशन केन्द्र आदि से सलाह लेनी चाहिए ताकि बच्चे को समय पर सभाला जा सके.

बाल-निर्देशन केंद्रों पर आए दिन प्राय: उग्र रूप धारण करने के बाद ही आने वाली ये प्रमुख समस्याएं हैं :

1. अंगूठा चूसना या नाखून कुतरना.
2. दो-तीन साल की आयु के बाद भी बिस्तर भिगोना.
3. सोते-सोते चौंककर जाग जाना या भयभीत हो चीख मारना.
4. अति सकोची या शर्मीला होना.
5. अशिष्टता और उद्दण्डता.
6. शरारतें या उपद्रव करना.
7. अवज्ञा और विद्रोह.
8. तुनकमिजाजी या चिड़चिड़ापन.
9. क्रूरता और कठोरता.
10. चीजों को तोड़ना-फोड़ना, सार्वजनिक सपत्ति को हानि पहुचाना.
11. क्रोध और बदमिजाजी.
12. हठीलापन या जिद्दीपन.
13. ईर्ष्या, द्वेष, बदले की भावना.
14. सामूहिक जीवन से अरुचि.
15. खाने से अरुचि, भूख न लगना.
16. पढ़ाई मे पिछड़ापन.
17. घर से या स्कूल से भागने की प्रवृत्ति.
18. निरर्थक अग-सचालन.
19. जननेन्द्रियों मे खेलना.
20. हीनता और निराशा की भावना.
21. चोरी करना.
22. झूठ बोलने की आदत.
23. घमडीपन.
24. अस्पष्ट बोलना, तुतलाना या हकलाना.
25. अति चिन्तित रहना आदि.

घरों में ऐसी समस्याएं उपस्थित होने पर माता-पिता दुखी और चिंतित होते हैं. अपने ढंग से समस्याओं को सुलझाने का किंचित प्रयत्न भी करते हैं. पर बहुत कम माता-पिता इसमें सफल हो पाते हैं. असफल होने पर धैर्य छोड़ वे बच्चे को ताड़ना देते हैं, दूसरों के सामने उसे भला-बुरा कहते हैं. अपने भाग्य को दोष दे उल्टी-सीधी बातें कहते रहते हैं. उसे सुलझाने में समझदारी व सहानुभूति से काम नहीं लेते. और बच्चा उन परेशानियों के साथ अपराध चेतना से घिरकर और उलझ जाता है.

अतः इन व्यवहार समस्याओं को सुलझाने के लिए इनके कारणों की तह में जाकर यथासंभव उन्हें दूर करना होगा. अपरिहार्य स्थितियों में बच्चे को उनका सामना करने के लिए मानसिक रूप में तैयार करना होगा. उसे अपनी व घर की समस्याओं में भागीदार बनाना होगा.

उसे छोटी-मोटी जिम्मेदारियां सौंपकर उसकी क्षमताओं को मान्यता देनी होगी, अच्छे कार्यों को प्रशंसित कर उसे अच्छे मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित करना होगा. इन सबके लिए सबसे पहले उसे समय देकर प्यार और सुरक्षा का आश्वासन देना होगा, उसकी बातों को सुनने व सुलझाने का धैर्य जुटाना होगा. ऐसा करके देखिए, आप पायेंगे, आपका बच्चा न स्वयं में समस्या है, न आपके लिए समस्या है.

मुख्य कारण

अक्सर इन व्यवहार-समस्याओं के मूल में निम्न कारण ही होते है

घर की परिस्थितियां : प्रेम का अभाव, माता-पिता के बीच संघर्ष, अस्थिर चित्त, नासमझ या अति व्यस्त मां, माता-पिता द्वारा दूसरे बच्चे या बच्चों के प्रति पक्षपात से उपेक्षित बच्चे में ईर्ष्या-द्वेष की भावना का जन्म. घर में बड़ों का स्वार्थी, लालची या भ्रष्टाचारी रूप भी इन समस्याओं को जन्म दे सकता है. अनुशासन के नाम पर दमन, मारपीट, ताड़ना या इसके बदले लाड़ में अथवा स्वतन्त्रता के नाम पर पूरी छूट. अधिक लाड़-प्यार में बच्चे आलसी, स्वार्थी, पर-निर्भर बन जाते हैं. घर में स्वावलम्बन और जिम्मेदारी उठाने के अवसरों का अभाव, माता-पिता द्वारा बात-बात में झूठ बोलना, शेखी मारना या उनकी आडम्बर[illegible]ी, दिखावे की आदत. घर में लड़के और लड़की के पालन-पोषण में पक्षपात. दूसरे बच्चे की योग्यता, गुणों की प्रशंसा कर अपने कम योग्य बच्चे को नीचा ठहराने की आदत भी बच्चे को विद्रोही या दब्बू बना देती है. बच्चे की क्षमता और योग्यता से अधिक आशा लगाना. पढ़ाई में पीछे रहने पर प्रोत्साहित करने की बजाय उसे प्रताड़ित और अपमानित करना. घर में नए छोटे बच्चे के आगमन पर मां का बड़े बच्चे के प्रति विमुख या उदासीन हो जाना आदि. इनमें से एक या अधिक बच्चे के मानसिक और बौद्धिक विकास में बाधक हो सकते हैं.

स्कूल की परिस्थितियां : स्कूल में व्यक्तित्व-विकास के बजाय केवल किताबी पढ़ाई पर जोर, स्कूल का वातावरण ठीक न होना. बुरे बच्चों की कुसंगति, अध्यापकों की लापरवाही, पढ़ाई के विषयों का या स्कूल के स्तर का अथवा अंग्रेजी माध्यम का बच्चे की मानसिक क्षमता से भारी पड़ जाना. नजर की कमजोरी, कोई शारीरिक कमी या घर की परिस्थितियों के कारण मानसिक उलझन से उसका पढ़ाई से पिछड़ना.

स्वास्थ्यहीनता या शारीरिक त्रुटियां

बच्चा शारीरिक कमियों या कमजोरी, बीमारी आदि कारणों से भी व्यवहार समस्या का शिकार हो सकता है. उसकी 'एड्रीकीन' ग्रंथियां ठीक काम न कर रही हों, 'टांसिल्स' या 'एडीनायड्स' सूजे हों, वह लगातार खांसी-जुकाम, सिरदर्द से पीड़ित रहता हो, उसकी नजर कमजोर हो, उसमें खून की, पोषण की कमी हो, वह बार-बार बीमार पड़ता हो और उस पर पूरा ध्यान न दिया जाता हो तो वह पढ़ाई में भी पिछड़ सकता है. चिड़चिड़ा, बदमिजाज और क्रोधी भी हो सकता है. बहुत दुबला या अधिक मोटा अथवा सांवला होने पर भी हीन भावना से घिर सकता है. उसमें जन्मजात विकार या बाद में किसी बीमारी, दुर्घटना आदि से कोई शारीरिक त्रुटि हो और इस बात पर उसे उसके साथी छेड़ते हों तो भी समाज से बदले की भावना या हीनभावना से भरकर वह अपराधी व्यवहार कर सकता है.

हीनता के कारण या तो वह बाह्य समाज से कटकर अकेला रहना पसंद करेगा, और इस तरह वह आत्मकेंद्रित हो, दब्बू, डरपोक, संकोची नर्वस होकर पढ़ाई में व जीवन की प्रतियोगिता में पिछड़ने लगेगा. या फिर बदले की भावना से क्रोधी, उद्दण्ड, शरारती और क्रूर हो जाएगा. समय पर उसे संभाला न जाए तो गुंडा, अपराधी भी बन सकता है, जबकि समय पर उस पर ध्यान देने से क्षतिपूर्ति के रूप में वह असामान्य गुणों का स्वामी भी हो सकता है.

इस तरह इन सभी समस्याओं के भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न कारण होते हैं. पर मूल कारण होता है : उपेक्षा या अति सुरक्षा. इसलिए कुछ विशेष समस्याओं में संबंधित विशेषज्ञों की राय के अलावा अन्य सभी सामान्य समस्याओं के लिए इन सामान्य नियमों पर ध्यान दें :

—सर्वप्रथम तो बच्चे का डाक्टरी परीक्षण करवाकर उसकी बीमारी, कमजोरी, नजर की कमजोरी आदि का इलाज कराएं. शारीरिक त्रुटियों का भी यथासभव समाधान



मां की स्नेहिल गोद व भौतिक सुख-सुविधा बच्चे के भावात्मक विकास की बुनियादी आवश्यकता है

खोजा जा सकता है. बच्चे को साहसी आत्मविश्वासी व स्वनिर्भर बनने में सहायता करें और उसे अपनी असामान्य स्थिति से निपटने तथा दुनिया का सामना करने के लिए तैयार करें. इस सबध मे बच्चे की देर तक उपेक्षा ठीक नहीं होगी.

—हर बच्चे को अपने अभिभावकों से निरंतर प्यार ध्यान, भौतिक व भावात्मक सुरक्षा पाने का हक है. प्यार और प्रोत्साहन उसके मानसिक स्वास्थ्य के लिए जरूरी खुराक है और भौतिक व भावात्मक सुरक्षा पाना उसका मूलभूत अधिकार है; उसकी बुनियादी आवश्यकता है. हर बच्चे की ये मौलिक आवश्यकताएं पूरी की ही जानी चाहिए. यदि माता-पिता इनकी पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहेंगे तो शेष कमी को बच्चा स्वयं स्वीकार कर लेगा या उसे इसके लिए आसानी से तैयार किया जा सकेगा.

—बच्चे के स्वतंत्र विकास के लिए उसकी कमियों व व गलतियों को सहानुभूति पूर्ण ढग से दूर करने में मदद करनी चाहिए और उसकी छिपी अविकसित प्रतिभा को उभारने के लिए उसे निरतर प्रेरणा-प्रोत्साहन देना चाहिए. पर उससे उसकी आयु व क्षमता के अनुसार ही अपेक्षा की जानी चाहिए, उससे अधिक नही. इस सबध मे किसी बच्चे के साथ उसकी तुलना करने का ढग बदलिए, उसकी दूसरों से भिन्नता, स्वतंत्र सत्ता को स्वीकारिए, वह जो है, जितना है, उसी रूप में, उसी क्षेत्र में, उसी दिशा में उसे आगे बढाइए.

—बच्चे को यथासभव आत्मनिर्भर व स्वावलंबी बनाइए. कहीं सहायता करिए, तो कही स्वयं भी थोडा जूझने दीजिए. उस का भविष्य उसके संतुलित विकास पर ही निर्भर है.

—घर मे यथासंभव सच्चरित्रता व शांति का वातावरण रखिए. बच्चे के सामने कलह का परिणाम उसके लिए घातक होगा. इसी तरह झूठ बोलने, झूठे दंभ या दिखावे में विश्वास करने का भी. आज माता-पिता से एकदम आदर्शचरित्र का उदाहरण प्रस्तुत करने की अपेक्षा व्यर्थ है. फिर भी यथासंभव बच्चे को घर में अच्छे आचरण का पाठ ही मिलना चाहिए, अन्यथा गलत बातों का अनुकरण उसे गलत मार्ग पर ले जाएगा ही.

—एक बच्चे से दूसरे को, भाई से बहन को कम समझना, किसी के प्रति उपेक्षा, किसी के प्रति पक्षपात दिखाना, दोनों को बिगाड़ना है. माता-पिता को इस ओर से सचेत रहना चाहिए.

—घर में नए बच्चे के आगमन पर भी ध्यान रखना होगा कि पहले बच्चे का स्थान एक झटके से न छीना जाए. उसे धीरे-धीरे इसके लिए मानसिक रूप से तैयार किया जाए. छोटे भाई-बहन की कुछ जिम्मेदारी उस पर भी डाल उसे उससे प्यार करना सिखाया जाए, ताकि वह उसे अपनाए, अन्यथा बड़े बच्चों को नए बच्चे से ईर्ष्या हो सकती है फिर वह ईर्ष्या में आ छोटे को मारपीट सकता है, उसकी चीजें छीन सकता है, उसकी नकल में बिस्तर भिगो सकता है, मा का सान्निध्य व ध्यान पाने या उससे बदला लेने के लिए जिद्दी, क्रोधी, उद्दण्ड या मानसिक रोगी हो सकता है.

—बच्चे को अपना लघु संस्करण समझना भूल है. हर बच्चा अपनी एक विशेषता लेकर आता है. उसे जबरदस्ती अपनी महत्त्वाकांक्षाओं या सपनों के अनुकूल चलाना भूल होगी. उसके मानसिक झुकाव और उसकी शारीरिक-मानसिक क्षमता के अनुसार ही उसे दिशा दीजिए.

—हमारा ध्येय बच्चों को सुधारना नहीं, बनाना होना चाहिए. सुधार की बात तो बिगाड़ के बाद आती है. प्रयत्न करें कि बिगाड़ न हो.

—बच्चा न्यायसंगत रूप से अपना हक पाए व आप उसके स्वतन्त्र अस्तित्व को स्वीकार उसे ठीक दिशा देने में उसकी सहायता भर करें, वह भी मित्रवत् सहानुभूति पूर्ण ढंग और व्यवहार से. उसे उचित सुविधाएं व अवसर देकर, पर पूर्ण सुविधाओं के साथ मनमानी करने के लिए अकेला छोड़ कर नहीं. उसकी प्रवृत्तियों व गतिविधियों का मूल्यांकन करने के लिए उस पर एक सतर्क, किंतु तटस्थ दृष्टि रख कर, सीधे बात-बात में रोक-टोक या हस्तक्षेप द्वारा नहीं.

—बच्चे के स्कूल का चुनाव भी सोच-समझ कर करें. आगे चलकर दिलाए जाने वाले विषयों का भी. माता-पिता व अध्यापकों के बीच निरंतर संपर्क, विचार-विमर्श परस्पर सहायता द्वारा ही बच्चे की शिक्षा-प्रगति व मानसिक विकास को सही दिशा दी जा सकती है.

—अंत में फिर वही मूल बात कि समस्याएं अकारण नहीं होती. अपने बच्चे की समस्या का कारण समझने की कोशिश करिए व उसी अनुसार उसका हल निकालिए

कुशल मां-बाप की तारीफ इसी में है कि समस्या का कारण उपस्थित ही न होने दिया जाए; हो तो उसे शुरू में ही पहचान, उसे आगे बढ़ने से रोका जाए. बच्चे और अभिभावक में निरंतर संपर्क व आदान-प्रदान से ही यह संभव है, फिर भले ही व्यस्तता के बीच कुछ क्षण ही उसे रोज क्यों न मिलें.



नए शिशु के आगमन पर बड़े भाई बहन को उसकी देख भाल में भागीदार बनाकर उनमें प्यार की नींव सुदृढ़ कीजिए

विशेष समस्याएं

इन सामान्य बातों पर ध्यान देने से बहुत सी सामान्य समस्याओं का समाधान संभव है. फिर भी कुछ विशेष समस्याओं के समाधान के लिए यहां अलग से भी विचार करना जरूरी लगा. वे प्रमुख समस्याएं हैं :

बिस्तर भिगोना

बाल मनोवैज्ञानिकों के अनुसार दो वर्ष की आयु तक सोते हुए मूत्र-त्याग कोई चिंता की बात नहीं. अपने बच्चों के मूत्र-त्याग का समय मालूम करके माताएं उस समय उठकर उन्हें पेशाब करा दें. यदि बच्चा बिस्तर भिगो भी दे तो बिना उस पर क्रोध किए कपड़े बदल देने चाहिए. पर दो वर्ष की आयु के बाद भी यह आदत बनी रहे; बार-बार



मानसिक तनाव, भय, चिंता, आदि कारणों से भी बच्चे बड़ी आयु तक बिस्तर भिगोते रहते हैं

सिखाने पर भी बच्चा रात को सोते समय बिस्तर भिगो दे, तो समस्या का समाधान खोजना होगा.

अनैच्छिक या अवांछित रूप में बच्चा बिस्तर भिगोता रहता है तो इसके कारण शारीरिक, मानसिक भी हो सकते हैं, पारिवारिक वातावरण संबंधी भी और बच्चे को सही प्रशिक्षण न मिलने से संबधित भी.

शारीरिक कारण : कुछ प्रमुख कारण हैं, पेट में कृमि होना, रात को अधिक मात्रा में भोजन करना, सोते समय दूध, पानी आदि अधिक मात्रा में लेना. कब्ज और अपच, सामान्य कमजोरी व अपोषण, गले की गिल्टियों की सूजन, पेशाब में एसिड व खट्टापन होना. कोई शारीरिक विकृति या मूत्र-नली में संक्रामक रोग आदि.

मानसिक कारण : मानसिक कारणों में भय, चिन्ता, तनाव, कोई हीन-भावना, छोटे भाई-बहनों से ईर्ष्या, मां से बदले की भावना, मां का ध्यान आकर्षित करने का अचेतन उपक्रम, रात को सोते समय डरावनी कहानियां सुनना, उपेक्षा, अकेलापन व असुरक्षा अनुभव करना. एकाएक घर या स्कूल बदलना, घर में नन्हें भाई-बहन का आगमन, परिवार में कोई दुखद घटना या अचेतन विद्रोही भावना आदि प्रमुख हैं.

वातावरण संबंधी कारण : वातावरण संबंधी कारण भी प्रायः ये ही हैं. क्योंकि घर में उपेक्षा, पक्षपात, भेदभाव कलह, प्यार का अभाव, असुरक्षा का वातावरण होने से ही मानसिक समस्याओं की उत्पत्ति होती है और बच्चा भय, तनाव, ईर्ष्या आदि से ग्रस्त होता है.

प्रशिक्षण संबंधी कारण : कई माताएं बच्चों को अत्यधिक सुरक्षा व लाड़-प्यार देकर उन्हें हमेशा बच्चा ही रखना चाहती हैं. अतः उन्हें समय पर सही प्रशिक्षण देने के बजाय स्वय उनकी सेवा में लगी रहती हैं, तो बच्चे लापरवाह हो जाते हैं. सही आदतें नहीं सीखते. जब बच्चों को ठीक सिखाया ही नही जाता और घर में इस क्रिया के लिए नियत स्थान, नियत समय भी नही होता तो वे न स्वय पर नियंत्रण रखना सीखते हैं और न नियमितता की आदतें. माताएं पहले सोचती हैं,'बड़ा होकर अपने आप सीख जाएगा' और समय पर सही प्रशिक्षण के अभाव में स्थिति उनके हाथ से निकलने लगती है.

समस्या की रोकथाम

सर्वप्रथम तो बच्चे की शारीरिक जाच कराएं व जो कमी हो उसका इलाज कराए.

—बच्चे को हर काम समय पर, सही जगह, सही ढग से करने की आदत डालने के लिए उसे समय-समय पर प्रशिक्षण दें. याद रखें, कभी भी धमकी, सजा, अपमान या इनाम के लालच से सही ट्रेनिंग नही दी जा सकती. यह ट्रेनिंग सख्ती से नही, धैर्य व प्रेम से दी जानी चाहिए व नियमित रूप से दी जानी चाहिए.

—बच्चे को रात में बहुत ठूस कर न खिलाएं. अधिक पानी भी न पिलाएं. इस तरह की समस्या वाले बालक को सोने से काफी पहले भोजन करा देना चाहिए व सोते समय अधिक मात्रा में तरल पेय भी नहीं देना चाहिए.

—स्वयं कष्ट उठाकर रात को बीच मे उठा बच्चे को पेशाब करा दें. कुछ समय बाद उसी अवधि में बच्चा स्व. बताने या उठने लगेगा.

—बच्चे को पीठ के बल ही सुलाएं. ऐसी ही आदत डालें.

—कब्ज न होने दें. कब्ज हो तो दिन मे काफी पानी पिलाएं. पेशाब में एसिडिटी या खट्टापन हो तो वह भी पानी से निकल जाएगा.

—पेट में कृमि हो तो उनका इलाज करें.

—बच्चे को प्यार व सुरक्षा का आश्वासन दें. कारण

खोजकर उसे भय, चिंता, तनाव से मुक्त करना जरूरी है: भाई-बहन के प्रति उसकी ईर्ष्या को दूर करने का प्रयत्न करें. उसे आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए प्रेरित करें. रात को सोते समय डरावनी कहानियां न सुनाए. स्वतन्त्रता, सम्मान सहानुभूति मिलने पर वह ठीक हो जाएगा. इसके लिए उसे खेल, मनोरंजन की तरफ भी लगाना चाहिए.

—सजा के रूप में उसके भीगे कपड़े भी धुलवाने मे उसका सहयोग लें लेकिन ताड़ना न दें. उसे दूसरो के सामने लज्जित न करें. वह अपनी शारीरिक क्रियाओं पर नियत्रण कर सकता है, यह विश्वास दिलाते रहे और सहानुभूतिपूर्ण ढग से समझाए.

क्रोध और उद्दण्डता

तीन-चार वर्ष की आयु तक क्रोध प्रदर्शन व उत्तेजक व्यवहार स्वाभाविक है. पर बात-बात पर मचलना, रूठना, गुस्से से हाथ-पैर पटकना चीखना, जमीन पर लोटना, सिर फोड़ना, चीजो की तोड़-फोड़ करना, अवज्ञा व बद-मिजाजी से जवाब देना आदि हरकतें हद से ज्यादा हो तो इस समस्या का निदान खोजना चाहिए.

इसके प्रमुख कारण हो सकते है . बच्चो को अपना काम या छोटे-मोटे काम अपने हाथ से न करने देना. उसके प्रश्नों का उत्तर न देना. छोटे भाई-बहन के प्रति पक्षपात व उसकी उपेक्षा, उसे बिना कसूर सजा देना. उसकी चीजें, खिलौने उससे पूछे बिना किसी को दे देना. उसके अस्तित्व को भुला देना या अस्वीकारना. उसे बात-बात मे टोकना या डांटना. घर मे सयम व अनुशासन का अभाव और घर की अस्त-व्यस्तता, उसकी आत्मसम्मान की भावना या अहम को चोट लगना; घर मे कलह का वातावरण, खेलकूद व मनोरंजन के अवसरों की कमी और प्यार व सुरक्षा का अभाव. इसके अलावा शारीरिक कमजोरी, कोई त्रुटि या अत्यधिक थकान आदि भी बच्चे को उद्दंड या अवज्ञाकारी बना सकते हैं.

निदान : बच्चे पर ध्यान दें, प्यार व सुरक्षा का आश्वासन दें, उसे समय दें; उसके प्रश्नों का उत्तर दें. देखें कि उसके प्रति पक्षपात या अन्याय न हो. उसे बिना कसूर सजा न मिले. हर समय निषेधाज्ञा न दें. उसके खेल-मनोरंजन का समुचित प्रबन्ध करें. उसकी बुनियादी जरूरतो व उचित मागो की पूर्ति करने का प्रयत्न करें. उसकी आक्रमणकारी प्रवृत्तियो को राह देने के लिए उसे दौड़ने-भागने व साहस वाले कार्यों मे लगाए.

उसके बिगड़ने पर अपना धैर्य न खोए. उसे सात्वना दे व संभालें पर उसकी अनुचित मांग पर झुकें नहीं. उसे लालच देकर न मनाएं, अन्यथा वह इसे अपना हथियार बना लेगा व बार-बार रो-मचलकर अपनी बात मनवाने के लिए आप पर दबाव डालेगा. शांत हो जाने पर उसे गलती का अहसास कराए. पर सावधानी वरतें कि उस पर आत्म-ग्लानि या अपराध भावना हावी न हो जाए, अन्यथा स्थिति के दूसरी तरफ करवट ले जाने की आशंका रहती है. बच्चा सहम कर या अपराध-भावना से घिरकर अपने भीतर सिमट सकता है. घर से भागने या आत्महत्या करने तक की प्रवृत्ति उसमें जाग सकती है. बच्चे को कमजोरी, अपोषण व थकान से बचाने का उपाय भी करना चाहिए कि वह चिड़चिड़ा न रहे. परिवार मे उसके अस्तित्व के महत्व को स्वीकारें. उसे छोटी-मोटी जिम्मेदारियां सौंपने, उसे सम्मान और स्वावलंबन देने, उसे अभिव्यक्ति का अवसर देने से भी समस्या का समाधान होगा.

अंगूठा चूसना व नाखून कुतरना

छोटे शिशुओं का अंगूठा चूसना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, जो इस बात का प्रतीक है कि बच्चे में चूसने की क्षमता जन्मजात होती है.

प्रारम्भ में तो शिशु अपनी भूख शांत करने के लिए ही उंगली या अगूठा मुंह में डालता है, फिर उसे अगूठा या या बदले मे चूसनी चूसने मे आनद अनुभव होने लगता है और इसके बाद इस आनंद को वह अपनी परेशानी या तनाव कम करने के साथ जोड़ लेता है. शिशु के लिए प्रायः यह परेशानी मां से देर तक बिलगाव या सुरक्षा के अभाव मे ही पैदा होती है. इसका मतलब है, मा की गोद की सुरक्षा के एवज में वह चूसनी या अगूठा चूसकर एक मानसिक सतुष्टि प्राप्त करते हैं.

लेकिन छह माह की आयु के बाद भी बच्चा अंगूठा चूसता है तो इस बात का प्रतीक है कि बच्चे को मा का स्नेह व सान्निध्य पूरा नही मिल पाया है, अकेला होने पर किसी मानसिक तनाव या बोझ होने पर बच्चे को अंगूठा चूसने की आदत पड़ जाती है.

शिशु को मा का दूध पूरा न मिले, मां की गोद मे देर तक रहने का अवसर न मिले, उसे पूरा प्यार न मिले या किसी भय, उपेक्षा या हीनभावना से वह ग्रस्त रहने लगे तो अंगूठा या चूसनी चूसकर वह अपने लिए एक सहारे की खोज कर लेता है. लापरवाह माताओ,कामकाजी या अधिक व्यस्त माताओ के शिशुओं के साथ इसीलिए यह समस्या



असुरक्षा या अकेलापन अनुभव करने पर बच्चे सहारे के रूप में अंगूठा चूसने की आदत डाल लेते हैं...

अधिक होती है. माताएं अपना पीछा छुड़ाने या समय बचाने के लिए पहले यह आदत लगने देती है, फिर जब बच्चा इसे छोड़ता नही तो परेशान हो जाती हैं.

फिर भी दो-तीन साल तक यह आदत उतनी भावात्मक समस्या नही, जितनी भौतिक. क्योंकि अंगूठा या चूसनी चूसते रहने से शिशु को कई हानियां हो सकती हैं: जैसे सफाई का लगातार ध्यान रखना सभव न होने पर गंदी उंगली या चूसनी मुंह मे डालने से शिशु का बार-बार संक्रमण का शिकार हो बीमार पड़ना, उसका गला खराब होना और दातो की बनावट बिगड़ना आदि. इसलिए प्रारभ से ही ध्यान रखना होगा कि बच्चे को यह आदत न पडे.

यदि आरंभ मे ध्यान न देने से बच्चे मे अगूठा चूसने की आदत पड़ ही गई है और बच्चा उसे छोडने को तैयार नही तो उसे बदले में चूसनी दे दें क्योंकि यह अपेक्षाकृत कम हानिकारक होती है व बच्चे दो वर्ष की आयु तक पहुचते-पहुंचते इसे छोड़ देते हैं. इससे दांतों की सरचना पर भी कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता, लेकिन चूसनी साफ, स्वच्छ व अच्छी किस्म की होनी चाहिए. यदि बच्चा दात निकाल रहा है तो चूसनी थोड़ी पुरानी होने पर बदल दें क्योंकि रबड़ के टुकड़े टूट कर या गलकर बच्चे के मुह मे जा सकते हैं जो उसे भारी हानि पहुचा सकते हैं.

डांटने से बच्चे इसे अपने मान-अपमान से जोड लेते है और अचेतन रूप से मा को चिढ़ाने के लिए भी अपनी यह आदत पक्की कर लेते है. ऐसे समस्याग्रस्त बच्चे कभी-कभी तो बडे होकर भी इस आदत के शिकार रहते है. ऐसे मामलो में मन.चिकित्सक से परामर्श लेना चाहिए.

थोड़े बड़े समस्याग्रस्त बच्चे का ध्यान सृजनात्मक कार्यों व खेलो की तरफ लगाइए. उसे यथासभव रुचिकर कार्यों मे व्यस्त रखिए. उसे अतिरिक्त खेल व सुरक्षा का आश्वासन दीजिए. लेकिन अंगूठा छुडाने के लिए झटके से बच्चे के मुह से अंगूठा निकालने से बच्चा जिद्दी हो जाता है और छिपा कर अगूठा चूसने लगता है. अंगूठे पर कडवी या तीखी चीज बांधने से कोई फायदा नही क्योंकि इससे बच्चा अपराध-भावना से घिर सकता है.



...यदि किसी कारणवश अंगूठा चूसने की आदत पड़ ही गई है तो उसे बदले में चूसनी दें

नाखून कुतरना, होंठ काटना, बाल नोचना, कपड़े का कोना मरोड़ते रहना, बेमतलब आंखें झपकाना आदि आदतें भी आत्मविश्वास की कमी व सुरक्षा के अभाव में ही लगती है. अत. इन्हें छुड़ाने के भी उपाय वही है—बच्चे को प्यार व सुरक्षा का आश्वासन देना, उसकी नन्ही इच्छाओं की यथासंभव पूर्ति करना, सहानुभूति से उसकी बात सुनना भय या हीन भाव या उपेक्षा-ग्रंथि दूर कर उसका आत्म-विश्वास बढ़ाना और उसकी निरर्थक क्रियाशीलता को सार्थक क्रियाओं की ओर मोड़ना. ऐसे बच्चों की घूमने-फिरने, खेलने की आजादी पर रोक न लगाएं व उन्हें ब्लाक जोड़ने, मनके गिनने जैसे शिक्षात्मक व क्रियात्मक खेलों में लगाएं. इससे उनकी क्रियाशीलता को उचित राह मिलेगी.

संकोची, नर्वस, सुस्त, डरपोक व रोंदू बच्चे

क्रोध, उद्दंडता व दुःसाहस के विपरीत कुछ बच्चों में भय, सकोच, नर्वसनेस, सुस्ती जैसी स्वभावगत आदतें विकसित हो जाती हैं, तो इसका कारण घर का वातावरण भी होता है और कहीं ये आदतें मां-बाप, बड़े भाई-बहन से विरासत में भी मिलती है. यदि बच्चे को कोई भी काम करने से यह कहकर टोकते रहें कि यह तुम्हारे बस का नहीं···फलां चीज टूट जायेगी···यह तुम खराब कर दोगे ···इससे तुम्हें चोट लग जाएगी···यह खाकर तुम बीमार पड़ जाओगे···अकेले बाहर मत जाओ···यह मत करो··· वह मत करो···आदि तो न केवल बच्चे का कुछ करने का उत्साह भंग होगा, उसका स्वयं पर से विश्वास उठ जाएगा. उस पर कोई चीज तोड़ देने, अकेले बाहर जाने, ऊंचे स्टूल पर चढ़ कर कोई चीज उतारने की कोशिश में गिर जाने, गलत ढंग से उसे डांट, मार पड़ती रहेगी तो धीरे-धीरे वह उन कामों से हटता जाएगा.

उसके मन में एक भय समा जाएगा कि यह करूंगा तो यह नुकसान हो जाएगा और वह भय, दुविधा का शिकार हो डरपोक, सुस्त व आलसी बन जाएगा. आत्मविश्वास खो कर नर्वस, दब्बू, पिछलग्गू व पर-निर्भर बनता जाएगा. अंत में हीन भाव से घिर समस्याग्रस्त हो जाएगा. हीनता से फिर दूसरों के प्रति ईर्ष्या भी उत्पन्न होगी और अपनी अयोग्यता असमर्थता या पिछलग्गूपन से खीझ कर वह प्रतिकार व बदले की भावना से भर, गलत व्यवहार करने लगेगा.

बच्चे की सहज जिज्ञासाओं का उत्तर न देने पर भी उसकी कुछ खोजने-जानने की इच्छा वहीं दबने लगती है और उसकी प्रतिभा का विकास कुंठित हो जाता है. कोई प्रश्न पूछने पर बदले में डांट मिलने पर वह सहम कर चुप



हर बात में रोने-मचलने वाले बच्चे अक्सर जिद्दी या ढीठ होते हैं

तो हो जाएगा, पर यही चुप्पी बाद में उसके लिए घातक सिद्ध होगी.

बच्चे से उसकी क्षमताओं से अधिक आशाएं लगाना भी उसे हीनता व दब्बूपन की ओर प्रेरित करना है. अत. इन हानियों से बचाने के लिए बच्चे की जिज्ञासाओं का समाधान करें. उसे शक्ति भर छोटे-मोटे काम स्वयं करने दें उसे छोटी-मोटी जिम्मेदारियां सौंपे. उसकी बात मानें या न मानें, उसकी बात की कदर अवश्य करें व न मानने वाली बात क्यों नहीं मानी जा सकती, उसे समझा दें कि वह दुविधा में न हो. बस आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें पर उसकी शक्ति-सामर्थ्य से ज्यादा न उसे उकसाएं, न उससे आशा लगाएं.

दूसरे अपेक्षाकृत अधिक योग्य व साहसी बच्चों से तुलना कर उसकी हीनभावना न बढ़ाएं. उसका स्वास्थ देख-

कर उसी दिशा में उसे आगे बढ़ाने का प्रयत्न करें. उसकी गलतियों, कमियों पर नकारात्मक के बजाए रचनात्मक रुख अपना कर उसे काम करने से रोकने के बजाए सही ढंग से काम करना सिखाएं. उसे बोलने, अपनी राय प्रगट करने, कमरे में व गली में अकेले आने के लिए प्रोत्साहित करें. अंधेरे का, बाहर का, उद्दण्ड लड़कों का डर दूर करने के लिए उसकी सहायता करें. उसे रात को डरावनी कहानियां न सुनाएं. उसकी बात सुनें, उसे समय दें, सुरक्षा व प्यार का आश्वासन दें. स्वयं से देर तक अलग न रखें. हाबियों व अच्छे साथियो के साथ व्यस्त रखें, अकेला बैठ कर सोचने न दें. घर में किसी सदस्य का उसके साथ पक्षपात न हो, उसका अपमान न हो, इसका ध्यान रखें. बच्चा समय पर संभल कर सामान्य भी हो जाएगा. पर इन भावात्मक कारणों के अलावा बुद्धि मंदता या बीमारी, कमजोरी के कारण भी बच्चा दब्बू, नर्वस व रोंदू हो सकता है. तब उसका इलाज भी इसी अनुसार करना होगा. चिकित्सा व पौष्टिक खुराक के बाद अनावश्यक थकान-तनाव से मुक्त होने पर ही ऐसे कुछ बच्चे ठीक हो जाते हैं. (बुद्धि-मंदता के लिए संबधित अध्याय में बाल-मनोवैज्ञानिक के सुझाव देखें.)

हर समय बात-बेबात, बहाना कर-करके रोने वाले बच्चे जिद्दी भी हो जाते हैं. अतः बच्चे की हर बात को रोकर मनवाने की आदत को बढ़ावा देना ठीक नही. अधिक लाड़ या अत्यधिक सुरक्षा ही प्रायः ऐसे बच्चों को बिगाड़ती है या अत्यधिक उपेक्षा. इसलिए अभिभावक अपने व्यवहार मे संतुलन लाकर ही उनकी यह आदत सुधार सकते हैं.

झूठ और चोरी की आदत

बच्चों को बात-बात मे सच बोलने, किसी की चीज बिना इजाजत न लेने-उठाने के उपदेश तो निरंतर मिलते रहें पाठ्य-पुस्तकों मे भी ये ही आदर्श सिखाए जाएं पर घर में व आसपास चोरी, झूठ का वातावरण भी उन्हें बराबर मिलता रहे तो यह विरोधाभास न केवल उन्हे इन आदर्शों से विमुख कर देता है, गलत-सही, सच-झूठ का निर्णय न कर पाने से यह मानसिक दुविधा उन्हे ऊपर से दु.साहसी व भीतर से अपराध-चेतना से ग्रस्त कर मानसिक रोगी भी बना सकती है.

एक तो माता-पिता इस बारे में स्वयं सतर्क नही रहते कि अनावश्यक या निरर्थक झूठ बच्चे के सामने न बोले जाएं, दूसरे शुरू में बच्चे के छोटे मोटे झूठ को जब वे मनोरंजक ढग से लें 'हमारे नटखट साहबजादे ने आज यह किया...' 'इस तरह फलां को चकमा दिया...' 'यों सफाई



थोड़े से नुकसान से सजा या मार का डर बच्चे को झूठ बोलने पर बाध्य कर देता है

से झूठ बोला...' आदि वाक्यों से उसे गौरवान्वित करते हैं तो साहबजादे की यह आदत आगे बढती रहती है. पापा भीतर हैं और बच्चे से बाहर कहलवा रहे है; 'पापा घर मे नही हैं,' मम्मी पापा से झूठ बोल रही हैं, पापा मम्मी से, और बच्चा हर समय यह देख-सुन-समझ रहा है तो फिर उसमें झूठ पनपने पर उसे ही क्यों दोष दिया जाए ?

बच्चे अक्सर सजा या मार के डर से भी झूठ बोलते हैं. जिन घरों मे बच्चों के साथ अत्यधिक सख्ती बरती जाती है या कडे अनुशासन मे रखा जाता है और बच्चा यह अनुभव करता है कि थोड़ा झूठ बोलने या चालाकी से सजा अपमान या दगे से बचा जा सकता है, तो वह झूठ बोलने का आदी हो जाता है. इसका समाधान यही है कि नुकसान होने पर अधिक सख्ती न बरती जाए. यदि वह अपना कसूर स्वीकारता है तो उसे सच बोलने के लिए प्रशंसित किया जाए. माता-पिता का स्नेह व आश्वासन मिलने से बच्चा जल्दी सुधर सकता है.

यदि बच्चा अपनी पढ़ाई के बारे मे आपसे झूठ बोलना

है, अपनी प्रोग्रेस-रिपोर्ट आपसे छिपाता है, अपने साथियों पर रौब गांठने के लिए झूठ बोलता है तो,ये लक्षण सामान्य नहीं, उसे यहीं पर समाप्तिए. समस्या की तह में जाकर कारण खोजिए और उनका निवारण करिए. कहीं ऐसा तो नहीं है कि स्कूल की पढ़ाई उसके लिए अधिक भारी पड़ रही है, यदि आप उसकी सामर्थ्य से अधिक अच्छी प्रोग्रेस-रिपोर्ट की आशा रखती हैं तो हो सकता है वह किसी डर, परेशानी, दुविधा मानसिक तनाव या टीचर के पक्षपात-पूर्ण व्यवहार से पढ़ाई की तरफ ध्यान नहीं दे पा रहा हो. या अपने भाई-बहन या किसी अन्य बच्चे से पढ़ाई में पिछड़ जाने के कारण हीन भावना से ग्रस्त हो.

कारण के अनुसार ही उस समस्या का समाधान करिए. साथ ही उसे इस बात का अच्छी तरह एहसास करा दीजिए कि आपने उसका झूठ पकड़ लिया है. यदि आप इसकी उपेक्षा करेंगे तो वह समझ जाएगा कि माता-पिता को ठगना बहुत आसान है. कारण की तह में गए बिना मार-पीट करने से बच्चा ढीठ हो जाएगा, व अधिक सफाई से झूठ बोलना सीख जाएगा.

उसका मनोबल उठाइए, उसमें आत्मविश्वास जगाइए. वह जो है, जैसा है, उसे उसी रूप में स्वीकारिए. उसकी सामर्थ्य से अधिक आशाएं उससे न लगाएं. उस बच्चे को इस बात का भी यकीन दिलाना जरूरी है कि सभी व्यक्तियों में सभी गुण नहीं पाए जाते. जो गुण उसमें हैं, जिस विषय या हॉबी में वह निपुणता प्राप्त कर सकता है उसे उसी दिशा में आगे बढ़ाइए. प्यार और प्रोत्साहन दीजिए, उसे अपने विश्वास में लीजिए; यही इस समस्या का हल है.

बच्चा स्कूल से किसी सहपाठी की पेंसिल उठा लाए, साथी का खिलौना छीनकर या छिपा कर रख ले और मम्मी उसे मना न करे, उल्टे वह भी उस वस्तु को घर में रखकर खुश हो स्कूल जाने वाले बच्चे कुसंगति या अपने से अधिक संपन्न बच्चों के साथ रहकर चोरी की आदत सीख जाते हैं. बच्चों के पिता बच्चे के सामने दुकान में डंडी मारे या कार्यालय से स्टेशनरी चुराकर बच्चे को ला दे. बच्चा यह सब प्रायः देखता रहे और फिर गलत संगति में पड़ चोरी करने लगे तो भी उसे ही दोष क्यों दिया जाए ?

लेकिन कभी-कभी घर में वातावरण ठीक होने पर भी साथियों के साथ मिलकर बच्चे चोरी करने लगते हैं जिसके कई कारण हो सकते हैं—उसकी जरूरतें पूरी करने की मां-बाप में सामर्थ्य होने पर भी इस ओर से लापरवाही या या बच्चे की उपेक्षा, उसे उचित जेब खर्च न देना. सामर्थ्य अभाव में बच्चे को विश्वास में न लेना, सहभागी न बनाना. उसकी प्रारंभिक गलतियों को नजर अंदाज करना आदि.

पर कई बार इनमें से कोई भी कारण नहीं होता और अच्छे खाते-पीते घरों के बच्चे भी चोरी करने लगते हैं. तब भी इसकी जड़ पारिवारिक वातावरण में ही होती है. बच्चा उपेक्षा अन्याय, पक्षपात का शिकार हो, अकेला पड़कर असामाजिक कृत्यों में आनंद लेने लगता है, जिसके पीछे अचेतन रूप से बदले की भावना या ध्यान आकर्षित करने की प्रवृत्ति होती है.

जो हो, बच्चे के व्यक्तित्व-विकास के लिए मां-बाप को प्रारंभ से ही ओर से सतर्क रहना होगा कि उसमें असामाजिक प्रवृत्तियां न उभरें, न पनपें और दिखाई भी दें तो समय रहते उनका समाधान किया जाए कि ये आदतें परिपक्व न हों और उसका भविष्य खराब न हो.

आज माता-पिता से यह अपेक्षा करना कि वे झूठ बिलकुल नहीं बोलेंगे और बच्चे के सम्मुख हर समय आदर्श आचरण ही रखेंगे, एक असंभव कल्पना जान पड़ती है. पर बच्चे के चरित्र-निर्माण के लिए उसके सामने अनावश्यक व निरर्थक झूठ तो बचाए ही जा सकते हैं. इसी तरह चोरी चाहे एक पेंसिल की हो या एक पैसे की, प्रारंभ से ही बच्चे



किसी वस्तु का निरंतर अभाव भी बच्चे को चोरी के लिए प्रेरित करता है

को इस ओर से हटाना चाहिए. उसकी बुनियादी व उचित जरूरतों की यथासंभव पूर्ति भी की जानी चाहिए और आडंबर, दिखावे व फिजूलखर्चों की उसकी आदतों पर भी समय रहते रोक लगाई जानी चाहिए, अन्यथा उसे चोरी की आदत पड़ सकती है.

जरूरी नहीं कि अधिक पैसा है तो बच्चे को जरूरत से अधिक जेब खर्च दिया जाए. इसी तरह सामर्थ्य न होने पर उसकी हर मांग पूरी करना भी जरूरी नहीं. जरूरी है, उसे स्थितियों के साथ सामजस्य करने के लिए सही प्रशिक्षण देना, उसके प्रति अन्याय या पक्षपात न होने देना और उसे घर के सुख-दुख में भागीदार बनाना. बच्चे को जिम्मेदार नागरिक बनाने के लिए प्रारंभ से ही उसे छोटी-मोटी जिम्मेदारियां सौंपें. उसे गलत राह पर जाने से रोकने के लिए उसे समय पर सभालें. पहले लाड में इन बातों को नजरअंदाज करने या हंसी में उड़ाने से बाद तो स्थिति हाथ से निकल सकती है.

एक बात और—यदि आप चाहते हैं कि आप अपने बच्चे पर भरोसा कर सकें तो प्रारंभ से ही उसे अपने अविश्वास, सदेह से बचाएं, उसके आत्मविश्वास को बनाए रखने में, बढाने मे सहयोग करें. पहले उसके स्तर पर, उसके दृष्टिकोण से समझें, फिर समझाएं. वह न आपका विश्वास भग करेगा, न व्यवहार-समस्या पैदा करेगा.

• बच्चे को चोरी की आदत से बचाने के लिए उसे उसकी आयु, आवश्यकताओं व अपने स्तर के अनुसार निश्चित रूप से कुछ जेब खर्च अवश्य दें.

• [illegible] समय में बच्चे को उसके खर्च करने के लिए स्वतंत्र छोड़ दें. अपने निर्णय उस पर न थोपें.

• जेब खर्च में से थोड़ी बचत के लिए भी प्रोत्साहित करें. बचत की आदत चोरी की आदत को हतोत्साहित करती है.

• इस बात का भी ध्यान रखें कि बच्चा अपनी पॉकेट-मनी से अधिक खर्च न करे.

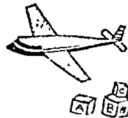
• बच्चे की अनुपस्थिति में उसके पैसे न उठाएं.

• सजा के तौर पर उसका जेब खर्च कम करने या बंद करने की धमकी न दें.

• प्रतिमाह या प्रति सप्ताह निश्चित समय पर बिना मांगे उसका जेब खर्च उसे दें. और जब तक कोई विशेष अनिवार्यता न हो उसे समय से पहले भी जेब खर्च न दें.



44
खेल खिलौने और मनोरंजन



बच्चे के स्वस्थ मानसिक विकास के लिए खेल और मनोरजन का कितना महत्त्व है, यह बताने की आवश्यकता नही. उसका तो प्रारभिक शिक्षण और शारीरिक-मानसिक विकास ही इसी माध्यम से होता है. आइए, देखें, इस दिशा मे हम उसकी किस प्रकार सहायता कर सकते है,

—दो-तीन सप्ताह की आयु से ही शिशु को बाहर खुली हवा, धूप मे टहलाना चाहिए. ताजी हवा, धूप से उसे आक्सीजन और विटामिन 'डी' की प्राप्ति होगी जिससे उसकी बढत ठीक होगी और उसकी हड्डिया मजबूत होगी. सरदी के दिनो स्नान से पूर्व मालिश व मालिश के बाद धूप-स्नान उसके अगों के विकास व व्यायाम के लिए बहुत जरूरी है. गरमी मे तो हलके वस्त्रों और खुले हाथ-पैरो के साथ शिशु अपना व्यायाम स्वय ही कर लेता है. पर सरदी के दिनो दबे-ढके शिशु को थोड़ी देर नगे बदन या अधिक सर्दी हो तो कम कपड़ो के साथ धूप में अवश्य खेलने देना चाहिए.

इसी तरह गरमी के मौसम मे भी दिन भर भीतर रहने के बाद शाम को खुली हवा मे सैर शिशु के लिए बहुत आवश्यक है. छोटे बच्चे को बग्घी में डालकर या उठा कर घुमाने ले जाए, फिर बगीचे की खुली हवा मे थोडी देर उसे लिटा, बैठा दें और जी भर खेलने दें. बड़े बच्चे को उगली पकड कर साथ ले जाए, फिर बगीचे मे स्वतन्त्र रूप से दौड-भाग करने दें. हा, सैर के लिए ले जाते समय बच्चे की धूल आधी, लू या सर्द हवा से बचाव की पर्याप्त व्यवस्था कर लेनी चाहिए.

बच्चे की पहली पसंद:खिलौने

छोटे बच्चे खिलौने देखकर ही हाथ-पैर हिलाने व अन्य ारीरिक क्रियाए करने के साथ अपनी प्रसन्नता व्यक्त रने लगते हैं, इससे उनका शारीरिक व्यायाम होता है. ो मे स्फूर्ति आती है. हड्डिया मजबूत होती है और उन्हे ासिक तृप्ति मिलती है.

—जब बच्चा ठीक से बैठने या घुटनो चलने लगे तो स्वयं खेलने का अवसर दें. किसी गत्ते के डिब्बे या खुले मुह की कम गहरी टोकरी मे रग-बिरगे हानि रहित खिलौने भर कर उसके सामने रख दें. वह स्वय अकेले या अपने किसी हम-उम्र साथी के साथ बैठ कर उनसे खेलता रहेगा.



—एक से तीन-चार वर्ष की आयु में खिलौने ही बच्चे के संगी-साथी होते हैं और उनकी शिक्षा के साधन भी. तीन-चार वर्ष की आयु में आते-आते बच्चे अपने साथियों के साथ बाहर भी खेलने लग जाते हैं और कुछ बौद्धिक व्यायाम वाले खिलौने भी पसंद करने लग जाते हैं. चार वर्ष की आयु के बाद बच्चे खिलौने स्वय मांगने व खोजने लगते हैं. शैक्षणिक आधार वाले तथा वैज्ञानिक खिलौने देने की यही सही उम्र है, उसके बाद तो उनका समय स्कूल व घर में पढ़ाई तथा खेल के बीच बट जाता है. आजकल जागरूक परिवारों में तो यह प्रक्रिया तीन वर्ष की आयु से ही नर्सरी शिक्षण के माध्यम से शुरू हो जाती है. तब भी स्कूल-पूर्व शिक्षण में खेल-खिलौनों का ही प्रमुख स्थान रहता है. खेल और शिक्षण में समय का विभाजन नियमित स्कूली शिक्षा के बाद ही प्रारंभ होता है.

—खेल खिलौनों के अलावा, बच्चों को लोरी, गीत, सरस गेय कविताओं, सरल-मनोरंजक शिक्षाप्रद कहानियों और नन्हें हाथों की सामर्थ्य भर नन्ही हस्त कलाओं के माध्यम से भी शिक्षण, मनोरंजन देने का प्रयत्न करना चाहिए. इस तरह खेल, मनोरंजन के साथ उनकी सृजनात्मक प्रतिभा को भी विकास की राह दी जा सकेगी.

खेल-खिलौने कैसे हों ?

खिलौनों का चुनाव बच्चे की आयु को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए. छोटे शिशु को हलके, छोटे, गोल किनारों वाले, बजकर आवाज करने वाले रंग-बिरंगे खिलौने दें, जिनके रंग चटक हों पर कच्चे न हों, अन्यथा मुह में डालने से बच्चे को हानि हो सकती है. बच्चा जिस खिलौने से खेलता है, उसे उठाकर मुह में भी जरूर डालता है उसकी उठा-पटक भी जरूर करता है. अत उसे उसकी क्षमता से भारी खिलौने न दें. इनमें व टूटे-फूटे किनारों के या चुभने वाले खिलौनों से बच्चे को चोट लगने का भय रहता है. मिट्टी के खिलौने भी छोटे बच्चों के उपयुक्त नहीं हैं. इनके रंग प्रायः कच्चे होते हैं और भुर-भुरे होने से बच्चा इन्हें तोड़-कर मिट्टी खा सकता है.



एक वर्ष के शिशु के लिए उपयुक्त खिलौने

बैठने के बाद घुटनों के बल चलने के लिए बच्चे को खिलौना आगे कुछ दूरी पर रख कर दें व इस तरह आगे बढ़ने के लिए उकसाए. इसके बाद चलना सीखने के लिए पहले वाकर का व फिर अपनी एक उगली का सहारा दें. इस आयु में हिलाना-डुलाना खिसकना, चलना ही उसके लिए खेल व मनोरंजन है. स्वय घुटनों या पैरों चल कर उसमें अभूतपूर्व आत्मविश्वास जागता है, जो उसे प्रसन्नता व संतुष्टि प्रदान करता है.

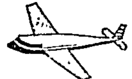
एक वर्ष का होते-होते बच्चा जब चलने की चेष्टा करने लगता है तो वह चीजों की उठा-पटक करने, उन्हें फेंकने, तोड़ने-जोड़ने, उलटने-पलटने में अधिक रुचि लेता है. दर-असल चीजों तक स्वय पहुच कर उन्हें देखने, पहचानने की उसकी ललक व जिज्ञासा ही उससे यह सब कराती है. अतः यह समय बच्चे के साथ बड़ी सावधानी के साथ बिताने का है. आप चीनी-काच की टूट-फूट वाली वस्तुए, तेल, दवाए, मसाले, चाकू, माचिस आदि उसकी पहुंच से दूर रखें, पर हानि रहित ठोस चीजों, गुड़ियों-खिलौनों की थोड़ी उठा-पटक उसे अवश्य करने दें ताकि खेल द्वारा उसे मनोरंजन, आनंद व जिज्ञासा-समाधान का अवसर मिल सके. कीमती खिलौने इस आयु में उसे न दें.

इस उमर में उसे रबड की छोटी गेंद लुढकाने के लिए दें. लकड़ी या प्लास्टिक के रंगीन चौकोर या गोल टुकडों को जोड़-तोड़ कर स्वतंत्र रूप से खेलने का अवसर दें प्राथमिक रंगों की जानकारी भी इन माडलों व रंगीन तसवीरों से दी जा सकती है. इन्ही को रखने, समेटने में बच्चे को अपनी वस्तुएं संभाल कर यथास्थान रखने की ट्रेनिंग भी दी जानी चाहिए. खेल-खेल में गाकर, अभिनय कर उसे नए शब्दों, ध्वनियों, नामों, रंगों की जानकारी और गंध, स्वाद की पह-चान भी दीजिए.

डेढ़-दो वर्ष का बच्चा स्वय उठा-पटक करते हुए गिर कर चोट न खाए, इसके लिए उसे मना करने के बजाए



44
खेल खिलौने और मनोरंजन





बच्चे के स्वस्थ मानसिक विकास के लिए खेल और मनोरंजन का कितना महत्त्व है, यह बताने की आवश्यकता नही. उसका तो प्रारंभिक शिक्षण और शारीरिक-मानसिक विकास ही इसी माध्यम से होता है. आइए, देखें, इस दिशा मे हम उसकी किस प्रकार सहायता कर सकते है,

—दो-तीन सप्ताह की आयु से ही शिशु को बाहर खुली हवा, धूप मे टहलाना चाहिए. ताजी हवा, धूप से उसे आक्सीजन और विटामिन 'डी' की प्राप्ति होगी जिससे उसकी बढत ठीक होगी और उसकी हड्डिया मजबूत होगी. सरदी के दिनो स्नान से पूर्व मालिश व मालिश के बाद धूप-स्नान उसके अगो के विकास व व्यायाम के लिए बहुत जरूरी है. गरमी मे तो हलके वस्त्रों और खुले हाथ-पैरो के साथ शिशु अपना व्यायाम स्वय ही कर लेता है. पर सरदी के दिनो दबे-ढके शिशु को थोड़ी देर नगे बदन या अधिक सर्दी हो तो कम कपड़ो के साथ धूप मे अवश्य खेलने देना चाहिए.

इसी तरह गरमी के मौसम मे भी दिन भर भीतर रहने के बाद शाम को खुली हवा मे सैर शिशु के लिए बहुत आवश्यक है. छोटे बच्चे को बग्घी मे डालकर या उठा कर घुमाने ले जाए. फिर बगीचे की खुली हवा मे थोडी देर उसे लिटा, बैठा दें और जी भर खेलने दें. बड़े बच्चे को उगली पकड कर साथ ले जाए, फिर बगीचे में स्वतन्त्र रूप से दौड-भाग करने दें. हा, सैर के लिए ले जाते समय बच्चे की धूल आधी, लू या सर्द हवा से बचाव की पर्याप्त व्यवस्था कर लेनी चाहिए

बच्चे की पहली पसंद:खिलौने

छोटे बच्चे खिलौने देखकर ही हाथ-पैर हिलाने व अन्य शारीरिक क्रियाए करने के साथ अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने लगते हैं, इससे उनका शारीरिक व्यायाम होता है. अंगो मे स्फूर्ति आती है. हड्डिया मजबूत होती है और उन्हें मानसिक तुष्टि मिलती है.

—जब बच्चा ठीक से बैठने या घुटनो चलने लगे तो उसे स्वयं खेलने का अवसर दें. किसी गत्ते के डिब्बे या खुले मुह की कम गहरी टोकरी मे रग-बिरगे हानि रहित खिलौने भर कर उसके सामने रख दें. वह स्वय अकेले या अपने किसी हम-उम्र साथी के साथ बैठ कर उनसे खेलता रहेगा.

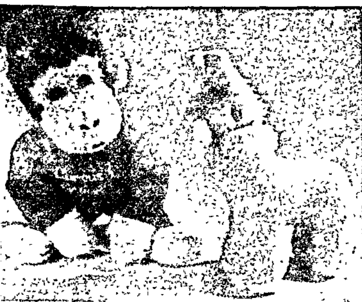


—एक से तीन-चार वर्ष की आयु में खिलौने ही बच्चे के संगी-साथी होते हैं और उनकी शिक्षा के साधन भी. तीन-चार वर्ष की आयु में आते-आते बच्चे अपने साथियों के साथ बाहर भी खेलने लग जाते हैं और कुछ बौद्धिक व्यायाम वाले खिलौने भी पसद करने लग जाते हैं. चार वर्ष की आयु के बाद बच्चे खिलौने स्वयं मांगने व खोजने लगते हैं. शैक्षणिक आधार वाले तथा वैज्ञानिक खिलौने देने की यही सही उम्र है, उसके बाद तो उनका समय स्कूल व घर मे पढ़ाई तथा खेल के बीच बंट जाता है. आजकल जागरूक परिवारों मे तो यह प्रक्रिया तीन वर्ष की आयु से ही नर्सरी शिक्षण के माध्यम से शुरू हो जाती है. तब भी स्कूल-पूर्व शिक्षण में खेल-खिलौनों का ही प्रमुख स्थान रहता है. खेल और शिक्षण में समय का विभाजन नियमित स्कूली शिक्षा के बाद ही प्रारंभ होता है.

—खेल खिलौनो के अलावा, बच्चों को लोरी, गीत, सरल गेय कविताओं, सरल-मनोरंजक शिक्षाप्रद कहानियो और नन्हें हाथों की सामर्थ्य भर नन्ही हस्त कलाओं के माध्यम से भी शिक्षण, मनोरजन देने का प्रयत्न करना चाहिए. इस तरह खेल, मनोरंजन के साथ उनकी सृजनात्मक प्रतिभा को भी विकास की राह दी जा सकेगी.

खेल-खिलौने कैसे हों ?

खिलौनों का चुनाव बच्चे की आयु को ध्यान में रख कर किया जाना चाहिए. छोटे शिशु को हलके, छोटे, गोल



एक वर्ष के शिशु के लिए उपयुक्त खिलौने

किनारों वाले, बजकर आवाज करने वाले रग-बिरगे खिलौने दें, जिनके रंग चटक हों पर कच्चे न हो, अन्यथा मुह मे डालने से बच्चे को हानि हो सकती है. बच्चा जिस खिलौने से खेलता है, उसे उठाकर मुह में भी जरूर डालता है उसकी उठा-पटक भी जरूर करता है. अत. उसे उसकी क्षमता मे भारी खिलौने न दें. इनसे व टूटे-फूटे किनारो के या चुभने वाले खिलौनो से बच्चे को चोट लगने का भय रहता है. मिट्टी के खिलौने भी छोटे बच्चों के उपयुक्त नही हैं. इनके रग प्रायः कच्चे होते है और भुर-भुरे होने से बच्चा इन्हे तोड़-कर मिट्टी खा सकता है.

बैठने के बाद घुटनों के बल चलने के लिए बच्चे को खिलौना आगे कुछ दूरी पर रख कर दें व इस तरह आगे बढ़ने के लिए उकसाए. इसके बाद चलना सीखने के लिए पहले वाकर का व फिर अपनी एक उगली का सहारा दें. इस आयु मे हिलाना-डुलाना खिसकना, चलना ही उसके लिए खेल व मनोरंजन है. स्वय घुटनों या पैरो चल कर उसमें अभूतपूर्व आत्मविश्वास जागता है, जो उसे प्रसन्नता व सतुष्टि प्रदान करता है.

एक वर्ष का होते-होते बच्चा जब चलने की चेष्टा करने लगता है तो वह चीजों की उठा-पटक करने, उन्हे फेंकने, तोड़ने-जोड़ने, उलटने-पलटने में अधिक रुचि लेता है. दर-असल चीजों तक स्वय पहुच कर उन्हे देखने, पहचानने की उसकी ललक व जिज्ञासा ही उससे यह सब कराती है अत. यह समय बच्चे के साथ बडी सावधानी के साथ बिताने का है. आप चीनी-कांच की टूट-फूट वाली वस्तुए, तेल, दवाए, मसाले, चाकू, माचिस आदि उसकी पहुच से दूर रखें, पर हानि रहित ठोस चीजो, गुडियों-खिलौनो की थोड़ी उठा-पटक उसे अवश्य करने दें ताकि खेल द्वारा उसे मनोरंजन, आनंद व जिज्ञासा-समाधान का अवसर मिल सके. कीमती खिलौने इस आयु में उसे न दे.

इस उमर मे उसे रबड़ की छोटी गेंद लुढ़काने के लिए दें. लकडी या प्लास्टिक के रगीन चौकोर या गोल टुकड़ों को जोड-तोड कर स्वतंत्र रूप से खेलने का अवसर दें प्राथमिक रंगों की जानकारी भी इन माडलो व रगीन तसवीरों से दी जा सकती है. इन्ही को रखने, समेटने मे बच्चे को अपनी वस्तुएं सभाल कर यथास्थान रखने की ट्रेनिंग भी दी जानी चाहिए. खेल-खेल मे गाकर, अभिनय कर उसे नए शब्दो, ध्वनियों, नामों, रगो की जानकारी और गध, स्वाद की पह-चान भी दीजिए.

डेढ़-दो वर्ष का बच्चा स्वयं उठा-पटक करते हुए गिर कर चोट न खाए, इसके लिए उसे मना करने के बजाए



रंग बिरंगे प्लास्टिक के खिलौने भी उसे आकर्षित करेंगे

स्टूल, मेज, चारपाई पर सावधानी से चढ़ने-उतरने की, झूले पर झूलने या तख्ते पर रपटने की ट्रेनिंग दें सीढ़ी चढ़ने-उतरने मे संतुलन साधना सिखाएं. इससे उसे मांसपेशियों को नियन्त्रित करने की शिक्षा मिलती है.

बच्चे की चाल ठीक रखने के लिए उसे सीधा खड़ा होना सीधा चलना सिखाएं. थोड़ी देर उसके साथ स्वयं खेलें, कुछ उसे खिलौनों के साथ सामूहिक खेल में भी शामिल करें, ताकि बच्चा खेल के माध्यम से आज्ञा-पालन, स्वतंत्र चिंतन और समूह-अनुशासन तीनो भाव-स्थितियों का प्रशिक्षण ले सके.

खिलौनो को संभालने, यथास्थान रखने, साथियो से बांटकर खेलने, गुड़िया से प्यार-मनुहार करने, बीमार गुड्डे गुड़िया की तीमारदारी करने, उससे बतियाने में बच्चे सहज ही सांसारिक व्यावहारिकज्ञान प्राप्त करते रहते हैं, जिससे उनका समाजीकरण होता जाता है, आपको केवल यह देखना है कि यह समाजीकरण स्वस्थ हो. बच्चा खिलौनों के साथ क्रूरता या बेरहमी का बर्ताव न करे. किसी को थोड़ी देर के लिए अपने खिलौने देने से हर बार इकार न क उन्हें केवल तोडने के लिए ही न तोड़े. गुस्से से खिलौने क पटक कर तोड देने व उसे तोड़-खोल कर उसके भीत झांक कर देखने में अंतर है. पहली प्रवृत्ति क्रोध, उद्दण्डता व विद्रोह की परिचायक है, दूसरी जिज्ञासा व अन्वेषक वृत्ति द्वारा सीखने-समझने की. अतः महत्त्व खिलौने की टूट या बचाव का नहीं, उसके प्रति बच्चे के बर्ताव का है.

बच्चे के स्वतन्त्र विकास के लिए उसका थोड़ा-बहुत इकार-विद्रोह भी बरदाश्त करना चाहिए कि उसकी इच्छाएं दमित न हों, पर उद्दण्डता व क्रूरता की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए. देखें कि बच्चा ऐसा क्यों करता है व उसकी बदले की भावना या ईर्ष्या की समस्या का समाधान करें. यदि बच्चा जिज्ञासा-शांति के लिए ही खिलौने की तोड़-फोड़ करता है तो उसकी जिज्ञासा के समाधान में उसकी सहायता करनी चाहिए. खिलौने की बनावट, क्रिया आदि के बारे मे जानकारी प्रदान करने से वह उसे तोड कर स्वयं जानने के बजाए आपसे प्रश्न पूछना पसंद करेगा, बशर्ते कि उसके प्रश्नों का उत्तर आप उसे दें, केवल उसे डांटकर झटक न दें.

बच्चे को खिलौना देने के बाद उसे साथ खेलने के लिए स्वतन्त्र छोड दें. आपकी हिदायतें या खिलौने को इस्ते-माल करने के निर्देश उसकी स्वतन्त्रता में बाधक हो सकते है. यदि बच्चे ने खिलौने की संरचना जानने के कौतूहल में या अनजाने में खिलौना तोड दिया है तो उसे डांटिए मत. न ही ऐसी धमकी दें कि आज के बाद उसे कोई खिलौना नहीं मिलेगा. उसे स्वयं ही इसके लिए बहुत खेद होगा, क्योंकि बच्चों को खिलौने बहुत प्रिय होते हैं.

बच्चे की अनुमति के बिना उसका कोई खिलौना न फेंकें. न ही किसी खिलौने को बेकार करने या उसकी जगह पर नया खिलौना देने या उसका खिलौना किसी-और बच्चे को देने के बारे मे स्वयं निर्णय लें.

प्रारंभ से ही बच्चे को अपने खिलौने यथास्थान रखना सिखाएं. इसके लिए यदि आप उसे अलग से टोकरी या मेज की दराज दे देती हैं तो बच्चा स्वय अपनी चीजें सही ठिकाने पर रखने मे रुचि लेने लगेगा. इसके लिए उसे कोई कम गहरा तथा चौड़े मुंह वाला कोई टोकरा आदि दें.

दो से तीन वर्ष की आयु का बच्चा उछल-कूद, धूम-धड़ाका, दौड़-भाग में अधिक रुचि लेने लगता है. ऐसे समय उसे रेल-गाड़ी, मोटर, हवाई जहाज, बैंड-बाजे, नाचने वाली गुड़िया, रंग-बिरंगे शैक्षणिक खिलौने, सरल वैज्ञानिक खिलौने, गुड़िया का घर, बर्तन, फर्नीचर आदि दीजिए.



यदि बच्चा जिज्ञासावश किसी खिलौने को तोड़कर खेलता है तो उसे हतोत्साहित न करें

इस उम्र में भीतरी ऊर्जा बढ़ी-चढ़ी होने से बच्चा हर समय खेल-मनोरंजन के साधन व संगी-साथी चाहने लगता है. अच्छे साथियों के चुनाव में उसकी मदद करिए व उसे खेल में अनुशासन के लिए भी प्रेरित करिए. वह हार-जीत को खेलभावना से ले, आपस में झगड़ा या मारपीट न करे, दूसरों के साथ सम्मानजनक व्यवहार करे, यह सब उसे खेल-माध्यम से सिखाएं. यदि बच्चे खेल-खेल में झगड़ते हैं तो उन्हें परस्पर समझौते के लिए उकसाएं, पर दखल न दें, उन्हें अपने झगड़े स्वयं ही सुलझाने दें.

इस उमर के बच्चे सामाजिक व्यवहारों की नकल के रूप में भी खेलते हैं. दुकान सजाना, सौदा बेचना, मकान बनाना, गुड़िया का ब्याह रचाना, नौकर, आया, भाई-बहन, मां-बाप बनकर उनकी नकल उतारना, पुलिसमैन, रेलवेगार्ड या डाक्टर बनकर उनका पार्ट अदा करना और पर्वों-त्योहारों की नकल उतार वैसे ही उत्सव मनाना आदि. इन क्रियाओं के माध्यम से उनके रुझानों, स्वभावगत प्रवृत्तियों और उभरती सामाजिक भावनाओं का अध्ययन करिए. कहीं कुछ गलत दिखे तो उनके खेल में उस समय बाधा न दें बाद में उन व्यवहारों को नियंत्रित करने के लिए रचनात्मक उपाय काम में लाइए.

उसे रेत में घरौंदे बनाने, दौड़भाग कर लुका-छिपी के खेल खेलने, गाते-चिल्लाते उछल-कूद करने, घर के छोटे-छोटे कामों में सहायता करने जैसे काम करने दीजिए. यही समय है, जब उसकी स्मरणशक्ति व कल्पना-शक्ति के विकास की ओर भी ध्यान देना चाहिए. नए-नए खेलों खिलौनों, कामों व साथियों में उसकी रुचि को प्रोत्साहन दीजिए. उसके प्रश्नों का उत्तर देने के साथ उससे पिछले अनुभव के बारे में प्रश्न पूछना भी शुरू करिए. हल्के-फुलके गीतों की पंक्तियां याद कराइए. सरल छोटी कहानियां सुना कर उनकी प्रतिक्रिया देखिए. इन सब क्रियाओं से बच्चे की कल्पनाशीलता, सामाजिक चेतना तथा शक्ति का विकास होगा.

तीन वर्ष की आयु के बाद बच्चा (लड़का या लड़की) अपने लिंग-भेद अनुसार खेलों में अपनी रुचि व प्राथमिकता प्रदर्शित करने लगता है. अब वह न चुप बैठेगा, न अकेला खेलना पसंद करेगा. उसे उसके साथियों, सहेलियों के साथ सामूहिक खेलों में रमने दीजिए. साथ ही अकेला बैठकर खेलने के लिए कल्पनाशील खिलौने भी उसे अवश्य दीजिए ताकि उस में आत्मनिर्भरता, एकाग्रता व समूह भावना का साथ-साथ विकास हो सके.



"मम्मी जैसी बनूंगी" बड़ों की नकल भी बाल शिक्षण व मनोरंजन का एक साधन है



चार पांच वर्ष के आयु के बच्चे को किसी शैक्षणिक हाबी के लिए प्रोत्साहित कीजिए

इस आयु के बच्चे रंग-बिरंगे झूलने वाले, आवाजो वाले या चाबी से चलने-घूमने वाले खिलौनो को दूर से देखकर तृप्त ही नही होंगे; उन्हे ऐसे सादे व मजबूत खिलौने दीजिए जो फेंकने या पानी लगने पर खराब न हो. बागवानी का सामान, पहिएदार गाडी, बैठकर चलने वाली तिपहिया साइकिल, स्कूटर या मोटर, उड़ाने वाला राकेट, गेंद-बल्ला, बडी सी गुडिया जैसे खिलौने अब उसे दीजिए, जिनसे वह स्वय खेल सके, बतिया सके. जिन्हे तैरा, दौडा, चला या उडा सके. पालतू जानवरो के साथ साहसी खेल भी अब उसे खेलने दीजिए साथ ही शैक्षणिक आधार प्रस्तुत करने वाले खिलौने भी अब उसे चाहिए. चाहे वे महगे हो या सस्ते या घर पर ही कागज, पुट्ठे, पानी, फिरकनी आदि से बनाए गए हो

चार-पाच साल के बच्चे के लिए बाहर जाकर खेलना अधिक लाभप्रद है उसे मैदान मे, बगीचे मे, नदी-तालाब के किनारे की रेती मे,अपने से दूर निगरानी मे छोड़ दीजिए. उसे किसी विशेष खेल-सामग्री की आवश्यकता नही होगी, वह स्वय ही खेलने के साधन खोज लेगा. झूलना, स्केटिंग करना, घरौंदे बनाना, पत्थर,सीपिया आदि चुनना, साथियो के साथ दौडना-भागना आदि इस आयु के बच्चों को स्वय भी खेल-खिलौनो का निर्माण करना आता है अत. बच्चे की गंधहीन वस्तुओं को फिजूल कचरा समझ कर फेंकिए नहीं. उसे अच्छी चीजों का चुनाव करना, इनसे कुछ बनाना भी सिखाइए. घर के छोटे-मोटे कामों— बगीची मे पानी देना, मेज-कुर्सी की धूल पोंछना, छोटा सामान उठाकर यथास्थान रखना, मेज पर खाना लगाना आदि—में उसे लगाने पर भी उसकी ऊर्जा को राह मिलेगी. उसमें आत्मगौरव जागेगा व आत्मनिर्भरता आएगी. रचनात्मक कामो मे व्यस्त रहने पर वह निरर्थक तोड़-फोड़ व शरारतो से बचेगा और आपके लिए सिरदर्द नहीं, राजा बेटा बनेगा.

ध्यान रखिए, राजा बेटा का मतलब केवल आज्ञाकारी नहीं, स्वयं में निर्भर, सुघड़ व्यक्तित्व को उभारता बच्चा होना चाहिए. खेल-खिलौनो से ही उसे अच्छी आदतें सिखाई जा सकती हैं. स्वस्थ मानसिक विकास के लिए खेल-मनोरंजन पर इसीलिए इतना जोर दिया जाता है, क्योंकि बच्चे की आयु-सामर्थ्य को देखते हुए यही उसके शिक्षण का सर्वाधिक उपयुक्त माध्यम है. इस उम्र मे खेल के अच्छे 'मूड' मे सीखी गई बातें ही आदतो का रूप ले जीवन भर काम आती हैं



गुड़िया की साज संवार भी लड़कियों के लिए अच्छा मनोरंजन है और उनके नारी सुलभ गुणों की अभिव्यक्ति भी

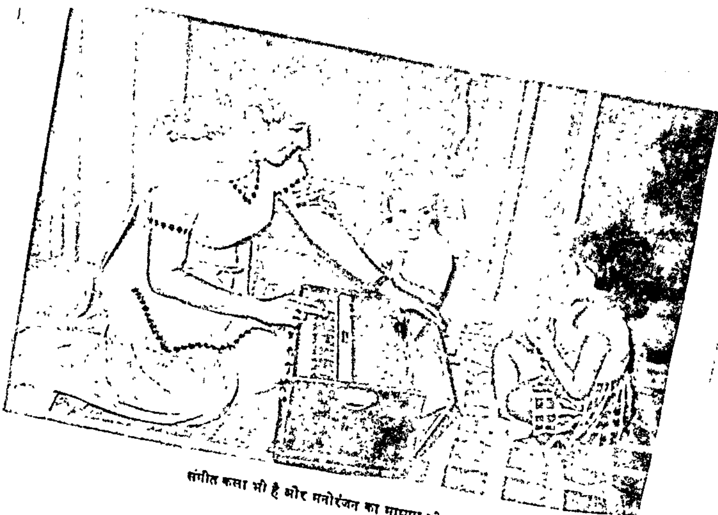


क्रैच में बच्चों के लिए आकर्षक व शैक्षणिक खिलौनों की व्यवस्था होती है

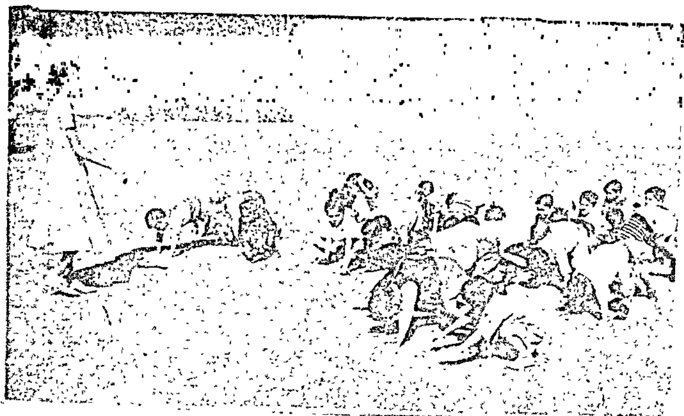
कामकाजी माताओ के तीन वर्ष से छोटे शिशुओं के लिए 'क्रैच' मे नन्हे खिलौनो की व्यवस्था होती है. तीन मे पांच वर्ष की आयु के लिए कल्पनाशील, शैक्षणिक और साहस व शक्ति प्रदान करने वाले खेल-खिलौने आजकल सभी शहरो कस्बों व बडे गावो मे खुले मांटेसरी, किंडर गार्टेन,नर्सरी स्कूलो और बालमंदिरो, बालवाडियो मे उपलब्ध है. यहा भीतर बैठकर शैक्षणिक खिलौने से भी बच्चे खेलते हैं, बाहर झूले, फिसलपट्टी आदि पर खेल-व्यायाम द्वारा अपना शारीरिक विकास भी करते है और संगी-साथियो के साथ बैठ शिक्षिकाओ के निर्देशन मे दैनिक कार्य-व्यवहार तथा सामाजिकता की प्रारंभिक शिक्षा भी ग्रहण करते है. अतः इन सुविधाओं का लाभ उठाना चाहिए. समीप में कही 'बाल-भवन' जैसी संस्थाए हों तो उनका भी.

पांच वर्ष की आयु के बाद जब बच्चे का शिक्षण सिर्फ खेल माध्यम से नही, बल्कि पढाई व खेल मे बंट कर होता है, तब उसे पढ़ाई के साथ बाहर मैदान मे खेले जाने वाले 'आउट-डोर' खेलों, भीतर बैठकर खेले जाने वाले, इन-डोर खेलों, हस्तकलाओ, संग्रह-हॉबियों, बागवानी, भ्रमण, पशु-पक्षी पालन, कविता, कहानी, अभिनय, संगीत-नृत्य आदि अनेक दिशाओ की ओर लगाया जा सकता है. पर इस संबध मे दो बातों का ध्यान रखना होगा—एक, बच्चे को उसके शारीरिक-मानसिक विकास के लिए दोनो प्रकार के खेल-मनोरंजन के साधन मुहैय्या किए जाएं. दूसरे, उसके रुझान का अध्ययन कर उसे उसी विशेष दिशा मे आगे बढने के लिए प्रोत्साहित किया जाए. इस मामले मे बच्चे के साथ जोर-जबर्दस्ती ठीक नही होगी.

बड़े बच्चे खेल के नाम पर बाहर आवारागर्दी न करते रहें, उनके संगी-साथी ठीक हों, खेल-खेल में वे सामाजिक शिक्षण ग्रहण करें, ज्ञान-विज्ञान की दिशा में आगे बढ़ें, उनकी कल्पनाशीलता व संवेदना विकसित हो, साथ ही वे सशक्त और साहसी बनें, इस ओर भी माता-पिता का ध्यान अवश्य जाना चाहिए. पांच साल से बडे बच्चों को लगभग



संगीत कला भी है और मनोरंजन का माध्यम भी



इस प्रकार के खेल बच्चे . में सामूहिकता की भावना का विकास करते हैं

का माध्यम भी बन जाती हैं.

मांटेसरी या नर्सरी स्कूलों मे इसीलिए बाल-कविताओं का चुनाव इस ढंग से किया जाता है कि बच्चा गीत-कविता के माध्यम से ही फूलों, रंगों, चीजों, पक्षियों, जानवरो के नाम और अक्षर ज्ञान से गिनती तक बड़ी आसानी से सीख जाता है. बच्चो द्वारा गोले या पंक्ति में खड़े होकर सामूहिक गाए जाने वाले अभिनययुक्त बाल-गीतों से उन्हें पंक्तिबद्ध अनुशासन और हाव-भाव मे अनुकरण से लेकर ताल-मेल तक की शिक्षा भी मिलती है. इसके अलावा इन मनोरंजक माध्यम के कारण उनकी नर्सरी-स्कूल में जाने की इच्छा जागृत होती है और शिक्षण के प्रति उनका आकर्षण बढ़ता है.

गीतों के माध्यम से बहुत कुछ सीखने की सही आयु है, तीन से पाच वर्ष. गीतों के द्वारा बच्चों का सामान्य ज्ञान देने के अलावा उन्हें प्रेम, सहानुभूति, करुणा, आत्मीयता जैसे मानवीय गुण भी सहज ही सिखाए जा सकते हैं. इसलिए गीतो का चुनाव सोच-समझ कर करना चाहिए. आजकल के आम चलन के अनुसार 'ट्विंकल ट्विंकल लिटल स्टार' और 'हम्प्टी डम्प्टी' जैसी अंग्रेजी 'नर्सरी पोयम्स' पर ही निर्भर न रह इस माध्यम से उन्हें अपनी सस्कृति का ज्ञान भी अवश्य कराया जाना चाहिए.

यही बात बाल-कहानियो पर भी लागू होती है. निश्चय ही लोरी की तरह कहानी नन्हे शिशुओ को नही सुनाई जा सकती, पर एक से दो वर्ष के बच्चो के साथ अभिनय पूर्ण ढंग से कहानी जैसी सरल बात-चीत अवश्य की जा सकती है. बच्चा तो बोली भी अनुकरण द्वारा ही सीखता है. दो वर्ष से पांच-छ. वर्ष के बच्चो का अधिकाश शिक्षण कहानी माध्यम से संभव है. उन्हे उनकी आयु व समझ के अनुसार छोटी-छोटी शिक्षाप्रद कहानिया सरल ढग से सुनाइए.

पर प्रारंभ से ही बच्चों को बड़ी-बड़ी धार्मिक, पौराणिक कथाएं न सुनाएं ये उनके लिए भारी पडती है. चरित्र निर्माण के लिए प्रारभ मे पंचतंत्र की सरल शिक्षाप्रद कहानियों से किया जा सकता है. मनोरंजन के लिए उन्हें राजा-रानियों, राजकुमारो-राजकुमारियों, परियों, देवों, उडनखटोलों की कहानिया भी अवश्य सुनाइए क्योंकि इनसे उनकी कल्पना शक्ति का विकास होता है, पर इनमे वर्णित भयानक कथनो को जरा हल्का कर लेना चाहिए ताकि बच्चे डरें नही.



सोते समय बच्चों को कहानियां भी सुनाएं पर बहुत सोच समझकर

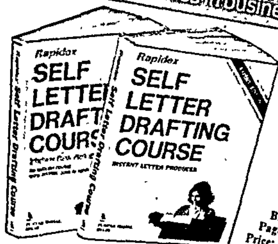
बच्चे के लिए खिलौने खरीदते समय इन बातों का ध्यान रखें :

* खिलौनों का चुनाव बच्चे की रुचि, आयु और बौद्धिक विकास के अनुरूप ही होना चाहिए.
* खिलौना ऐसा हो कि बच्चे को उससे खेलते समय किसी अन्य व्यक्ति के सहयोग की आवश्यकता न पड़े.
* खिलौना ऐसा भी न हो कि बच्चे के लिए उसका आकर्षण शीघ्र ही खत्म हो जाए, यानी वह उसकी सृजनात्मक प्रवृत्ति व क्रियाशीलता को उभारने वाला हो.
* इतना नाजुक व टूट-फूट वाला भी न हो कि उसकी देख-रेख में अत्यधिक सावधानी या सतर्कता बरतनी पड़े.
* उसकी बनावट इतनी जटिल न हो कि उसके कल पुर्जों की साज-संभाल ही बच्चे को भारी पड़ जाए.
* छोटे शिशु के लिए खिलौना चुनते समय इस बात का ध्यान रखें कि खिलौना नुकीले या तेज किनारों वाला न हो. इतना छोटा भी न हो कि बच्चा निगल ले और न ही इतना बड़ा हो कि उसके हाथ में भी न समा सके.
* संक्षेप में खिलौने बच्चे की प्रतिभा व कल्पनाशक्ति को विकसित करने वाले हों. खिलौना जितना अधिक सरल व उपयोगी होगा, बच्चे की रुचि उस ओर उतनी ही अधिक होगी, उतनी ही अधिक देर तक टिकी रहेगी.

Skill in correspondence ensures

Brighter career .. Faster promotion .. Sure success in business...

Rapidex Self Letter Drafting Course



Big size
Pages. 354
Price: Rs. 28/-
Postage Rs 5/-

Your career—your future!
Whether you are an administrator or a supervisor, office-superintendent or a steno-typist—the skill in correspondence is an art you must master Because almost every situation, every occasion calls for a well-drafted letter And with this skill in hand none can stop you from getting ahead

Promises better prospects for the professionals
An asset for professionals—lawyers, chartered-accountants, business-consultants Whether in a job or self-employed, you can't pass a day without dashing off a letter to this or that place.

Business letters—a key to growth of business
A must for businessmen in any field—traders, shopkeepers entrepreneurs To boost their sales regain lost buyers, bring in money dues, establish goodwill and build up the image of company

SEND A GOOD LETTER AND WAIT FOR A POSITIVE RESPONSE
LETTER WRITING IS NO CHILD S PLAY But we have made it thus for you Whether you are writing to a friend or a firm—a handy helper is this course

While other books teach you to copy readymade letters, this course will teach you how to draft a letter of your own choice

IT FEATURES

- SENTENCES AND PHRASES IN ABUNDANCE
- Tick mark the required ones
- Arrange in proper order instantaneously
- Shape & mould the way you want to

It calls for the least mental effort and promises smooth sailing.

Make as many letters as you want on the same subject.

Divided into 3 SECTIONS.
It takes care of your personal and social letters, of commercial correspondence and applications for job

The future belongs to those who master Computer today

- Computer for Beginners
- Basic Computer Programming

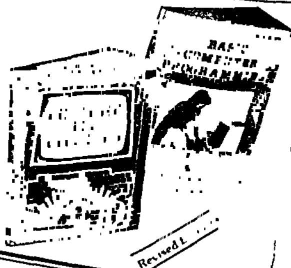
By Er. V. K. Jain

Computers are invading every facet of a person's life—the home, the office, the classroom or the play ground. Whether in job or business they are opening up bright new vistas of knowledge and happiness

The twin-books are a must for those who are interested in computers, their function and operation, but are discouraged by their complexities All is made easy through simple language and instructive illustrations

The books are designed for mass education as per Computer Literacy Project of NCERT and also conform to course on computers recently undertaken by C.S.S.E.

Big Size 192 & 176 pages respectively Price Rs. 24/- each Postage Rs. 4/- each



अपने निकट के या रेलवे तथा बस-अड्डों पर स्थित बुक-स्टालों पर मांग करें। न मिलने पर वी.पी.पी. द्वारा मंगाने का पता

पुस्तक महल
10-B नेताजी सुभाष मार्ग, दरिया गंज, नई दिल्ली-110002
खारी बावली, दिल्ली-110006
फोन 239314, 268293